धर्मपाल समग्र लेखन

५.

पंचायत राज एवं भारतीय राजनीतितंत्र

धर्मपाल

अनुवाद

नवनीत ठक्कर

धर्मपाल समग्र लेखन ५

पंचायत राज एवं भारतीय राजनीतितंत्र

लेखक
धर्मपाल

सम्पादक
इन्दुमति काटदरे

अनुवाद
नवनीत ठक्कर

प्रकाशक
पुनरुत्थान ट्रस्ट,
४, वसुंधरा सोसायटी, आनन्दपार्क, कांकरिया, अहमदाबाद - ३८००२८
दूरभाष : ०७९ - २५३२२६५५

मुद्रक
साधना मुद्रणालय ट्रस्ट
सिटी मिल कम्पाउण्ड, कांकरिया मार्ग, अहमदाबाद - ३८००२२
दूरभाष : ०७९ - २५४६७७९०

मूल्य : रु. २९५-००

प्रति
१०००

प्रकाशन तिथि
चैत्र शुक्ल १, वर्षप्रतिपदा, युगाब्द ५१०९
२० मार्च ~~२००७~~

अनुक्रमणिका

धर्मपाल समग्र लेखन

ग्रन्थ सूची

१. भारतीय चित्त, मानस एवं काल

२. १८ वीं शताब्दीमें भारतमें विज्ञान एवं तंत्रज्ञान : कतिपय समकालीन यूरोपीय वृतान्त
Indian Science and Technology in the Eighteenth Century : Some Contemporary European Accounts

३ भारतीय परम्परामें असहयोग
Civil Disobedience in Indian Tradition

४. रमणीय वृक्ष : १८ वीं शताब्दी में भारतीय शिक्षा
The Beautiful Tree : Indigenous Indian Education in the Eighteenth Century

५. पंचायत राज एवं भारतीय राजनीति तंत्र
Panchayat Raj and Indian Polity

६. भारत में गोहत्या का अंग्रेजी मूल
The British Origin of Cow slaughter in India

७. भारतकी लूट एवं बदनामी : १९ वीं शताब्दी की अंग्रेजों की जिहाद
Despoliation and Defaming of India :
The Early Nineteenth Century of British crusade

८. गांधी को समझें
Understanding Gandhi

९. भारत की परम्परा
Eassys in Tradition, Recovery and Freedom

१०. भारत का पुनर्बोध
Rediscovering India

मनोगत

गांधीजी के अगस्त १९४२ के 'अंग्रेजों, भारत छोडो' आन्दोलन के कुछ समय पूर्व से ही मैं देश के स्वतन्त्रता आन्दोलन से पूर्णरूप से प्रभावित हो चुका था। उस समय मैंने जीवन के बीस वर्ष पूरे किए थे। अगस्त १९४२ में, हम दो चार मित्र, जिनमें मित्र श्री जगदीश प्रसाद मितल प्रमुख थे, उत्तरप्रदेश से 'भारत छोडो आन्दोलन' के लिए ही कांग्रेस के अखिल भारतीय सम्मेलन में भाग लेने मुम्बई गए। मैंने उससे पूर्व १९३० का लाहौर का कांग्रेस सम्मेलन देखा था, परन्तु मुम्बई के सम्मेलन का स्वरूप और अपेक्षाएँ हमारे लिए एकदम नई थीं। सम्मेलन में हमें दर्शक के रूप में भाग लेने की अनुमति मिल गई। हमने वहाँ की सम्पूर्ण कार्यवाही देखी, सभी भाषण सुने। ८ अगस्त की सायंकाल का गांधीजी का सवा दो घण्टे का भाषण तो मुझे आज भी कुछ कुछ याद है। उन्होंने प्रथम डेढ घण्टा हिन्दी में भाषण दिया, फिर पौन घण्टा अंग्रेजी में। सम्मेलन में ५० हजार से अधिक भीड़ थी। सभी उपस्थित लोगों से, सभी भारतवासियों से तथा विश्व के सभी देशों से गांधीजी का मुख्य निवेदन तो यही था कि वे सभी भारत और अंग्रेजों के वार्तालाप में सहायक हों । हमारे जैसे अधिकांश लोगों ने उस समय विचार किया होगा कि आन्दोलन का प्रारम्भ तो कुछ समय बाद ही होगा।

परन्तु दूसरे ही दिन सवेरे ५-६ बजे से ही पूरे मुम्बई में हलचल शुरू हो गई। मुम्बई से बाहर जानेवाली रेलागाड़ियां दोपहर के बाद तक बन्द रहीं। अंग्रेज और भारतीय पुलिस व्यापक रूप से लोगों की गिरफ्तारी करती रही। अन्ततः ९ अगस्त को शाम तक हमें दिल्ली जाने के लिए गाड़ी मिल गई। परन्तु रास्ते भर हलचल थी और गिरफ्तारियां हो रही थीं। हममें से अधिकांश लोग अपनी अपनी जगह पहुँचकर 'अंग्रेजों भारत छोड़ो' आन्दोलन शुरू करनेवाले थे।

दिल्ली पहुँचकर मैं अन्य साथियों के साथ आसपास के क्षेत्रों में चल रहे आन्दोलन में जुड़ गया। कितने महीने तक इसी में ही संलग्न रहा। उस बीच अनेक गाँवों और कसबों में भी गया। वहाँ लोगों के घरों में रहा। वहीं से ही भारत के सामान्य जीवन

के साथ मेरा परिचय प्रारम्भ हुआ। दिसम्बर १९४२ में अनेक घनिष्ठ मित्रों ने सलाह दी की मुझे आन्दोलन के काम के लिए मुम्बई जाना चाहिए। इसलिए फरवरी १९४३ में मैं मुम्बई गया और वहाँ रहा। आन्दोलन का साहित्य लेकर वाराणसी और पटना भी गया। मुम्बई में गांधीजी के निकटस्थ स्वामी आनन्द ने मेरे रहने खाने की व्यवस्था की थी। वे अलग अलग लोगों से मेरा परिचय भी कराते थे। वस्तुतः मेरा मुम्बई के साथ परिचय तो उनके कारण ही हुआ। मुम्बई मे ही मैं श्रीमती सुचेता कृपलानी से भी एक दो बार मिला। उसी प्रकार गिरिधारी कृपलानी से मिलना हुआ। उस समय मैं खादी का धोती कुर्ता पहनता था और स्वामी आनन्द आदि के आग्रह के बाद भी मैंने कभी पतलून आदि नहीं पहना।

मार्च १९४२ में मैं मुंबई से दिल्ली और उत्तरप्रदेश गया। अप्रैल १९४३ में दिल्ली के चाँदनीचौक पुलिस थाने मे मेरी गिरफ्तारी हुई और लगभग दो महीने अलगअलग थानो मे रहा। वहाँ मेरी गहन पूछताछ हुई, धमकाया भी गया। यद्यपि मारपीट नहीं हुई। जून १९४३ में मुझे सरकार के आदेशानुसार दिल्ली से निष्कासित किया गया। एकाध वर्ष बाद यह निष्कासन समाप्त हुआ।

लम्बे अरसे से मेरा मन गाँव में जाकर रहने और काम करने का था। मेरे एक पारिवारिक मित्र गोरखपुर जिले के एक हजार एकड़ जितने विशाल फार्म के मैनेजर थे। उन्होंने मुझे फार्म पर आकर रहने के लिए निमंत्रण दिया। यह फार्म सुन्दर तो था परन्तु यह तो वहाँ रहनेवालो से कसकर परिश्रम कराने की जगह थी। गाँव जैसा सामूहिकता का वातावरण वहाँ नहीं होता था। वहाँ गाँव के लोगों से मिलने, बात करने का अवसर भी नहीं मिलता था। परन्तु एक बात मैंने देखी कि वहाँ लोग गरीब होने के बाद भी प्रसन्नचित्त दिखाई देते थे।

एक वर्ष बाद जून अथवा जुलाई १९४४ में यह फार्म छोड़ कर मैं वापस आ गया। तत्काल ही मेरठ के मित्रो ने मुझे श्रीमती मीराबहन के पास जाने की सलाह दी। मीरा बहन रूड़की के निकट एक आश्रम स्थापित करने का विचार कर रही थीं। बात सुनकर मैंने पहले तो मना करने का प्रयास किया परन्तु मित्रों के आग्रह के कारण अक्टूबर १९४४ में मैं मीराबहन के पास गया। रूड़की से हरिद्वार की दिशा में सात-आठ मील दूर गाँव वालों ने मीरा बहन को आश्रम निर्माण के लिए जमीन दी थी। आश्रम हरिद्वार से बारह मील दूर था। आश्रम का नाम दिया गया 'किसान आश्रम'। यहीं से मेरा ग्रामजीवन और उसके रहनसहन के साथ परिचय शुरू हुआ। उनकी कुशलताएँ और अपने व्यवहार, रहन सहन तथा उपाय ढूंढ निकालने की योग्यता मुझे यहीं जानने

को मिली। मैं तीन वर्ष किसान आश्रम मे रहा। उसके बाद पाकिस्तान से आए शरणार्थियों के पुनर्वसन का कार्य-चलता था उसमें सहयोग देने के लिए मै दिल्ली गया। उस दौरान मेरा अनेक लोगो के साथ परिचय हुआ। उसमें मुख्य थीं कमलादेवी चट्टोपाध्याय और डॉ. राममनोहर लोहिया। १९४७ से १९४९ के दौरान श्री रामस्वरूप, श्री सीताराम गोयल, श्री रामकृष्ण चाँदीवाले (उनके घर में मैं महीनों रहा), श्री नरेन्द्र दत्त, श्रीमती स्वर्णा दत्त, श्री लक्ष्मीचन्द जैन, श्री रूपनारायण, श्री एस. के. सक्सेना, श्री ब्रजमोहन तूफ़ान, श्री अमरेश सेन, श्री गोपालकृष्ण आदि के साथ भी मित्रता हुई।

दिल्ली में भारतीय सेना के कुछ अधिकारियों ने कहा कि फिलिस्तीन के यहूदी इज़रायल नामक छोटा देश बना रहे हैं। वहाँ सामूहिकता के आधार पर जीवन रचना के महत्त्वपूर्ण प्रयास हो रहे हैं। उन लोगों ने इतने आकर्षक ढंग से उसका वर्णन किया कि मैंने इज़रायल जाकर यह देखकर आने का निर्णय किया। नवम्बर १९४९ में इज़रायल जाने के लिए मैं इंग्लैण्ड गया। वहाँ आठदस महीने रह कर नवम्बर-दिसम्बर मे मैं पत्नी फिलिस के साथ इजरायल तथा अन्य अनेक देशो में गया। इजरायल के लोगों ने जो कर दिखाया था वह तो बहुत प्रशसनीय और श्रेष्ठ कार्य था परन्तु भारतीय ग्रामरचना और भारतीय व्यवस्थाओं में उस का बहुत उपयोग नहीं है, ऐसा भी लगा।

जनवरी १९५० में मैं और फिलिस हृषीकेश के निकट निर्माणाधीन, मीराबहन के 'पशुलोक' में पहुँच गये। वहाँ मीराबहनने, मेरे अन्य मित्रों, और सविशेष मार्कसवादी मित्र जयप्रकाश शर्मा के साथ मिलकर एक नए छोटे गाँव की रचना की शुरुआत की थी। उसका नाम रखा गया 'बापूग्राम'। गाँव ५० घरों का था। उसमें सभी पहाड़ी और मैदानी जाति के लोग साथ रहेंगे ऐसा प्रयास किया था। यह भी ध्यान रखा गया कि लोग अत्यन्त गरीब हों। परंतु उस के कारण गाँव की रचना का काम अधिक कठिन हो गया। गाँव के लोगों के कष्ट बढे। गाँव में ५०० एकड़ जमीन थी, किन्तु अनेक जंगली जानवर भी वहाँ घूमते थे। हाथी भी वहाँ आता-जाता रहता। इस लिए प्रारम्भ में खेती भी बहुत दुष्कर थी। खेती में कुछ बचता ही नहीं था। आज भी यह गाँव जैसे तैसे टिका हुआ है। १९५७ से गाँव के साथ मेरा सम्बन्ध ठीक-ठीक बढा। मैं विभिन्न पंचायतों का अध्ययन करता था। इसलिए गाँव के लोगों की समझदारी और अपने प्रश्नों की ओर देखने और उसे हल करने का उनका दृष्टिकोण भलीभाँति ध्यान में आने लगा। इस बात का भी एहसास होने लगा कि अपने अधिकांश शहरी और समृद्ध लोग गाँव को जानते ही नहीं। राजस्थान, आंध्रप्रदेश, तमिलनाडु, उड़ीसा आदि राज्यों में तो यह एहसास सविशेष हुआ। इस एहसास के कारण ही मैं १९६४-६५ में सन् १९०० के आसपास के अंग्रेजों

द्वारा तैयार किए गए दस्तावेजों के अध्ययन की ओर मुड़ा।

लगभग १७५० से १८५० तक अंग्रेजों ने सरकारी अथवा गैर सरकारी स्तर पर इंग्लैण्ड में रहने वाले अपने अधिकारियों तथा परिचितों को लिखे पत्रों की संख्या शायद करोड़ों दस्तावेजों में होगी। उसमें ८० से ८५ प्रतिशत की प्रतिलिपियां भारत के कोलकता, मद्रास, मुम्बई, दिल्ली, लखनऊ आदि के अभिलेखागारों में भी हैं। लन्दन की ब्रिटिश इंड़िया ऑफिस में और अन्य अनेक अभिलेखागारों में पाँच से सात प्रतिशत ऐसे भी दस्तावेज होंगे जो भारत मे नहीं होंगे। उसमे से बहुत से ऐसे हैं जिनके अध्ययन से अंग्रेजो ने भारत में क्या किया यह समझ में आता है। उस समय के इंग्लैण्ड के समाज और शासन तंत्र की यदि हमें जानकारी होगी तो अंग्रेजों ने भारत में जो किया उसे समझने में सहायता मिल सकती है।

१९५७ से ही, जब मैं एवार्ड (Association of Voluntary Agencies for Rural Development [AVARD]) का मंत्री बना तब से ही अनेक प्रकार से सीखने का अवसर मिला और अनेक व्यक्तियों की अनेक प्रकार से सहायता भी मिली। उसमें मुख्य थे श्री अण्णासाहब सहस्त्रबुद्धे और श्री जयप्रकाश नारायण। नागपुर के श्री आर. के. पाटिल ने भी १९५८ से १९८० तक इस काम में बहुत रुचि ली और अलग अलग ढंग से सहायता करते रहे। श्री आर. के. पाटिल पुराने आई. सी. एस. थे, योजना आयोग के सदस्य थे, पूर्व मध्यप्रदेश के मंत्री थे और विनोवा जी के निकटवर्ती थे। १९७१ से गांधी शांति प्रतिष्ठान के मंत्री श्री राधाकृष्ण का सहयोग भी बहुत मूल्यवान था। इसी प्रकार गांधी विद्या संस्थान और पटना की अनुग्रह नारायण सिन्हा इन्स्टीटयूट का भी सहयोग मिला। डॉ. डी. एस. कोठारी भी शुरू से ही उसमे रुचि लेते थे।

१९७१ में 'इंड़ियन सायन्स एण्ड टेक्नोलॉजी इन द एटीन्थ सेन्चुरी' Indian Science and Technology in the Eighteenth Century और 'सिविल डिसओबिड़ियन्स इन इंड़ियन ट्रेड़िशन' Civil Disobedience in Indian Tradition ऐसी दो पुस्तकें प्रकाशित हुई। उनका विमोचन विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के अध्यक्ष डॉ. दौलतसिंह कोठारी ने किया। पहले ही दिन से उस पुस्तक का परिचय करनेवाले प्रजा समाजवादी पक्ष के नेता और साहित्यकार श्री गंगाशरण सिन्हा, विवेकानंद केन्द्र, कन्याकुमारी के श्री एकनाथ रानडे और अमेरिका की बर्कले यूनिवर्सिटी के प्रोफेसर यूजिन ईर्शिक थे। ईर्शिक के मतानुसार 'सिविल डिसओबिडियन्स इन ईंड़ियन ट्रेड़िशन' मेरी सबसे उत्तम पुस्तक थी। श्री रामस्वरुप और श्री ए. बी. चटर्जी, जो आई. सी. एस. थे और मिनिस्ट्री ऑफ स्टेट्स के सचिव थे, उनके मतानुसार 'इंड़ियन सायन्स एण्ड

टेक्नोलॉजी इन द एटीन्थ सेन्चुरी' अत्यन्त महत्त्वपूर्ण पुस्तक थी। १९७१ से १९८५ के दौरान इन दोनों पुस्तकों का अनेक प्रकार से उल्लेख होता रहा। देशभर में इसका उल्लेख करनेवालों में मुख्य थे श्री जयप्रकाश नारायण, श्री रामस्वरुप और राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के श्री एकनाथ रानड़े, प्रोफेसर राजेन्द्रसिंह और वर्तमान सरसंघचालक श्री सुदर्शन जी।

अभी तक ये पुस्तकें मुख्य रूप से अंग्रेजी में ही हैं। उसका एक विशेष कारण यह है कि उसमें समाविष्ट दस्तावेज सन् १८०० के आसपास अंग्रेजों और अन्य यूरोपीय लोगो ने अंग्रेजी में ही लिखे हैं। प्रारंभ में ही यह सब हिन्दी अथवा अन्य भारतीय भाषा में प्रकाशित करना बहुत मुश्किल लगता था। लेकिन जब तक यह सब भारतीय भाषाओं में प्रकाशित नहीं होता तब तक सर्वसामान्य लोग दो सौ वर्ष पूर्व के भारत के विषय में न जान सकेंगे, न समझ सकेंगे, और न ही चर्चा कर सकेंगे।

इसलिए इन पुस्तकों का अब हिन्दी भाषा मे अनुवाद प्रकाशित हो रहा है यह बहुत प्रशंसनीय कार्य है।[१]

मैं १९६६ तक अधिकांशतः इंग्लैण्ड और सविशेष लन्दन में रहा। उस समय भारत से सम्बन्धित वहाँ स्थित दस्तावेजों मे से पांच अथवा दस प्रतिशत सामग्री का मैंने अवलोकन किया होगा। उनमें से कुछ मैंने ध्यान से देखे, कुछ की हाथ से नकल उतार ली, अनेकों की छायाप्रति बना ली। उस दौरान बीच बीच में भारत आकर कोलकता, लखनऊ, मुम्बई, दिल्ली और चेन्नई के अभिलेखागारों में भी कुछ नए दस्तावेज देखे।

उन दस्तावेजों के आधार पर अभी गुजरात से प्रकाशित हो रही अधिकांश पुस्तकें तैयार की गई हैं। ये पुस्तकें जिस प्रकार सन् १८०० के समय के भारत से सम्बन्धित हैं उसी प्रकार १८८० से १९०३ के दौरान गोहत्या के विरोध में हुए आन्दोलन के और १८८० के बाद के दस्तावेजों के आधार पर लिखी गई हैं। उनमें एकाध पुस्तक इंग्लैण्ड और अमेरिका के समाज से भी सम्बन्धित है। इसकी सामग्री इंग्लैण्ड में मिली है और यह पढी गई पुस्तकों के आधार पर तैयार की गई है।

१९६० से शुरू हुए इस प्रयास का मुख्य उद्देश्य दो सौ वर्ष पूर्व के भारतीय समाज को समझना ही था। लेकिन मात्र जानना, समझना पर्याप्त नहीं है। उसका इतना महत्त्व भी नहीं है। महत्त्व तो यह जानने समझने का है कि अंग्रेजों से पूर्व का स्वतंत्र भारत, जहाँ उसकी स्थानिक इकाइयां अपनी अपनी दृष्टि और आवश्यकतानुसार अपना समाज चलाती थीं, वह कैसा रहा होगा। अचानक १९६४-६५ में चेन्नई के एगमोर

द्वारा तैयार किए गए दस्तावेजों के अध्ययन की ओर मुड़ा।

लगभग १७५० से १८५० तक अंग्रेजो ने सरकारी अथवा गैर सरकारी स्तर पर इंग्लैण्ड में रहने वाले अपने अधिकारियों तथा परिचितों को लिखे पत्रों की संख्या शायद करोड़ों दस्तावेजों मे होगी। उसमें ८० से ८५ प्रतिशत की प्रतिलिपियां भारत के कोलकता, मद्रास, मुम्बई, दिल्ली, लखनऊ आदि के अभिलेखागारों मे भी हैं। लन्दन की ब्रिटिश इंड़िया ऑफिस में और अन्य अनेक अभिलेखागारों में पाँच से सात प्रतिशत ऐसे भी दस्तावेज होंगे जो भारत में नहीं होंगे। उसमे से बहुत से ऐसे हैं जिनके अध्ययन से अंग्रेजों ने भारत मे क्या किया यह समझ में आता है। उस समय के इंग्लैण्ड के समाज और शासन तंत्र की यदि हमें जानकारी होगी तो अंग्रेजों ने भारत में जो किया उसे समझने में सहायता मिल सकती है।

१९५७ से ही, जब मैं एवार्ड (Association of Voluntary Agencies for Rural Development [AVARD]) का मंत्री बना तब से ही अनेक प्रकार से सीखने का अवसर मिला और अनेक व्यक्तियों की अनेक प्रकार से सहायता भी मिली। उसमें मुख्य थे श्री अण्णासाहब सहस्रबुद्धे और श्री जयप्रकाश नारायण। नागपुर के श्री आर. के. पाटिल ने भी १९५८ से १९८० तक इस काम में बहुत रुचि ली और अलग अलग ढंग से सहायता करते रहे। श्री आर. के. पाटिल पुराने आई सी. एस. थे, योजना आयोग के सदस्य थे, पूर्व मध्यप्रदेश के मंत्री थे और विनोबा जी के निकटवर्ती थे। १९७१ से गांधी शांति प्रतिष्ठान के मंत्री श्री राधाकृष्ण का सहयोग भी बहुत मूल्यवान था। इसी प्रकार गांधी विद्या संस्थान और पटना की अनुग्रह नारायण सिन्हा इन्स्टीटयूट का भी सहयोग मिला। डॉ डी. एस. कोठारी भी शुरू से ही उसमें रुचि लेते थे।

१९७१ में 'इंड़ियन सायन्स एण्ड टेक्नोलॉजी इन द एटीन्थ सेन्चुरी' Indian Science and Technology in the Eighteenth Century और 'सिविल डिसओबिड़ियन्स इन इंड़ियन ट्रेड़िशन' Civil Disobedience in Indian Tradition ऐसी दो पुस्तकें प्रकाशित हुई। उनका विमोचन विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के अध्यक्ष डॉ. दौलतसिंह कोठारी ने किया। पहले ही दिन से उस पुस्तक का परिचय करनेवाले प्रजा समाजवादी पक्ष के नेता और साहित्यकार श्री गंगाशरण सिन्हा, विवेकानंद केन्द्र, कन्याकुमारी के श्री एकनाथ रानडे और अमेरिका की बर्कले यूनिवर्सिटी के प्रोफेसर यूजिन ईर्शिक थे। ईर्शिक के मतानुसार 'सिविल डिसओबिडियन्स इन ईंडियन ट्रेड़िशन' मेरी सबसे उत्तम पुस्तक थी। श्री रामस्वरुप और श्री ए. बी. चटर्जी, जो आई. सी. एस. थे और मिनिस्ट्री ऑफ स्टेट्स के सचिव थे, उनके मतानुसार 'इंड़ियन सायन्स एण्ड

टेक्नोलॉजी इन द एटीन्थ सेन्चुरी' अत्यन्त महत्त्वपूर्ण पुस्तक थी। १९७१ से १९८५ के दौरान इन दोनों पुस्तकों का अनेक प्रकार से उल्लेख होता रहा। देशभर में इसका उल्लेख करनेवालों में मुख्य थे श्री जयप्रकाश नारायण, श्री रामस्वरुप और राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के श्री एकनाथ रानडे, प्रोफ़ेसर राजेन्द्रसिंह और वर्तमान सरसंघचालक श्री सुदर्शन जी।

अभी तक ये पुस्तकें मुख्य रूप से अंग्रेजी में ही हैं। उसका एक विशेष कारण यह है कि उसमें समाविष्ट दस्तावेज सन् १८०० के आसपास अंग्रेजों और अन्य यूरोपीय लोगों ने अंग्रेजी में ही लिखे हैं। प्रारंभ में ही यह सब हिन्दी अथवा अन्य भारतीय भाषा में प्रकाशित करना बहुत मुश्किल लगता था। लेकिन जब तक यह सब भारतीय भाषाओं में प्रकाशित नहीं होता तब तक सर्वसामान्य लोग दो सौ वर्ष पूर्व के भारत के विषय में न जान सकेंगे, न समझ सकेंगे, और न ही चर्चा कर सकेंगे।

इसलिए इन पुस्तकों का अब हिन्दी भाषा मे अनुवाद प्रकाशित हो रहा है यह बहुत प्रशंसनीय कार्य है।[१]

मैं १९६६ तक अधिकांशत: इंग्लैण्ड और सविशेष लन्दन में रहा। उस समय भारत से सम्बन्धित वहाँ स्थित दस्तावेजों में से पांच अथवा दस प्रतिशत सामग्री का मैंने अवलोकन किया होगा। उनमें से कुछ मैंने ध्यान से देखे, कुछ की हाथ से नकल उतार ली, अनेकों की छायाप्रति बना ली। उस दौरान बीच बीच में भारत आकर कोलकता, लखनऊ, मुम्बई, दिल्ली और चेन्नई के अभिलेखागारों में भी कुछ नए दस्तावेज देखे।

उन दस्तावेजों के आधार पर अभी गुजरात से प्रकाशित हो रही अधिकांश पुस्तकें तैयार की गई हैं। ये पुस्तकें जिस प्रकार सन् १८०० के समय के भारत से सम्बन्धित हैं उसी प्रकार १८८० से १९०३ के दौरान गोहत्या के विरोध में हुए आन्दोलन के और १८८० के बाद के दस्तावेजों के आधार पर लिखी गई हैं। उनमें एकाध पुस्तक इंग्लैण्ड और अमेरिका के समाज से भी सम्बन्धित है। इसकी सामग्री इंग्लैण्ड में मिली है और यह पढ़ी गई पुस्तकों के आधार पर तैयार की गई है।

१९६० से शुरू हुए इस प्रयास का मुख्य उद्देश्य दो सौ वर्ष पूर्व के भारतीय समाज को समझना ही था। लेकिन मात्र जानना, समझना पर्याप्त नहीं है। उसका इतना महत्त्व भी नहीं है। महत्त्व तो यह जानने समझने का है कि अंग्रेजों से पूर्व का स्वतंत्र भारत, जहाँ उसकी स्थानिक इकाइयां अपनी अपनी दृष्टि और आवश्यकतानुसार अपना समाज चलाती थीं, वह कैसा रहा होगा। अचानक १९६४-६५ में चेन्नई के एग्मोर

अभिलेखागार में ऐसी सामग्री मुझे मिली, और ऐसी ही सामग्री इग्लैण्ड में उससे भी सरलता से मिली। यदि मै पोर्टुगल और हॉलेण्ड की भाषा जानता तो १६ वीं, १७ वीं सदी में वहॉ भी भारत के विषय में क्या लिखा गया है यह जान पाता। खोजने के बाद भी चालीस वर्ष पूर्व भारतीय भाषाओं मे इस प्रकार के वर्णन नहीं मिले।

हमें तो गत दो तीन हज़ार वर्ष के भारत और उसके समाज को समझने की आवश्यकता है। हम जब उस तरह से समझेंगे तभी भारतीय समाज की पारम्परिक व्यवस्थाओं, तंत्रों, कुशलताओ और आज की अपनी आवश्यकताओ और अपनी क्षमता के अनुसार पुनःस्थापना की रीति भी जान लेंगे और समझ लेंगे।

भारत बहुत विशाल देश है। चार पाँच हजार वर्षों में पड़ोसी देश - ब्रह्मदेश, श्रीलका, चीन, जापान, कोरिया, मंगोलिया, इंड़ोनेशिया, वियतनाम, कम्बोड़िया, मलेशिया, अफगानिस्तान, ईरान आदि के साथ उसका घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है। भारतीयों का स्वभाव और उनकी मान्यताएँ उन देशों के साथ बहुत मिलती जुलती हैं। सन् १५०० के बाद एशिया पर यूरोप का प्रभाव बढा उसके बाद उन सभी पडोसी देशों के साथ की पारस्परिकता लगभग समाप्त हो गई है। उसे पुन: स्थापित करना ज़रूरी है। इसी प्रकार यूरोप, खासकर इंग्लैण्ड और अमेरिका के साथ तीन सौ चार सौ वर्षों से जो सम्बन्ध बढे हैं उनका भी समझ बूझकर फिर से मूल्यांकन करना जरूरी है। यह हमारे लिए और उनके लिए भी श्रेयस्कर होगा। देशो को बिना जरूरत से एक दूसरे के अधिक निकट लाना अथवा एक देश दूसरे देश की ओर ही देखता रहे यह भविष्य की दृष्टि से भी कष्टदायी साबित हो सकता है।

मकरसंक्राति
१४, जनवरी २००५
पौष शुद ५, युगाब्द ५१०६

धर्मपाल
आश्रम प्रतिष्ठान
सेवाग्राम
जिला वर्धा (महाराष्ट्र)

---

१ यह प्रस्तावना गुजराती अनुवाद के लिये लिखी गई है। हिन्दी अनुवाद के लिये श्री धर्मपालजी की ही सूचना के अनुसार उसे यथावत् रखा है : मूल प्रस्तावना हिन्दी में ही है, गुजराती के लिये उसका अनुवाद किया गया था। - सं

सम्पादकीय

१.

सन् १९९२ के जनवरी मास में चैन्नई में विद्याभारती का प्रधानाचार्य सम्मेलन था। उस सम्मेलन में श्री धर्मपालजी पधारे थे। उस समय पहली बार The Beautiful Tree के विषय में कुछ जानकारी प्राप्त हुई। दो वर्ष बाद कोईम्बतूर में यह पुस्तक खरीद की और पढी। पढ़कर आश्चर्य और आघात दोनों का अनुभव हुआ। आश्चर्य इस बात का कि हम इतने वर्षों से शिक्षा क्षेत्र में कार्यरत हैं तो भी इस पुस्तक मे निरुपित तथ्यो की लेशमात्र जानकारी हमें नहीं है। आघात इस बात का कि शिक्षा विषयक स्थिति ऐसी दारुण है तो भी हम उस विषय में कुछ कर नहीं रहे हैं। जो चल रहा है उसे सह लेते हैं और उसे स्वीकृत बात ही मान लेते हैं ।

तभी से उस पुस्तक का प्रथम हिन्दी में और बाद में गुजराती में अनुवाद करके अनेकानेक कार्यकर्ताओं और शिक्षकों तक उसे पहुँचाने का विचार मन में बैठ गया। परन्तु वर्ष के बाद वर्ष बीतते गये। प्रवास की निरन्तरता और अन्यान्य कार्यो में व्यस्तता के कारण मन में स्थित विचार को मूर्त स्वरूप दे पाने का अवसर नहीं आया। इस बीच विद्या भारती विदर्भ ने इसका संक्षिप्त मराठी अनुवाद प्रकाशित किया। 'भारतीय चित्त, मानस एवं काल', 'भारत का स्वधर्म' जैसी पुस्तिकायें भी पढने मे आयीं। अनेक कार्यकर्ता भी इसका अनुवाद होना चाहिये ऐसी बात करते रहे। इस बीच पूजनीय हितरुचि विजय महाराजजी ने गोवा के 'द अदर इड़िया बुक प्रेस' द्वारा प्रकाशित पांच पुस्तकों का संच दिया और पढने के लिये आग्रह भी किया। इन सभी बातों के निमित्त से अनुवाद भले ही नहीं हुआ परन्तु अनुवाद का विचार मन में जाग्रत ही रहा। उसका निरन्तर पोषण भी होता रहा। चार वर्ष पूर्व मुझे विद्याभारती की राष्ट्रीय विद्वत् परिषद के संयोजक का दायित्व मिला। तब मन में इस अनुवाद के विषय में निश्चय सा हुआ। उस विषय में कुछ ठोस बातें होने लगीं। अन्त में पुनरुत्थान ट्रस्ट इस अनुवाद का प्रकाशन करेगा ऐसा निश्चय युगाब्द ५१०६ की व्यास पूर्णिमा को हुआ। सर्व प्रथम तो यह अनुवाद

हिन्दी में ही होना था। उसके बाद हिन्दी एवं गुजराती दोनों भाषाओं में करने का विचार हुआ। परन्तु इस कार्य के व्याप को देखते हुए लगा कि दोनों कार्य एक साथ नहीं हो पायेंगे। एक के बाद एक करने पडेंगे।

साथ ही ऐसा भी लगा कि यह केवल प्रकाशन के लिये प्रकाशन, अनुवाद के लिये अनुवाद तो है नहीं। इसका उपयोग विद्वज्जन करें और हमारे छात्रों तक इन बातों को पहुँचाने की कोई ठोस एवं व्यापक योजना बने इस हेतु से इस सामग्री का भारतीय भाषाओं में होना आवश्यक है। ऐसे ही कार्यो को यदि चालना देनी है तो प्रथम इसका क्षेत्र सीमित करके ध्यान केन्द्रित करना पड़ेगा। इस दृष्टिसे प्रथम इसका गुजराती अनुवाद प्रकाशित करना ही अधिक उपयोगी लगा।

निर्णय हुआ और तैयारी प्रारम्भ हुई। सर्व प्रथम श्री धर्मपालजी की अनुमति आवश्यक थी। हम उन्हें जानते थे परन्तु वे हमे नहीं जानते थे। परन्तु हमारे कार्य, हमारी योजना और हमारी तैयारी जब उन्होंने देखी तब उन्होंने अनुमति प्रदान की। साथ ही उन्होंने अपनी और पुस्तकों के विषय में भी बताया। इन सभी पुस्तकों के अनुवाद का सुझाव भी दिया।

हम फिर बैठे। फिर विचार हुआ। अन्त में निर्णय हुआ कि जब कर ही रहे हैं तो काम पूरा ही किया जाय।

इस प्रकार एक से पांच और पांच से ग्यारह पुस्तकों के अनुवाद की योजना आखिर बन गई।

योजना तो बन गई परन्तु आगे का काम बड़ा विस्तृत था। भिन्न भिन्न प्रकाशकों द्वारा प्रकाशित मूल अंग्रेजी पुस्तकें प्राप्त करना, उन्हें पढना, उनमें से चयन करना, अनुवादक निश्चित करना आदि समय लेनेवाला काम था। अनुवादक मिलते गये, कई पक्के अनुवादक खिसकते गये, अनेपक्षित रूप से नये मिलते गये और अन्त में पुस्तक और अनुवादकों की जोडी बनकर कार्य प्रारम्भ हुआ और सन २००५ और युगाब्द ५१०६ की वर्ष प्रतिपदा को कार्य सम्पन्न भी हो गया। १६ अप्रैल २००५ को राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के परम पूजनीय सरसंघचालक माननीय सुदर्शनजी एवं स्वयं श्री धर्मपालजी की उपस्थिति में तथा अनेपक्षित रूप से बडी संख्या में उपस्थित श्रोतासमूह के मध्य इन गुजराती पुस्तकों का लोकार्पण हुआ।

प्रकाशन के बाद भी इसे अच्छा प्रतिसाद मिला। विद्यालयों, महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयो, ग्रन्थालयों में एवं विद्वज्जनों तक इन पुस्तकों को पहुँचानें में हमें पर्याप्त सफलता प्राप्त हुई। साथ ही साथ महाविद्यालयों एवं विद्यालयों के अध्यापकों एवं

प्रधानाचार्यो के बीच इन पुस्तको को लेकर गोष्ठियों का आयोजन भी हुआ।

इसके बाद सभी ओर से हिन्दी अनुवाद प्रकाशित करने का आग्रह बढने लगा। स्वयं श्री धर्मपालजी भी इस कार्य के लिये प्रेरित करते रहे। अनेक वरिष्ठजन भी पूछताछ करते रहे। अन्त में इन ग्रन्थों के हिन्दी अनुवाद का प्रकाशन तय हुआ। गुजराती अनुवाद कार्य का अनुभव था इसलिये अनुवादक ढूँढने मे इतनी कठिनाई नहीं हुई। सौभाग्य से अच्छे लोग सरलता से मिलते गये और कार्य सम्पन्न होता गया। आज यह आपके सामने है।

इस संच में कुल दस पुस्तकें हैं। (१) भारतीय चित्त, मानस एवं काल (२) १८ वीं शताब्दी में भारत में विज्ञान एवं तंत्रज्ञान (३) भरतीय परम्परा में असहयोग (४) रमणीय वृक्ष : १८ वीं शताब्दी में भारतीय शिक्षा (५) पंचायत राज एवं भारतीय राजनीति तंत्र (६) भारत में गोहत्या का अंग्रेजी मूल (७) भारत की लूट एवं बदनामी (८) गांधी को समझें (९) भारत की परम्परा एवं (१०) भारत का पुनर्बोध। सर्व प्रथम पुस्तक '१८ वीं शताब्दी मे भारत में विज्ञान एवं तंत्रज्ञान' १९७१ में प्रकाशित हुई थी और अन्तिम पुस्तक 'भारत का पुनर्बोध' सन् २००३ में। इनके विषय में तैयारी तो सन् १९६० से ही प्रारम्भ हो गई थी। इस प्रकार यह ग्रंथसमूह चालीस से भी अधिक वर्षों के निरन्तर अध्ययन एवं अनुसन्धान का परिणाम है।

२.

विश्व में प्रत्येक राष्ट्र की अपनी एक विशिष्ट पहचान होती है। यह पहचान उसकी जीवनशैली, परम्परा, मान्यताओं, दैनन्दिन व्यवहार आदि के द्वारा निर्मित होती है। उसे ही सस्कृति कहते हैं।

सामान्य रूप से विश्व में दो प्रकार की विचारशैली, व्यवहारशैली दिखती हैं। एक शैली दूसरों को अपने जैसा बनाने की आकांक्षा रखती है। अपने जैसा ही बनाने के लिए यह जबर्दस्ती, शोषण, कत्लेआम आदि करने में भी हिचकिचाती नहीं, यहां तक की ऐसा करने में दूसरा समाप्त हो जाय तो भी उसे परवाह नहीं। दूसरी शैली ऐसी है जो सभी के स्वत्व का समादर करती है, उनके स्वत्व को बनाए रखने में सहायता करती है। ऐसा करने में दोनों एक दूसरे स प्रभावित होती हैं और सहज परिवर्तन होता रहता है फिर भी स्वत्व बना रहता है।

यह तो स्पष्ट है कि इन दोनों में से पहली यूरोपीय अथवा अमेरिकी शैली है तो दूसरी भारतीय। इन दोनों के लिए क्रमश: 'पाश्चात्य' और 'प्राच्य' ऐसी अधिक व्यापक

हिन्दी में ही होना था। उसके बाद हिन्दी एवं गुजराती दोनों भाषाओं में करने का विचार हुआ। परन्तु इस कार्य के व्याप को देखते हुए लगा कि दोनों कार्य एक साथ नहीं हो पायेंगे। एक के बाद एक करने पड़ेंगे।

साथ ही ऐसा भी लगा कि यह केवल प्रकाशन के लिये प्रकाशन, अनुवाद के लिये अनुवाद तो है नहीं। इसका उपयोग विद्वज्जन करें और हमारे छात्रो तक इन बातों को पहुँचाने की कोई ठोस एवं व्यापक योजना बने इस हेतु से इस सामग्री का भारतीय भाषाओं मे होना आवश्यक है। ऐसे ही कार्यो को यदि चालना देनी है तो प्रथम इसका क्षेत्र सीमित करके ध्यान केन्द्रित करना पड़ेगा। इस दृष्टिसे प्रथम इसका गुजराती अनुवाद प्रकाशित करना ही अधिक उपयोगी लगा।

निर्णय हुआ और तैयारी प्रारम्भ हुई। सर्व प्रथम श्री धर्मपालजी की अनुमति आवश्यक थी। हम उन्हें जानते थे परन्तु वे हमें नहीं जानते थे। परन्तु हमारे कार्य, हमारी योजना और हमारी तैयारी जब उन्होंने देखी तब उन्होंने अनुमति प्रदान की। साथ ही उन्होंने अपनी और पुस्तकों के विषय में भी बताया। इन सभी पुस्तकों के अनुवाद का सुझाव भी दिया।

हम फिर बैठे। फिर विचार हुआ। अन्त में निर्णय हुआ कि जब कर ही रहे हैं तो काम पूरा ही किया जाय।

इस प्रकार एक से पांच और पांच से ग्यारह पुस्तकों के अनुवाद की योजना आखिर बन गई।

योजना तो बन गई परन्तु आगे का काम बड़ा विस्तृत था। भिन्न भिन्न प्रकाशकों द्वारा प्रकाशित मूल अंग्रेजी पुस्तकें प्राप्त करना, उन्हें पढ़ना, उनमें से चयन करना, अनुवादक निश्चित करना आदि समय लेनेवाला काम था। अनुवादक मिलते गये, कई पक्के अनुवादक खिसकते गये, अनेपक्षित रूप से नये मिलते गये और अन्त में पुस्तक और अनुवादकों की जोड़ी बनकर कार्य प्रारम्भ हुआ और सन २००५ और युगाब्द ५१०६ की वर्ष प्रतिपदा को कार्य सम्पन्न भी हो गया। १६ अप्रैल २००५ को राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के परम पूजनीय सरसंघचालक माननीय सुदर्शनजी एवं स्वयं श्री धर्मपालजी की उपस्थिति में तथा अनेपक्षित रूप से बडी संख्या में उपस्थित श्रोतासमूह के मध्य इन गुजराती पुस्तकों का लोकार्पण हुआ।

प्रकाशन के बाद भी इसे अच्छा प्रतिसाद मिला। विद्यालयों, महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयो, ग्रन्थालयों में एवं विद्वज्ज्नों तक इन पुस्तकों को पहुँचानें में हमें पर्याप्त सफलता प्राप्त हुई। साथ ही साथ महाविद्यालयों एवं विद्यालयों के अध्यापकों एवं

प्रधानाचार्यो के बीच इन पुस्तकों को लेकर गोष्ठियो का आयोजन भी हुआ।

इसके बाद सभी ओर से हिन्दी अनुवाद प्रकाशित करने का आग्रह बढने लगा। स्वयं श्री धर्मपालजी भी इस कार्य के लिये प्रेरित करते रहे। अनेक वरिष्ठजन भी पूछताछ करते रहे। अन्त में इन ग्रन्थों के हिन्दी अनुवाद का प्रकाशन तय हुआ। गुजराती अनुवाद कार्य का अनुभव था इसलिये अनुवादक ढूँढने में इतनी कठिनाई नहीं हुई। सौभाग्य से अच्छे लोग सरलता से मिलते गये और कार्य सम्पन्न होता गया। आज यह आपके सामने है।

इस संच में कुल दस पुस्तकें हैं। (१) भारतीय चित्त, मानस एवं काल (२) १८ वीं शताब्दी में भारत में विज्ञान एवं तंत्रज्ञान (३) भरतीय परम्परा में असहयोग (४) रमणीय वृक्ष : १८ वीं शताब्दी में भारतीय शिक्षा (५) पंचायत राज एवं भारतीय राजनीति तंत्र (६) भारत मे गोहत्या का अग्रेजी मूल (७) भारत की लूट एवं बदनामी (८) गांधी को समझें (९) भारत की परम्परा एवं (१०) भारत का पुनर्बोध। सर्व प्रथम पुस्तक '१८ वीं शताब्दी मे भारत में विज्ञान एवं तंत्रज्ञान' १९७१ में प्रकाशित हुई थी और अन्तिम पुस्तक 'भारत का पुनर्बोध' सन् २००३ में। इनके विषय में तैयारी तो सन् १९६० से ही प्रारम्भ हो गई थी। इस प्रकार यह ग्रंथसमूह चालीस से भी अधिक वर्षों के निरन्तर अध्ययन एवं अनुसन्धान का परिणाम है।

२.

विश्व में प्रत्येक राष्ट्र की अपनी एक विशिष्ट पहचान होती है। यह पहचान उसकी जीवनशैली, परम्परा, मान्यताओं, दैनन्दिन व्यवहार आदि के द्वारा निर्मित होती है। उसे ही सस्कृति कहते हैं।

सामान्य रूप से विश्व में दो प्रकार की विचारशैली, व्यवहारशैली दिखती हैं। एक शैली दूसरो को अपने जैसा बनाने की आकांक्षा रखती है। अपने जैसा ही बनाने के लिए यह जबर्दस्ती, शोषण, कत्लेआम आदि करने में भी हिचकिचाती नहीं, यहां तक की ऐसा करने में दूसरा समाप्त हो जाय तो भी उसे परवाह नहीं। दूसरी शैली ऐसी है जो सभी के स्वत्व का समादर करती है, उनके स्वत्व को बनाए रखने में सहायता करती है। ऐसा करने में दोनों एक दूसरे स प्रभावित होती हैं और सहज परिवर्तन होता रहता है फिर भी स्वत्व बना रहता है।

यह तो स्पष्ट है कि इन दोनों में से पहली यूरोपीय अथवा अमेरिकी शैली है तो दूसरी भारतीय। इन दोनों के लिए क्रमश: 'पाश्चात्य' और 'प्राच्य' ऐसी अधिक व्यापक

सञ्ज्ञा का प्रयोग हम करते हैं।

यह तो सर्वविदित है कि भारतीय संस्कृति विश्व में अति प्राचीन है। केवल प्राचीन ही नहीं तो समृद्ध, सुव्यवस्थित, सुसंस्कृत और विकसित भी है।

परन्तु आज से ५०० वर्ष पूर्व यूरोप ने विस्तार करना शुरू किया। समग्र विश्व में फैल जाने की उसको आकांक्षा थी। विश्व के अन्य देशों के साथ भारत भी उसका लक्ष्य था। इंग्लैण्ड में ईस्ट इंडिया कम्पनी बनी। वह भारत में आई। समुद्रतटीय प्रदेशो में उसने अपने व्यापारिक केन्द्र बनाए। उन केन्द्रों को किले का नाम और रूप दिया, उनमें सैन्य भी रखा, धीरे धीरे व्यापार के साथ साथ प्रदेश जीतने और अपने कब्जे में लेने का काम शुरू किया, साथ ही साथ ईसाईकरण भी शुरू किया। सन् १८२० तक लगभग सम्पूर्ण भारत अंग्रेजों के कब्जे में चला गया।

भारत को अपने जैसा बनाने के लिए अंग्रेजों ने यहाँ की सभी व्यवस्थाओं- प्रशासकीय और शासकीय, सामाजिक और सांस्कृतिक, आर्थिक और व्यावसायिक, शैक्षणिक और नागरिक को तोड़ना शुरू किया। उन्होने नए कायदे कानून बनाए, नई व्यवस्थाएँ बनाईं, संरचनाओं का निर्माण किया, नई सामग्री और नई पद्धति की रचना की और जबरदस्ती से उसका अमल भी किया। यह भी सच है कि उन्होंने भारत में आकर जो कुछ किया उसमें से अधिकांश तो इंग्लैण्डमें अस्तित्व में था। इसके कारण भारत दरिद्र होता गया। भारत में वर्ग संघर्ष पैदा हुए। लोगो का आत्मसम्मान और गौरव नष्ट हो गया। मौलिकता और सृजनशीलता कुंठित हो गई, मूल्यों का ह्रास हुआ। मानवीयता का स्थान यांत्रिकता ने लिया और सर्वत्र दीनता व्याप्त हो गई। लोग स्वामी के स्थान पर दास बन गए। एक ऐसे विराट, राक्षसी, अमानुषी व्यवस्था के पुर्जे बन गये जिसे ये बिल्कुल मानते नहीं, समझते नहीं और स्वीकार भी करते नहीं थे, क्योंकि यह उनके स्वभाव के अनुकूल नहीं था।

भारत की शिक्षाव्यवस्था की उपेक्षा करते करते उसे नष्ट कर उसके स्थान पर यूरोपीय शिक्षा लागू करने, प्रतिष्ठित करने का कार्य भारत को तोडने की प्रक्रिया में सिरमौर था। क्योंकि यूरोपीय शिक्षाप्राप्त लोगो के विचार, मानस, व्यवहार, दृष्टिकोण सभी कुछ बदलने लगा। उसका परिणाम सर्वाधिक शोचनीय और घातक हुआ। हमें गुलामी रास आने लगी। दैन्य अखरना बन्द हो गया। अंग्रेजों का दास बनने में ही हमें गौरव का अनुभव होने लगा। जो भी यूरोपीय है वह विकसित है, आधुनिक है, श्रेष्ठ है और जो भी अपना है वह निकृष्ट है, हीन है और लज्जास्पद है, गया बीता है ऐसा हमें लगने लगा। अपनी शिक्षण संस्थाओं में हम यही मानसिकता और यही विचार एक के

बाद एक आनेवाली पीढी को देते गए। इस गुलामी की मानसिकता के आगे अपनी विवेकशील और तेजस्वी बुद्धि भी दब गई। यूरोपीय, या यूरोपीय जैसा बनना ही हमारी आकांक्षा बन गई। देश को वैसा ही बनाने का प्रयास हम करने लगे। अपनी संरचनाएँ, पद्धतियां, संस्थाएँ वैसी ही बन गई।

गांधीजी १९१५ मे दक्षिण अफ्रिका से भारत आए तब भारत ऐसा था। उन्होंने जनमानस को जगाया, उसमें प्राण फूंके, उसकी भावनाओ को अपने वाणी और व्यवहार में अभिव्यक्त कर, भारत के लिए योग्य हजारों वर्षो की परम्परा के अनुसार व्यवस्थाओं, गतिविधियों और पद्धतियों को प्रतिष्ठित किया और भारत को फिर से भारत बनाने का प्रयास किया। स्वतंत्रता के साथ साथ स्वराज को भी लाने के लिए वे जूझे।

परंतु स्वतंत्रता मात्र सत्ता का हस्तान्तरण (Transfer of Power) ही बन कर रह गया। उसके साथ स्वराज नहीं आया। सुराज्य की तो कल्पना भी नहीं कर सकते।

आज की अपनी सारी अनवस्था का मूल यह है। हम अपनी जीवनशैली चाहते ही नहीं हैं। स्वतंत्र भारत में भी हम यूरोप अमेरिका की ओर मुँह लगाये बेठे हैं। यूरोप के अनुयायी बनना ही हमें अच्छा लगता है।

परन्तु, यह क्या समग्र भारत का सच है ? नहीं, भारत की अस्सी प्रतिशत जनसंख्या यूरोपीय विचार और शैली जानती भी नहीं और मानती भी नहीं है। उसका उसके साथ कुछ लेना देना भी नहीं है। उनके रीतिरिवाज, मान्यताएं, पद्धतिया, सब वैसी की वैसी ही हैं। केवल शिक्षित लोग उन्हें पिछड़े और अंधविश्वासी कहकर आलोचना करते हैं, उन्हे नीचा दिखाते हैं और अपने जैसा बनाना चाहते हैं। यही उनकी विकास और आधुनिकताकी कल्पना है।

भारत वस्तुतः तो उन लोगो का बना हुआ है, उन का है। परन्तु जो बीस प्रतिशत लोग हैं वे भारत पर शासन करते है। वे ही कायदे-कानून बनाते हैं और न्याय करते हैं, वे ही उद्योग चलाते है और कर योजना करते हैं। वे ही पढाते हैं और नौकरी देते हैं, वे ही खानपान, वेशभूषा, भाषा और कला अपनाते हैं (जो यूरोपीय हैं) और उनको विज्ञापनों के माध्यम से प्रतिष्ठित करते हैं। यहाँ के अस्सी प्रतिशत लोगों को वे पराये मानते हैं, बोझ मानते हैं, उनमें सुधार लाना चाहते हैं और वे सुधरते नहीं इसलिए उनकी आलोचना करते हैं। वे लोग स्वयं तो यूरोपीय जैसे बन ही गए हैं, दूसरों को भी वैसा ही बनाना चाहते है। वे जैसे कि भारत को यूरोप के हाथों बेचना ही चाहते हैं, जिन लोगों का भारत है वे तो उनकी गिनती में ही नहीं हैं।

इस परिस्थिति को हम यदि बदलना चाहते हैं तो हमें अध्ययन करना होगा -

स्वय का, अपने इतिहास का और अपने समाज का। भारत को तोड़ने की प्रक्रिया को जानना और समझना पड़ेगा। भारत का भारतीयत्व क्या है, किसमें है, किस प्रकार बना हुआ है यह सब जानना और समझना पडेगा। मूल बातों को पहचानना होगा। देश के अस्सी प्रतिशत लोगों का स्वभाव, उनकी आकांक्षाएँ, उनकी व्यवहारशैली को जानना और समझना पड़ेगा। उनका मूल्यांकन पश्चिमी मापदण्डों से नहीं अपितु अपने मापदण्डों से करना पड़ेगा। उसका रक्षण, पोषण और संवर्धन कैसे हो यह देखना पड़ेगा। भारत के लोगों में साहस, सम्मान, आत्मगौरव जाग्रत करना पड़ेगा। भारत के पुनरुत्थान में उनकी बुद्धि, भावना, कर्तृत्वशक्ति और कुशलताओं का उपयोग कर उन्हें सच्चे अर्थ में सहभागी बनाना पडेगा। यह सब हमे पाश्चात्य प्रकार की युनिवर्सिटियों से नहीं अपितु सामान्य, 'अशिक्षित', 'अर्धशिक्षित' लोगो से सीखना होगा।

आज भी यूरोप बनने की इच्छा करनेवाला भारत जोरों से प्रयास कर रहा है और कुंठाओं का शिकार बन रहा है। भारतीय भारत उलझ रहा है, छटपटा रहा है, और शोषित हो रहा है। भाग्य केवल इतना है कि क्षीणप्राण होने पर भी भारतीय भारत गतप्राण नहीं हुआ है। इसलिए अभी भी आशा है - उसे सही अर्थ में स्वाधीन बनाकर समृद्ध और सुसंस्कृत बनाने की।

३.

धर्मपालजी की इन पुस्तकों में इन सभी प्रक्रियाओं का क्रमबद्ध, विस्तृत निरूपण किया गया है। अंग्रेज भारत में आए उसके बाद उन्होने सभी व्यवस्थाओं को तोड़ने के लिए किन चालबाजियों को अपनाया, कैसा छल और कपट किया, कितने अत्याचार किए और किस प्रकार धीरे धीरे भारत टूटता गया, किस प्रकार बदलती परिस्थितियों का अवशता से स्वीकार होता गया उसका अभिलेखों के प्रमाणों सहित विवरण इन ग्रंथों में मिलता है। इंग्लैण्ड के और भारत के अभिलेखागारो में बैठकर, रात दिन उसकी नकल उतार लेने का परिश्रम कर धर्मपालजी ने अंग्रेज कलेक्टरों, गवर्नरो, वाइसरायो ने लिखे पत्रों, सूचनाओं और आदेशों को एकत्रित किया है, उनका अध्ययन कर के निष्कर्ष निकाले हैं और एक अध्ययनशील और विद्वान व्यक्ति ही कर सकता है ऐसे साहस से स्पष्ट भाषा में हमारे लिये प्रस्तुत किया है। लगभग चालीस वर्ष के अध्ययन और शोध का यह प्रतिफल है।

परन्तु इसके फलस्वरूप हमारे लिए एक बड़ी चुनौती निर्माण होती है, क्योंकि -

- आजकल विश्वविद्यालयों में पढ़ाए जाने वाले इतिहास से यह इतिहास भिन्न

है। हम तो अंग्रेजो द्वारा तैयार किए और कराए गए इतिहास को पढते हैं। यहाँ अंग्रेजो ने ही लिखे लेखों के आधार पर निरूपित इतिहास है।

- विज्ञान और तंत्रज्ञान की जो जानकारी उसमे है वह आज पढाई ही नहीं जाती।
- कृषि, अर्थव्यवस्था, करपद्धति, व्यवसाय, कारीगरी आदि की अत्यंत आश्चर्यकारक जानकारिया उसमें है। भारत को आर्थिक रूप में बेहाल और परावलम्बी बनानेवाला अर्थशास्त्र आज हम पढते हैं। यहाँ दी गई जानकारियों में स्वाधीन भारत को स्वावलम्बन के मार्ग पर चल कर समृद्धि की ओर ले जानेवाले अर्थशास्त्र के मूल सिद्धांतों की सामग्री हमे प्राप्त होती है।
- व्यक्ति को किस प्रकार गौरवहीन बनाकर दीनहीन बना दिया जाता है इसका निरूपण है, साथ ही उस सकट से कैसे निकला जा सकता है उसके संकेत भी हैं।
- संस्कृति और समाजव्यवस्था के मानवीय स्वरूप पर किस प्रकार आक्रमण होता है, किस प्रकार उसे यंत्र के अधीन कर दिया जाता है इसका विश्लेषण यहाँ है। साथ ही उसके शिकार बनने से कैसे बचा जा सकता है, उसके लिए दृढता किस प्रकार प्राप्त होती है इसका विचार भी प्राप्त होता है।

यह सब अपने लिए चुनौती इस रूप मे है कि आज हम अनेक प्रकार से अज्ञान से ग्रस्त हैं।

हमारा अज्ञान कैसा है ?

- शिक्षण विषय के वरिष्ठ अध्यापक सहजरूप से मानते हैं कि अंग्रेज आए और अपने देश में शिक्षा आई। उन्हें जब यह कहा गया कि १८ वीं शती में भारत में लाखो की संख्या मे प्राथमिक विद्यालय थे, और चार सौ की जनसंख्या पर एक विद्यालय था, तो वे उसे मानने के लिए तैयार नहीं थे। उन्हें जब 'The Beautiful Tree' दिखाया गया तो उन्हें आश्चर्य हुआ (परन्तु रोमांच अथवा आनन्द नहीं हुआ।)
- शिक्षाधिकारी, शिक्षासचिव, शिक्षा महाविद्यालय के अध्यापक अधिकांशत. इन बातों से अनभिज्ञ हैं। कुछ जानते भी हैं तो यह जानकारी बहुत ही सतही है।

यह अज्ञान सार्वत्रिक है, केवल शिक्षा विषयक ही नहीं अपितु सभी विषयों में है।

इसका अर्थ यह हुआ कि हम स्वयं को ही नहीं जानते, अपने इतिहास को नहीं जानते, स्वयं को हुई हानि को नहीं जानते और अज्ञानियो के स्वर्ग में रहते हैं। यह स्वर्ग भी अपना नहीं है। उस स्वर्ग मे भी हम गुलाम हैं और पश्चिममुखापेक्षी, पराधीन बनकर रह रहे हैं।

४.

इस संकट से मुक्त होना है तो मार्ग है अध्ययन का। धर्मपालजी की पुस्तकें अपने पास अध्ययन की सामग्री लेकर आई हैं, हम सो रहे है तो हमें जगाने के लिए आई हैं, जाग्रत हैं तो झकझोरने के लिए आई हैं, दुर्बल हैं तो सबल बनाने के लिए आई हैं, क्षीणप्राण हुए हैं तो प्राणवान बनाने के लिए आई हैं।

ये पुस्तकें किसके लिए हैं ?

ये पुस्तके इतिहास, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, शिक्षाशास्त्र, जिसे आज की भाषा में ह्यूमेनिटीज कहते हैं, उसके विद्वानों, चिन्तकों, शोधकों, अध्यापकों और छात्रों के लिए हैं।

ये पुस्तकें भारत को सही मायने में स्वाधीन, समृद्ध, सुसंस्कृत, बुद्धिमान और कर्तृत्ववान बनाने की आकांक्षा रखने वाले बौद्धिकों, सामान्यजनों, संस्थाओं, संगठनों और कार्यकर्ताओ के लिए है।

ये पुस्तकें शोध करने वाले विद्वानों और शोधछात्रों के लिए हैं।

प्रश्न यह है कि इन पुस्तको को पढने के बाद क्या करें ?

धर्मपालजी स्वयं कहते हैं कि पढकर केवल प्रशंसा के उद्‌गार, अथवा पुस्तकों की सामग्री एकत्रित करने के परिश्रम के लिए लेखक को शाबाशी देना पर्याप्त नहीं है। उससे अपना संकट दूर नहीं होगा।

आवश्यकता है इस दिशा में शोध को आगे बढाने की, भारत की १८ वीं, १९ वीं शताब्दी से सम्बन्धित दस्तावेजों में से कदाचित पांच सात प्रतिशत का ही अध्ययन इस में हुआ है। अभी भी लन्दन के, भारत की केन्द्र सरकार के तथा राज्यों के अभिलेखागारों में ऐसे असंख्य दस्तावेज अध्ययन की प्रतीक्षा में हैं। उन सभी का अध्ययन और शोध करने की योजना महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयों, शैक्षिक संगठनों और सरकार ने करना आवश्यक है। आवश्यकता के अनुसार इस कार्य के लिए अध्ययन और शोध की स्थानीय और देशी प्रकार की संस्थाएं भी बनाई जा सकती हैं।

इसके लिए ऐसे अध्ययनशील छात्रों की आवश्यकता है। इन छात्रों को मार्गदर्शन तथा संरक्षण प्राप्त हो यह देखना चाहिये।

साथ ही एक साहसपूर्ण कदम उठाना जरूरी है। विश्वविद्यालयों, और महाविद्यालयों के इतिहास, समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र आदि विषयों के अध्ययन मण्डल (बोर्ड ऑफ स्टडीज़) और विद्वत् परिषदो (एकेडमिक काउन्सिल) में इन विषयों पर चर्चा होनी चाहिए, और पाठ्यक्रमों में इसके आधार पर परिवर्तन करना चाहिए। युनिवर्सिटी ग्रन्थ निर्माण बोर्ड इसके आधार पर सन्दर्भ पुस्तकें तैयार कर सकते हैं। ऐसा होगा तभी आनेवाली पीढी को यह जानकारी प्राप्त होगी। यह केवल जानकारी का विषय नहीं है, यह परिवर्तन का आधार भी बनना चाहिए। आवश्यकता पडने पर इसके लिए व्यापक चर्चा जहां सम्भव है ऐसी गोष्ठियों एवं चर्चा सत्रों का आोयजन करना चाहिए।

इसके आधार पर रूपान्तरण कर के जनसामान्य तक ये बाते पहुँचानी चाहिए। कथाएँ, नाटक, चित्र, प्रदर्शनी तैयार कर उस सामग्री का प्रचार-प्रसार किया जा सकता है। इससे जनसामान्य के मन में स्थित सुषुप्त भावनाओ और अनुभूतियों का यथार्थ प्रतिभाव प्राप्त होगा।

माध्यमिक और प्राथमिक विद्यालय मे पढने वाले किशोर और बाल छात्रो के लिए उपयोगी वाचनसामग्री इसके आधर पर तैयार की जा सकती है।

ऐसा एक प्रबल बौद्धिक जनमत तैयार करने की आवश्यकता है जो इसके आधार पर संस्थाएँ निर्माण करे, चलाये, व्यवस्था का निर्माण करे। या तो सरकार के या सार्वजनिक स्तर पर व्यवस्था बदलने की, और नहीं तो सभी व्यवस्थाओं को अपने नियंत्रण से मुक्त कर जनसामान्यके अधीन करने की अनिवार्यता निर्माण करे। सच्चा लोकतंत्र तो यही होगा।

बन्धन और जकडन से जन सामान्य की बुद्धि को मुक्त करनेवाली, लोगों के मानस, कौशल, उत्साह और मौलिकता को मार्ग देने वाली, उनमें आत्मविश्वास का निर्माण करनेवाली और उनके आधार पर देश को फिर से उठाया और खड़ा किया जा सके इस हेतु उसका स्वत्व और सामर्थ्य जगानेवाली व्यापक योजना बनाने की आवश्यकता है।

इन पुस्तकों के प्रकाशन का यह प्रयोजन है।

५.

श्री धर्मपालजी गांधीयुग मे जन्मे, पले। गांधीयुग के आन्दोलनो में उन्होंने भाग लिया, रचनात्मक कार्यक्रमों में भाग लिया, मीराबहन के साथ बापूग्राम के निर्माण में वे सहभागी बने।

महात्मा गांधी के देशव्यापी ही नहीं, तो विश्वव्यापी प्रभाव के बाद भी गांधीजी के अतिनिकट के, अतिविश्वसनीय, गांधीभक्त कहे जाने वाले लोग भी उन्हे नहीं समझ सके, कुछ ने तो उन्हें समझने का प्रयास भी नहीं किया, कुछ ने उन्हें समझा फिर भी उन्हें दरकिनार कर सत्ता का स्वीकार कर भारत को यूरोप के तंत्रानुरूप ही चलाया। उन नेताओं के जैसे ही विचार के लगभग दो चार लाख लोग १९४७ में भारत में थे (आज उनकी संख्या शायद पॉच दस करोड़ हो गई है)। यह स्थिति देखकर उनके मन में जो मंथन जागा उसने उन्हें इस अध्ययन के लिये प्रेरित किया। लन्दन के और भारत के अभिलेखागारो में से उन्होंने असंख्य दस्तावेज एकत्रित किए, पढे, उनका अध्ययन किया, विश्लेषण किया और १८ वीं तथा १९ वीं शताब्दी के भारत का यथार्थ चित्र हमारे समक्ष प्रस्तुत किया। जीवन के पचास साठ वर्ष वे इस साधना मे रत रहे।

ये पुस्तकें मूल अंग्रेजी में हैं। उनका व्यापक अध्ययन होने के लिए ये भारतीय भाषाओं में हों यह आवश्यक ही नहीं अनिवार्य भी है। कुछ लेख हिन्दी में हैं और 'जनसत्ता' आदि दैनिक मे और 'मंथन' आदि सामयिकों में प्रकाशित हुए हैं । मराठी, तेलुगु, कन्नड आदि भाषाओं मे कुछ अनुवाद भी हुआ है परन्तु संपूर्ण और समग्र प्रयास तो गुजराती में ही प्रथम हुआ है। और अब हिन्दी में हो रहा है।

इस व्यापक शैक्षिक प्रयास का यह अनुवाद एक प्रथम चरण है।

६.

इस ग्रन्थ श्रेणी में विविध विषय हैं। इसमें विज्ञान और तंत्रज्ञान है; शासन और प्रशासन है, लोकव्यवहार और राज्य व्यवहार है; कृषि, गोरक्षा, वाणिज्य, अर्थशास्त्र नागरिक शास्त्र भी है। इसमें भारत, इग्लैंड और अमेरिका है। परन्तु सभी का केन्द्रबिन्दु हैं गांधीजी, कोग्रेस, सर्वसामान्य प्रजा और ब्रिटिश शासन।

और उनके भी केन्द्र मे है भारत।

अत: एक ही विषय विभिन्न रूपों में, विभिन्न संदर्भो के साथ चर्चा में आता रहता है। और फिर विभिन्न समय में, विभिन्न स्थान पर, भिन्न भिन्न प्रकार के श्रोताओं के सम्मुख और विभिन्न प्रकार की पत्रिकाओं के लिये भाषण और लेख भी यहां समाविष्ट हैं। अत: एक साथ पढने पर उसमें पुनरावृत्ति दिखाई देती है-विचारोंकी, घटनाओं की, दृष्टान्तों की। सम्पादन करते समय पुनरावृत्ति को यथासम्भव कम करने का प्रयास किया है। इसीके परिणाम स्वरुप गुजराती प्रकाशन में ११ पुस्तकें थीं और हिन्दी में १० हुई हैं। परंतु विषय प्रतिपादन की आवश्यकता देखते हुए पुनरावृत्ति कम करना हमेशा संभव नहीं हुआ है।

फिर, सर्वथा पुनरावृत्ति दूर कर उसे नये ढंग से पुनर्व्यवस्थित करना तो वेदव्यास

का कार्य हुआ। हमारे जैसे अल्प क्षमतावान लोगों के लिये यह अधिकारक्षेत्र के बाहर का कार्य है।

अत: सुधी पाठकों के नीरक्षीर विवेक पर भरोसा करके सामग्री यथातथ स्वरूप मे ही प्रस्तुत की है।

यहां दो प्रकार की सामग्री है। एक है प्रस्तुत विषय से प्रत्यक्ष रूप से सम्बन्धित यूरोप के अधिकारियों और बौद्धिकोने प्रत्यक्षदर्शी प्रमाणों एवं स्वानुभव के आधार पर, विभिन्न प्रयोजन से प्रेरित होकर प्रस्तुत की हुई भारत विषयक जानकारी, और दूसरी है धर्मपालजीने इस सामग्री का किया हुआ विश्लेषण, उससे प्राप्त निष्कर्ष और उससे प्रकाशित ब्रिटिशरों के कार्यकलापों का, कारनामो का अन्तरंग।

इसमे प्रयुक्त भाषा दो सौ वर्ष पूर्व की अंग्रेजी भाषा है, सरकारी तंत्र की है, गैर साहित्यिक अफसरों की है, उन्होंने भारत को जैसा जाना और समझा वैसा उसका निरूपण करनेवाली है। और धर्मपालजी की स्वयं की भाषा भी उससे पर्याप्त मात्रा में प्रभावित है।

फलत: पढते समय कहीं कहीं अनावश्यक रूप से लम्बी खींचनेवाली शैली का अनुभव आता है तो आश्चर्य नहीं।

और एक बात।

अंग्रेजो ने भारत के विषय में जो लिखा वह हमारे मन मस्तिष्क पर इस प्रकार छा गया है कि उससे अलग अथवा उससे विपरीत कुछ भी लिखे जाने पर कोई उसे मानेगा ही नहीं यह भी सम्भव है। इसलिए यहाँ छोटी से छोटी बात का भी पूरा पूरा प्रमाण देने का प्रयास किया गया है। साथ ही इतिहास लेखन का तो यह सूत्र ही है कि नामूलं लिख्यते किञ्चित् - बिना प्रमाण तो कुछ भी लिखा ही नहीं जाता। परिणामतः यहाँ शैली आज की भाषा में कहा जाए तो सरकारी छापवाली और पांडित्यपूर्ण है, शोध करनेवाले अध्येता की है।

प्रमाणो के विषयमें तो आज भी स्थिति यह है कि इसमें ब्रिटिशरों के स्वयं के द्वारा दिये गये प्रमाण हैं इसलिये पाठकों को मानना ही पडेगा इस विषय में हम आश्वस्त रह सकते हैं। (आज भी उसका तो इलाज करना जरूरी है।)

साथ ही, पाठकों का एक वर्ग ऐसा है जो भारत के विषय में भावात्मक, या भक्तिभाव पूर्ण बातें पढने का आदी है, अथवा वैश्विक परिप्रेक्ष्य में लिखा गया, अर्थात् अमेरिका के दृष्टिकोण से लिखा गया विचार पढ़ने का आदी है। इस परिप्रेक्ष्य में विषय सम्बन्धी पारदर्शी, ठोस, तर्कनिष्ठ प्रस्तुति हमें इस ग्रंथवाली में प्राप्त है। अनेक विषयों -

में अनेक प्रकार से हमें बुद्धिनिष्ठ होने की आवश्यकता है इसकी प्रतीति भी हमें इसमे होती है।

७.

अनुवादकों तथा जिन जिन लोगों ने ये पुस्तके मूल अंग्रेजी में पढ़ी हैं अथवा अनुवाद के विषय में जाना है उन सभी का सामान्य प्रतिभाव है कि इस काम में बहुत विलम्ब हुआ है। यह बहुत पहले होना चाहिये था। अर्थात् सभी को यह कार्य अतिमहत्त्वपूर्ण लगा है। सभी पाठकों को भी ऐसा ही लगेगा ऐसा विश्वास है।

अनुवाद का यह कार्य चुनौतीपूर्ण है। एक तो दो सौ वर्ष पूर्व की अंग्रेज अधिकारियों की भाषा; फिर भारतीय परिवेश और परिप्रेक्ष्य को अंग्रेजी मे उतारने और अपने तरीके से कहने के आयास को व्यक्त करने वाली भाषा और उसके ही रंग में रंगी श्री धर्मपालजी की भी कुछ जटिल शैली पाठक और अनुवादक दोनो की परीक्षा लेनेवाली है।

साथ ही यह भी सच है कि यह उपन्यास नहीं है, *गम्भीर वाचन* है।

संक्षेप में कहा जाय तो यह १८ वीं और १९ वीं शताब्दी का दो सौ वर्ष का भारत का केवल राजकीय नहीं अपितु सांस्कृतिक इतिहास है।

८.

इस ग्रंथावलि के गुजराती अनुवाद कार्य के श्री धर्मपालजी साक्षी रहे। उसका हिन्दी अनुवाद चल रहा था तब वे समय समय पर पृच्छा करते रहे। परन्तु अचानक ही दि. २४ अक्टूबर २००६ को उनका स्वर्गवास हुआ। स्वर्गवास के आठ दिन पूर्व तो उनके साथ बात हुई थी। आज हिन्दी अनुवाद के प्रकाशन के अवसर पर वे अपने बीच में विद्यमान नहीं हैं। उनकी स्मृति को अभिवादन करके ही यह कार्य सम्पन्न हो रहा है।

९.

इस ग्रंथावलि के प्रकाशन में अनेकानेक व्यक्तियों का सहयोग एवं प्रेरणा रहे हैं। उन सभी के प्रति कृतज्ञता ज्ञापन करना हमारा सुखद कर्तव्य है।

अनेकानेक कार्यकर्ता एवं विशेष रूप से राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सहसरकार्यवाह माननीय सुरेशजी सोनी की प्रेरणा, मार्गदर्शन, आग्रह एवं सहयोग के कारण से ही इस ग्रंथावलि का प्रकाशन सम्भव हुआ है। अत: प्रथमत: हम उनके आभारी हैं।

सभी अनुवादको ने अपने अपने कार्यक्षेत्र मे अत्यन्त व्यस्त होते हुए भी समय सीमा मे अनुवाद कार्य पूर्ण किया तभी समय से प्रकाशन सम्भव हो पाया। उनके परिश्रम के लिये हम उनके आभारी हैं।

यह ग्रंथावलि गुजरात में प्रकाशित हो रही है। इसकी भाषा हिन्दी है। हिन्दी भाषी लोगों पर भी गुजराती का प्रभाव होना स्वाभाविक है। इसका परिष्कार करने के लिये हमें हिन्दीभाषी क्षेत्र के व्यक्तियों की आवश्यकता थी। जोधपुर के श्री भूपालजी और इन्दौर के श्री अरविंद जावडेकरजी ने इन पुस्तकों को साद्यन्त पढकर परिष्कार किया इसलिये हम उनके प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करते हैं।

अच्छे मुद्रण के लिये साधना मुद्रणालय ट्रस्ट के श्री भरतभाई पटेल और श्री धर्मेश पटेल ने भी जो परिश्रम किया है इसके लिये हम उनके आभारी हैं।

'पुनरुत्थान' के सभी कार्यकर्ता तो तनमन से इसमें लगे ही है। इन सभी के सहयोग से ही इस ग्रन्थावलि का प्रकाशन हो रहा है।

१०.

सुधी पाठक देश की वर्तमान समस्याओं के निराकरण की दिशा में विचार विमर्श करते समय, नई पीढ़ी को इस देश के इतिहास में अंग्रेजों की भूमिका का सही आकलन करना सिखाते समय इस ग्रंथावलि की सामग्री का उपयोग कर सकेंगे तो हमारा यह प्रयास सार्थक होगा।

साथ ही निवेदन है कि इस ग्रंथावलि में अनुवाद या मुद्रण के दोषों की ओर हमारा ध्यान अवश्य आकर्षित करें। हम उनके बहुत आभारी होगे।

इति शुभम् ।

सम्पादक

वसन्त पंचमी
युगाब्द ५१०८
२३, जनवरी २००७
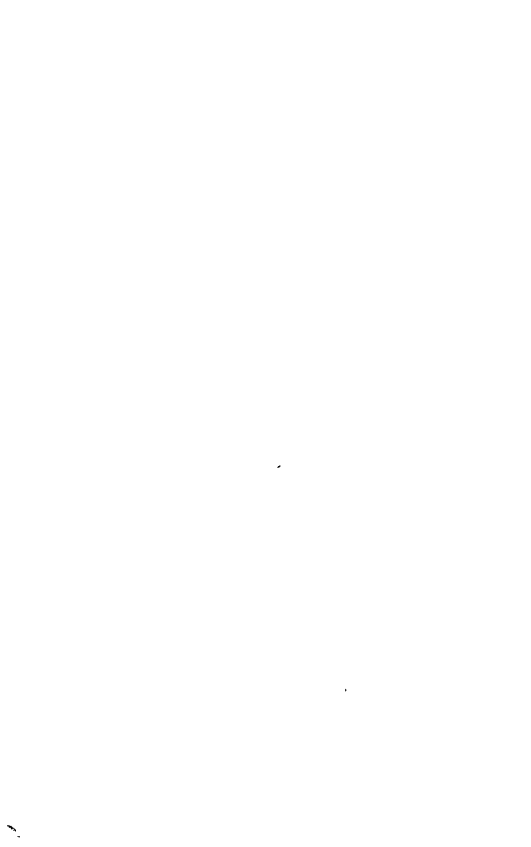
१. उपोद्घात

योजना प्रकल्पो के सन्दर्भ में बलवन्तराय समिति के रूप में प्रसिद्ध समिति का वृत्तान्त १९५७ में प्रकट होते ही अत्यधिक उत्तेजना एवं अपेक्षाएँ उत्पन्न हुईं। उस समिति ने राज्य के ग्रामविकास कार्यक्रमों को त्रिस्तरीय अर्थात् गॉव, समुदाय विकास इकाई Community Development Block) और जिला संवैधानिक संस्थाओ द्वारा कार्यशील बनाने की अभिलाषा की थी और इन संस्थाओं को 'पंचायत राज' नाम दिया था। इसके पश्चात् कुछ ही महीनों में, देश के प्रत्येक राज्य द्वारा रचित कानून द्वारा ऐसी संस्थाओं का आरम्भ हुआ। इन संस्थाओं के द्वारा विकास कार्यक्रमों के संचालन का प्रारम्भ १९५९ में, राजस्थान से हुआ।

इस संचालन के द्वारा की जानेवाली गतिविधियां और समीक्षाएँ निहित सम्बन्धवाले समूहों में आरम्भ हुईं। सन् १९६० या ६१ के दौरान इस नए कार्यक्रम के सन्दर्भ में अनेक अध्ययन किए गये। 'द एसोसिएशन ऑव वालन्टरी एजन्सी फॉर रूरल डेवलपमेन्ट' (AVARD), दिल्ली को भी इस कार्यक्रम में गहरी रुचि थी। इस कारण प्रथम राजस्थान और बाद में आन्धप्रदेश में स्थान-अध्ययन आरम्भ हुआ। इस के साथ ही, भारतीय राज्य व्यवस्था में पंचायतों के स्थान के सन्दर्भ में भारत की संविधान सभा में १९४७ से १९४९ के कालखण्ड में हुई चर्चाओं का अध्ययन 'एवार्ड' द्वारा आरम्भ हुआ। इस विषय में हुई समग्र चर्चा का, १९६२ में, एवार्ड ने संकलन किया और 'भारतीय राज्य संचालन की आधारशिला पंचायत राज : संविधान सभा की कार्यवाही की गहन समीक्षा' Panchayat Raj as the Basis of Indian Polity : An exploration into the proceedings of the Constituent Assembly के शीर्षक से उसका प्रकाशन हुआ। इस प्रकाशन ने, इस विषय के कुछ विस्मृत अध्याय को पुन: उजागर किया। उसने पर्याप्त परिचर्चाओं को जन्म दिया, रुचि पैदा की। इस समीक्षा का सब से पहला विचार मेरे मित्र एल. सी. जैन ने प्रस्तुत किया।

'एवार्ड' के पूर्व के अध्ययन और 'भारतीय राज्यव्यवस्था की आधारशिला

पंचायत राज' के प्रकाशन ने, १९५८ के बाद के पंचायत राज कार्यक्रमों के विषय में गहन अध्ययन करने की प्रेरणा दी। उस समय केन्द्र का समूह विकास एवं पंचायत राज मंत्रालय और राष्ट्रीय समुदाय विकास संस्थान (National Institute of Community Development) भी इस विचार से सम्मत थे। निर्णय हुआ कि अध्ययन को प्रभावी बनाने के लिए अखिल भारतीय पंचायत परिषद (AIPP) सर्वाधिक योग्य संस्था है। सभी परामर्शों पर विचार कर १९६३ के अन्त में निश्चित हुआ कि सर्वप्रथम मद्रास अर्थात तमिलनाडु राज्य की पंचायत पद्धति का अध्ययन किया जाए। तमिलनाडु के ग्रामविकास एवं स्थानीय संचालन (RDLA) विभाग द्वारा अध्ययन के इस विचार का स्वागत करते हुए सभी प्रकार से सहयोग एवं सहायता प्रदान की गई। तमिलनाडु के विकास कमिशनर श्री वी. वेंकट चेल्लापति ने व्यक्तिगत स्तर पर रुचि लेकर, अ.भा.पं.प. (AIPP) के अध्येता समूह को ग्रामविकास और स्थानीय संचालन विभाग के १९३८ तक के अधिकांश अभिलेखों का प्रबन्ध सुगम कर दिया। यह प्रबन्ध उनकी रुचि का द्योतक है। तमिलनाडु पंचायत युनियन (संघ) के अध्यक्ष श्री के. राजाराम और मद्रास (तमिलनाडु) विश्वविद्यालय के राजनीतिशास्त्र विभाग के अध्यक्ष प्रो. आर. भास्करन के अध्येता समूह का परामर्श सहयोग प्राप्त हुआ। चेन्नाई (मद्रास) के सुविख्यात और तमिलनाडु सर्वोदय मंडल के श्री एस. आर. सुब्रमण्यम से भी बहुत सहायता प्राप्त हुई थी। राष्ट्रीय समुदाय विकास संस्थान, उसके निदेशक और विद्वानों की ओर से भी इस अध्ययन में निरन्तर सहायता प्राप्त होती रही थी।

सन् १९६४ के आरम्भ में शुरू किया गया अध्ययन सन् १९६५ में सम्पन्न हुआ। १९६५ के उत्तरार्ध में 'मद्रास पंचायत पद्धति' (The Madras Panchayat System) लिपिबद्ध हुई और जनवरी १९६६ में उसका अन्तिम प्रारूप तैयार हुआ। उसके अध्याय ५ - 'समस्या (The Problem)' में निर्दिष्ट, १८वीं शती के अन्त और १९वीं शती के प्रारम्भकाल के भारत और उस समय के अंग्रेजों द्वारा अपनाई गई नीति विषयक सामग्री की जाँच भी तमिलनाडु राज्य अभिलेखागार द्वारा की गई थी ! अगस्त-सितम्बर १९६५ में लेखक को लन्दन जाना पड़ा, उस समय इन्डिया ऑफिस लाइब्रेरी और ब्रिटिश लाइब्रेरी, लन्दन में सन् १८०० के सन्दर्भ में कुछ अधिक जानकारी प्राप्त करने का अवसर मिला।

आप अनुभव कर सकेंगे कि १९६४-६५ की समयावधि में किया गया यह अध्ययन आज हुआ हो ऐसा लगता है। बलवन्तराय महेता समिति की अभिशंसाओं के आधार पर १८५८ के पश्चात् गठित हुई पंचायत संस्थाएँ १९६५ के बाद शिथिल

बनती गईं। सन् १८८० के कालखण्ड में अंग्रेजों द्वारा ऐसी संस्थाओं के गठन के पश्चात् ऐसा कई बार होता रहता था। इसी प्रकार अन्ततोगत्वा इन संस्थाओं का पतन (१९६५ में) आरम्भ हुआ। पिछले दशक या उसी समयावधि में नई पंचायत संस्थाओ की रचना हुई है और आग्रहपूर्वक कहा जाता है कि महिलाएँ, अनुसूचित जाति/जनजाति के सदस्यों की सहभागिता की मात्रा तथा राज्य सरकार के बजट की दृष्टि से १९२० के प्रावधान की तुलना में शोध के अधिक प्रावधान के साथ नई रचना हुई है। इस प्रकार के आधिकारिक कथन के पश्चात् भी यह सम्भव है कि १९२५ की समयावधि के उनके पुरोगामियों की तुलना में अधिक आत्मनिर्भरता या संसाधनों के सन्दर्भ में अधिकार या कार्यक्षमता में वृद्धि नहीं हुई है।

१८वीं शती के अन्त और १९वीं शती के प्रारम्भ की पृष्ठभूमि (अध्याय पाँच में निर्दिष्ट) से सम्बन्धित, भारत के अधिकांश हिस्से की सामग्री ब्रिटिश दस्तावेजो में उपलब्ध है। ब्रिटिशों की दासता में आने से पूर्व भारतीय समाज की कार्यशैली कैसी थी, ब्रिटिश नीति के कारण भारत देश किस प्रकार दरिद्रता के गर्त में डूब गया और उसकी संस्थाओं का किस प्रकार पतन हुआ इसके सन्दर्भ में कुछ संकेत मद्रास पंचायत पद्धति के वर्तमान अध्ययन के बाद की कृतियों में मैंने किया है। तंजावुर तमिल विश्वविद्यालय मे संग्रहित (तमिलनाडु राज्य अभिलेखागार में आंशिक वृतान्त है), सन् १७७० के समय में रचित प्राप्त भोजपत्रों में तत्कालीन समय का सुश्लिष्ट संस्थानीय ढाँचा, कृषि उत्पादनों के विवरण, विभिन्न क्षेत्रों की जातियां और व्यवसाय पर आधारित समाजरचना के अतिरिक्त उस समय के चेंगलपट्टु जिले के २००० गाँव और नगरों की जानकारी का अध्ययन भी सेन्टर फोर पोलिसी स्टडीज, चेन्नाई में हो रहा है।

सेवाग्राम
दिसम्बर १९९९

धर्मपाल

२. विषय प्रवेश

मुझे यह मान्य करना होगा कि मैं संविधान सभा की कार्यवाही समझ नहीं पाया हूँ.. (वृतान्त बताता है) कि सूचित संविधान में पंचायतें और विकेन्द्रीकरण का उल्लेख नहीं है। हमारी स्वतंत्रता में लोगों की आवाज के प्रतिघोष का संकेत पाने की इच्छा हम रखते हैं तो इस क्षति के प्रति अविलम्ब ध्यान देना आवश्यक है। पंचायतों के पास जितनी अधिक सत्ता होगी, उतना लोगों को विशेष लाभ होगा...

(गाँधीजी, 'हरिजन', २१ दिसम्बर १९४७)

स्वन्तत्र भारत के संविधान के हेतु और उद्देश्यों का प्रस्ताव १३ दिसम्बर १९४६ को संविधान सभा में प्रस्तुत किया गया था । वह समय भारी उथलपुथल और अनिश्चितता का था। भारत के दूसरे क्रम के पक्ष, मुस्लिम लीग ने संविधान सभा का बहिष्कार किया था। और तत्कालीन रियासतों के अधिकांश प्रतिनिधियों का साथ प्राप्त करना था। ऐसा होते हुए भी गांधीजी हमारे साथ ही थे। अत: स्वतंत्र भारत में गाँवो का स्थान, सरकार में उनकी भूमिका और भारतीय गाँवों के परिप्रेक्ष्य में स्वराज्य का अर्थ आदि विषयों का इस प्रस्ताव में प्रत्यक्ष संकेत नहीं था। परन्तु इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है। सम्भवत: उस समय ऐसा मान लिया गया था कि, *'भारत के लोगों के मन की भावनाएँ'*, और यहाँ *(संविधानसभा के कक्ष में)* उनकी *(गाँधीजी की)* परोक्ष उपस्थिति निरन्तर अनुभूत है और हमारे कार्य को आशीर्वाद देती है' जैसे बार-बार कहे जानेवाले वाक्यों में ही बताने योग्य सब कुछ समाहित है। प्रस्ताव प्रस्तुत करते हुए (श्री जवाहरलाल नेहरू) ने कहा था।

'निसंदेह ! हमारा लक्ष्य लोकतंत्र है, लोकतंत्र से कम कुछ भी नहीं ! हाँ, यह अलग बात है कि उसका प्रारूप क्या होगा और वह किस प्रकार का रूप लेगा। वर्तमान लोकतंत्र ने, जिनमें अधिकांश यूरोप में एवं अन्यत्र हैं, विश्व के विकास में महती भूमिका निभाई है। ऐसा होते हुए भी पूर्णतः लोकतांत्रिक रहने के लिए इन लोकतंत्रों के विषय में यह कहना संदेहास्पद है कि निकट के भविष्य में उसके प्रारूप में उन्हें

परिवर्तन नहीं करना पड़ेगा। मुझे आशा है कि हम किसी तथाकथित जनतंत्र की कुछ लोकतांत्रिक पद्धतियों या संस्था के प्रतिरूप नहीं बनेंगे ! हम सम्भवत: उसमें संशोधन करेंगे। हम सरकारी तंत्र का चाहे कैसा भी गठन करें, वह किसी भी स्थिति मे, हमारे लोगों की मानसिकता के साथ सुसंगत और उसे स्वीकार्य होगा। हम जनतंत्र के समर्थक हैं। इस जनतंत्र का, संपूर्ण लोकतंत्र का स्वरूप निश्चित करने का दायित्व 'सदन' (संविधानसभा) का है ऐसा मेरा मानना है।''

प्रस्ताव के समर्थन में अपने विचार व्यक्त करनेवाले वक्ताओं ने राजनीतिक ढाँचे का और प्रत्येक गाँव के लिए 'स्वराज' की सार्थकता का संक्षेप मे वर्णन किया। गाँधीजी के तत्कालीन एक नवीन निवेदन के सन्दर्भ से यह विषय स्पष्ट हुआ था। गाँधीजी ने कहा था -

'सत्ता का केन्द्रबिन्दु इस समय दिल्ली, कोलकला या मुंबई में अर्थात् बड़े नगरों में है। मैं उसे भारत के सात लाख गाँवो में बाँटना चाहूँगा ...

ऐसा होने से स्वैच्छिक सहयोग उत्पन्न होगा - नाझी पद्धति से थोपा हुआ सहयोग नहीं, स्वैच्छिक सहयोग सही अर्थ में स्वतंत्रता लायेगा और रूस के 'न्यू ऑर्डर' अर्थात् नई कार्यशैली की तुलना में बहुत श्रेष्ठ नई शैली का निर्माण होगा ...

कुछ लोग (बचाव करते हुए) कहते हैं कि रूस मे निष्ठुर व्यवहार होता है, परन्तु उसका प्रयोग सर्वथा निम्नस्तर के और अति गरीबों के हित में होता है, और इसीलिए ठीक है। मेरी दृष्टि से उसमे अच्छा कुछ भी नहीं है।'

शेष लोग भी (चर्चा में) सम्मिलित हों इसलिए कुछ समय के लिए प्रतीक्षा करने के पश्चात् (लोग सम्मिलित नहीं हुए थे), लगभग एक महीने के बाद अन्ततोगत्वा २२ जनवरी १९४७ को संविधान के हेतु और उद्देश्यों का प्रस्ताव पारित किया गया। उस समय स्वतंत्रता के विषय में विचारविमर्श जारी था। देश की एकता और अखण्डता दांव पर लगी हुई थी। जिसके पास कोई ठोस विचार था या कहने योग्य बात थी ऐसे लोग अधिक तत्काल विषयों में उलझे हुए थे।

परन्तु, संविधान सभा का सचिवालय निष्क्रिय नहीं था। उसके परामर्शक श्री बी. एन. राउ की सहायता से उसने यूरोप, अमेरिका और रूस समेत विभिन्न देशों के संविधान का अध्ययन आरम्भ किया। स्वतंत्रता प्राप्त होने के पश्चात् कुछ दिनों में ही, १९४७ के अगस्त में संविधान का प्रारूप सदस्यों के सामने रखा गया। इसके साथ ही, संसदीय विभाग के मंत्री ने २९ अगस्त १९४७ को प्रस्ताव प्रस्तुत कर संविधानसभा के निर्णय का अनुसरण करते हुए उसके, सचिवालय में गठित, संविधान

के प्रारूप का अन्वीक्षण और आवश्यक संशोधन करने के लिए एक समिति के गठन का प्रस्ताव रखा। कुछ परिवर्तनों के साथ प्रस्ताव उसी दिन पारित हुआ। इस समिति में निम्न सदस्य थे :

१. श्री अलादी कृष्णास्वामी अय्यर
२. श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर
३. डॉ. बी आर आम्बेडकर
४. श्री क. मा. मुनशी
५. श्री सैयद महंमद सादुल्ला
६. श्री बी. एल मित्तर
७. श्री डी. पी. खैतान

अन्वीक्षण समिति (Scrutiny Committee) द्वारा संशोधित प्रारूप ४ नवेम्बर १९४८ को पुन: संविधान सभा के समक्ष प्रस्तुत किया गया। प्रारूप अन्वीक्षण समिति को सोंपा गया था उन पन्द्रह महीनों के दौरान संशोधित प्रारूप प्रकाशित एवं प्रसारित किया गया। इस प्रारूप ने कई विवाद एवं चर्चाओं को जन्म दिया। उस समय सार्वजनिक रूप में और संविधान सभा में भारी उत्तेजना और रोष उत्पन्न करनेवाला एक विषय, सम्भवत: राजनीतिक ढाँचे के स्थान के सन्दर्भ में था। अप्रैल १९४८ में ही संविधानसभा के अध्यक्ष ने यह विषय संवैधानिक परामर्शक की राय प्राप्त करने के लिए भेजा था। उनके द्वारा प्रस्तुत की गई टिप्पणी में कहा गया था कि,

'पंचायत की योजना का स्वीकार किया जाए तो भी प्रत्येक प्रान्त और देशी रियासत के लिए और नगरो के लिए कुछ महत्त्वपूर्ण और उचित परिवर्तन करने होंगे। अन्य आपत्तियों पर ध्यान न दें तो भी यह कार्य अधिक समय लेगा और संविधान की स्वीकृति में विलम्ब होगा। इसलिए ठीक यह रहेगा कि संविधान को स्वीकृति प्राप्त हो जाने के पश्चात् पूरक कानून का प्रावधान किया जाए।'

यह भी चौंकानेवाली बात है कि अन्वीक्षण समिति ने, स्वाधीन भारत के संविधान की रचना करने का दायित्व किस प्रकार निभाया था। पाण्डुलिपि के द्वितीय पठन के आरम्भ से, अन्वीक्षण समिति की ओर से वक्तव्य देते हुए नवम्बर १९४८ को श्री टी. टी. कृष्णमाचारी ने कहा था कि,

'इसके साथ ही मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि इस समय जो महत्त्वपूर्ण बात थी कि - संविधान की रचना करने के लिए प्रारूप समिति ने (Drafting Committee)

आवश्यक ध्यान नहीं रखा है - इस सदन को सम्भवत: जानकारी है ही कि आपके द्वारा नियुक्त किये गए सात सदस्यों में से एक ने त्यागपत्र दिया था इसलिए उसके स्थान पर नई नियुक्ति हुई थी। एक सदस्य का स्वर्गवास हुआ था पर उसके स्थान पर नियुक्ति नहीं हुई। एक सदस्य अमेरिका में थे और उनके स्थान में भी कोई परिवर्तन नहीं हुआ है, अन्य एक सदस्य राजनीति में प्रवृत्त थे और उतने समय तक शून्यावकाश था। एक-दो सदस्य दिल्ली से बहुत दूर के क्षेत्र में थे और सम्भवत: स्वास्थ्य के कारण बैठकों में उपस्थित नहीं रह पाते थे। इस कारण से संविधान का प्रारूप तैयार करने का बोज डॉ. आम्बेडकर के सिर पर आ गया। इसमे सन्देह नहीं है कि यह दायित्व उनके द्वारा प्रशंसनीय रूप से निभाया गया। इस के लिए हम सब उनके आभारी हैं। परन्तु, मेरा कथन वास्तव में कुछ यह है कि इस प्रकार के दायित्व के लिए समग्र समिति द्वारा आवश्यक ध्यान नहीं दिया गया है। संविधान सभा के सचिवालय ने मुझे और अन्य कुछ सदस्यों को अप्रैल में सूचना दी थी कि आपने (सदन ने) तय किया है कि संघीय अधिकार समिति (Union Power Committee), संघीय संविधान समिति और प्रान्तीय (Provincial) संविधान समिति के सदस्य एवं कुछ चयनित लोगों ने मिलकर सदन के सदस्यों और जनसामान्य की ओर से सूचित विभिन्न संशोधनो के विषय में विचारविमर्श को स्थान दिया जाए। विगत अप्रैल में, दो दिन के लिए, एक बैठक आयोजित भी हुई थी। मुझे लगता है कि उसमें कुछ अच्छा कार्य हुआ था। और मैंने देखा है कि समिति द्वारा निर्दिष्ट कुछ सिफारिशों को लेकर डॉ. आम्बेडकर और माधवराव के बीच मुलाकात हुई थी और उन्होने निर्दिष्ट संशोधनों को ध्यान में रखते हुए कुछ निर्देश दिए थे, परंतु तकनिकी दृष्टि से वह प्रारूप समिति नहीं थी। इस विषय में आपके निर्णय को मैं चुनौती नहीं दूंगा। परन्तु हमें स्वीकार करना चाहिए कि जिस समय समिति द्वारा वृतान्त प्रस्तुत किया जाता है उसी क्षण से वह अधिकृत रूप से विसर्जित होती है और मुझे याद नहीं है कि आपके द्वारा समिति का पुनर्गठन किया गया है या नहीं। ऐसा कहने के पीछे मेरा तात्पर्य यही है कि हमारे संविधान के कुछ पक्ष विषय के जानकारों के विचारविमर्श एवं स्पर्श से वंचित रहे हैं। श्री गोपाल स्वामी आयंगर या श्री मुनशी और अन्य कुछ लोगों की बैठक में उपस्थिति से जो ध्यान दिया गया होता वैसा ध्यान देना सम्भव नहीं हो पाया है।'

एक के बाद एक सदस्यों ने खेद, रोष एव निराशा व्यक्त की। ग्रामीण भारत (Village India) के विषय पर अपने आरम्भिक वक्तव्य में प्रारूप के नायक और अन्वीक्षण समिति के अध्यक्ष, डॉ. आम्बेडकर द्वारा किये गये विधान के कारण ऐसा

आक्रोश विशेष रूप से व्यक्त हुआ था। ऐसी भावना का कुछ प्रभाव भी हुआ था। २२ नवम्बर को संविधान मे एक नइ धारा जोड़ी गई जो निर्विरोध पारित हुई। धारा इस प्रकार थी,

''धारा-३१ के उपरान्त निम्न लिखित नई धारा को जोड़ा जाए :

३१-अ राज्य ग्राम पंचायतों की रचना के लिए कदम उठाएँगे और उन्हें स्थानीय स्वराज्य की इकाइयों के रूप में कार्य करने के लिए आवश्यक अधिकार और सत्ताएँ प्रदान करेंगे।'

और इस प्रकार, राज्यों के नीतिविषयक मार्गदर्शक सिद्धांतों के अंग के रूप में, प्रवर्तमान धारा-४० का, स्वतंत्र भारत के संविधान में समावेश किया गया।

अत्यन्त दुःख के साथ परिस्थिति को समझते हुए सभी इस सीमा तक सम्मत हुए कि तत्कालीन परिस्थिति में इतना ही कर पाना सम्भव था। इसके पश्चात् भी, कितने दुःख, हताशा और पीड़ा की तीव्र भावना व्याप्त थी वह, १७ से २६ नवम्बर, १९४९ के दौरान संविधान के तृतीय पठन के समय हुई चर्चा में स्पष्ट रूप से सामने आता है। कुछ सदस्यों का विचार कम-अधिक मात्रा में डॉ आम्बेडकर से मिलता था। परन्तु, संविधान सभा का समग्र रूप से अभिमत गाँवो को मान्यता प्रदान करने और भारतीय राजनीतिक ढाँचे में उन्हें स्थान देने का पक्षधर था।

ये सारी बातें ध्यान देने योग्य, समझकर प्रवृत्त होने के लिए आवश्यक मानते हुए 'एवार्ड' ने कुछ अतीत में झाँकने का प्रयास किया है। यह सामग्री लगभग २५ हजार शब्दों की है, परन्तु अन्यों को भी उसमें साझेदार बनाने की आवश्यकता समझते हुए (पंचायत राज्य के विषय में) संविधान सभा की सारी उचित सामग्री को एक साथ रखा गया है। उसमे निम्न बातों का समावेश होता है -

१. संविधान के हेतु और उद्देश्यों के प्रस्ताव पर हुई चर्चा के कुछ अंश : १३ दिसम्बर १९४६ से २२ जनवरी १९४७

२. संविधान प्रारूप अन्वीक्षण (Scrunity) समिति की नियुक्ति, २९ अगस्त १९४७

३. संविधान की पाण्डुलिपि के द्वितीय पठन के समय हुई सामान्य चर्चा के कुछ अंश : ८-९ नवम्बर १९४८

४. धारा - ४० को संविधान में समाविष्ट करने के सम्बन्ध में परिचर्चा का संपूर्ण अध्याय, २२ नवम्बर १९४८

५. तीसरे पठन के कुछ अंश, १७-२६ नवम्बर १९४९

६. भारत के संविधान में पंचायतों के स्थान के विषय में परामर्शक की टिप्पणी

७. हेतुओ और उद्देश्यों का प्रस्ताव

सामग्री को समयानुक्रम में प्रस्तुत किया गया है। राजनीतिक ढॉचे मे गॉवो की भूमिका के सन्दर्भ में, इतिहास के इस अध्याय की अन्यत्र प्राप्त सामग्री भी क्रमिक रूप से प्रकाशित करने का प्रयास हम करेंगे।

'अतीत की यह यात्रा, अभी भी उज्ज्वल भविष्य की खोज के लिए सहायक बनेगी। प्रत्येक आँख के प्रत्येक अश्रुबिंदु को पोंछने की 'हमारे युग के एक महानतम व्यक्ति की इच्छा अभी अपूर्ण है। सम्भवत· कोई गाँधी ही इसे सिद्ध कर पाए।' जब तक ऑसू और व्यथाओं का अस्तित्व बना रहता है तब तक हमारा कार्य अपूर्ण रहेगा।' यह सविधान सभा का संकल्प था, आज भी वह उसी स्थिति में खडा है। पिछ्ले चौदह वर्षो में हमारा ध्यान दूसरी ओर मोड़ना पड़ा हो, या स्वतंत्रता के वर्ष में ही अचानक बनी घटनाएँ, उनसे उत्पन्न समस्याओं और विपरीत प्रभावों को दूर करने के लिए हमारी समूची शक्ति को लगा देना पडा हो, तो भी, भारत की राजनीति के आधारभूत ढाँचे की पुनर्रचना करते हुए हम अभी नये प्रयाण की ओर बढने का आयोजन करने की स्थिति में हैं। १५ अगस्त १९४७ को जिसकी संविधान सभा के अध्यक्ष डॉ. राजेन्द्रप्रसाद ने स्पष्ट व्याख्या नहीं की थीं - और गांधीजी के रहते उसकी बहुत आवश्यकता भी नहीं थी - उस 'हमारे स्वप्न के भारत का निर्माण करने के लिये भारतीय जन की सहायता करने का अवसर' अभी भी हमारे पास है।

तभी भारत अपने सभी नागरिकों के लिये पूर्ण स्वतत्रता का अनुभव प्रदान कर सकता है।

केवल दिल्ली और राज्यों की राजधानियो मे ही 'स्वराज्य' सीमित न रहते हुए उसका प्रसार सभी स्तर पर होने से अपेक्षित विकास सम्भव हो पाएगा। केवल 'विकास' के स्थान पर 'स्वराज्य' की यही भावना, जिस पर स्वयं विकास का आधार है ऐसे, भारतीय समाज को एक और अविभाज्य बनाने का और देश को उदासीनता के गर्त से बांहर निकालते हुए लक्ष्यप्रेरित क्रियाकलाप और लोककल्याण की भावना की ओर मोड़ने का वृहद् कार्य करने में सहायक बनेगी।

विभाग १

भारतीय राज्यव्यवस्था की आधारशिला पंचायत राज

३. हेतु और उद्देश्य के प्रस्ताव पर हुई चर्चा के कुछ अंश

४. संविधान के प्रारूप की अन्वीक्षण समिति की नियुक्ति, २९ अगस्त १९४७

५. संविधान की पाण्डुलिपि का द्वितीय पठन

६. संविधान में धारा ४० का समावेश

७. संविधान के तृतीय पठन के समय हुई चर्चा के अंश

८. भारत के संविधान में पंचायतों के स्थान के विषय में संविधान परामर्शदाता की टिप्पणी

९. स्वतंत्र भारत के संविधान के हेतु एवं उद्देश्यों का प्रस्ताव

३. हेतु और उद्देश्य के प्रस्ताव पर हुई चर्चा के कुछ अंश

(१३ दिसम्बर १९४६ से २२ जनवरी १९४७)

पण्डित जवाहरलाल नेहरू (संयुक्त प्रान्त : सामान्य)

हमारा लक्ष्य प्रजातन्त्र है, प्रजातन्त्र से कम कुछ भी नहीं। यह बात और है कि यह किस प्रकार का प्रजातन्त्र होगा और उसका स्वरूप क्या और कैसा होगा। विश्व के विकास में प्रवर्तमान प्रजातन्त्रों की भूमिका अच्छी रही है। उनमें से अधिकांश प्रजातन्त्र यूरोप में और अन्यत्र हैं। इसके उपरान्त ऐसा कहना संदेहास्पद माना जाएगा कि पूर्णतः जनतान्त्रिक बने रहने के लिए उन प्रजातन्त्रों को आनेवाले कुछ समय मे अपने स्वरूप में किसी प्रकार का परिवर्तन करना ही नहीं पड़ेगा। मुझे आशा है कि हम किसी तथाकथित जनतान्त्रिक देश की कुछ लोकतान्त्रिक पद्धतियों या संस्थाओं की नकल नहीं करेंगे। कदाचित हम उसमें कुछ सुधार करेंगे। हम सरकार मे किसी भी तन्त्र या पद्धति को अपनाएँगे वह, हमारी जनता की मानसिकता के अनुरूप और उसे स्वीकार्य होनी चाहिए। हम जनतन्त्र के समर्थक हैं। मैं मानता हूँ कि इस जनतन्त्र के, पूर्ण लोकतन्त्र के स्वरूप को निर्धारित करने का दायित्व इस सदन (संविधानसभा) का है।

श्री एम. आर. मसाणी (मुंबई : सामान्य)

मैं जिसे इस प्रस्ताव का सामाजिक दीर्घकालीन दृष्टिकोण मानता हूँ उस पक्ष की ओर सदन का ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ। इसके साथ ही मैं यह समझने का प्रयास कर रहा हूँ कि हमारे देश के समाज या राज्य के लिए यह प्रस्ताव किस प्रकार के जीवन को प्रस्तुत करता है। मुझे लगता है कि इस समय पैदा होनेवाले विवादों को अलग रखेंगे तो देश का सामान्य व्यक्ति इस पक्ष पर ही ध्यान केन्द्रित करेगा।

... हमारे राष्ट्र का जीवन विभिन्नताओं से भरा है। परन्तु हम व्यक्तिस्वातन्त्र्य और जनतन्त्र का समर्थन करते हैं और हमारे विभिन्न और व्यापक दर्शन सामान्य

मानव अधिकारो को बाँटने के सन्दर्भ में कोई एक व्यक्ति या समुदाय अन्यों का शोषण न कर सके या उनके ऊपर आधिपत्य न जमा सके, ऐसे व्यापक रूप से जनता को राजनीतिक और आर्थिक अधिकार प्रदान करने हेतु हम किसी प्रकार से लगभग एकमत हो सकते हैं, इसे सर्वसम्मति से पारित कर सकते हैं, यह दर्शाना चाहता हूँ। सर्व प्रथम तो जो हमारे बीच नहीं रहे हैं और प्रस्तुत किये गए प्रस्ताव में जिन्हें राष्ट्रपिता कहकर उद्धृत किया गया है उस व्यक्ति का साक्ष्य प्रस्तुत करता हूँ। मैं महात्मा गाँधी की बात कर रहा हूँ (हर्षनाद)। लूइ फीशर के 'महात्मा गाँधी के साथ एक सप्ताह (A week with Gandhi) से उद्धृत शब्द हैं,

'इस समय सत्ता का केन्द्रबिंदु दिल्ली, कोलकता या मुम्बई अर्थात् बड़े नगरों में है। मैं इसे भारत के सात लाख गाँवों में बाँटना चाहूँगा।...

ऐसा होता है तो स्वैच्छिक सहयोग उत्पन्न होगा, नाझी (हिटलरशाही) पद्धति से थोपा हुआ सहयोग नहीं। स्वैच्छिक सहयोग सही अर्थ में स्वतंन्त्रता लायेगा और रूस के 'न्यू आर्डर' अर्थात् 'नई कार्यशैली' से भी श्रेष्ठ नवीनतम शैली का निर्माण होगा...

कुछ लोग (बचाव करते हुए) कहते हैं कि रूस में निठुर व्यवहार होता है, लेकिन उसका प्रयोग बिल्कुल ही निम्नस्तरीय, गरीबो के हित में होता है इसलिए अच्छा है। मेरी दृष्टि से उसमें अच्छा कहने योग्य तत्त्व बहुत कम है।'

और अब, इस बात की प्रतिच्छवि एक सर्वथा भिन्न विचारधारा के विचारक में देखने के लिए भारतीय समाजवादी पक्ष के नेता जयप्रकाश नारायण जी ने प्रवर्तमान समाजवाद को जिस रूप में चित्रित किया है, उससे एक दो वाक्यों का उल्लेख करता हूँ। मुझे इस बात का दुःख है कि वे हमारे इस व्यायाम (संविधानरचना) में सम्मिलित नहीं हुए हैं। उनके शब्दों में गाँधी विचारधारा की गूंज सुनाई देती है।

'जो स्थिति रूस में दिखाई देती है, उसमें राज्य समाजवाद में विलुप्त होने के स्थान पर उसमें नागरिको को समूचे जीवन को मुट्ठी में करनेवाला अधिनायकवाद पैदा होने का भय समाया रहता है। आज रूस में जो दिखाई देता है वह उसे तानाशाह और असहिष्णु शासन की ओर ले जानेवाला है। उद्योगों का स्वामित्व और व्यवस्थापन का बँटवारा करके एवं गाँवों को ग्रामीण प्रजासत्ताक के रूप में विकसित करते हुए हम यह शिकंजा यथासम्भव अप्रभावी कर अधिनायकवाद के भय को कम कर सकते हैं।

'इस दृष्टि से समाजवादी भारत का मेरा चित्रांकन आर्थिक और राजनीतिक प्रजातन्त्र का है। ऐसे प्रजातन्त्र में सामान्य व्यक्ति न तो पूँजीवाद का दास होगा न ही

किसी पक्ष या राज्य का दास होगा। हर व्यक्ति स्वतन्त्र होगा।'

हमारे युग की प्रमुख समस्या यही है कि क्या राज्य लोगो का स्वामी होगा या लोग राज्य के स्वामी होंगे। राज्य यदि लोगों में निहित होता है, लोगों का होता है तब तो यह केवल लोगों का सहायक उपकरण होता है और जनसेवा करता है। उनकी स्वतन्त्रता उतनी ही सीमित होती है जितनी वे स्वयं चाहते हैं। जहाँ राज्य लोगों का मालिक होता है वहाँ प्रजा की स्थिति तो सर्वशक्तिमान अधिनायक व्यक्ति या पक्ष के मन में पैदा होनेवाले तरंगी विचारों के हिलोरों पर इधर से उधर हिचकोले लेनेवाले मशीन के कलपुर्जोवाले रोबोट सी होती है। मैं मानता हूँ कि यह प्रस्ताव सविधान का जिस प्रकार का दिशानिर्देश करता है उसमें सत्ता लोगों के हाथ में होगी। लोग सत्ता के केन्द्र में होंगे। व्यक्ति केन्द्र स्थान पर रहेगा और उसके व्यक्तित्व का विकास हमारे समाजकल्याण का ध्येय होगा। मैं प्रस्तावना के इस पक्ष का समर्थन करता हूँ।

श्री एन. वी. गाडगिल (मुबई : सामान्य)

'आज कुछ बाते अधिक स्पष्ट प्रतीति होती नहीं लगती हैं तो भी मुझे विश्वास है कि संविधान की धाराओं मे इन सिद्धांतो को समाविष्ट कर लेने से वे बिल्कुल स्पष्ट हो जाएँगी। यद्यपि जब तक प्रत्येक नागरिक मे समय आने पर जान की बाजी लगाकर भी संविधान की रक्षा करने के लिए आवश्यक अंतःस्फुरणा पैदा नहीं होती तब तक कोई भी संविधान कर्तव्यनिष्ठा उत्पन्न नहीं कर सकता।'

प्रो. एन. जी. रंगा (मद्रास : सामान्य)

'अन्त में मैं सदन से नम्र निवेदन करना चाहता हूँ कि प्रस्ताव में सूचित विभिन्न अधिकारों का व्यक्ति उपभोग कर सके इस प्रकार का प्रबन्ध संविधान में ही हो जाय इस बात का ध्यान रखना होगा। ऐसी व्यवस्था के अभाव में प्रस्ताव निरर्थक सिद्ध होगा। वह केवल अपेक्षा को छोड़ विशेष प्रभाव पैदा नहीं कर पाएगा...।'

पंडित जवाहरलाल नेहरू (संयुक्त प्रान्त : सामान्य)

(चर्चा का उत्तर देते हुए)

'हम संविधान तैयार करेंगे और मुझे विश्वास है कि हमारा संविधान अच्छा होगा, लेकिन इस सदन का कोई सदस्य क्या ऐसी भी कल्पना कर सकता है कि स्वतन्त्रता के उदय के पश्चात् स्वतन्त्र भारत किसी भी बन्धन को, इस सदन के द्वारा

उनके लिए निश्चित की गई है ऐसी किसी भी बात को स्वीकार करेगा ? स्वतन्त्र भारत तो एक समर्थ राष्ट्र की चेतना का विस्फोट देखनेवाला है। मैं नहीं जानता कि वह क्या करेगा, क्या नहीं करेगा, लेकिन मैं इतना अवश्य जातना हूँ कि वह किसी भी प्रकार की सीमा में बँधना स्वीकार नहीं करेगा। कुछ लोगों को लगता है कि इस समय हम जो कुछ भी करेंगे उसका प्रभाव आनेवाले दस बीस वर्षों तक ज्यों का त्यों बना रहेगा, कोई उसे छू नहीं पायेगा। मैं सदन के समक्ष यह नहीं रख रहा हूँ कि मैं क्या होना और नहीं होना चाहता हूँ। मैं तो केवल इतना चाहता हूँ कि सदन इस बात की ओर ध्यान दे कि हम पूर्ण रूप से क्रान्तिकारी परिवर्तन के कगार पर आ खड़े हैं क्यों कि किसी राष्ट्र की चेतनाशक्ति का बाँध जब टूटता है तब वह विलक्षण रूप से व्यवहार करता है, और वह ऐसा होना भी चाहिए। बहुत सम्भव है कि सदन के द्वारा गठित संविधान स्वतन्त्र भारत को संतुष्ट न कर पाये। हमारी आनेवाली पीढियों या प्रजा के लिए यह सदन कोई सीमा अंकित नहीं कर सकता।

इसलिए, हमारे द्वारा किये गए काम की बारीकियों मे उलझने की आवश्यकता नहीं है। ऐसी बातें विरोध के साथ बनती जायेंगी तो लम्बे समय तक टिक नहीं पाएगी। टिक पाने की सम्भावना उसी में समाई है जिसे हम सर्वसम्मत होकर सिद्ध करेंगे, सहयोग से सिद्ध करेंगे। कहीं पर संघर्ष, कहीं उद्धत तौरतरीकों का सहारा लेकर या धमकियों से कुछ सफलता पाएँगे तो भी वह दीर्घकाल तक टिक नहीं सकेंगे।'

४. संविधान के प्रारूप की अन्वीक्षण समिति की नियुक्ति, २९ अगस्त १९४७

संविधान सभा ने इससे पूर्व किये गए निर्णयों को कार्यान्वित करने के लिए सविधान सभा के परामर्शको से सभी आनुषांगिक या संविधान में समाविष्ट करने योग्य मुद्दों के साथ तैयार किये गए भारतीय संविधान का अन्वीक्षण करते हुए सुधार समेत जो प्रारूप सदन के सामने प्रस्तुत करना है उसके लिए निम्नलिखित सदस्यों की एक समिति की नियुक्ति का प्रस्ताव यह सभा पारित करती है :

१. श्री अलादी कृष्णास्वामी अय्यर

२. श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर

३. डॉ. बी. आर आम्बेडकर

४. श्री क. मा. मुनशी

५. श्री सैयद महंमद सादुल्ला

६. श्री बी. एल मित्तर

७. श्री डी. पी. खैतान

५. संविधान की पाण्डुलिपि का द्वितीय पठन

(सामान्य चर्चा के कतिपय अंश, ४-९ नवम्बर १९४८)

डॉ. बी. आर. आम्बेडकर (मुंबई : सामान्य)

'...संविधान की पाण्डुलिपि के सन्दर्भ में दूसरी आलोचना ऐसी की जा ही है कि उसके किसी भी अंश में प्राचीन भारत के राज्यतन्त्र के ढाँचे का उल्लेख नहीं है। बताया गया है कि नये संविधान की रचना पूर्णतः प्राचीन हिन्दू राज्य के उदाहरण पर आधारित होनी चाहिए। संविधान में पश्चिमी सिद्धान्तों को समाविष्ट न करते हुए ग्राम पंचायतो एवं जिला पंचायतो के आधार पर उसकी रचना करनी चाहिए। अन्य कुछ लोगों ने इससे भी आत्यन्तिक दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है। उन्हें कोई केन्द्रीय या प्रान्तीय सरकार नहीं चाहिए। वे तो भारत में व्यापक रूप से ग्रामीण राज्य चाहते हैं। यह सत्य है कि भारतीय बौद्धिकों का ग्रामसमूहों के प्रति प्रेम अपरिमित और कारुण्यपूर्ण है। इस का कारण विशेष रूप से मेटकाफ द्वारा उसके सन्दर्भ मे की गई विशेष प्रशंसा है। मेटकाफ मानते हैं कि ग्राम अपने आपमें स्वयंपूर्ण छोटे छोटे गणतन्त्र ही हैं। उन्हें जो कुछ भी चाहिए वह सब उनके पास है। किसी भी प्रकार से उन्हें बाहर के प्रदेशों पर निर्भर नहीं रहना पडता है। मेटकाफ का अभिमत है कि हर प्रकार की क्रान्तियाँ एवं परिवर्तनों के दौरान छोटी रियासतों जैसे इन ग्राम समूहों के अस्तित्व ने ही उत्पन्न हुई हर कठिनाई के समय प्रजा का आत्मविश्वास बनाए रखने का महत् कार्य किया है। इस स्थिति में ऐसी व्यवस्था अधिक उपयोगी होगी जिसके अन्तर्गत उनके सुख और अपेक्षित मात्रा में वे मुक्ति और स्वतन्त्रता का उपभोग कर सकें। निस्सन्देह ग्रामसमूह ऐसी स्थिति में भी बने रहे जहाँ कुछ भी बच पाना सम्भव नहीं था, परन्तु ग्रामसमूहों के प्रति गौरव का अनुभव करनेवाले वे लोग यह सोचते नहीं है कि देश के कामकाज या उसके भविष्य की दृष्टि से उन्होंने कितनी नगण्य भूमिका निभाई है। और किस लिए ? मेटकाफ ने स्वयं भारत के भाग्यविधाता के रूप में उनकी भूमिका का

भली भाँति वर्णन किया है।

राजवंशों का अस्तित्व एक के बाद एक समाप्त होता है। एक क्रान्ति के बाद दूसरी क्रान्ति आती है। हिन्दू, पठान, मुगल, मराठा, सिक्ख, अंग्रेज एक के बाद एक शासक बनते जाते हैं परन्तु ग्रामसमूह अपना अस्तित्व यथावत् बनाए रखते हैं। आपत्तियाँ आने पर वे शस्त्रसज्ज होते हैं, दुर्ग बनाते हैं, सेनायें इलाकों से गुजरती हैं, ग्रामसमूह अपने पशुधन को छिपा लेते हैं, और शत्रुओं को बिना छेडे निकल जाने देते हैं।

देश के इतिहास में ग्रामसमूहों ने ऐसी भूमिका निभाई है इस बात से अवगत होने के पश्चात् हमारे हृदय में उनके प्रति कितना गौरव उत्पन्न होता है ? यह वस्तुस्थिति है कि उत्थान एवं पतन के कालखण्ड में उन्होंने अपना अस्तित्व बनाये रखा है, परन्तु केवल बचे रहना अर्थहीन है। प्रश्न यह उठता है कि ये किस सीमा तक बने रहें ? निश्चित रूप से वे अत्यन्त निम्न और स्वार्थपूर्ण धरातल पर रहे हैं। मैं निश्चयपूर्वक मानता हूँ कि ग्राम प्रजातन्त्र देश के लिए विनाशकारी है। इसलिए प्रान्तवाद और साम्प्रदायिकता की आलोचना करनेवाले लोग जब ग्रामीण प्रदेशों के लिए प्रबल समर्थक के रूप में सामने आते हैं तब मुझे आश्चर्य होता है। कूपमण्डूकता, अज्ञान, संकुचित मानस और साम्प्रदायिकता को छोड़कर गाँव की दूसरी पहचान क्या है ? मुझे इस बात की खुशी है कि संविधान की पाण्डुलिपि में गाँव शब्द को छोड दिया गया है और व्यक्ति को इकाई माना गया है।'

श्री दामोदर स्वरूप शेठ (संयुक्त प्रान्त : सामान्य)

'...इसके साथ साथ हमारे देश में सात लाख गाँव हैं और गाँव सब से छोटी ईकाई है। हम महात्मा गाँधी के आभारी हैं, क्यों कि उन्हीं के कारण स्वतन्त्रता की लडाई गाँवों तक पहुँची और गाँवो में उत्पन्न हुई प्रचण्ड ताकत के कारण भारत स्वतन्त्र हुआ।

...मैं यह पूछना चाहता हूँ कि क्या इस संविधान मे कहीं भी गाँव का उल्लेख है ? क्या संवैधानिक ढाँचे में उसका कोई स्थान है ? नहीं, ऐसा कहीं पर भी दीखता नहीं है। एक स्वतन्त्र देश का संविधान 'स्थानीय स्वराज्य' की नींव पर निर्मित होना चाहिए। इस संविधान में हमें स्थानीय स्वराज्य के संदर्भ में कहीं कुछ दिखाई नहीं देता। पूरा संविधान हमारे (राष्ट्रीय) जीवन के आधार पर विकसित करने और नीचे से ऊपर की ओर उसकी रचना करने के स्थान पर अन्य देशों के संविधान मंगवाकर

ऊपर से आरंभ करते हुए नींव की ओर रचनाप्रक्रिया चल रही है। विभिन्न घटकों पर आधारित न हो, जिसकी रचना में उनका योगदान न हो ऐसा संविधान आप देश को दे तो पाएँगे परन्तु मुझे पूरी आशंका है कि उसे दीर्घकाल तक निभा नहीं पाएँगे।

भारत को प्रजासत्ताक संघराज्य अर्थात् जनतन्त्रों का संघ बनना चाहिए। ऐसा होना चाहिए कि सभी स्वायत्त जनतन्त्र मिलकर विशाल भारतीय प्रजातन्त्र का निर्माण करें। ऐसे स्वायत्त जनतन्त्रों का प्रबन्ध किया गया होता तो न भाषानुसार रचना का प्रश्न उत्पन्न हुआ होता न ही जाति के आधार पर बहुमत, अल्पमत या पिछड़े वर्गो की समस्या उत्पन्न होती। संघ प्रदेशों की स्वायत्त इकाइयाँ अपनी संस्कृति के आधार पर रचे गये संघों के साथ जुड सकेंगी। हमारे देश के संघ की रचना यदि इस प्रकार से हुई होती तो उसमें हमारे विद्वान डॉ. आम्बेडकर द्वारा प्रस्तुत किये गए केन्द्रीकरण की इतनी आवश्यकता नहीं पडती। केन्द्रीकरण अच्छी व्यवस्था है और समय समय पर उपयोगी भी सिद्ध होती है, परन्तु हम भूल गये हैं कि महात्मा गाँधी ने अपने जीवनकाल में आग्रहपूर्वक कहा है कि सत्ता का अधिक केन्द्रीकरण सत्ता को स्वयं को और अधिक असहिष्णु बनाता है तथा उसे फासिस्ट विचारधारा की ओर धकेलता है। सत्ता को राजतन्त्र और फासीवाद से बचाने का केवल एक ही उपाय है। वह है यथा सम्भव सत्ता का विकेन्द्रीकरण करना। हृदयों को जोड़ते हुए हम ऐसा केन्द्रीकरण स्थापित करते कि वह विश्व में अद्वितीय सिद्ध हो।

भारत ने स्वतन्त्रता प्राप्त कर ली है। अब यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि आज विश्व की दृष्टि भारत की ओर है। उसे अपेक्षा है कि भारत कुछ नया, कुछ अनोखा करके दिखायेगा। इस प्रकार की प्रवर्तमान स्थिति में आदर्श संविधान का प्रारूप विश्व के सामने प्रस्तुत करने की आवश्यकता थी। इसके विपरीत हमने अन्य देशों के संविधानों की नकल की है। जैसा कि मैंने बताया, हमारे संविधान का ढाँचा अपने पैरों पर नहीं बल्कि शीर्षासन की स्थिति में खड़ा है ऐसा उसे देखकर प्रतीत होता है।

उसकी रचना में भारत के हजारों लाखों गाँवों का न तो सहयोग है न ही उनकी कोई आवाज है। मैं नि:संकोच कह सकता हूँ कि व्यापक मताधिकार के आधार पर, संविधान की रचना प्रक्रिया में, लाखों गाँवों का सहयोग प्राप्त किया होता तो उसका स्वरूप कुछ भिन्न होता। गरीबी हमारे देश की कैसी दुर्दशा कर रही है। लोग खाली पेट और नंगे शरीर से कितना कष्ट भोग रहे हैं। ऐसी स्थिति में, संविधान द्वारा घोषित मूलभूत अधिकारों में काम के अधिकार एवं रोजगारी के अधिकार को समाविष्ट करते

हुए देश के लोगो को दो जून रोटी और शरीर ढँकने के लिए वस्त्र का प्रबन्ध करना आवश्यक था।

मेरे कहने का उद्देश्य केवल यह है कि यदि संविधान की रचना करने में इस देश के हजारों गांव, निर्धन लोग और मजदूरों का जरा सा भी सहभाग होता तो अभी जो बना है उससे वह (संविधान) बहुत ही अलग प्रकार का होता। पण्डित बालकृष्ण शर्मा (संयुक्त प्रान्त : सामान्य) वे (पूर्व वक्ता) जानना चाहते हैं कि संविधान की रचना करने में देश के हजारों गाँवों एवं स्थानीय स्वराज्य का स्थान क्या है। मे विनम्रतापूर्वक कहना चाहता हूँ कि यदि सम्पूर्ण संविधान का ध्यान से अध्ययन करने का कष्ट करेंगे तो हम समझ पाएँगे कि संविधान की रचना करते समय आप और हम महात्मा गाँधी की प्रेरक और पावन वाणी को अनसुना नहीं कर रहे हैं। उनका संदेश था कि भारत नगरों में नहीं बल्कि सात लाख गाँवों में बसता है ...!'

प्रा. शिब्बनलाल सक्सेना (संयुक्त प्रांत : सामान्य)

'...उन्होंने (श्री दामोदर स्वरूप सेठ ने) कहा कि इस संविधान में गॉवो का कोई प्रभाव नहीं है... श्री एस. एन. अग्रवाल ने भी महात्मा गॉधी द्वारा सूचित संविधान की रूपरेखा दी थी। वह भी जनतान्त्रिक या ग्रामपंचायतों पर आधारित थी। मुझे लगता है कि संविधान के इस पक्ष का विचार करते समय इस बात पर गम्भीरतापूर्वक चर्चा करनी पड़ेगी। डॉ. आम्बेडकर को, जिसके अन्तर्गत गाँवो का स्वर सर्वोच था ऐसी पद्धति को एक प्रकार से तिरस्कृत करते हुए सुनकर मुझे दु:ख हुआ है। मेरा मानना है कि संविधान के इस हिस्से को ठीक से संशोधित करना पडेगा ... उन्होंने कहा है कि संविधान में स्थानीय स्वराज्य की इकाइयो का कोई प्रबन्ध नहीं है। यह विषय अति महत्त्वपूर्ण है और संविधान में इसे समाविष्ट करना चाहिए परन्तु वर्तमान संविधान में उसकी उपेक्षा की गई है।'

श्री एच. वी. कामत (मध्य प्रान्त एवं वराड : सामान्य)

'...अभी अभी पेरिस में संयुक्त राष्ट्रसंघ की सामान्य सभा को सम्बोधित करते हुए श्रीमती विजयालक्ष्मी पण्डित ने गौरवपूर्वक प्रस्तुत किया कि 'स्वतन्त्रता, समानता एवं बन्धुता' का सूत्र हमने फ्रान्स से अपनाया हैं। हमने स्वयं के अतीत से ... हमारे राजनीतिक एवं ऐतिहासिक अतीत से, हमारे सुदीर्घ और हमें जिस पर गर्व है ऐसे पारम्परिक इतिहास से क्या अपनाया है, इसके सन्दर्भ में कुछ बताया नहीं है।

एक मुद्दे पर मै डॉ. आम्बेडकर का विरोध करता हूँ। वक्तव्य की अधिकृत प्रति नहीं होने के कारण मैं समाचारपत्र में प्रकाशित समाचार का सहारा लेता हूँ - गाँवों का उन्होंने कूपमण्डूक, अज्ञान का घर, संकुचित मानसवाला और साम्प्रदायिक जैसे शब्दों से परिचय दिया है, इतना ही नहीं ग्रामसमूहों के प्रति हमारी 'दयनीय श्रद्धा' का दायित्व किसी मेटकाफ के सिर पर डाल दिया है। मैं स्पष्ट रूप से कहूँगा कि ऐसी स्थिति मेटकाफ के कारण नहीं अपितु अभी अभी देश को स्वतन्त्रता दिलानेवाले एक बहुत महान व्यक्ति - हमारे पथदर्शक और राष्ट्रपिता - के कारण गाँवों के प्रति प्रेम, ग्रामीण प्रजातन्त्र एवं ग्रामसमूहों के प्रति श्रद्धा प्रकट हुई है और हमने इसे हृदय से अपनाया है। (महात्मा गाँधी के कारण हम गाँववालों से प्रेम करना सीखे हैं) डॉ. आम्बेडकर के प्रति मुझे आदर है, परन्तु उनकी इस बात के साथ मैं सहमत नहीं हूँ। कल का उनका रूख बुद्धिवादियों जैसा ही था। ग्रामीण प्रजा के प्रति हमारा रवैया यदि ऐसा ही रहनेवाला है तो इतना ही कहना शेष रहेगा कि हमें भगवान ही बचा सकता है। मेरी समझ में नहीं आता कि गाँव एवं ग्रामीण प्रजा के प्रति सहानुभूति, स्नेह और सद्भाव के बिना देश का पुनरुत्थान कैसे हो सकेगा ? महात्मा गाँधी ने अपने श्रेष्ठ समय में पंचायत राज्य के लिए सदा जूझते रहने का अमर मन्त्र हमें दिया। डॉ. आम्बेडकर के गले यदि यह बात नहीं उतरती है तो मेरी समझ में नहीं आता कि ग्रामोद्धार के लिए उनके पास कौनसा उपाय और रामबाण औषध है। मेरे अपने प्रान्त, संयुक्त प्रान्त एवं बिहार में हमने अभी अभी 'जनपदों' की एक योजना शुरू की है। स्थानीय स्वराज्य और विकेन्द्रीकरण की यह योजना हमारे पथप्रदर्शक महात्मा गाँधी के उपदेश से सुसंगत है। मुझे आशा है कि यह योजना फलदायी बनेगी और देश के अन्य हिस्सों के लिए दृष्टान्त स्वरूप सिद्ध होगी। डॉ. आम्बेडकर ने जिस प्रकार से - तिरस्कार न सही - अप्रिय शब्दों मे गाँवो के प्रति प्रतिक्रिया व्यक्त की उसे सुनकर मुझे अपार दु:ख हुआ है। मूलतः दोष कदाचित प्रारूप में ही है। श्रीमान मुनशी (क. मा. मुनशी) के एक अपवाद को छोड़कर समिति के किसी सदस्य की स्वतन्त्रता की लड़ाई में कृतिशील सहभागिता नहीं रही है। इसलिए आन्दोलन की भावना, हमें प्रेरित करनेवाली प्रबलता उनमें से कोई समझ नहीं पाएगा। कई आपत्तियाँ और बरसों की सुदीर्घ प्रसववेदना सहने के पश्चात् हुए हमारे राष्ट्र के पुनर्जन्म की बात ये हृदय से (मैं दिमाग, अर्थात् बुद्धि की बात नहीं करता, किसी भी बात को दिमाग से समझना सरल होता है।) नहीं समझ पाएँगे। इसीलिए हमारे अत्यन्त गरीब, पिछड़ी जाति, साधारण स्तरवाले उपेक्षित लोगों के लिए डॉ. आम्बेडकर ने ऐसा कठोर स्वर व्यक्त किया।

हमारे इतिहासविद् और शोधकर्ता विद्वानों ने भी इस सन्दर्भ में अनमोल जानकारी दी है। मैं नहीं जानता कि उन्होंने डॉ. जायस्वाल की पुस्तक 'इन्डियन पोलिटी' (भारतीय राजनीतितंत्र) पढी है या नहीं। अन्य एक महापुरूष की पुस्तक - श्री अरविन्द लिखित 'द स्पिरिट एण्ड फार्म ऑव इन्डियन पॉलिटी (भारतीय राजनीतितंत्र की भावना और स्वरूप) पुस्तक भी उन्होंने पढ़ी है या नहीं इसका भी मुझे पता नहीं हैं। इन पुस्तकों में हमें जानकारी मिलती है कि प्राचीन भारत में हमारा राज्यतन्त्र किस प्रकार स्वायत्त एवं आत्मनिर्भर ग्रामसमूहों के आधार पर रचा गया था और उनके कारण ही कैसे हमारी संस्कृति युगों युगों से बनी हुई है। हम मूलभूत शक्ति की ओर से दृष्टि हटा लेंगे तो और कुछ दिखेगा ही नहीं। मैं संक्षेप में इसे पढ़कर सुनाना चाहता हूँ कि हमारी राज्य व्यवस्था और उसका सामर्थ्य कैसा और कितना था।

'उत्क्रान्ति की चरमसीमा पर, भारतीय संस्कृति के श्रेष्ठ समय में उच्चस्तरीय कार्यकुशलता से युक्त ग्राम एवं नगरों की स्थानीय स्वराज्य की संस्थाओं की स्थिरता और व्यवस्थित रूप से जोड़नेवाली एक प्रशंसनीय राजनीतिक पद्धति के दर्शन होते हैं। लोगों के अधिकार, उनकी मुक्त गतिविधियाँ और सम्बन्धित विभाग की (राज्य के विभाग) अंगभूत संस्थाओं का गला घोंटे बिना या उनका अतिक्रमण किए बिना ही राज्य, अपनी प्रशासनिक, न्यायतन्त्र विषयक, आर्थिक एवं सुरक्षा से संबंधित दायित्व निभाता था। राजधानी के दरबारी न्यायालयों के पास न्यायिक अधिसत्ता थी और वे समग्र देश के न्यायतन्त्र का संकलन करते थे।

ग्राम जनतान्त्रिक पद्धति के विषय में शान्ति, सुरक्षा, जनसंख्या एवं सुख की कामना हो तो न केवल भारत बल्कि समग्र विश्व को ग्राम एवं नगर के जनतन्त्र की रचना त्वरित करनी होगी। यदि ऐसा नहीं किया गया तो विश्व पर संकटों के बादल घिर आएँगे ...।'

राज्य की आवश्यकता किस लिए है ? राज्य का उपयोगिता मूल्य आम लोगों के कल्याणार्थ उसका जो दायित्व है उसके आधार पर निश्चित होना चाहिए। वास्तव में इस समस्या के समाधान के लिए सोचना होगा कि क्या व्यक्ति राज्य के लिए है या राज्य व्यक्ति के लिए ? महात्मा गाँधी अपने जीवनकाल में इस द्वन्द्व का सम्यक समाधान ढूँढने के लिऐ जूझे और अन्ततोगत्वा पंचायत राज्य की संकल्पना प्रस्फुटित हुई। मुझे आशा है, हम उस दिशा की और आगे बढ़ेंगे जिसके अन्तर्गत राज्य का अस्तित्व व्यक्ति के लिए हो, व्यक्ति का अस्तित्व राज्य के लिए कदापि नहीं। हमारा यही लक्ष्य होना चाहिए और इसी दिशा की ओर हमारे देश को आगे बढ़ना चाहिए।

..इस प्रस्ताव का समर्थन करते समय मैं इस बात को स्पष्ट करना चाहता हूँ कि जिस जोश से समर्थन करना चाहिए वैसा जोश इस समय मुझमें नहीं है।

श्री लोकनाथ मिश्र (उडिसा : सामान्य)

'..मैं कहना चाहूँगा कि राष्ट्र की शक्ति और लोगों का ऐक्य राज्यसत्ता पर आधारित नहीं हैं। भ्रातृभाव पैदा करनेवाला आन्तरिक ऐक्य और मानवीयता की भावना पर वह निर्भर करता है।

...मैं अपना कुछ समय डॉ. आम्बेडकर के वक्तव्य का 'एक्स-रे' दर्शाने के लिए लूँगा। मैं उनके ज्ञान को लेकर नतमस्तक हूँ। उनकी स्पष्टोक्ति को वन्दन करता हूँ। उनके साहस को भी। मुझे आश्चर्य इस बात का है कि ऐसा विद्वान व्यक्ति, भारत का ऐसा महान सपूत भी भारत के विषय में सीमित जानकारी रखता है। वे संविधान के प्रारूप की आत्मा हैं पर इसमें कोई सन्देह नहीं है कि इस प्रारूप में उन्होंने जो प्रस्तुत किया है वह पूर्णत: अभारतीय है। मेरा तात्पर्य यह है कि चाहे इसे स्वीकार करें या न करें, यह प्रारूप पश्चिम की ऐसी नकल है जिसे केवल दासता का प्रतिज्ञापत्र ही कहा जाएगा। अरे, इससे भी बढ़कर यह पश्चिम के चरणों में शरणागति के समान है।

काजी सैयद करीमुद्दीन (मध्य प्रान्त एवं वराड : मुस्लिम)

... संविधान का चौथा भाग मार्गदर्शक सिद्धान्तों का है ... चौथे भाग में जो कहा गया है वह अस्पष्ट है। हमें इस समय आर्थिक एवं दार्शनिक आदर्शों की आवश्यकता नहीं है। हम देश में एक ऐसी आर्थिक व्यवस्था चाहते हैं जिसके द्वारा गरीब प्रजा की स्थिति में सुधार हो सके।

डॉ. पी. एस. देशमुख (मध्य प्रान्त एवं वराड : सामान्य)

...अन्ततोगत्वा यह देश किसानों का है। शासन में किसान एवं श्रमिकों की साझेदारी अधिक मात्रा में और प्रभावी होनी चाहिए। उन्हें ऐसा प्रतीत होना चाहिए कि पृथ्वी पर स्थित इस बडे राष्ट्र के वे सही अर्थ में स्वामी हैं। हमारा प्राचीन सांस्कृतिक इतिहास भारत जैसे राष्ट्र के भविष्य के लिए उपयोगी है, ऐसे दृष्टिकोण से मैं सहमत नहीं हूँ।

श्री अरुणचंद्र गुहा (प. बंगाल : सामान्य)

...संविधान की सम्पूर्ण पाण्डुलिपि में काँग्रेस के दृष्टिकोण का कहीं नामोनिशान नहीं हैं। गाँधीवादी राजनीतिक एवं सामाजिक दृष्टिकोण का भी उसमें कोई संकेत नहीं हैं। मुझे लगता है कि सम्पूर्ण संविधान में काँग्रेस के आदर्श एव उसकी विचारधारा का अभाव हैं। संविधान की रचना करना केवल प्रशासनतन्त्र सजाने तक सीमित नहीं है। हमे तो राष्ट्र के भविष्य के सन्दर्भ में सामाजिक एवं आर्थिक तन्त्र का आयोजन करना है।

डॉ. आम्बेडकर ने ग्रामीण इकाइयों के विषय मे कुछ उल्लेख किया। हम वर्षो से काँग्रेस में हैं। प्रशासनतन्त्र के भविष्य के आधार स्वरूप ग्राम पचायतों के विषय में सोचना हमे सिखाया गया है। गाँधीवादी विचारधारा एवं कोंग्रेस का दृष्टिकोण यह रहा है कि भारत का भावि संविधान पिरामिड आकार का होगा और उसकी आधारशिला ग्रामपंचायते होंगी। डॉ आम्बेडकर के मतानुसार गाँव भारत के लिए विनाशक हैं, अज्ञान का घर हैं। इस समय यदि ऐसा प्रतीत होता है तो इसका कारण हम नगरनिवासी ही हैं, जो विदेशी शासन के प्रभाव में विकसित हुए हैं। विदेशी शासकों ने हमारे गाँवो को जानबूझकर भूखों मारा है, उनका गला घोंटा है और एसे अधम कृत्य में नगरनिवासियों ने स्वेच्छा से साथ दिया है। मुझे लगता है कि अब के बाद स्वतन्त्र भारत का सबसे प्रथम कार्य गाँवो को पुनर्जीवित करने का होना चाहिए। मैंने बताया है कि गाँधीवादी और कोंग्रेस के दृष्टिकोण ने हमें सिखाया है कि संविधान पिरामिड आकार का और ग्रामपंचायतों पर आधारित होना चाहिए।

मैं स्वीकार करता हूँ कि सुदृढ केन्द्र की हमें आवश्यकता है, पर इसका अर्थ यह नहीं है कि उससे अंगोपांग शिथिल हों। दृढ अंगों के विना शक्तिशाली केन्द्र सम्भव नहीं है। मुझे लगता है कि हम ग्रामपंचायतो के आधार पर, लोगों के स्वैच्छिक सहयोग की नींव पर संपूर्ण ढाँचा बनाएँगे तो केन्द्र अपने आप शक्तिशाली होगा। सदन से मेरा नम्र निवेदन है कि वह संविधान में कुछ धाराओ को समाविष्ट करे, जिससे भारत के भविष्य के प्रशासन में ग्रामपंचायतों को प्रभावशाली भूमिका निभाने की अनुमति प्राप्त हो।

डॉ. आम्बेडकर ने हमारे सामने एक प्रश्न खड़ा किया है। उन्होंने संविधान को प्रादेशिकता के (राज्य) आधार पर, कतिपय राजनीतिक घटकों पर आधारित, व्यक्ति को आधारभूत इकाई मानकर तैयार करने का प्रयास किया है। समग्र तन्त्र की नींव

वास्तव मे तो गाँव होना चाहिए। व्यक्ति समग्र संविधान की आत्मा है, परन्तु उसे कार्यान्वित करने के यन्त्र की नीव गाँव को बनाना चाहिए।'

श्री टी. प्रकाशम् (मद्रास : सामान्य)

...टी. टी. कृष्णमाचारी ने अपने वक्तव्य में स्पष्ट किया है कि आदरणीय डॉ. आम्बेडकर किस प्रकार संकटों के बीच, समिति के पाँचछह सदस्यों ने अपना दायित्व छोड़ दिया हो और उनके स्थान पर किसी की नियुक्ति न हुई हो ऐसी कठिन परिस्थिति में - अथक परिश्रम कर रहे हैं। मैं ऐसी अपेक्षा से सत्र में नियमित उपस्थित रहता हूँ कि शिखर पर कार्यरत बुद्धिमानों द्वारा तैयार हो रहे संविधान में, तीस वर्ष तक स्वतन्त्रता की लड़ाई लड़ते रहे स्वर्गीय महात्मा गाँधी के नेतृत्व में स्वतन्त्रता प्राप्त करने में सफल रहे है ऐसे, लोगों की इच्छा और अपेक्षाओं के साथ सुसंगत ऐसा प्रावधान किया जाएगा। संविधान का आमुख पढ़कर मुझे विश्वास था कि सब कुछ उचित ढंग से चलेगा और ऐसा संविधान रचा जाऐगा जो हमारे करोडों लोगों के लिए रोटी और कपडों का प्रबन्ध करने के साथ साथ सभी देशवासियों के लिए शिक्षा एवं सुरक्षा प्रदान करने वाला होगा। परन्तु मेरे समान सोचनेवाले कुछ लोगों में जो हताशा व्याप्त है इसके आधार पर कहना पड़ेगा कि संविधान की पाण्डुलिपि एक एक करके लगभग सभी मुद्दों में ध्येयच्युत हुई है और इसे लेकर हमारे लिए यह समझना कठिन हो गया है कि हम कहाँ खड़े हैं, देश कहाँ है, देश के लोगों का स्थान उसमें कहाँ है और संविधान जब कानून का स्वरूप प्राप्त करेगा तब उनके लिए क्या निष्पन्न होनेवाला है। अब जब की संविधान पाण्डुलिपि तैयार हो चुकी है तब संविधान तैयार करनेवाले और संविधान समिति के सदस्यो के रूप में उसे पारित करने का जिन पर दायित्व है उनसे यही अपेक्षा रहेगी कि देश की सामाजिक व्यवस्था और प्रवर्तमान परिस्थिति को ध्यान में रखते हुए देश का संकट दूर करने के लिए हम ऐसा क्या कर रहे हैं जो आवश्यक है। इसी हेतु, संविधान के विषय में यथार्थ स्थिति को समझने के लिए प्रयास कर रहे सभी सदस्यों की ओर से मुझे कुछ जानकारी प्राप्त हो इसकी प्रतीक्षा कर रहा हूँ। जिस प्रकार स्वतन्त्रता संग्राम चला और जिस प्रकार से स्वतन्त्रता प्राप्त हुई इसे जो लोग अभी तक भूले नहीं हैं उनके प्रति मैं आभार प्रदर्शित करता हूँ। जहाँ तक संविधान की रचना का प्रश्न है, उसके प्रति ध्यान देते हुए, डॉ. आम्बेडकर के प्रति पूरा आदर दर्शाते हुए, मुझे कहना पड़ रहा है कि स्वतन्त्रता की लडाई लड़नेवालों के साथ वे अपने आपको जोड नहीं पाएँ हैं। उन्होंने पुराने ब्रिटिश काल के एक महापुरुष मेटकाफ

का उल्लेख किया है। शासकीय स्तर पर चाहे जैसी उच्चस्तरीय घटनाएँ घटती हों, सत्ता पर कोई आए या दूसरा, इस ओर ध्यान न देते हुए ग्रामपंचायतों का अस्तित्व बना रहा, ऐसे उनके (मेटकाफ के) वक्तव्य का उल्लेख भी किया। डॉ. आम्बेडकर ने इस बात को जिस रूप से प्रस्तुत किया वह उचित नहीं था। हमारे देश पर आक्रमण करनेवाले विभिन्न विदेशी शासकों की दमननीति के कारण ग्रामपंचायतों का अस्तित्व नहीं रहा। इसके पश्चात हम पूर्णतः निर्बल हो गए। ग्राम पंचायतो को निर्मूल करने के लिए किये गये अतिक्रमण के रहते हुए भी उनका अस्तित्व निःशेष नहीं हुआ था। सारे संसार को और उसके प्रति दुर्लक्ष्य करनेवाले हम सब को भी मेटकाफ यही बात समझाना चाहते थे। इसलिए इस के आधार पर ग्रामपंचायतो के प्रति दुर्लक्ष करना समुचित नहीं है। तत्कालीन परिस्थिति मे मेटकाफ द्वारा किये गये वर्णन के आधार पर मैं ग्रामपंचायतों की रचना करने का समर्थन नहीं करता। ग्रामपचायतों की रचना ऐसी होनी चाहिए जो आधुनिक हो, जिसमें शासन करने की, आर्थिक क्षमता बनाने की और विकास करने की सत्ता ग्रामजनों के पास हो। मैं यह जानना चाहूँगा कि संविधान की पाण्डुलिपि के आधार पर गठित होनेवाली सरकार का स्वरूप क्या होगा। वह किसके हितार्थ अपेक्षित है। क्या वह गिनेचुने सीमित लोगो के लिऐ है या कर देनेवाले जनसामान्य के लिए है ? उनके पास सत्ता हो या न हो, हमारे देश में प्रस्थापित एक अधम पद्धति के अनुसार वे कर देते हैं। इस पद्धति के कारण ही हम डेढ सौ वर्ष तक कराहते रहे थे और उस पद्धति से मुक्त होने के लिए हमने श्रेष्ठतम प्रयास किये हैं - इस देश की प्रजा द्वारा उद्भूत संविधान सभा डॉ आम्बेडकर द्वारा तैयार किये गए इस संविधान की पाण्डुलिपि में ऐसा संशोधन करे जिससे, हमारे महान 'मित्र' जो, हम पर कार्य पूर्ण करने का दायित्व सौपकर बिदा हुए हैं और जिन्होने देश की प्रजा एवं करोडों लोगों के लिए संघर्ष किया था ऐसे देशवासियो के लिऐ संविधान लाभकारी सिद्ध हो।'

श्री के. सन्तानम (मद्रास : सामान्य)

... डॉ आम्बेडकर ने ग्रामपंचायतो के विषय में अनपेक्षित प्रतिक्रिया दी और वह (ग्रामपंचायत) आधुनिक समय के संविधान की भावि भूमिका के लिए उचित नहीं है ऐसा बताया इसका मुझे खेद है। कुछ सीमा तक मैं उनके साथ सहमत हूँ। परन्तु ग्रामपचायतो की आलोचना करनेवाले और सभी प्रकार के राष्ट्रीय संकटों के लिए गाँवों को दोषी ठहरानेवाले उनके कथन के साथ मैं सम्मत नहीं हो सकता। मैं मानता हूँ कि क्रान्तियाँ एवं परिवर्तन होते रहे है फिर भी उन्होंने भारतीय जीवन को पुष्ट किया था

और वे (ग्रामपंचायत) यदि न होतीं तो भारत में अव्यवस्था फैल गई होती। मैं चाहता हूँ कि कुछ मर्यादाओं के साथ भी गाँवों को स्वायत्तता देने के लिए कोई कानूनी प्रावधान जोड़ा जाए। निःसंदेह स्थिति संकटपूर्ण है, क्यों कि ऐसे कई गाँव हैं जो बहुत छोटे हैं। बडे गाँव भी हैं, इसलिए पंचायतो के गठन के लिऐ उनके समूह बनाने पड़ेंगे। परतु मुझे ऐसा भी लगता है कि सभी प्रदेशों में पंचायतों का निर्वाचन होने के पश्चात् एक या दूसरे दौर में संविधान में उनके अस्तित्व को स्वीकृति देनी ही पड़ेगी, क्योंकि दीर्घकाल में गाँव की स्वायत्तता ही इस देश में भविष्य की विशेष स्वायत्तता की आधारशिला बननी चाहिए।

श्री आर. के. सिधवा (मध्य प्रान्त एवं वराड : सामान्य)

... इस संविधान की रचना जनतन्त्र के लिए हो रही है और डॉ आम्बेडकर ने स्थानिक सत्ताधिकरण एवं गाँवो की उपेक्षा करते हुए जनतन्त्र की विचारधारा को ही नकारा है। स्थानीय सत्ताधिकरण देश के सामाजिक एवं आर्थिक जीवन की धुरी नहीं बनती है तो संविधान विचार करने योग्य भी नहीं है। आज स्थानीय सत्ताधिकरण आश्चर्यजनक मात्रा में दयनीय स्थिति का सामना कर रहा है। केन्द्र को अमर्यादित रूप से दृढ बनाया गया है और उनकी (प्रदेशों की) सत्ता को छीन लिया गया है, ऐसी शिकायत करनेवाले प्रदेशों ने स्वयं ही सत्ता के मद में, स्थानीय संस्थाओं की सत्ता को हस्तगत कर लिया है और अनुचित संचालन की आड लेकर आज पचास प्रतिशत स्थानीय सस्थाओं को प्रादेशिक सरकारों ने 'सुपरसीड' किया है। इससे पूर्व ब्रिटिश शासकों ने भी यही पद्धति अपनाई थी और हमारी प्रादेशिक सरकारें भी, स्थानीय संस्था के समग्र तन्त्र में क्रान्ति लाने के स्थान पर उसी (ब्रिटिश) पद्धति का अनुसरण कर रही हैं। इन संस्थाओं को ग्रामीण लोगों के विकासार्थ अत्यन्त उपयोगी उपकरण बनाने का कोई स्पष्ट आदेश संविधान द्वारा प्रादेशिक सरकारों को यदि नहीं दिया जाता है तो जनतन्त्र के नाम पर तैयार की गई इस पाण्डुलिपि का कोई अर्थ नहीं है। यह प्रस्तुत करने योग्य नहीं है। स्थानीय संस्थाओं की आर्थिक स्थिति दयनीय है। प्रादेशिक सरकारें उन्हें बिजली कर, मनोरंजन कर जैसे आय के साधन देना नहीं चाहती। पश्चिमी देशों में तो स्थानीय संस्थाओं की आय का यही एक मात्र स्रोत है। हमारे देश में करों की सभी आय प्रदेश ले जाते हैं तब स्थानीय संस्थाओं एवं गाँवो का उत्कर्ष होगा ऐसी अपेक्षा भी कैसे कर सकते हैं ? गवर्नर ने अभी अभी अपने अभिभाषण में, और एक उपमन्त्री ने भी मुंबई में बताया कि प्रत्येक ग्रामजन को -

महिला या पुरुष सभी को - ऐसी अनुभूति करवानी चाहिए कि देश के संचालन में उनका भी हिस्सा है। परन्तु मेरी समझ में नहीं आता कि ग्रामीण लोगों की, देश की जनसंख्या के बड़े भाग की, उपेक्षा करते हुए उस उद्देश्य की पूर्ति कैसे कर पाएँगे ?

पंडित वालकृष्ण शर्मा (संयुक्त प्रांत : सामान्य)

... निःसंदेह, कहा जा सकता है कि संविधान मे ग्रामपंचायतों के लिए किसी धारा का प्रावधान नहीं है। इस कारण से पर्याप्त आलोचना भी हुई है। परन्तु, मै सूचित करना चाहता हूँ कि संविधान ग्रामपंचायत के विकास का किसी प्रकार से इनकार नहीं कर रहा है। ये संस्थाएँ स्वायत्त संचालन की सत्ता का उपयोग कर सकेंगी, क्योंकि सविधान ने स्थानीय स्वराज्य की संस्थाओं के विकास के पथ में संकट नहीं बिछाये हैं, अवरोध पैदा नहीं किये हैं। इसलिये ऐसी आलोचना भी निराधार प्रतीत होती है।

पण्डित ठाकुरदास भार्गव (पूर्व पंजाब : सामान्य)

... इस संविधान में भारत की आत्मा का यथार्थ प्रतिबम्ब नहीं है। गाँवों की स्वायत्तता भी उचित रूप से अंकित नहीं हुई है। (संविधान के पाण्डुलिपि के रूप में) इस कैमरे में उसकी छवि प्रस्तुत करने की क्षमता नहीं है जैसी भारत चाहता है। प्रारूप समिति के पारा गाँधीजी की दृष्टि नहीं थी, भारत में उमड़ते करोडो लोगों की प्रतिच्छाया कैमरा द्वारा (संविधान द्वारा) पड़नी चाहिए एसा समझनेवाले लोगों की दृष्टि भी इसमें दिखाई नहीं देती है।

... ग्रामपंचायतें। हमने बहुत कुछ सुना है। ये ग्रामपंचायतें किस रूप में कार्यरत होंगी इसकी मेरे पास कोई जानकारी नहीं है। हमारे पास एक संकल्पना, एक विचार और उसे कार्यान्वित करने के लिए हम जूझ रहे हैं।

प्रा. शिब्बनलाल सक्सेना (संयुक्त प्रांत : सामान्य)

... डॉ. आम्बेडकर ने इससे पूर्व भारत में प्रचलित और हमारे वरिष्ठों ने संविधान की आधारशिला के रूप में कल्पित ग्रामपंचायत पद्धति की आलोचना की है। मैं अभी अभी महात्मा गाँधी का सन् १९३१ में लन्दन में आयोजित गोलमेज परिषद में दिये गये वक्तव्य को पढ रहा था। उन्होंने उसमें सूचित किया था कि गाँव ही मतदाता इकाई होनी चाहिए। वास्तव में उन्होने ग्रामीण जनतन्त्र को सर्वाधिक महत्त्व दिया था। उन्होंने कहा था कि भारत की आत्मा गाँवों में बसती है। डॉ आम्बेडकर ने

ग्रामपंचायतों के लिए जो दृष्टिकोण प्रकट किया है इससे मैं निश्चित रूप से व्यथा का अनुभव करता हूँ। मुझे विश्वास है कि उनके जैसे विचार सदन के किसी सदस्य के मन में नहीं होंगे।

... मुझे विश्वास है कि इस सदन का विशाल बहुमत ग्रामपंचायतो के विषय में इस (डॉ आम्बेडकर के) दृष्टिकोण के साथ सहमत नहीं है। गत वर्षों में गाँवो में कार्यरत और कोंग्रेस की ग्रामपंचायतों के द्वारा किये गये कार्यो का अनुभव रखने के कारण मैं कह सकता हूँ कि हमारे देश ने और विश्व ने जो ज्ञान और प्रकाश प्राप्त किया है उसे यदि ग्रामपंचायतों तक पहुँचाया जाए तो वे देश को एकसूत्रता में बाँधे रखने में और 'रामराज्य' के आदर्श की ओर आगे ले जाने के लिए समर्थ उपकरण बनने की क्षमता रखते हैं ... मुझे लगता है कि संविधान में ग्रामपंचायतों की स्थापना के लिए उचित प्रबन्ध होना चाहिए।

संविधान के प्रारूप के अनुसार राज्यसभा सदन का चुनाव परोक्ष रूप से प्रान्तीय विधानसभाओं के द्वारा होगा। मेरा मानना है कि उसका चुनाव व्यापक मताधिकार के आधार पर होना चाहिए और ग्रामपंचायतों को उच्च सदन के चुनाव का अधिकार देना चाहिए। प्रान्तीय विधानसभाओं के द्वारा राज्यसभा के चुनाव की सूचित पद्धति जरा भी उचित नहीं है। ग्रामपंचायतों को राज्यसभा को निर्वाचित करने की स्वतन्त्रता देंगे तो व्यापक प्रतिनिधित्ववाला सदन प्राप्त होगा। निजी तौर पर मुझे लगता है कि गाँवों को बिना अधिक दायित्व सौंपे हम उनकी समस्याओं को हल नहीं कर पाएँगे।

श्री सारंगधर दास (उडिसा : देसी रियासतें)

... वे गाँवों को कूपमण्डूक ... अज्ञान का घर, संकुचित मानसवाला और साम्प्रदायिकता से युक्त मानते हैं तब... आश्चर्य इस बात का है कि सदन के एक आदरणीय सदस्य और राष्ट्रीय सरकार के मन्त्री ऐसा [illegible] । चाहिए कि

उस समय की सरकार के कारण ऐसी स्थिति बनी है। उस सरकार ने हमारी शिक्षा पद्धति के मूल को उखाड दिया था। परन्तु शास्त्रों एवं पुराणों के द्वारा प्रकृति की समझ एवं वैचारिक विवेक के सन्दर्भ में गाँव, आधुनिक नगरों की तुलना में अधिक समझदारी एवं विवेक से युक्त हैं।

... नगरनिवासी गॉव से, ग्रामीण जीवन से कोसों दूर हैं, अत. हम सोचते हैं कि गाँवों मे कुछ भी अच्छा नहीं है। अब उस विचारधारा में परिवर्तन आ रहा है। मुझे पता नहीं कि कोंग्रेसीजनों को छोड़कर और कहीं इस विचार में बदलाव हो रहा है या नहीं। परन्तु मैं निश्चित रूप से मानता हूँ कि कोंग्रेसजनों के मन में गॉवो का विचार मूर्धन्य है इस लिए डॉ. आम्बेडकर को इस विषय में पुनर्विचार करने और गॉवो को अपना अधिकार देने के लिए निवेदन करता हूँ, क्योकि निकटवर्ती भविष्य में ही गॉव पूर्व मे थे, उस प्रकार से आत्मनिर्भर हो जानेवाले हैं।

चौधरी रणवीरसिंह (पूर्व पंजाव : सामान्य)

... मैं केन्द्रीकरण या विकेन्द्रीकरण के विषय की गहराई में उतरना नहीं चाहता परन्तु एक बात के प्रति सदन का ध्यान अवश्य आकर्षित करना चाहता हूँ। राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी ने हमेशा हमें सिखाया है कि राजनीतिक या आर्थिक किसी भी क्षेत्र में विकेन्द्रीकरण अन्य किसी की भी तुलना में शक्ति का बीजारोपण अधिक करता है। इस दृष्टि के अन्य कारण भी हैं। मैं गाँव का निवासी हूँ, किसान के घर में जन्मा और पला हूँ इसलिए स्वाभाविक रूप से ही वह सभ्यता मेरे रोम रोम में उतरी है और यह मुझे प्रिय है। उसके साथ जुडी हुई सभी समस्याएँ मेरे मस्तिष्क में उभरती रहती हैं। मुझे लगता है कि देश के पुनर्गठन मे ग्रामवासियों को अपना अपेक्षित भाग मिलना चाहिए, हर क्षेत्र में ग्रामवासियों का प्रभाव निर्माण होना चाहिए।

वेगम एजज रसूल (संयुक्त प्रान्त : मुस्लिम)

... ग्राम राज्यव्यवस्था के सन्दर्भ में डॉ आम्बेडकर की बहुत आलोचनाएँ हुई है। परन्तु, मैं उनके साथ पूर्ण रूप से सहमत हूँ। प्रवर्तमान विचारधारा किसी भी प्रकार के स्थापित मण्डल के सामने नागरिक अधिकारों की पक्षधर है। ग्रामपंचायतें अत्यन्त निरंकुश या आपखुद हो सकती हैं।

डॉ. मनमोहनदास (प. वंगाल : सामान्य)

... सदन के एक प्रतिष्ठित सदस्य ने अत्यन्त उचित विषय उठाया है। उन्होंने

बताया कि संविधान की पाण्डुलिपि में, विश्व के कई देशों के संविधानों से बहुत कुछ लिया गया है, परन्तु हमारी भूमि से, हमारी सांस्कृतिक धरोहर से कुछ भी नहीं अपनाया गया है। वे स्पष्ट रूप से ग्रामपंचायत पद्धति का उल्लेख कर रहे थे। एक भावुक और आदर्शवादी प्रजा के रूप में अतीत की एवं प्राचीन कही जानेवाली प्रत्येक चीज के प्रति हमें सहज ही स्नेहभाव है। संविधान की पाण्डुलिपि में ग्रामपंचायत पद्धति को समाविष्ट नहीं करने की बात को लेकर सदन के कई सम्माननीय सदस्यों ने प्रारूप समिति के अध्यक्षजी की आलोचना की है। उन्होंने मान लिया है कि यह संविधान एक व्यक्ति ने रचा है, वे भूल गए हैं की संविधान की रचना में मार्गदर्शन करने के लिए एक संस्था - प्रारूप समिति के सभी सदस्य संविधान में ग्रामपंचायतों को समाविष्ट करना भूल गए हैं। ग्रामपंचायत का क्षेत्र उनकी समझ से परे, बंद गली सा है। इसलिये मुझे भी लगता है कि प्रारूप समिति ने ग्राम पंचायत पद्धति के विषय में मनचाहा कानून बनाने का दायित्व प्रान्तीय विधानसभाओं पर छोड़ा है।

... ग्रामपंचायत पद्धति के लिए अत्यन्त उत्साहयुक्त समर्थकों को चेतावनी के दो शब्द कहने की अनुमति चाहता हूँ। हमारे ग्रामीण लोग जब तक शिक्षित न हों, वे राजनीतिक रूप से सतर्क न बनें और विशेषाधिकारों के प्रति भी जागरूक न हों तब तक ग्रामपंचायत पद्धति लाभ की अपेक्षा हानि अधिक पहुँचाएगी। ग्रामपंचायत पद्धति का अस्तित्व आज से नहीं सदियों से है। परन्तु देश के कल्याण में, सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक विकास में उसका कितना योगदान है ? मैं जानता हूँ कि ऐसा कहकर मैं स्वयं के प्रति आ बैल मुझे मार सी स्थिति को निमन्त्रित कर रहा हूँ। परन्तु मुझे लगता है कि ग्रामीण जनता को उचित रूप से शिक्षित करने से पूर्व ही इस पद्धति को लागू किया गया तो तथाकथित ऊँची जाति के स्थानीय लोग पंचायत पद्धति के द्वारा प्राप्त सत्ता और विशेषाधिकार हथिया लेंगे, साथ ही निजी स्वार्थ के लिए उसका उपयोग करेंगे। गाँवों के जमींदार, जागीरदार, महाजन एवं आर्थिक लेनदेन करनेवाले सूदखोर वर्ग के लिए तुलना में कम सुसंस्कृत, अशिक्षित, गरीब समुदाय को लूटने एवं उनका शोषण करने के लिए यह पद्धति सहायक बनेगी।

श्री वी. आई. मुनिस्वामी (मद्रास : सामान्य)

... ग्रामीण प्रजा की, और विशेष रूप से किसान एवं खेतों में मजदूरी करनेवाले श्रमिकों की आर्थिक स्थिति का विचार किया जाए तो गाँवो को एक इकाई मानने के ... संविधान की पाण्डुलिपि में कोई प्रावधान नहीं दिखाई देता है। यह सच है कि

शोषण के कारण या अन्य कारणो से गाँव ध्वंस के कगार पर खड़े हैं। संविधान की रचना करनेवालों का सब से बडा कर्तव्य गाँवों की स्थिति में सुधार हो यह देखना है। गाँव के अधिकारी, मुखिया या पटवारी की नियुक्ति वंश परम्परा के आधार पर होती रहने के कारण ऐसे लोग ही ग्राम प्रशासक बन गये हैं। उच्च स्तर पर, प्रान्तों के प्रशासन के लिए संविधान की रचना करते समय उसमें से गाँवो के पुनर्गठन के विषय की अगर अपेक्षा की जाती हो तो मेरी दृष्टि में उचित नहीं है। महात्मा गाँधी भी गाँवों के हाथ में शासन सौंपना चाहते थे। मुझे विश्वास है कि यह महान सदन, अपने प्रस्तुत प्रावधानों पर पुन: विचार करेगा और गाँव को या ग्राम समूह को स्वशासित संस्थाओं की कक्षा में रखने के लिए हमारे द्वारा उचित संशोधन हो, इसके प्रति जाग्रत रहेगा। जिला और मण्डल (समितियाँ) हो या नगरपालिका हो, उसमें ग्रामजनों का या तहसील की प्रजा का सही अर्थ मे प्रतिनिधित्व नहीं होता है। इस समय उनका जिस रूप में गठन होता है वह लोकमान्य संस्थाओं का नहीं रहा है। मुझे लगता है कि हमे ग्रामीण इलाके का ध्यान करना ही पड़ेगा।

श्रीमती दाक्षायणी वेलायुधन (मद्रास : सामान्य)

.. भारत को प्रथम स्तर की शक्तिशाली इकाई बनाने के लिए दो मार्ग हैं। एक मार्ग सत्ता के केन्द्रीकरण का और दूसरा विकेन्द्रीकरण का। परन्तु शिष्ट भाषा में जिसे जनतान्त्रिक पद्धति कहा जाता है वैसी संसदीय पद्धति के द्वारा ही केन्द्रीकरण सम्भव होना चाहिए। परन्तु पाण्डुलिपि मे कही भी जनतन्त्र की झलक नहीं दिखाई देती है और विकेन्द्रीकरण तो सर्वथा ही अदृश्य है। एक महान संस्कृति और विश्व के एक सर्वोत्कृष्ट महापुरुष के उदात्त सिद्धान्तो और उपदेशों से युक्त, तीस करोड़ की जनसंख्या वाले इस देश के सामने हम ऐसा संविधान प्रस्तुत कर रहे हैं जो पूर्णत: विदेशी है। इससे अधिक दयनीय स्थिति और क्या हो सकती है ? प्रारूप समिति के अध्यक्ष के तर्क आधारहीन प्रतीत होते है।

श्री गोकुलभाई दोलतराम भट्ट (मुंबई : देसी रियासतें)

... डॉ आम्बेडकर ने साहस के साथ स्वीकार किया है, साथ ही प्रारूप समिति के सदस्य भी मानते हैं कि इस संविधान में भारत में पंचायत शासन या ग्रामपंचायत की स्थापना का कोई प्रबन्ध नहीं है। ऐसा कोई प्रबन्ध न हो तो यह संविधान भारत का नहीं हो सकता। ग्रामपंचायत को अनदेखा करना या उसे किनारे पर धकेल देना ...

जिस पद्धति ने हमें ऊपर उठाया और जिसने आज तक हमारा अस्तित्व बनाए रखा है, उसे जानबूझकर दूर रखा गया है। इसकी घोषणा साहस के साथ, स्पष्ट रूप से की जाती है, तब मैं विनम्रता के साथ अपना विरोध प्रकट करता हूँ। वे इसको स्वीकार करते हैं कि उसे किनारे कर दिया है और संविधान में उसे समाविष्ट नहीं किया गया है। उन्होंने एसा कहा है और जोर देकर कहा है। हमारी प्रारूप समिति ने ऐसे शब्दों का प्रयोग किया है, 'गाँवो का अस्तित्व क्या है ? कूपमण्डूक वृत्ति और अज्ञान का घर... मुझे इस बात पर खुशी हो रही है कि संविधान की पाण्डुलिपि में उसे, ग्रामपंचायत को दूर रखा गया है।' ऐसे शब्दों से मुझे अत्यन्त दु:ख का अनुभव हो रहा है।

मुझे खेद है कि हमारे इस संस्कृत एवं राज्यशास्त्र के विद्वान पण्डित ने इस प्रकार से ग्रामपंचायतों का विरोध किया है। गाँव की यदि उपेक्षा की जा सकती है तो कोई व्यक्ति साहस के साथ ऐसी माँग भी कर सकता है कि इस संविधान को ही फेंक दीजिए। परन्तु मैं विनम्र व्यक्ति हूँ और मुझे किसी प्रकार का विशेष अनुभव भी नहीं है। किसी प्रकार का अवलोकन प्रस्तुत करने के लिये भी कभी कभी मैं भावनाशील बनकर अनुसरण करता हूँ। परन्तु किसी भी रूप में, हम जो सुधार करना चाहते हैं उसके द्वारा, किसी प्रकार से ऐसे प्रबन्ध को समाविष्ट करना चाहिए जिसके अन्तर्गत हमारे राज्यप्रशासन की नींव में जनतन्त्र हो। ऐसा होगा तभी हमारा संविधान पूर्ण माना जाएगा, तभी वह प्राणवान बन सकेगा और तभी अनुभूति होगी कि यह संविधान हमारा है। इसके अभाव में तो पूरा भवन हम रेत की नींव पर खड़ा करेंगे और वह नि:संदेह बिखर जायेगा। मैं इसी बात को सूचित करना चाहता हूँ इसीलिए मैं अपने विचार प्रकट करना चाहता था।

... मैं डॉक्टर साहेब से केवल इतना निवेदन करना चाहता हूँ कि वे बड़े विद्वान हैं और इसीलिए इस देश को उन्हें ज्ञान की भूमि मानना चाहिए। मेरा निवेदन है कि इस संविधान में वे भारत की आत्मा को उचित स्थान दें।

श्री अलादी कृष्णस्वामी आयंगर (मद्रास : सामान्य)

... *मुझे स्वीकार करना पड़ेगा कि भारतीय ग्रामसमाज की व्यापक रूप से* अवमानना करने के कारण मेरे आदरणीय मित्र (डॉ आम्बेडकर) के विचारों का समर्थन मैं नहीं कर सकता। भारत की भूमि पर जनतन्त्र केवल ऊपरी स्तर पर है, ऐसे उनके दृष्टिकोण का मैं आत्यन्तिक विरोध करता हूँ। हमारे इतिहास के सुदूर अतीत में देखने पर ध्यान में आता है कि हमारे देश की विभिन्न संस्थाओं में जनतन्त्र के सिद्धांत को

स्वीकृत किया गया था ..।

...(ऐसी आलोचना हुई है कि) भारत के सामाजिक एवं राजनीतिक जीवन के एक आवश्यक लक्षण के रूप में संविधान में ग्रामसमूहों को उचित महत्त्व प्रदान नहीं किया गया है, परन्तु प्रादेशिक एवं राज्य की विधानसभाओं को, स्थानीय स्वराज्य एवं अन्य प्रावधानों में, जो अत्याधिक शक्ति दी गई है, इसे देखते हुए, राज्य सरकार के विभिन्न विभागों में संचालन के लिए गाँवों को उसकी इकाई बनाने में राज्य सरकार को कोई आपत्ति नहीं हो सकती।

प्रो. एन. जी. रंगा (मद्रास : सामान्य)

... डॉ आम्बेडकर ने ग्रामपंचायतों के विषय में जो कुछ कहा इससे मुझे बहुत दुःख हुआ है। हमारे देश की जनतान्त्रिक परम्परा को वे उचित ढंग से समझ नहीं पाए हैं। विगत एक हजार वर्षो में दक्षिण भारत की ग्रामपंचायतों ने जो उपलब्धियाँ प्राप्त की है, उसकी जानकारी यदि उन्हें होती तो वे ऐसा नहीं कहते। अन्य देशों के इतिहास का जितनी गहराई से उन्होने अध्ययन किया, उतनी रुचि यदि भारतीय इतिहास के अध्ययन के प्रति दर्शाते तो इस प्रकार से प्रतिपादन करने की उन्हें आवश्यकता ही नहीं रहती। मैं इस सदन को याद दिलाना चाहता हूँ कि हम जिस नए जनतन्त्र को प्रस्थापित करने जा रहे हैं, हमारे ग्रामवासी भी दृढ मताधिकार के आधार पर अपने दायित्वों को उचित रूप से निभायें, इसके लिए आवश्यक महत्तम अनुभव उन्हें प्राप्त हो, वे समर्थ बनें इस उद्देश्य से महत्तम राजनीतिक संस्थाओं की स्थापना करना आवश्यक है। ग्रामपंचायतों की ऐसी सुदृढ आधारशिला तैयार किए बिना जनतन्त्र में लोग अपनी भूमिका निभाने की क्षमता कैसे अर्जित कर पाएँगे ? हम व्यवस्थातन्त्र का केन्द्रीकरण चाहते हैं या विकेन्द्रीकरण ? महात्मा गाँधी निरन्तर तीस वर्ष तक विकेन्द्रीकरण की बात समझाते रहे थे। कॉंग्रेसी होने के नाते हम विकेन्द्रीकरण के लिए प्रतिबद्ध हैं और समग्र विश्व भी आज विकेन्द्रीकरण का पक्षधर है।

हमारे आदर्श क्या हैं ? हमने निर्देशों में तथा मूलभूत अधिकारों के प्रकरण में कुछ आदर्श बताये हैं। परन्तु क्या यह जरूरी नहीं है कि हम एक निर्देश में स्पष्ट रूप से यह कहें कि हमारे संविधान के शिखर ढांचे के लिये आधारशिला बनने हेतु सामाजिक, आर्थिक और राजकीय स्वायत्तता प्राप्त करने हेतु तथा ग्रामजनों में स्वशासन का प्रशिक्षण प्राप्त करने मे सहायता करने हेतु गांव या गांव समूहमें पंचायत की स्थापना करना राज्य का कर्तव्य है ऐसी स्पष्ट सूचना हम निर्देशों में ही समाविष्ट कर दें ?

(संविधान के) इस उद्देश्य को लेकर कहना पड़ेगा कि गाँवों में निवास करनेवाले लोगों के प्रति उदासीनता दर्शाई गई है। इस विषय के प्रति ध्यान देने का समय आ गया है।

श्री आर. अनंतशयनम आयंगर (मद्रास : सामान्य)

... ठीक है कि डॉ आम्बेडकर ने संविधान के अनेक पक्षों का विश्लेषण किया है, परन्तु दुर्भाग्य से उन्होंने कुछ विषयों पर दृढता दिखाई और ग्रामस्वराज्य, ग्रामस्वायत्तता एव जनतन्त्र के विषय पर अपना अभिप्राय प्रस्तुत किया। वे हमें और इस सदन को विवाद से बचा सकते थे। मेरा स्पष्ट मत है और मैं चाहता हूँ कि हमारा संविधान स्वायत्त तथा ग्रामस्वराज्य पर आधारित हो। किसी एक समान उद्देश्य के लिए लोगों को यदाकदा एकत्रित करना, एक या दूसरे सदन में अ, ब, एवं क को निर्वाचित करने के उद्देश्य से इकट्ठा होना और बिखर जाना होता है तो ऐसा जनतन्त्र निरर्थक है। आज के भारत में स्थिति ऐसी ही बनी हुई है। गाँवों मे रहनेवाले लोगों को जनतन्त्र का प्रशिक्षण प्राप्त करने का कोई अवसर ही नहीं प्राप्त हुआ। उन्होंने अन्य लोगों के साथ मिलकर दायित्व निभाए नहीं है, इसलिए वे गँवार रहे। उनमें अपने कर्तव्यों के प्रति गम्भीरता उत्पन्न नहीं हुई।

हमें इस ओर ध्यान करना चाहिए कि गाँव सूत्रबद्ध समाज की अपेक्षित इकाई बने। मेरा मानना है कि गाँव मे भी पारिवारिक इकाई की रचना हो, यद्यपि समग्रता में भारतीयता की भावना की दृष्टि से मतदान की इकाई व्यक्ति ही रहना चाहिए। इसी पद्धति से गाँवो का पुनर्गठन होना चाहिए, इस बात को छोड़ देंगे तो वे किसी समान उद्देश्य से हीन केवल अवसरवादी के रूप में मिलते बिखरते रहेंगे आर्थिक एवं राजनीतिक परिस्थिति की दृष्टि से संगठित होने का अवसर ही प्राप्त न होता हो ऐसे लोगों का अव्यवस्थित समूह बनकर ही रह जाएँगे।

परन्तु, वर्तमान परिस्थिति को देखते हुए क्या हमारे संविधान को अभी इसी समय ग्रामस्वराज्य का आधार देकर खडा किया जा सकता है ? मैं स्वीकार करता हूँ कि हमारा उद्देश्य यही होना चाहिए। परन्तु ऐसा जनतन्त्र है कहाँ ? उसका तो अभी हमें निर्माण करना है ... इसीलिए मेरा सुझाव है कि मार्गदर्शक सिद्धान्तों में एक धारा का प्रावधान किया जाए जिसके द्वारा भविष्य में गठित होनेवाली सभी सरकारों के अन्तर्गत ग्रामपंचायतों की रचना करने और उन्हें स्वायत्तता देने के लिए और वे अपने कार्य स्वयं कर सकें इस उद्देश्य से आर्थिक स्वतन्त्रता देने का उसमें स्पष्ट निर्देश हो।

भविष्य में ऐसी स्थिति का निर्माण होगा जब इन जनतन्त्रों या स्वायत्त पंचायतों के आधार पर भविष्य के संविधान की रचना की जा सकेगी। हमारे नेता और प्रधानमन्त्री द्वारा परसों जो वक्तव्य दिया गया इससे मैं सहमत हूँ कि आनेवाले पॉच वर्षो के लिऐ इस संविधान को परिवर्तनशील या सीमित समयावधिवाला रखना चाहिए। ऐसा करने से इस समयावधि में प्राप्त अनुभवों के आधार पर भविष्य में सम्भवत स्थाई मताधिकार के द्वारा निर्वाचित नई (संविधान) समिति पुन: उसकी रचना करे या उसमें अपेक्षित संशोधन करे।

श्री महावीर त्यागी (संयुक्त प्रान्त : सामान्य)

... अब, मैं गॉव के विषय में कुछ कहना चाहूँगा। डॉ आम्बेडकर ने बताया कि प्रारूप समिति ने गाँवों को समाविष्ट नहीं किया है, इसलिये वे प्रसन्न हैं। उन्होंने गाँव को *कूपमण्डूक मनोवृत्ति एवं साम्प्रदायिकता का घर बताया, गुलामी के कूपमण्डूक ही* स्वतन्त्रता आन्दोलन के कालखण्ड में सभी प्रकार के दमन सहते रहे थे। चिमूर में, इन कूपमण्डूकों को ही परेशान किया जाता था। उन्हें जलाया जाता था और उन पर अमानुष अत्याचार किए जाते थे। तब आजादी के ये स्तम्भ ब्रिटिशरों की चापलूसी करते थे। डॉ आम्बेडकर द्वारा गाँवो के विरूद्ध किए गऐ विधानों के सामने अपना विरोध प्रकट किये बिना मैं अपने लोगों के सामने जाकर खड़ा नहीं रह पाऊँगा। डॉ आम्बेडकर को ज्ञात ही नहीं है कि स्वतन्त्रता के आन्दोलन में गॉवों ने कितना बलिदान दिया है ? मेरा प्रस्ताव है कि गाँवों के लोगों को संचालन (प्रशासन) में अपना उचित भाग मिलना चाहिए। अगर उन्हें अपेक्षित साझेदारी नहीं मिलेगी तो वे निश्चित रूप से प्रतिक्रिया करेंगे।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती (मद्रास : सामान्य)

... मुझे इस बात का खेद है कि डॉ आम्बेडकरने ऐसे कुछ कथन कहने की छूट ली जो इस सदन की इच्छा या भावनाओं के साथ सुसंगत न हो... माननीय सदस्यों ने गाँवों का प्रश्न उठाया ही है। मैं उसमें कुछ जोडना चाहता हूँ। वे कहते हैं पाण्डुलिपि में गाँवों को किनारे धकेल कर व्यक्ति को इकाई के रूप मे अपनाया गया, इसकी मुझे प्रसन्नता है। मैं उन्हे पूछना चाहता हूँ कि गाँवों को छोड़कर ऐसा व्यक्ति है कहाँ ? गाँवों की उपेक्षा कर व्यक्ति पर ध्यान दिया गया है ऐसा बताते समय वे सरलता से भूल जाते हैं कि व्यक्ति ही गाँवों का निर्माण करते हैं, जनसंख्या का नब्बे प्रतिशत भाग गाँवों में है, और वे मतदाता भी हैं।

श्री किशोरीमोहन त्रिपाठी (मध्य प्रान्त एवं वराड)

दूसरे एक प्रश्न के प्रति ध्यान दिया जाए, ... वह है गाँवों को चुनाव का... गाँवों के विषय मे वहुत कुछ कहा गया है। डॉ आम्बेडकर ने 'गॉवों को अज्ञान का घर' कहा। उसकी, तीखी एवं कटु आलोचना हुई है। मुझे पता है कि ऐसी आलोचना सदन की प्रामाणिक संवेदनशीलता के कारण हुई है। सदन चाहता है कि गाँव भी आगे आकर राष्ट्र के पुनर्गठन में संपूर्ण भूमिका प्रदान करें। ऐसी इच्छा प्रामाणिक है और इसलिए सदन से मेरा नम्र निवेदन है कि वे संविधान में ही चुनाव प्रक्रिया का विस्तार से निरूपण करें।

श्री विश्वम्भर दयाल त्रिपाठी (संयुक्त प्रान्तः सामान्य)

एक बात मुझे चुभती है - भारत की भूमि जनतन्त्र के लिऐ अनुकूल नहीं है ऐसे डॉ. आम्वेडकर के कथन का मैं विरोध करता हूँ। मै नहीं जानता कि मेरे इस मित्र ने भारत के इतिहास का अध्ययन किस दृष्टि से किया है। मैं इतिहास के साथ राजनीतिशास्त्र का भी छात्र हूँ और मे पूरे विश्वास के साथ कह सकता हूँ कि, ग्रीस या विश्व के किसी देश की तुलना में भारत में जनतन्त्र का विकास बहुत पहले हुआ है। ... उसके बाद सीमापार के आक्रमणों के कारण राजनीतिक विकासयात्रा में वाधा पहुँची है इसमें कोई सन्देह नहीं है। फिर भी गाँवों मे वह जनतन्त्र ग्राम प्रजासत्तात्मक या ग्रामस्वराज के रूप में कार्यरत होता दिखाई देता है। प्रस्ताव को प्रस्तुत करनेवाले ने भी अपने वक्तव्य में इस वात को स्वीकार किया है। यह बड़ा दुर्भाग्य है कि उन्होंने ऐतिहासिक तथ्यों के समर्थन विहीन कथन का प्रयोग किया है।

श्री मोटुरी सत्यनारायण (मद्रास : सामान्य)

... इस समय जिस संविधान की रचना हो रही है वह हमारे सामने कई प्रावधान प्रस्तुत कर रहा है। इन प्रावधानों से मैं समझ पाया हूँ कि उसकी रचना नीचे से नींव से करने के स्थान पर ऊपर से कंगूरे से की जा रही है ... जिसके लिए हम पिछले तीस वर्षो से पसीना बहार रहे हैं और अन्तिम तीन वर्ष से जूझ रहे हैं ऐसे स्वराज्य हा सही अर्थ लोग समझते हैं। उन्हें इस बात की भी अच्छी तरह जानकारी है कि यह संविधान उनके लिए निर्मित हो रहा है परन्तु संविधान की रचना में, राष्ट्रीय या स्वराज्य का, या तो फिर ग्रामवासियों का भी दृष्टिकोण का स्वीकार न होकर आन्तरराष्ट्रीय दृष्टिकोण को आधार बनाया गया है।

स्वराज्य या गाँववासियों के दृष्टिकोण के आधार पर नहीं अपितु अंतरराष्ट्रीय पक्ष पर बल दिया जा रहा है। संविधान लोगों के लिए होना चाहिए ताकि उन्हें अन्न एवं वस्त्र का भरोसा प्राप्त हो, क्योंकि ऐसी बुनियादी आवश्यकताओ के अभाव के कारण ही स्वराज्य की माँग उठी थी...।

मेरा दृढ अभिमत है कि हमारे बृहद परिवार के सदस्यों को अगर अन्न, वस्त्र एवं निवास की सुविधा प्रदान करना चाहते है तो ग्रामपचायतों का अस्तित्व संविधान की रचना की नींव में होना चाहिए। हमने लोगों को ऐसा भरोसा नहीं दिया है। हम अपने प्रदेशों को सुदृढ रखना चाहते हैं या शिथिल, हम सुदृढ केन्द्र चाहते हैं या निर्बल... इसके विषय में सोचना पड़ेगा। हमने संविधान की रचना में प्रान्त एवं गाँवों को अपेक्षित महत्त्व नहीं दिया है इसीलिए ऐसे प्रश्न उपस्थित हुए हैं। समग्र सविधान की नींव में एक ऐसा विचार उभरता है कि हमारा देश ब्रिटन, रूस या अमेरिका के सामने किस प्रकार स्पर्धाक्षम हो सकेगा और उनके साथ कैसे सम्बन्ध होगे। ऐसा होते हुए भी हमारे देशवासी, हमारे गाँववासी, नगरनिवासी, एवं गरीब प्रजा के लिए हम कुछ करना चाहते हैं इसकी झलक दर्शानेवाली कोई बात समग्र संविधान में देखने को नहीं मिलती है।

जहाँ तक उत्पादन का प्रश्न है, अधिक से अधिका मात्रा में संपत्ति का निर्माण करने के लिए गाँववासियों को महत्तम काम करने के लिए प्रेरित करनेवाला प्रावधान संविधान में नहीं है। मुझे लगता है कि इसके लिए ऐसा उत्तर दिया जाएगा कि भविष्य में संविधान को लागू करते समय इन बातों के प्रति परोक्ष रूप से ध्यान दिया गया है। मेरा मत ऐसा है कि संविधान में ही उसकी चुनाव पद्धति का प्रावधान किया जाए, वे बातें स्पष्ट रूप से अंकित की जाएँ। परन्तु मेरा मानना है कि मनुष्य का चरित्र उसके चेहरे से समझ मे आता है, इसी प्रकार संविधान लोगों को किस दिशा में ले जाएगा इसे समझने के लिए उसे ऊपर ऊपर से देखना ही पर्याप्त है। इसलिए आशा करता हूँ कि संविधान में किए गए प्रत्येक प्रावधान की, उसकी प्रत्येक धारा की छानवीन करते समय निश्चित रूप से ऐसा प्रयास होगा कि हमने देशवासियों को जो वचन दिया है उसे पूरा करने की व्यवस्था संविधान में की जा सके।

श्री सुरेशचन्द्र मजुमदार (प. बंगाल : सामान्य)

सत्ता की सीमाएँ निर्धारित करने सम्बन्धी विषय पर ग्रामसमाज की भूमिका के सम्बन्ध में डॉ. आम्बेडकर के विधान का तनिक सन्दर्भ देना चाहता हूँ। यह सच है कि एक समय पर ग्रामसमाज स्थगित हो गया था और इतिहास उससे आगे निकल गया।

परन्तु राष्ट्र की उद्वेगपूर्ण मन:स्थिति के काल में लगभग सब कुछ ही स्थगित हो गया था, सीमित दायरे में बन्द हो गया था और राजनीतिक जीवन भी छिन्नविच्छिन्न हो गया था। ऐसे समय में यह स्थिति पैदा हुई थी। ग्रामीण समाज उस समय इतिहास की मुख्य धारा के प्रति उदासीन रहा। मुझे लगता है कि अगर ग्रामीण समाज को पुन: प्राणवान बनाया जाए, उसे सत्ता के प्रति सतर्क किया जाए तो वह न केवल राज्य का स्तम्भ बन सकेगा अपितु राज्य की शक्ति का प्रमुख स्रोत बन सकने की क्षमता भी सिद्ध करेगा।

श्री एन. माधवराव (उडीसा की देसी रियासतें)

पाण्डुलिपि में गाँधीवादी दर्शन की झलक नहीं है, उसके कुछ प्रावधान 'गवर्नमेन्ट ऑफ इन्डिया एक्ट-१९३५' समेत - विदेशी स्रोतों से हैं। पाण्डुलिपि की अनेक वक्ताओं ने इस आधार पर अलोचना की है कि संविधान की रचना में प्राचीन भारत की व्यवस्था के किसी भी तत्व का समावेश नहीं किया गया है।

यह दुर्भाग्यपूर्ण बात है कि ग्रामपंचायत के विषय को लेकर बड़ा विवाद पैदा हुआ है। डॉ. आम्बेडकर के कटु विचार उनके अपने अनुभव पर आधारित थे। परन्तु श्री अलादी कृष्णस्वामी अय्यर की तरह ही, मैं अपने अनुभव के आधार पर अपनी बात प्रस्तुत करना चाहता हूँ। तीस वर्षो से भी अधिक समय से मैसूर सरकार ने ग्रामसमूहों को पुनरुज्जीवित करना तथा ग्रामपंचायत के कार्य को राज्य के संचालन में प्रमुख स्थान प्रदान करना शुरू किया है। उसके कारण सार्वजनिक खर्च भी अधिक हुआ है। दीवान से लेकर तहसीलदार तक के सभी सम्बन्धित अधिकारियों ने, अपनी समझ के अनुसार गाँवो के प्रति वैयक्तिक रूप से ध्यान दिया है। मुझे लगता है कि मैसूर की प्रवर्तमान लोकप्रिय सरकार इस दिशा में इस समय भी अधिक घनिष्ठ प्रयास कर रही है।

मेरे मतानुसार उसके परिणाम उत्साहजनक एवं कतिपय प्रसंगो में अत्यन्त संतोषप्रद हैं। यह सच है कि कुछ गाँवों मे तीव्र मतभेद हैं। शूद्र लोग स्वेच्छाचारी व्यवहार करते हैं या उनमें अस्पृश्यता अपनी चरमसीमा पर अनुभव में आती है। कुछ गाँव पूरी तरह उदासीन तथा कभी कभी मरणासन्न अवस्था में दीखते हैं। ऐसा होते हुए भी लगभग ३० प्रतिशत गाँवों की स्थिति अच्छी कही जा सकती है। अर्थात ३० प्रतिशत गाँवों में कार्यकर्ता नियमित रूप से मिलते रहते हैं, पंचायत के करों का संग्रह किया गया है, गाँववासियों की स्वैच्छिक सेवाओं के द्वारा गाँव की साप्ताहिक स्वच्छता

का कार्य किया है, बच्चों को टीका लगवाने की दिशा मे भी उचित कदम उठाए गए हैं। जो सफलता प्राप्त हुई है वह, अधिकांश गॉव के कुशल मुखिया - सरपंच या प्रतिष्ठित जमीदारों के नेतृत्व के कारण हुई है। मुझे विश्वास है कि देश के अन्य क्षेत्रों का अनुभव भी न्यूनाधिक ऐसा ही है। व्यापक रूप से अफसरशाही की प्रशासनिक पकड नहीं है वहाँ कुछ छोटी रियासतों मे मुझे उल्लेखनीय रूप से आत्मनिर्भर ग्रामीण प्रजा के सगठित प्रयास दिखाई दिए हैं। प्रान्तीय एवं राज्य सरकारों के निरन्तर प्रयास ग्रामीणसमूहो को नया जीवन प्रदान करे ऐसी आशा की जा सकती है। इस सदन के सदस्य जानते हैं कि गाँवों में रचनात्मक कार्यो के सन्दर्भ में गाँधीजी का अपना एक निश्चित मत था। एक अवसर पर उन्होंने कहा था कि 'अधिकांश कोंग्रेसी यदि गाँवो से आते हैं तो वे, सभी दृष्टि से, गॉवो को स्वच्छता का मूर्त रूप प्रदान करने मे लगने चाहिए। परन्तु दैनिक जीवन व्यवहार मे ग्रामवासियों के साथ अपने आपको समान मानने की बात को उन्होने कभी स्वीकार नहीं किया है।' ग्रामपंचायत पद्धति को उत्साह एवं त्वरित गति से, अपनी शक्ति के अनुसार विकसित करवाने मे प्रान्तीय सरकारें रोक लगा सकें ऐसा कुछ भी संविधान के मसौदे में नहीं है। इस समय विचाराधीन विषय यही है कि सदनों की चुनाव प्रक्रिया पंचायतों की नींव पर बनाई जानी चाहिए या नहीं। यदि उस दिशा मे सदन निर्णय करता है तो संविधान की पाण्डुलिपि की दो धाराओं की ओर अपेक्षित ध्यान देना पड़ेगा। हमें इस पर भी ध्यान देना पड़ेगा कि ग्रामपंचायतों को पक्षीय राजनीति के भँवर में धकेल कर, ग्राम प्रशासनतन्त्र की उपयोगी एजन्सियो के रूप में कही उन्हें खत्म न कर दें।

श्री टी. प्रकाशम (मद्रास : सामान्य)

... श्री माधवराव ने बताया कि हमारे पूर्वज मतपेटिका एवं मतपत्र से अनभिज्ञ थे। मैं उनका ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ कि काजीवरम से बीस मील दूर स्थित उत्तरामेरुर के एक गाँव के मंदिर की दीवारों के एक शिलालेख में मतपेटिका एवं मतपत्र का उल्लेख है। उसमें इस सन्दर्भ में पूर्ण जानकारी है। मतपेटिका के रूप में घड़े के आकार का एक पात्र नीचे छेद कर जमीन पर रखा जाता था। मतपत्र के रूप में 'कडजन' (एक प्रकार का वृक्ष) के पर्ण का उपयोग किया जाता था और वयस्क मताधिकार का चलन था। चुनाव सम्बन्धित गाँव तक सीमित नहीं था, अपितु समग्र भारत में ऐसी प्रक्रिया अस्तित्व में थी। मेरे आदरणीय मित्र को इस बात की जानकारी नहीं होने के कारण उन्होंने ऐसा असत्य विचार प्रकट किया है, जो पूर्णतः गलत है और मैं उसमें सुधार करना चाहता हूँ।

६. संविधान में धारा ४० का समावेश (२२ नवम्बर १९४८)

श्री एम. अनन्तशयनम आयंगर (मद्रास : सामान्य)

मा. उपाध्यक्ष महोदय, (संविधान का) ९२७ क्रमांक का संशोधन (कार्यसूचि में) मेरे नाम पर है, परन्तु श्री सन्तानम ने उसके स्थान पर दूसरा प्रारूप प्रस्तुत किया है। मैं मानता हूँ कि उसकी भाषा अधिक अच्छी है। इसलिए आप अनुमति दे तो मेरे स्थान पर उसे प्रस्तुत करने की (सदन) स्वीकृति दे। यदि आप चाहते हैं कि संशोधन मैं ही प्रस्तुत करूँ तो मैं वैसा ही करूँगा। परन्तु धारा ३१-ए के सन्दर्भ में स्थानापन्न प्रार्थनापत्र को मैं स्वयं स्वीकार करता हूँ। आप जो भी आदेश देंगे मुझे स्वीकार्य है।

मा. उपाध्यक्ष

श्री सन्तानम को प्रस्ताव प्रस्तुत करने दिया जाए।

मा. श्री सन्तानम

मान्यवर, मेरा प्रस्ताव है कि

धारा ३१ के पश्चात् निम्नलिखित नई धारा को जोडा जाए :

''३१-ए. राज्य ग्रामपंचायतों की रचना के लिए उचित कदम उठाएँगे और उन्हें *स्थानीय स्वराज्य की इकाईयों के रूप में आवश्यक अधिकार और सत्ता प्रदान* करेंगे।''

मान्यवर, इस धारा की आवश्यकता के सन्दर्भ में मुझे अधिक समीक्षा की आवश्यकता प्रतीत नहीं होती। कई सम्माननीय सदस्यों ने ग्रामपंचायतों के विषय में इस प्रकार के संशोधन पेश किये थे, परन्तु उसके साथ आत्मनिर्भरता समेत अन्य शर्तों को भी उन्होंने जोडा था। अत: हम में से अधिकांश सदस्यों को उन्हें मार्गदर्शक सिद्धान्तों में समाविष्ट करना उचित नहीं लगता। ग्रामपंचायतों को देने योग्य सत्ता,

उनका कार्यक्षेत्र आदि बातें प्रत्येक प्रान्त एवं राज्य में भिन्न भिन्न होंगी, इसलिए संविधान में निश्चित निर्देश देना उचित नहीं है। कहीं कहीं सीमित जनसख्या वाले छोटे इक्के दुक्के गॉव भी होगे, जहॉ केवल पचास परिवारो के लिए ग्रामपंचायत की रचना आवश्यक होगी। अन्य कतिपय स्थानो पर ग्रामसमूह बनाना उचित होगा, जिसे लेकर वे एक छोटी नगरीय बस्ती के समान बन सकेंगे और लगभग नगरपालिका के समान सक्षम संचालन कर पाएँगे। मैं मानता हूँ कि इस विषय को प्रान्तीय धारासभा पर छोडा देना चाहिए। हमारा उद्देश्य ग्रामपचायतों के गठन के लिए राज्य को निश्चित रूप से कदम उठाने एवं स्थानीय स्वराज्य के लिए कार्यरत होने के लिए उन्हे आवश्यक अधिकार एवं सत्ता प्रदान करने हेतु निर्धारित एवं स्पष्ट आदेश देने का है। यहॉ प्रस्तुत किये गये संशोधन के लिए सभी प्रस्तावों का सर्वसामान्य विषय यही है कि स्वतन्त्र देश के स्थानीय स्वराज्य का समग्र ढॉचा ग्रामजीवन पर आधारित होना चाहिए, और इसे ही इस संशोधन का प्रमुख आधार बनाया गया है। मुझे आशा है कि यह प्रस्ताव सर्वसम्मति से पारित होगा। धन्यवाद।

मा. डॉ. बी. आर. आम्बेडकर

मान्यवर, मुझे संशोधन स्वीकार्य है।

मा. उपाध्यक्ष

अगर आप चर्चा करना चाहते हैं तो प्रो. रगा अपना संशोधन प्रस्तुत करें इसके बाद चर्चा होगी।

एक सम्माननीय सदस्य

प्रो. रंगा इस समय यहॉं उपस्थित नहीं है।

मा. उपाध्यक्ष

मेरे लिए विकट स्थिति पैदा हुई है। इस संशोधन (डॉ. आम्बेडकर द्वारा) को स्वीकृति दी गई है। अब मैं एक भी वक्ता को बोलने का अवसर दूँगा तो समग्र अध्याय को फिर से चर्चा मे लाना पडेगा। इस सन्दर्भ में विशेषज्ञों का परामर्श ही सम्मान के साथ स्वीकार्य मानूँगा।

श्री एम. अनन्तशयनम आयंगर

आप यदि अनुमति दें तो मैं सदन में अपनाई जानेवाली पद्धति के सम्बन्ध में ही बताऊँगा। किसी विषय का दायित्व जिनके पास है, वे संशोधन को स्वीकृति प्रदान करते हैं तो भी वास्तव में अन्य सदस्यों के द्वारा भी इसे स्वीकृति दी गई, यही अर्थ निकलता है। सदस्य अपने वक्तव्य रख सकते हैं और अपनी बात पूरी कर लेने के पश्चात् प्रत्युत्तर देने का उनके पास अधिकार रहता ही है। किसी सिद्धान्त के उद्देश्यों के साथ सम्बन्धित न होने पर चर्चा सीमित करने के विषय में भी लोग सरकार का पक्ष जानना चाहेंगे। उन्हें चर्चा निरर्थक प्रतीत होगी तो वे उसका आग्रह नहीं करेंगे, और इसी कारण से डॉ. आम्बेडकर ने कहा कि वे संशोधन को स्वीकार करते हैं। वक्तव्य एवं चर्चाएँ समाप्त होने के बाद प्रत्युत्तर देने का अधिकार अब भी वे सुरक्षित रख सकते हैं। इसलिए मेरा नम्र निवेदन है कि जो बोलना चाहते हैं, ऐसे अन्य वक्ताओं को अपनी बात प्रस्तुत करने की अनुमति दीजिए। यह एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण विषय है और हर व्यक्ति उस पर कुछ न कुछ कहना चाहता होगा।

मा. उपाध्यक्ष

यदि ऐसा ही है तो मैं श्री प्रकाशम को पहले निमन्त्रित करता हूँ।

श्री टी. प्रकाशम (मद्रास : सामान्य)

सम्माननीय उपाध्यक्षजी, मुझे प्रसन्नता है कि सरकार ने इस संशोधन को सद्भावपूर्वक स्वीकार किया है और संविधान में इसे समाविष्ट करने की अनुमति दी है। यह विषय संविधान की रचना के प्रारम्भ में ही समाविष्ट होना चाहिए था।

श्री विश्वम्भर दयाल त्रिपाठी (संयुक्त प्रान्त : सामान्य)

मान्यवर, मेरी समझ में नहीं आता कि वे किस सरकार की बात कर रहे हैं।

सदन के सदस्यो ने इस विषय (पंचायत राज्य) की सामान्य चर्चा में जिस प्रकार से भाग लिया और संविधान में समावेश करने के मुद्दे को अत्यधिक महत्त्व दिया यही सिद्ध करता है कि यह विषय हमारे देशवासियों एवं सदन के सदस्यों का भी प्रिय विषय है। संविधान सभा के अध्यक्ष डॉ. राजेन्द्रप्रसाद ने भी अपना अभिमत प्रकट किया है कि संविधान की नींव में पंचायत राज्य होना चाहिए।

श्री विश्वम्भर दयाल त्रिपाठी

इस चर्चा के साथ सरकार को क्या लेना देना है ?

मा. उपाध्यक्ष

संविधान सभा के अध्यक्ष का दिया गया सन्दर्भ है, सरकार का नहीं।

श्री टी. प्रकाशम

डॉ. राजेन्द्रप्रसाद ने पंचायत राज्य को समग्र संविधान का आधार बनाने के पक्ष में मत प्रकट किया है, और कुछ दिनों से हम उस कार्य को पूरा करने के लिए प्रयासरत हैं। १० मई (१९४८) को डॉ. राजेन्द्रप्रसाद ने इस सन्दर्भ में अपना अभिप्राय प्रस्तुत किया था। संविधान के परामर्शदाता श्री बी. एन. राव ने इस सन्दर्भ मे सहानुभूति प्रदर्शित की, परन्तु उन्होंने ध्यान आकर्षित किया कि संविधान का आधार परिवर्तित करने के प्रयास में अधिक विलम्ब हो गया है, क्यों कि हम बहुत आगे निकल गये हैं। मैं भी इस बात से सहमत हूँ कि यदि कोई भूल हुई है तो वह हमसे हुई है, हम पूरे सतर्क नहीं रहे और इस विषय को समय पर सदन के सामने प्रस्तुत नहीं कर पाए। इतने विलम्ब से यह विषय सदन के सामने आने से संविधान की प्रारूप समिति के अध्यक्ष के रूप मे डॉ. आम्बेडकर उसको स्वीकार करेगे ऐसी आशा मुझे नहीं थी।

ग्रामीण इकाई को संविधान का वास्तविक आधार नहीं बना पाने के परिणाम स्वरूप गम्भीर स्थिति पैदा हुई। पूर्ण अवलोकन के बाद मानना पडेगा कि यह एक ऐसी संरचना है जो शिखर से आरम्भ होकर नींव तक जाती है। डॉ. राजेन्द्रप्रसाद ने सूचित किया था कि (संविधान का) ढाँचा नींव से आरम्भ होकर ऊपर की ओर जाना चाहिए। स्वर्गीय महात्मा गाँधी की संकल्पना और जिसे साकार करने के लिए लगभग तीस वर्ष सब संघर्षरत रहे उस संविधान का स्वरूप ऐसा था। परन्तु वर्तमान स्थिति में इस समय भी इस विषय को उठाया गया, उस दिशा में उचित प्रयास हुआ और हमारा सौभाग्य है कि उसका संविधान में समावेश हो रहा है। संशोधन प्रस्तुत करनेवाले सभी- और मैं भी- उसमे सहभागी हैं। मतभेदों को भूलकर, स्वीकृति योग्य स्वरूप में संशोधन का प्रस्ताव प्रस्तुत करने का प्रयास करने के लिए मैं सन्तानम का अभिनन्दन करता हूँ, क्योंकि यहाँ तक पहुँचने के पश्चात् संविधान की प्रक्रिया की गति

मे अवरोध पैदा किये बिना सभी प्रान्तों की और समग्र भारत की अपेक्षित संरचना करने का उसमे अवसर मिल सकता है।

सदन के सम्माननीय सदस्यों में से एक मित्र ने कुछ दिन पूर्व मुझसे कहा कि *''ग्रामस्वराज जैसी बात के लिए आप इतनी उग्र चर्चा क्यों कर रहे हैं ? बैलगाडी के* वे दिन बीत गये हैं, और वह युग पुन: वापस लौटनेवाला नहीं है।'' यह उनका अभिप्राय है। मैं मित्र का ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ कि हमारे देश में जिस प्रकार का ग्रामस्वराज प्रस्थापित करने का प्रस्ताव है और प्रयास भी हो रहा है वह बैलगाडीयुगीन प्रजासत्ताक नहीं है। इस प्रस्ताव के अनुसार ऐसा मानने की आवश्यकता नहीं है कि सम्बन्धित सरकार के आग्रह से बननेवाली ग्राम प्रजासत्तात्मक रचना जंगल की लकडियाँ काटकर ईंधन के रूप में नगरों में पहुँचाने के लिए और मजदूरी की कमाई करने तक सीमित उपयोग वाली बैलगाडी की रहेगी. अपितु यह बैलगाडी का उपयोग धान एवं गाँवों के अन्य उत्पादनों का स्वयं के लिए और सामान्य जन के लाभार्थ परिवहन करने के लिए भी करेगी। इस समय कश्मीर के मोर्चे पर युद्ध कर रहे हमारे सैनिकों के लिए भी ग्राम प्रजासत्ताकत्मक रचना उपयोगी होगी। कुछ दिन पूर्व मैं वहाँ गया था। युद्ध के मैदान में वे जो कर्तव्य निभा रहे हैं इसे मैंने देखा है। उनमे से कुछ लोगों ने हमसे कहा, ''महोदय, जब आप वापस लौटें तब खाद्यसामग्री के दाम कम हो और हमारे साथी निवास के लिए थोडीसी जगह की माँग करें तो वह उन्हें प्राप्त हो इसका ध्यान रखें।'' इस सन्दर्भ में ग्राम प्रजासत्तात्मक रचना सेना के जवानों को श्रेष्ठतम सेवा दे सकेगी।

हमारे और विश्व के इतिहास से विमुख हो जाने के कारण हम इस बात को घृणा की दृष्टि से देखें यह ठीक नहीं है। यह पद्धति देश में सबसे पहलीबार कार्यान्वित नहीं होनेवाली है। प्रजासत्तात्मक रचना का पुनर्गठन करके हम लोगों पर किसी प्रकार का उपकार नहीं कर रहे है। मुझे कहने दीजिए कि देश में ऐसे संगठनों की रचना स्थान स्थान पर कर देंगे तो अन्न का अकाल नहीं होगा, वस्त्रों की कमी नहीं होगी और आज हमें प्रतिवर्ष रू. ११० करोड के अन्न की जो आयात करनी पडती है, ऐसी स्थिति नहीं बनी रहेगी। उल्टे उतने धन की बचत होगी। यह ग्राम प्रजासत्तात्मक रचना अद्भुत रूप से कालाबाजारी को समाप्त कर देगी। उचित प्रयास के द्वारा सम्भवत: कुछ लोगों को स्वीकार्य न हो तो भी पूरी आत्मनिर्भरता के स्तर पर उनकी संरचना होगी, उनकी *स्वशासित इकाइयाँ रचीं जाएँगी तो, वह मुद्रास्फीति पर भी नियन्त्रण पा सकेगी* जिसे सरकार अपेक्षित मात्रा में नियन्त्रित नहीं कर सकी है। ग्राम संगठन देश में शान्ति

प्रस्थापित करेगे। आज सरकार विदेशों से अन्न प्राप्त करने और उसका वितरण करने के लिए उच्च स्तरीय प्रयास करती है, परन्तु हमारी एजन्सियाँ केन्द्रीय या प्रान्तीय स्तर पर होने के कारण अधिकांश रूप में जनसामान्य तक उसका वितरण नहीं होता है। इस समस्या का तत्काल अन्त हो जाएगा। इसके अलावा, देश के सामने एक चुनौती स्वरूप साम्यवाद के विषय में भी मैं कुछ कहना चाहता हूँ। चीन में जो कुछ हुआ इसे हमने देखा है और ब्रह्मदेश (आज का म्यांमार) की स्थिति से हम परिचित हैं। ऊपर दर्शाई गई पद्धति के द्वारा यदि ग्राम प्रजासत्तात्मक रचना की जाती है और उचित रूप से कार्यान्वित की जाती है तो साम्यवाद की चुनौती पर त्वरित अंकुश लगाया जा सकेगा। साम्यवाद अपनाने का और वे (साम्यवादी) जैसा करते हैं वैसा - अपने ही लोगों की हत्याएँ करने का-कोई प्रलोभन, कोई आकर्षण बच नहीं पाएगा। इन सभी कारणों को देखते हुए मैं प्रस्ताव का अनुमोदन करता हूँ कि संविधान स्वीकृत हो जाने के तुरन्त बाद, सभी प्रान्तों में, यथा सम्भव त्वरित गति से लागू किया जाए। संविधान की स्वीकृति के पश्चात् ग्रामसंगठनों की रचना होने से देश के सामने आशा की एक किरण, उज्वल भविष्य की एक किरण प्रकट होती मुझे दिखाई दे रही है।

श्री सुरेन्द्र मोहन घोष (प. बंगाल : सामान्य)

श्रीमान, मेरे आदरणीय मित्र श्री सन्तानम द्वारा प्रस्तुत किये गए संशोधन के विषय में मेरी भावनाओं को व्यक्त करने का अवसर दिया इसके लिए मैं आपका आभारी हूँ। मान्यवर, अन्य एक संशोधन मेरे नाम से क्र. ९९१ का है और वह मेरे मित्र के द्वारा प्रस्तुत किये गये संशोधन जैसा ही है इसे आप देख सकेंगे। मुझे इस बात की प्रसन्नता है कि मेरे आदरणीय मित्र श्री सन्तानम ने ऐसा सर्व सम्मत संशोधन प्रस्तुत किया और सम्माननीय कानूनमन्त्री डॉ. आम्बेडकर ने इसका स्वीकार किया।

मुझे लगता है कि ऐसे किसी प्रावधान के अभाव में तैयार किया गया संविधान उससे सम्बधित भारत के करोडों लोगों के लिए निरर्थक सिद्ध होता। एक विषय ऐसा भी है जो विगत हजारों वर्षों के कालखण्ड में विभिन्न गतिविधियो में अभिव्यक्त होता रहा है इसके अनुसार, भारत में जीवन का मर्म ही प्रत्येक व्यक्ति को प्राप्त स्वतन्त्रता, - व्यक्ति स्वातन्त्र्य है। प्रत्येक व्यक्ति के लिये सम्पूर्ण एवं असीमित स्वतन्त्रता मान्य थी, परन्तु इसके साथ साथ इस स्वतन्त्रता का उपयोग किस प्रकार किया जाए इसके दिशानिर्देश भी थे। व्यक्ति ऐक्य की भावना को बलवत्तर बनाने के लिए स्वतन्त्रता का उपयोग कर सकता था। प्राप्त स्वतन्त्रता के माध्यम से उसे हमारे समाज में ऐक्य एवं

समरसता के तत्त्वों को खोजना होता था। व्यक्ति सामाजिक सामंजस्य, सामाजिक एकता को तोड्नेवाला कार्य करने के लिए स्वतन्त्र नहीं था। ऐसा ही सिद्धान्त, सुदीर्घ प्राचीन समय से भारत के हमारे संविधान में स्वीकृत किया गया था। हमारे शरीर के जीवमान कोशों की तरह प्रत्येक गॉव को, अपनी बात की अभिव्यक्ति करने के लिए अपेक्षित स्वातन्त्र्य प्राप्त था, परन्तु ऐसी स्वतन्त्रता के द्वारा उन्हें भारत की एकता का पालनपोषण करना ही था।

हमारे गाँवनिवासी इस पद्धति से इतने सुपरिचित हैं कि इस प्रावधान को संविधान में स्थान न दिया गया होता तो उन्हें प्रतीत ही नहीं होता कि यह संविधान उनका अपना है या उनके लिए परिचित है। इसलिए (इस प्रावधान के विषय में) मुझे प्रसन्नता है। सम्माननीय मित्र श्री सन्तानम और आदरणीय डॉ. आम्बेडकर का इस लिए आभार एवं धन्यवाद कि वे ऐसा संशोधन लाए। मैं संशोधन का अनुमोदन करता हूँ।

सेठ गोविंददास (मध्य प्रान्त एवं वराड : सामान्य)

आदरणीय अध्यक्ष महोदय, आजकल सदन में बहुत सीमित रूप से हिन्दी में भाषण होते हैं। इसलिए मेरे दक्षिण के मित्रों को बात समझाने के लिए थोडा बहुत अंग्रेजी का प्रयोग करुँगा अन्यथा मैं अपनी हिन्दी में बोलने की परम्परा बनाये रखूँगा। सदन में संविधान का प्रारूप प्रस्तुत करते समय अपने भाषण में डॉ. आम्बेडकर ने गाँवों के बारे में कुछ टिप्पणियाँ कीं, इससे मुझे, और मेरा मानना है कि सदन के अधिकांश सदस्यों को, बहुत पीडा हुई थी। ऐसा होते हुए भी, मुझे इस बात की प्रसन्नता है कि श्री सन्तानम द्वारा प्रस्तुत किये गए संशोधन को उन्होंने स्वीकृति प्रदान की। देर से ही सही परन्तु व्यक्ति सही पथ को स्वीकार करता है तो शिकायत का अवसर नहीं रहता।

मैं ऐसे प्रान्त का निवासी हूँ जहाँ इस (ग्राम पंचायतें) विषय में अत्यधिक प्रगति हुई है। हमारी ग्रामपंचायतें, हमारी न्याय पंचायतें और जनपद के लिए हमारे कायदेकानूनों की समग्र भारत में चर्चा है। एक समय हमारा प्रान्त अति पिछडा हुआ माना जाता था। परन्तु, आज इस बात का स्वीकार पकरना पडेगा कि हमारा प्रदेश तुलना में छोटा होते हुए भी कई बातों में देश के अन्य प्रदेशों के लिए प्रथप्रदर्शक बना '.जहाँ तक ग्राम प्रजासत्तात्मकता का विषय है, उसे कार्यान्वित करने में हमारे प्रदेश ... प्रान्तों की तुलना में अधिक प्रगति की है यह बात निर्विवाद है।

हमारा देश प्राचीन, अति प्राचीन देश है और उसमें गॉवों का स्थान हमेशा महत्त्वपूर्ण रहा है। प्रत्येक प्राचीन देश में स्थिति ऐसी नहीं थी। एथेन्स एवं स्पार्टा की प्रजासत्तात्मक पद्धति वर्तमान इतिहास में विश्व मे महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। परन्तु उन्होंने गाँवों को किसी प्रकार का महत्त्व नहीं दिया था। हमारे देश मे गॉवों को इतना उच्च स्थान मिला था कि हमारे अति प्राचीन ग्रन्थ, उपनिषदों की कथाओं मे भी ऋषिमुनियों की कथाओं के समान ही गॉवों का वर्णन भी पाया जाता है। कौटिल्य के अर्थशास्त्र मे भी हमारे प्राचीन गाँवों का सन्दर्भ प्राप्त होता है। आधुनिक इतिहासविदों ने भी इस वास्तविकता को स्वीकार किया है। हेनरी मेने द्वारा रचित प्राचीन कानून, बेडन पोवेल द्वारा रचित 'भारत का ग्रामसमाज' एवं श्री बी. सी. पाल द्वारा रचित 'भारत की मूलभूत एकता' (Fundamental Unity of India) में हमारे प्राचीन ग्रामसंगठनों का वर्णन उपलब्ध है। इन पुस्तकों को पढने के लिए सदन के सदस्यों से मेरा नम्र निवेदन है। अति प्राचीन समय से भारत में गॉवों की जो महिमा थी उसकी जानकारी उन्हें इन पुस्तकों से प्राप्त होगी। मुस्लिम शासन के काल में भी गाँवों को अग्रिम महत्त्व दिया जाता था। ब्रिटिश शासन में गाँवों की उपेक्षा हुई और उनका महत्त्व नहीं रहा। इसका एक कारण था। भारत में अंग्रेजी शासन गिनेचुने लोगों के द्वारा चलता था। अंग्रेजी शासन के काल में प्रान्त, जिले, तहसिल जैसी इकाइयाँ रची गई और तहसीलदारी, जमींदारी एवं मालगुजारी का उदय हुआ। इस प्रकार सीमित लोगों के आधार पर ही यहाँ इतने वर्षो तक अंग्रेजी शासन बना रहा था।

महात्मा गाँधी ने देश के जनजीवन के अन्य सभी पक्षों में जिस प्रकार से क्रान्ति उत्पन्न की थी, उसी प्रकार से ग्रामजीवन में भी क्रान्ति पैदा हुई। उन्होने एक गाँव में निवास करना शुरू किया। उन्होने कोंग्रेस के वार्षिक अधिवेशन भी गाँवो में आयोजित किए। हम संशोधन का यह प्रस्ताव पारित करने के लिए जब तत्पर हुए हैं तब, उन्होंने (गाँधीजी ने) दिल्ली में आयोजित एशियन कान्फरेन्स में जो वक्तव्य दिया था इस की याद सदन के सदस्यों को दिलाना चाहता हूँ। यथार्थ भारत की झलक पाने के लिए उन्होंने, विभिन्न देशो के प्रतिनिधियों को, भारत के गाँवों मे जाने का सुझाव दिया। उन्होंने कहा था कि नगरों में यथार्थ भारत की छवि प्राप्त नहीं होगी। आज भी देश की ८० प्रतिशत जनसंख्या गाँवों में रहती है। इसलिए यदि संविधान में गाँवों का उल्लेख नहीं करेंगे तो स्थिति दयनीय मानी जाएगी।

आदरणीय के. सन्तानम द्वारा प्रस्तुत किये गए संशोधन का मैं अनुमोदन करता हूँ। मुझे आशा है कि संविधान में समाविष्ट मार्गदर्शक सिद्धान्त, इस सन्दर्भ में मध्य

प्रान्त के दृष्टान्त का अनुसरण करने की प्रेरणा देंगे और ऐसा समय भी आयेगा जब हम भारत के गाँवों का गौरव पुन. देख सकेगे।

श्री वी. आई. मुनिस्वामी पिल्लाई (मद्रास : सामान्य)

आदरणीय उपाध्यक्षजी, मेरे सम्माननीय मित्र द्वारा संशोधन का प्रस्तुतिकरण और प्रारूप समिति के अध्यक्ष द्वारा उसको स्वीकार करने की तैयारी गाँवों में रहनेवाले हमारे दुर्भागी बान्धवों के प्रति इस सार्वभौम संस्था की समुचित भावना प्रकट करती है। आदरणीय नेता डॉ. राजेन्द्रप्रसाद एवं महात्मा गाँधी के विचारों का उल्लेख हुआ है। परन्तु हम इस बात से सुपरिचित हैं कि गाँवों का अध:पतन हो गया है, इसलिए यदि स्वराज्य जैसी कोई सुविधा उन्हें प्रदान करनी है तो, इस सार्वभौम संस्था को चाहिए कि इसे गाँवों को ही हस्तान्तरित किया जाए। कुछ दिन पूर्व संविधान के प्रारूप के सम्बन्ध में बोलते हुए मैंने सबका ध्यान आकर्षित किया था कि स्वराज्य का चयन करने के लिए ग्रामीण प्रदेशों को अवसर देनेवाला कोई प्रावधान संविधान में नहीं है। अब, इस संशोधन के द्वारा गाँवों को स्वायत्तता और स्वराज्य की कुछ सत्ता हम दे रहे हैं। मुझे विश्वास है कि संविधान में इस संशोधन के द्वारा जोडे जानेवाले प्रावधानों का देश के सात लाख गाँव स्वागत करेगे। हम ग्रामीण क्षेत्रो से प्राप्त होनेवाले राजस्व की आय के द्वारा ही सभी सुखसुविधा से सम्पन्न नगरों की रचना कर पाए हैं।

परन्तु करों के द्वारा लगान भरनेवाले एक आम नागरिक को प्राप्त होने योग्य सुखसुविधाएँ ग्रामीण लोगो को नहीं मिलती है। मुझे लगता है शताब्दियों से विनाश की ओर धकेल दिये गये गाँवों के पुनर्गठन की दिशा में, इस संशोधन के माध्यम से हम एक बडा कार्य कर रहे हैं। हम 'पाई' (पुराने अर्थ चलन की सबसे छोटी इकाई) की चिन्ता करेंगे तो 'रुपया' अपने आप पुष्ट हो जायेगा। इसलिए मुझे लगता है कि इस संशोधन के द्वारा, आज जिस पुनर्रचना की अति आवश्यकता है वह, गाँवों के पुनर्गठन का एक उत्तम कार्य हम कर रहे हैं।

डॉ. वी. सुब्रह्मण्यम (मद्रास : सामान्य)

मा. उपाध्याक्षजी, भारत माता अपना यह संविधान स्वयं को समर्पित करेगी तब उसका कोई जीवित कोश यदि है तो वह, आदरणीय मित्र श्री सन्तानम द्वारा प्रस्तुत ग्रामपंचायतों के सन्दर्भ में यही संशोधन होगा। एक सर्वविदित वास्तविकता है कि आज भारत विश्व में स्वशासित इकाई के रूप में अगर खडा है तो वह हमारे

राजनीतिक ढाँचे के इस जीवित कोश ग्राम पचायत के कारण है। हम देश को सशक्त एवं हर रूप में आत्मनिर्भर बनाना चाहते है तो सविधान या उसके मार्गदर्शक सिद्धान्तों में यह धारा अत्यन्त आवश्यक है।

स्वायत्तता को लेकर कुछ विवाद भी है। गाँवों की स्वायत्तता के सम्बन्ध में मेरी समझ ऐसी है कि ग्रामीण लोगों की आवश्यकता के अनुसार 'डालडा' या अन्य वस्तुओ की आयात करना अनिवार्य हो जाय तो वह मूँगफली जैसी वस्तुओं का उत्पादन विपुल मात्रा में करें और उसकी निर्यात भी करें। आत्मनिर्भर शब्द का इतना ही अर्थ है कि यथासम्भव सभी वस्तुओं का उत्पादन स्वयं करें और अन्य वस्तुएँ पास के गाँवों से प्राप्त करें। यह मेरी व्यक्तिगत समझ है। परन्तु अन्ततोगत्वा ऐसी बाते स्वयं ग्राम पंचायत को ही निश्चित करनी है।

निश्चित रूप से कहना चाहिए कि जहाँ तक इस संशोधन का प्रश्न है उसकी सचाई के लिए मतभिन्नता हो ही नहीं सकती। यह संशोधन पारित होना चाहिए और गाँवों को अधिक सत्ता देनी चाहिए। वास्तविकता यह है कि बढई का काम करनेवाले देश में कितने लोग हैं इसकी जानकारी हमारे पास नहीं है। अगर ग्रामपचायत का अस्तित्व होगा तो केवल उसका अभिलेख देखकर गाँव में बढइयों की संख्या भी जान पाएँगे। पंचायतें बहुत उपयोगी सेवाएँ दे पाएँगी। संविधान में यह धारा अति आवश्यक है। मै इसका अनुमोदन करता हूँ।

श्री सत्यनारायण सिंह (बिहार : सामान्य)

श्रीमान, अपेक्षित चर्चा हो चुकी है। इसलिए श्री भारती के वक्तव्य के पश्चात् समापन प्रस्ताव प्रस्तुत करना चाहता हूँ।

श्री एल. कृष्णस्वामी भारती (मद्रास : सामान्य)

माननीय उपाध्यक्षजी, यह संशोधन प्रस्तुत करने के लिए श्री सन्तानम को और उसकी स्वीकृति प्रदान करने के लिए डॉ. आम्बेडकर को धन्यवाद देता हूँ। साथ ही मैं स्वीकार करता हूँ कि इस संशोधन से मुझे पर्याप्त संतोष नहीं है। इसका स्पष्ट कारण है कि प्रवर्तमान संविधान के द्वारा भी प्रान्तीय सरकारों के पास, ग्राम पंचायतों को गठित करने एवं उसे स्वशासित इकाई बनाने के लिए पर्याप्त अधिकार हैं ऐसा मेरा मानना है। फिर भी इस संशोधन में जितना भी समाविष्ट किया गया है इसके कारण तो मुझे सन्तोष है। इतना स्मरण रखना चाहिए कि यह प्रावधान मार्गदर्शक सिद्धान्तों में

समाविष्ट है और उसमें स्वायत्तता के श्री सन्तानम के विचार का अस्वीकार करने के लिए कोई कारण दिखाई नहीं देता है। इस विचार-सिद्धान्त की स्वीकृति नहीं देने के लिए उनके द्वारा प्रस्तुत किए गये कारण सन्तोषप्रद नहीं हैं। वास्तव में दो या तीन आदरणीय संदस्यों - श्री रंगा, श्री अनन्तशयनम आयंगर-का संशोधन सूचित करता है कि राजनीतिक एवं आर्थिक अधिकारों के प्रभावशाली विकेन्द्रीकरण की बडी आवश्यकता है। (श्री सन्तानम द्वारा) यह संशोधन तो केवल राजनीतिक स्वतन्त्रता देना चाहता है, जिसका कोई अर्थ नहीं है। मार्गदर्शक सिद्धान्त के पीछे जो विचार रखा गया है वह इस बात पर बल देता है कि देश का संचालन किस प्रकार करना चाहते है, और इसलिए समग्र विश्व के सामने स्पष्ट कर देना चाहिए कि आर्थिक स्वातन्त्र्य एवं आर्थिक जनतन्त्र महत्त्वपूर्ण है, और इसीलिए आर्थिक सत्ता का विकेन्द्रीकरण अपना महत्त्व रखता है। गाँधीजी ने भी इस पक्ष पर ही बल दिया था। यदि भारत को जनतान्त्रिक रूप से काम करना है तो राजनीतिक एवं आर्थिक दोनों क्षेत्रों में विकेन्द्रीकरण नितान्त आवश्यक है। वास्तव में एशियन रीलेशन्स कान्फरेन्स में बोलते हुए महात्माजी ने दिल्ली की ओर संकेत करते हुए कहा था कि,

''यह भारत नहीं है। आप सब की दृष्टि के सामने दिल्ली है। और केवल दिल्ली भारत नहीं है। गाँवों में जाइए। वहाँ भारत है। वहाँ ही भारत की आत्मा निवास करती है।''

इसलिए 'स्वायत्तता' के मुद्दे पर वे क्षोभ का अनुभव क्यों करते हैं यही मेरी समझ में नहीं आता। महात्माजी ने इस बात को भली भाँति स्पष्ट किया है, और आवश्यकता पडने पर उनके वक्तव्यों से अब भी कुछ कहने की इच्छा है।

मा. श्री के. संतानम

आदरणीय सदस्य का ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ कि स्वराज्य केवल राजनीतिक नहीं है, वह आर्थिक एवं आध्यात्मिक भी हो सकता है।

श्री एल. कृष्णस्वामी भारती

मैं यह भली भाँति समझता हूँ और इसीलिए उसकी स्पष्टता करनी चाहिए। 'स्वराज्य' में इस विषय को लिया गया है तो उसकी स्पष्टता करना अधिक उचित रहेगा, क्योंकि ऐसी स्पष्टता आवश्यक है। मैं चाहता हूँ कि 'स्वायत्तता', उस अर्थ में होनी चाहिए जिस अर्थ में गाँधीजी को अभिप्रेत थी। याद रखें कि ऐसी स्वायत्तता हर

बात में नहीं हो सकती, परन्तु जीवन की अति आवश्यक वस्तुओ मे और सम्भव है इतनी मात्रा में अन्न एवं वस्त्रों के विषय में स्वायत्तता हो। महात्माजी ने ऐसा ही कहा था। इसका अर्थ स्वायत्तता नहीं होता। मान्यवर, महात्माजी के आलेखो के कुछ महत्त्वपूर्ण अंश पढने की अनुमति चाहता हूँ। इससे यह बात स्पष्ट हो जाएगी।

गाँधीजी ने लिखा था,

''ग्रामस्वराज्य के सन्दर्भ में मेरा विचार है कि वह एक सम्पूर्ण प्रजासत्ताक इकाई हो, अनिवार्य आवश्यकताओं के लिए पडोसियों से स्वतन्त्र हो और जहाँ एक दूसरे का सहयोग आवश्यक है ऐसी अन्य कई बातों में परस्परावलम्बी हो।''

एक आदरणीय सदस्य ने मुझसे कहा, ''हम क्या कर सकते हैं ? कुछ गाँव केवल चावल उत्पन्न करते हैं, वे स्वायत्त नहीं है।'' क्या यह बात इतनी कठिन है ? गाँधीजी आग्रहपूर्वक कहते थे कि मैं ऐसा नहीं कहता कि गाँव ऐसी सभी बातो में आत्मनिर्भर हो जाए, परन्तु कुछ सीमा तक तो स्वावलम्बी बनना चाहिए। उसमें आधारभूत विचार है, 'काम नहीं तो अन्न नहीं।' अब गाँव के निवासियो को प्रतीत होता है कि स्वराज्य है, हमारा शासन है इसलिए (यहूदी मान्यता के अनुसार) 'मेना' की तरह 'खादी' और 'खाद्यान्न' आकाश से टपकेगा। (यंहूदी लोककथा के अनुसार जंगल में आकाश से खाद्यान्न मिला था, उसे 'मेना' कहा जाता है।) परन्तु आत्मनिर्भरता का विचार यह दर्शाता है कि 'सरकार से कुछ मत लीजिए। हाथ और पाँव हैं, तो काम कीजिए। काम नहीं करेंगे तो खाना प्राप्त नहीं होगा। आप अपने कपडे और खाद्यान्न स्वयं ही पैदा करें। परन्तु काम नहीं करेंगे तो तुम्हें खाना नहीं मिलेगा, वस्त्र नहीं मिलेंगे।' विकेन्द्रीकरण और आर्थिक जनतन्त्र का आधारभूत विचार यही है। गाँवों के लोग इस विचार को अपनायें ऐसा हम चाहते है तो हमे इसे लिखना चाहिए और स्वायत्तता के विषय में उन्हे समझाना चाहिए। 'सरकार से कुछ भी मत लेना। परन्तु सरकार अर्थात् कौन ? आप ही सरकार की रचना करते हैं। आप को ही काम करना पडेगा। वस्त्र-उत्पादन भी मिलो पर अवलम्बित मत रखिए, चरखा चलाइए, स्वयं खाद्यान्न उत्पन्न कीजिए।' स्वायत्तता, विकेन्द्रीकरण एवं आर्थिक स्वातन्त्र्य की आधारभूत संकल्पना यही है।

महात्माजी ने कहा था,

''ग्रामस्वराज्य के सन्दर्भ में मेरा विचार यह है कि वह एक पूर्ण प्रजासत्ताक इकाई हो, अपनी अनिवार्य आवश्यकताओं के लिए पडोसियों से स्वतन्त्र हो, परन्तु जहाँ एकदूसरे का सहयोग आवश्यक है ऐसी कई बातों में गाँव परस्परावलम्बी हो।

७. संविधान के तृतीय पठन के समय हुई चर्चा के अंश १७–२६ नवम्बर, १९४९

शेठ गोविन्ददास (मध्य प्रान्त एवं वराड : सामान्य)

साथ ही मैं यह भी स्पष्ट करना चाहता हूं कि संस्कृति एवं सभ्यता हमारे प्राचीन इतिहास की धरोहर है, जिसकी निरन्तरता एवं जीवनशक्ति हमारे समाज जीवन के प्रत्येक अंग में दिखाई देती है और हमारे वर्तमान युग में राष्ट्रपिता महात्मा गांधी जिसे आगे बढाना चाहते थे उसे (संस्कृति और सभ्यता को) हमने नकारना नहीं चाहिए। आधुनिक भारत का निर्माण इस प्रकार से होना चाहिए जिससे हमारी संस्कृति और सभ्यता भी बनी रहे और हमे आधुनिक युग के लाभ भी प्राप्त हों। इस दृष्टि से यदि संविधान का विचार करेंगे तो उसमें हमें कई कमियाँ दिखाई देंगी।

श्री लक्ष्मीनारायण साहू (उडिसा : सामान्य)

... भारत गाँवों का देश है। गाँवों की पूर्ण उपेक्षा कर हम नागरिक बन गये हैं और नागरिकत्त्व के अधिकार माँगने लगे हैं। मेरा तो कहना है कि 'ग्रामीणत्व' के अधिकार कहीं पर भी नजर नहीं आते। इस अवसर पर हमें कैसे क्या कदम उठाने चाहिए ? हमें कुटिर उद्योगों को पुनर्जीवित करना चाहिए। परन्तु ऐसा विचार कभी आता नहीं है। कुछ लोग इस विषय में शोर मचाते हैं तब कहा जाता है कि इसे भी समाविष्ट किया जा सकता है ... हमसे विकेन्द्रीकरण की बात होती नहीं है। हमने, भारत के विकेन्द्रीकरण का और सब कुछ व्यवस्थित बनने का लक्ष्य रखा था, परन्तु इतना अधिक केन्द्रीकरण हुआ है कि एक ही केन्द्र बना रहे...

श्री के. हनुमन्तैया (मैसूर राज्य)

... मैं मुसद्दा समिति की सूची पर दृष्टिपात करता हूँ और नामावलि देखता हूँ तब अवश्य कहूंगा कि उनमें कई अति गणमान्य लोग हैं। उनमें से अधिकांश सामर्थ

लोग हैं। परन्तु उनमें से बहुत कम लोगों को स्वतंत्रता के प्रति सहानुभूति थी। मुसद्दा समिति के सदस्यों की नामावलि को परीक्षापूर्वक देखने पर प्रतीत होता है कि उसमे ऐसे लोगों को समाविष्ट किया गया है, जो, हमारे कई नेताओं की तरह स्वतन्त्रता आंदोलन के साथ नहीं थे। स्वाभाविक रूप से ही उन्होंने संविधान की रचना में अपना दृष्टिकोण और ज्ञान दिया है, परन्तु एक दृष्टात के रूप में कोंग्रेस को या देश को इस प्रकार के मानस या ज्ञान की आवश्यकता नहीं थी। नि:संदेह, अति विनम्रता के साथ कहूँगा कि इसमें निश्चय ही स्वतन्त्रता प्राप्त होने से पूर्व रचे गए कइ कानून एवं नियमों के वे अच्छे ज्ञाता है। न्यायालय के निर्णयों पर आधारित कानून या कानून सहिता में वे पारंगत हैं, परन्तु भारत जैसे महान देश के संविधान की रचना करने के एवं उसके भविष्य का निर्माण करने के लिए इतना पर्याप्त नहीं है। कुछ ऐसा हुआ है कि हम चाहते थे वीणा और सितार का संगीत, परन्तु हमें प्राप्त हुई अंग्रेजी बैन्ड की धून। इसका कारण यही है कि हमारे संविधान की रचना करनेवाले लोगों को इसी प्रकार की शिक्षा प्राप्त हुई है। ऐसा होते हुए भी मैं उन्हें दोषी नहीं मानूँगा। मैं तो इस प्रकार का दायित्व उनके भरोसे छोड़नेवाले लोगों का या हमारा स्वयं का दोष मानूँगा।

संविधान का ढाँचा जिस प्रकार तैयार हुआ है इस ओर दृष्टिपात कीजिए। स्वतंत्रता आन्दोलन के समय सिखाए गए और महात्मा गाँधी द्वारा सोचने के लिए प्रस्तुत किये गये कुछ सिद्धांतों एवं विचारधाराओं के प्रति हम समर्पित थे। अपनी आलंकारिक शैली में उन्होंने सबसे पहला महत्त्वपूर्ण परामर्श हमें यह दिया था कि हमारा संविधान विस्तीर्ण एवं पिरामिड जैसा होना चाहिए। उसकी रचना नींव से शुरु होनी चाहिए और क्रमश: संकरी होते हुए चोटी तक जानी चाहिए। परन्तु हुआ है इससे सर्वथा विपरीत। पिरामीड उलटा हो गया है।

संविधान के रचयिताओं ने विकेन्द्रीकरण का मार्ग नहीं अपनाया, परन्तु मुझे भारत की जनता पर विश्वास है। आनेवाले समय में वे दृढाग्रही बनकर आगे आएँगे और हमारे जनतंत्र को कन्याकुमारी से हिमालय तक निष्ठापूर्वक न्यायपूर्ण ढंग से कार्यान्वित करेंगे। चाहे कैसे भी नियम बनाए जाए, हम चाहे कैसे भी अनुच्छेद (धाराएँ) रचें परन्तु मानवीय मानस एवं मानवीय क्षमता जीवन का अधिक महत्त्वपूर्ण कारक होता है। मुझे विश्वास है कि आनेवाले समय में उसमें संशोधन करने के लिए हम सक्षम होंगे।

प्रो. के. टी. शाह (बिहार : सामान्य)

... जनतंत्र को व्यावहारिक बनाने का कार्य उसके लिये स्वीकार किये गये

दायित्व से होता है, कागज पर उसके गुणगान परन्तु उसके विभिन्न स्वरूपों की वास्तविक अस्वीकृति से नहीं। हमने पहले दिये गए तर्कों को स्वीकार किया होता, हमारी जनतांत्रिक सरकार का संचालन करने के लिए भारत के लोग समुचित मात्रा में शिक्षित नहीं है और अपने अधिकार और कर्तव्यों के प्रति अपेक्षित रूप से सतर्क नहीं है इस प्रकार के ब्रिटिशरों के मत का यदि हमने स्वीकार किया होता तो आज न तो हम स्वतंत्रता प्राप्त कर पाते, न ही अब के बाद प्राप्त स्वराज्य का अधिकार भी कभी पा सकते। उद्देश्यों एवं स्वरूप की दृष्टि से यह संविधान जनतांत्रिक होगा। परन्तु सविधान के विभिन्न अनुच्छेद (धाराओं) का ठीक से परीक्षण करेंगे तो हमें पता चलेगा कि, लोगों द्वारा और लोगों के लिए कार्यरत सरकार का स्वरूप प्राप्त करने की दिशा से हम अत्यन्त दूर है।

ये तो बहुत थोडे उदाहरण हैं। मैं और भी दे सकता हूँ। ये उदाहरण बताते है कि हम जिस संविधान को अपना रहे हैं, उसमें जनतत्र का वास्तविक सिद्धान्त कदाचित ही परिपूर्ण कर पाए हैं। उदाहरण के लिये विभिन्न विभाग के पारस्परिक सम्बन्ध और स्थानीय स्वराज्य की संस्थाओं का कार्यक्षेत्र भी मुझे सीमित प्रतीत होता है। केन्द्र के कार्यक्षेत्र की अनुसूचियाँ, उनमें समाविष्ट विषय और स्थानिक इकाइयों की अनुसूचियों का परीक्षण बताता है कि स्थानिक इकाइयों को सर्वथा अधिकार हीन कर दिया गया है। अपने दायित्वों को प्रभावशाली ढंग से निभा सकें इसके लिए उनके पास न तो अधिकार है न ही धन का प्रबन्ध। मेरे पूर्व एक वक्ता ने यथार्थ ही बताया है की सच्चा स्थानीय स्वराज्य, सही जनतंत्र इन इकाइयों में ही निहित होना चाहिए। केन्द्र में तो केवल प्रतिनिधियों के प्रतिनिधि और उनके भी प्रतिनिधि ही होंगे। उसमें केवल इकाइयों द्वारा प्राप्त प्रातिनिधिक सत्ता के ही दर्शन होते हैं और वास्तविक रूप से ऐसी ही उत्तरदायी लोकप्रिय सरकार का चयन होनेवाला है।

श्री आर. के. सिधवा (मध्य प्रान्त एवं वराड : सामान्य)

मुझे दु.ख है कि स्थानीय स्वराज्य के विषय में संविधान पूर्ण रूप से मौन है। मौन इस अर्थ में कि हमारी सब की उत्कट इच्छा प्रत्येक गाँव और गाँववासी को समृद्ध एवं आत्मनिर्भर बनाने की है, फिर भी उन्हें उचित रूप से हिस्सा नहीं दिया गया है। ग्राम स्वराज्य अर्थात् प्रत्येक गाँव स्वायत्त और स्वावलंबी हो यही हमारे महान नेता महात्मा गाँधी का आदर्श था। मुझे दु.खपूर्वक कहना पड रहा है कि इस संविधान में इसकी पूर्ति नहीं हुई है।

इससे पूर्व जैसे मैने एक बार कहा था, जब हम उद्देश्य एव लक्ष्यों के प्रस्ताव की चर्चा रहे थे, तब सदन का सर्वसम्मत अभिप्राय था कि केन्द्र सुदृढ होना चाहिए, और प्रारूप समिति के मन मे यह विषय था ही। मेरे कहने का तात्पर्य यह नहीं है कि प्रान्त केवल अस्थिपजर जैसे है। उन्हें बहुत अधिकार दिया गया है - परन्तु केन्द्र को बलवान बनाया गया है। मैं उसके पक्ष मे हूँ, परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि गाँवों को शक्तिमान बनने से रोका जाए। गाँवों को उनके भाग्य पर नहीं छोड़ देना चाहिए। मुझे प्रसन्नता है कि कई प्रान्तीय सरकारों ने पंचायत कानून बनाए हैं। मुंबई सरकार ने पंचायत कानून की रचना की है, मध्य प्रदेश सरकार ने जनपद कानून बनाया है, संयुक्त प्रान्त सरकार ने गाँव पंचायत कानून और बिहार सरकार ने ग्राम पंचायत राज बनाया है। ये कानून हैं ही, परन्तु उन्हें आवश्यक धन नहीं दिया जाएगा तो वे क्या करेंगे ? ग्राम प्रशासन और स्वायत्तता के लिए अपेक्षित धन का हिस्सा गाँवों को नहीं दिया गया है इसका मुझे खेद है। प्रांत गाँवों को उनके लिए अपेक्षित हिस्सा नहीं देते हैं। मैं तो कहूँगा कि हमारे देश की स्थानीय संस्थाएँ केवल दिखावे की हैं। मुझे आशा है कि संविधान जैसा भी हो प्रान्तीय सरकार ने गाँवो को स्वायत्त बनाने के लिए प्रयास करना ही चाहिये। गाँवों को बिना आत्मनिर्भर बनाए हमें जिनके प्रति समुचित आदर है जैसे जनसामान्य को सुखशांति प्राप्त नहीं होगी और उन्हे हम सम्पन्न नहीं कर पाएँगे।'

श्री गोकुलभाई दौलतराम भट्ट (मुंबई राज्य)

... महात्मा गाँधी की विचारधारा को कितना समाविष्ट किया गया है इस दृष्टि से संविधान की समीक्षा करने पर मुझे लगता है कि हमने पंचायतों के द्वारा इस प्रकार का कार्य सम्पन्न करवाने का ही प्रबन्ध किया होता तो ठीक होता। इस पक्ष को मैं अत्यधिक प्रधानता देता हूँ। यहाँ (सदन में) या अन्यत्र मुझे बोलने का जब भी अवसर प्राप्त हुआ तब मैंने पंचायत संस्था को स्वीकार करने का निवेदन किया है... मैं मानता हूँ कि अनुभव से हम समझ पाएँगे और ऐसे निष्कर्ष पर पहुंचेंगे कि मतदाता मंडल ग्राम पंचायतों का बनना चाहिये और उनके द्वारा निर्वाचित व्यक्ति लोकप्रिय प्रतिनिधि माने जाने चाहिए।

श्री अनंतशयनम आयंगर (मद्रास : सामान्य)

... मेरा बस चले तो, मै गाँवों को एक इकाई बनाने का एवं स्थायी मताधिकार के आधार पर स्थानीय परिषदों समेत ग्राम पंचायतो का गठन करना अधिक पसन्द करूँगा। चुनाव परोक्ष रूप से होना चाहिए।

दायित्व से होता है, कागज पर उसके गुणगान परन्तु उसके विभिन्न स्वरूपों की वास्तविक अस्वीकृति से नहीं। हमने पहले दिये गए तर्कों को स्वीकार किया होता, हमारी जनतांत्रिक सरकार का संचालन करने के लिए भारत के लोग समुचित मात्रा में शिक्षित नहीं है और अपने अधिकार और कर्तव्यों के प्रति अपेक्षित रूप से सतर्क नहीं है इस प्रकार के ब्रिटिशरों के मत का यदि हमने स्वीकार किया होता तो आज न तो हम स्वतंत्रता प्राप्त कर पाते, न ही अब के बाद प्राप्त स्वराज्य का अधिकार भी कभी पा सकते। उद्देश्यों एवं स्वरूप की दृष्टि से यह संविधान जनतांत्रिक होगा। परन्तु संविधान के विभिन्न अनुच्छेद (धाराओं) का ठीक से परीक्षण करेंगे तो हमें पता चलेगा कि, लोगों द्वारा और लोगों के लिए कार्यरत सरकार का स्वरूप प्राप्त करने की दिशा से हम अत्यन्त दूर है।

ये तो वहुत थोडे उदाहरण हैं। मैं और भी दे सकता हूँ। ये उदाहरण बताते है कि हम जिस संविधान को अपना रहे हैं, उसमें जनतत्र का वास्तविक सिद्धान्त कदाचित ही परिपूर्ण कर पाए हैं। उदाहरण के लिये विभिन्न विभाग के पारस्परिक सम्बन्ध और स्थानीय स्वराज्य की संस्थाओ का कार्यक्षेत्र भी मुझे सीमित प्रतीत होता है। केन्द्र के कार्यक्षेत्र की अनुसूचियाँ, उनमें समाविष्ट विषय और स्थानिक इकाइयों की अनुसूचियों का परीक्षण बताता है कि स्थानिक इकाइयों को सर्वथा अधिकार हीन कर दिया गया है। अपने दायित्वों को प्रभावशाली ढंग से निभा सकें इसके लिए उनके पास न तो अधिकार है न ही धन का प्रवन्ध। मेरे पूर्व एक वक्ता ने यथार्थ ही बताया है की सचा स्थानीय स्वराज्य, सही जनतंत्र इन इकाइयों में ही निहित होना चाहिए। केन्द्र में तो केवल प्रतिनिधियों के प्रतिनिधि और उनके भी प्रतिनिधि ही होंगे। उसमें केवल इकाइयों द्वारा प्राप्त प्रातिनिधिक सत्ता के ही दर्शन होते हैं और वास्तविक रूप से ऐसी ही उत्तरदायी लोकप्रिय सरकार का चयन होनेवाला हैं।

श्री आर. के. सिधवा (मध्य प्रान्त एवं वराड : सामान्य)

मुझे दुःख है कि स्थानीय स्वराज्य के विषय में संविधान पूर्ण रूप से मौन है। मौन इस अर्थ में कि हमारी सब की उत्कट इच्छा प्रत्येक गाँव और गाँववासी को समृद्ध एवं आत्मनिर्भर वनाने की है, फिर भी उन्हें उचित रूप से हिस्सा नहीं दिया गया है। ग्राम स्वराज्य अर्थात् प्रत्येक गाँव स्वायत्त और स्वावलंबी हो यही हमारे महान नेता महात्मा गाँधी का आदर्श था। मुझे दुःखपूर्वक कहना पड रहा है कि इस संविधान में इसकी पूर्ति नहीं हुई है।

इससे पूर्व जैरो मैंने एक बार कहा था, जब हम उद्देश्य एवं लक्ष्यों के प्रस्ताव की चर्चा रहे थे, तब सदन का सर्वसम्मत अभिप्राय था कि केन्द्र सुदृढ होना चाहिए, और प्रारूप समिति के मन में यह विषय था ही। मेरे कहने का तात्पर्य यह नहीं है कि प्रान्त केवल अस्थिपंजर जैसे हैं। उन्हें बहुत अधिकार दिया गया है - परन्तु केन्द्र को बलवान बनाया गया है। मैं उसके पक्ष में हूँ, परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि गाँवों को शक्तिमान बनने से रोका जाए। गाँवों को उनके भाग्य पर नहीं छोड देना चाहिए। मुझे प्रसन्नता है कि कई प्रान्तीय सरकारो ने पंचायत कानून बनाए हैं। मुंबई सरकार ने पंचायत कानून की रचना की है, मध्य प्रदेश सरकार ने जनपद कानून बनाया है, संयुक्त प्रान्त सरकार ने गॉव पंचायत कानून और बिहार सरकार ने ग्राम पंवायत राज बनाया है। ये कानून हैं ही, परन्तु उन्हें आवश्यक धन नहीं दिया जाएगा तो वे क्या करेंगे ? ग्राम प्रशासन और स्वायत्तता के लिए अपेक्षित धन का हिस्सा गाँवों को नहीं दिया गया है इसका मुझे खेद है। प्रांत गॉवों को उनके लिए अपेक्षित हिस्सा नहीं देते हैं। मैं तो कहूँगा कि हमारे देश की स्थानीय संस्थाएँ केवल दिखावे की हैं। मुझे आशा है कि संविधान जैसा भी हो प्रान्तीय सरकार ने गाँवो को स्वायत्त बनाने के लिए प्रयास करना ही चाहिये। गाँवों को बिना आत्मनिर्भर बनाए हमे जिनके प्रति समुचित आदर है जैसे जनसामान्य को सुखशांति प्राप्त नहीं होगी और उन्हें हम सम्पन्न नहीं कर पाएँगे।'

श्री गोकुलभाई दौलतराम भट्ट (मुंबई राज्य)

... महात्मा गाँधी की विचारधारा को कितना समाविष्ट किया गया है इस दृष्टि से संविधान की समीक्षा करने पर मुझे लगता है कि हमने पंचायतों के द्वारा इस प्रकार का कार्य सम्पन्न करवाने का ही प्रबन्ध किया होता तो ठीक होता। इस पक्ष को मैं अत्यधिक प्रधानता देता हूँ। यहाँ (सदन मे) या अन्यत्र मुझे बोलने का जब भी अवसर प्राप्त हुआ तब मैंने पंचायत संस्था को स्वीकार करने का निवेदन किया है... मैं मानता हूँ कि अनुभव से हम समझ पाएँगे और ऐसे निष्कर्ष पर पहुंचेगे कि मतदाता मंडल ग्राम पंचायतों का बनना चाहिये और उनके द्वारा निर्वाचित व्यक्ति लोकप्रिय प्रतिनिधि माने जाने चाहिए।

श्री अनंतशयनम आयंगर (मद्रास : सामान्य)

... मेरा बस चले तो, मै गॉवों को एक इकाई बनाने का एवं स्थायी मताधिकार के आधार पर स्थानीय परिषदों समेत ग्राम पंचायतो का गठन करना अधिक पसन्द करूँगा। चुनाव परोक्ष रूप से होना चाहिए।

श्री एच. वी. कामत (मध्य प्रांत एवं वराड : सामान्य)

... महात्मा गाँधी की इच्छा थी कि भारत विकेन्द्रित जनतंत्र बने। उन्होंने, अंतरराष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त चिन्तक लूई फिशर को कुछ वर्ष पूर्व कहा था कि 'भारत में सात लाख गाँव हैं। उन सब को नागरिकों की इच्छा के अनुसार, व्यापक मतदान के द्वारा सुगठित बनाया जाएगा। इसके पश्चात् सात लाख मतदाता होंगे, चालीस करोड़ नहीं ! प्रत्येक गाँव का एक 'मत' होगा। गाँव जिलातंत्र का चुनान करेंगे, जिलों के तत्र प्रांतीय तंत्र का चुनाव करेंगे...' एक एसा समय आएगा ही जब भारत स्थिर और सशक्त बनेगा, मुझे आशा है कि तब पंचायत राज्य की इस पुरानी योजना की ओर या रोटी, कपड़ा और मकान के विषय में आत्मनिर्भर और अन्यत्र कतिपय विषयों में हम परस्परावलम्वी ग्राम इकाइयों से युक्त विकेन्द्रित जनतंत्र की ओर वापस लौटेंगे। मुझे आशा है कि हम ऐसे पंचायत राज्य की ओर मुड़ेंगे।

... *राज्य के नीतिविषयक मार्गदर्शक सिद्धान्तों में ग्राम पंचायतों का प्रावधान है।* डॉ. आम्बेडकर ने आरम्भ में गाँवों को अन्धश्रद्धा एवं अज्ञान के पुंज आदि कहकर तिरस्कृत किया, ऐसा होते हुए भी ग्राम पंचायतों के लिये हितकर प्रावधान हम मार्गदर्शक सिद्धान्तों में कर पाए हैं। यह अच्छा हुआ है।

.. महात्मा गाँधी और सभी धर्माचार्यों एवं ऋषिमुनियों की संकल्पना से युक्त लक्ष्य की प्राप्ति के लिए हमें एकमत होना चाहिए ! मैं इस लक्ष्य को 'साधुनाम् राज्यम्' या 'धरा पर का ईश्वरी राज्य' नहीं कहूँगा, मैं तो केवल पंचायत राज्य ही कहूँगा।

सेठ दामोदर स्वरूप (संयुक्त प्रान्त : सामान्य)

अर्वाचीन राज्य का ढाँचा प्रमुख रूप से दो विभाग - प्रान्त एवं केन्द्र - के बीच सत्ता के विभाजन पर आधारित है। इस पद्धति में अति केन्द्रीकरण हो चुका है। हम भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी और भाई भतीजावाद को समाप्त करना चाहते हों, तो दो विभाग या विभागोंवाली यह पद्धति अनुकूल नहीं है। इसके लिए तो हमें चार विभागोंवाली पद्धति की आवश्यकता है। इससे पूर्व मैंने प्रस्ताव रखा था, उसके अनुसार अलग ग्राम प्रजासत्ताक होने चाहिए, भिन्न भिन्न नगर प्रजासत्ताक होने चाहिए, प्रान्त प्रजासत्ताक होने चाहिये और उनके संयुक्त तंत्र के द्वारा प्रान्तों में केन्द्रीय प्रजासत्तात्मक रचना का गठन होना चाहिए। ऐसा किया होता तो हमें यथार्थ रूप में जनतांत्रिक ढाँचा प्राप्त होता।

श्री टी. प्रकाशम् (मद्रास : सामान्य)

मेरी अपेक्षा के अनुसार यह हमारे देशवासियों के लिए अपेक्षित संविधान नहीं है। हमारे देश की स्वतंत्रता के लिए जूझते रहे अन्य कई लोगों के साथ मेरी अपेक्षा के अनुसार जैसा महात्मा गॉधीने रेखांकित किया था - केवल रेखांकित ही नहीं किया था, उसे कार्यान्वित करवाने के लिए वे निरंतर प्रयत्नशील रहे थे - वैसा यह संविधान नहीं है। महात्मा गांधी को आप मुझसे अधिक जानते हैं या देश के किसी भी व्यक्ति की अपेक्षा अधिक जानते हैं और आपने ही, मान्यवर, संविधान का प्रारूप निर्माण करने की प्रक्रिया के समय, एक उत्साहपूर्ण रचनात्मक कार्यकर्ता, अधिवक्ता और सुशिक्षित व्यक्ति, जिसने कई वर्ष गाँव में व्यतीत किये हैं ऐसे व्यक्ति, ने आपको लिखे पत्र का उत्तर देने की उदारता दर्शाई थी। उस पत्र में उस कार्यकर्ता ने महात्मा गाँधी की पंचायत संकल्पना के सम्बन्ध में वर्णन किया था और आपने उसका विस्तृत उत्तर दिया था। आप उस पंवायत राज्य योजना से प्रभावित थे क्योंकि आप महात्मा गाँधी के प्रथम श्रेणी के अनुयायी हैं। उस मित्र ने इस पत्र की एक प्रति मुझे दी थी। इस पत्र को आपने संविधान परामर्शक श्री बी. एन राउ को भेजा था। इससे पूर्व की हमारी चर्चाओं के दौरान मैंने उसका उल्लेख किया था और उपस्थित सभी उससे प्रभावित हुए थे। परन्तु मुझे पंचायतों के संविधान का - उसके ढाँचे का - संविधान में समाविष्ट करना कठिन प्रतीत हुआ था, क्योंकि उसका कार्य बहुत आगे वढ चुका था। इस लिये हमने उस विषय को छोड़ दिया। नेतृत्व के द्वारा सूचित किया गया कि उसे संविधान में मार्गदर्शक सिद्धांतों के प्रावधान में सम्मिलित किया जाएगा। आज वह हमारे सामने है। मेरी इच्छा के अनुसार का संविधान तो दूसरा था, ऐसा संविधान जो वास्तव में करोडों लोगों की अन्न, वस्त्र एवं जीवन की सभी आवश्यकताओं की पूर्ति कर पाएगा। इन करोडों लोगों की ब्रिटिश शासन में उपेक्षा हुई थी। अंग्रेज आज भारत छोड़कर चले गए हैं, इसके पश्चात् भी उनकी उपेक्षा हुई है। हम भी उनकी अवमानना करने वाले संविधान की रचना कर रहे हैं।

इस देश के लोग जैसा चाहते थे वैसा संविधान यह नहीं है। महात्मा गाँधी ने कॉंग्रेस के नाम से देश को संगठित करना शुरू किया तव, उनको स्पष्ट रूप से पता था कि इस देश को उसके करोडों लोगों के लिए किस प्रकार सहायता की जा सकती है।

इसलिए, देश को स्वतंत्रता दिलवाने के हेतु जिन्होंने महान बलिदान दिया है ऐसे, इस सदन के आदरणीय सदस्यों से मैं कहना चाहता हूँ कि जब कभी इस वात

की ओर ध्यान आकर्षित किया गया कि महात्मा गाँधी की योजना ही समुचित है तब हर बार समग्र सदन ने एक स्वर मे पंचायत पद्धति की माँग की थी, परन्तु बहुत देर हो जाने से, हम जिस संविधान की रचना कर रहे हैं उसमें उसे समाविष्ट नहीं कर पाए।

ऐसा होते हुए भी प्रत्येक सदस्य उसके पक्ष में था और पूर्व में करता था उसी प्रकार आज भी प्रत्येक व्यक्ति उसका उल्लेख कर रहा है।

मुझे प्रसन्नता है कि मार्गदर्शक सिद्धातों मे पंचायत पद्धति को समाविष्ट किया गया है। उसे कार्यान्वित करने एवं परिपूर्ण करने का दायित्व आप, देश एवं सरकार जिसे सौंपेगी, उन सब पर रहेगा। मुझे ज्ञात है कि उत्तरप्रदेश में पंडित गोविन्द वल्लभ पंत के प्रशासन ने ग्राम पंचायतों की रचना की है, आसाम में तो इससे पूर्व उसकी रचना की गई है। भारत के अन्य प्रान्त भी इस उदाहरण का अनुसरण करेंगे तो भारत के करोडों लोगों के लिए मुक्ति का दिन बहुत दूर नहीं रहेगा।

डॉ. रघुवीर (मध्य प्रान्त एवं वराड : सामान्य)

... हमारे देश के इतिहास के तथ्य आपके सामने प्रस्तुत करूँगा और यदि वे आपकी रुचि के अनुकूल न हों तो आप उसे अस्वीकार कर सकते हैं। परन्तु मेरा प्रश्न यह है कि विदेश के लोग अपने अपने सरकारी तन्त्र किस तरह से चलाते हैं इसे देखने के लिए हमारे संविधान के परामर्शदाता सर बी. एन. राउ अगर आयर्लैण्ड, स्वीट्‌जर्लैण्ड या अमेरिका जा सकते हैं तो हमारे ही देश में उन्हें एकाध व्यक्ति ऐसा नहीं मिला जो यह कह सके कि इस देश के पास भी देने योग्य कुछ है। इस देश में भी एक राजनीतिक दर्शन था, उसे समग्र देशवासियों ने आत्मसात् किया था और इसका सुचारु उपयोग भारत का संविधान निर्माण करने के लिए हो सकता है। मुझे अत्यन्त खेद है कि हमने इस वैचारिक पक्ष के सम्बन्ध में कुछ भी नहीं सोचा है।

श्री अरुणचन्द्र गुहा (पश्चिम बंगाल : सामान्य)

... ऐसा कहा गया है और मेरी सोच के अनुसार सही कहा गया है कि इस संविधान की अपनी कोई विशेषता नहीं है। प्रजा की उत्कट इच्छाओं को संविधान में प्रतिबिम्बित करने में, हम जिस क्रान्ति के वाहक बने और यह संविधान सभा भी जिसकी उपज है ऐसी क्रान्ति की विचारधारा को उसमें प्रतिबिम्बित करने में हम विफल रहे है। ग्राम पंचायतों पर आधारित विकेन्द्रित अर्थतंत्र का आधारभूत सिद्धांत के रूप में और नये राज्य की आधारशिला के रूप में स्पष्ट उल्लेख होना चाहिए था।

एक क्रान्तिकारी आन्दोलन की फलश्रुति के रूप में इस संविधान की रचना की गई है, इसलिए उसमें क्रान्तिकारी प्रजा की आशा आकांक्षाओ का प्रतिघोष गूंजना चाहिए। हम एक क्रान्ति का संवहन कर रहे है और अभी हम उसके मध्य में हैं। हमारी इस यात्रा का अभी अन्त नहीं हुआ है। हमारे आन्दोलन के कालखण्ड में कुछ क्रान्तिकारी एवं आर्थिक विचारधारा हमें दी गई थी। परन्तु मुझे डर है कि गाँधीजी की विचारधारा अर्थात् ग्राम पंचायतों और कुटिर उद्योगों को धारा ४० और ४३ में नाममात्र की दी गई स्वीकृति को छोड़, उसकी उचित प्रस्तुति नहीं हुई है। केन्द्र की अधिसत्ता एवं समाज को स्थिरता प्रदान करने के प्रावधान होते हुए भी इन बातों का समावेश संविधान में किया जाना चाहिए था। संक्षेप मे, यह संविधान क्रान्ति की आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं करता है। ऐसा होते हुए भी मैं हताश नहीं हुआ हूँ। मे जानता हूँ कि इतिहास विकासशील प्रक्रिया है... मुझे लगता है कि यह संविधान कुछ समय के लिए की गई व्यवस्था है। हमे अभी आगे बढना पडेगा ताकि अब के पश्चात् निर्मित होनेवाले संविधान में प्रजा की क्रान्तिकारी आशा आकांक्षाओं का उचित रूप से प्रस्तुतिकरण हो सके।

श्री शंकरराव देव (मुंबई : सामान्य)

संविधान का प्रारूप तैयार करनेवाले सदस्यों की नियुक्ति करते समय हम संविधान के पंडितों का ज्ञान और बहुश्रुत संवैधानिक विशेषज्ञों की सटीकता की अपेक्षा उत्सुकता से करते थे और यह बात उसमें विपुल मात्रा में है ... परन्तु हमने बुद्धिचातुर्य से युक्त और व्यवहारकुशल राजनीतिज्ञों का चयन नहीं किया, और न हीं संविधान में क्रान्ति की भावना को साकार रूप देना स्वीकार किया, क्योंकि संविधान सभा १९४६ में गठित हुई, उस के पूर्व क्रान्तिकारी संघर्ष के निकष पर संविधान के वर्तमान रचनाकारो में से कोई भी परखे नहीं गये हैं। वास्तव मे इस संविधान को क्रान्ति का परिणाम कहना कठिन ही है। विश्व के राज्य की क्रान्तियो के परिणाम स्वरूप बने संविधानों की ओर दृष्टि डालिए। उनका अपना प्रभाव है और इसलिए ऊपर ऊपर से देखनेवाले भी समझ सकते हैं कि वह ब्रिटेन, अमेरिका या रूस के संविधान जैसा है। भारतीय प्रजा के प्रशासन के लिए तैयार किये गए इस संविधान में व्यक्ति स्वातंत्र्य का विश्वास दिलानेवाले मापदंड हैं विकास, शान्ति और भ्रातृत्व को प्रोत्साहित करनेवाले सभी सिद्धांतो को समाविष्ट किया गया है, परन्तु साथ ही यह भी स्वीकार करना पड़ेगा कि इस संविधान से हमारी क्रान्ति में से प्रस्फुटित होनेवाले निश्चित सिद्धांतों को

कार्यान्वित करने के लिए पर्याप्त और प्रभावशाली यंत्रणा का प्रावधान नहीं है... हम कह सकते हैं कि हमने क्रान्ति की है और महात्मा गाँधी के नेतृत्व में अहिसक क्रान्ति के पथ पर चलकर हम सत्ता पर आए हैं और फिर भी हमें स्वीकार करना चाहिए कि वह क्रान्ति जिन सिद्धातों पर आधारित थी उन सिद्धांतो को हमारे राजनीतिक संगठन या भारतीय समाज में गहराई तक हमने उतारा नहीं है। हमने महात्मा गाँधी का अनुसरण किया। उन्होने जो कहा वह हमने किया, क्योंकि, उन्होंने स्वतंत्रता दिलवाने का वचन दिया था। हमें मानना पड़ेगा कि उनका अनुसरण करते हुए भी हमने उनके समग्र जीवनदर्शन को नहीं अपनाया है। हमें सत्ता दिलानेवाली क्रान्ति राजनीतिक थी, हमने संविधान में उस राजनीतिक तत्त्व को मूर्त रूप देने का प्रयास किया है, परन्तु जहाँ तक महात्मा गाँधी की जीवनदर्शन विषयक, सामाजिक एवं आर्थिक संकल्पनाओं का प्रश्न है, हमे स्वीकार करना पड़ेगा कि हम उसके निकट पहुँचे हैं यह कहने के लिए भी अभी बहुत कुछ करना शेष है। हमारे प्रधानमंत्री ने पुनः पुनः प्रबल रूप से यह कह कर पुनरावृत्ति की है कि विश्व अपेक्षा की दृष्टि से भारत की ओर देख रहा है और इस अपेक्षा में निहित है कि हमें आज का विश्व जिससे टक्कर ले रहा है ऐसे वर्तमान आपातकाल से रास्ता खोजना है। हमें सखेद स्वीकार करना पड़ता है कि उन्हें कुछ नया प्रतीत हो ऐसा, जिसका अनुकरण करने पर तो वर्तमान सकटों से वे पार उतर सकेंगे ऐसा तत्त्व संविधान में अति अल्प है। हमने अमेरिका, इंग्लैड, ऑस्ट्रेलिया, केनेडा, आयर्लेन्ड, जर्मनी आदि विभिन्न देशों के सविधानों से मुक्त रूप से बहुत कुछ अपनाया है। परन्तु इससे विपरीत, वे अपना सकें ऐसा हमारे संविधान में बहुत कम है। मुझे भय है कि ऐसी एकमार्गी प्रक्रिया का निर्माण हो रहा है। परन्तु जैसा कि मैंने पहले कहा, यह गलती किसी एक व्यक्ति द्वारा नहीं हुई है। यह यदि गलती या क्षति है तो वह हम सबकी है, क्योंकि हमने अपने गुरु का अनुसरण ईमानदारी से नहीं किया है। मैं यह नहीं कहता कि हमनें जानबूझकर उनके साथ विश्वासघात किया है, उन्हें धोखा दिया है। यह हमारी कमी है, हमारी निर्बलता है और इसीलिए उनके द्वारा प्रदत्त अहिंसक, शान्तिपूर्ण जीवन का दर्शन अपनाने में हम विफल रहे हैं।

हमें सखेद स्वीकार करना चाहिए कि हमारे लिए और विश्व के लिए अहिंसक समाज *व्यवस्था प्रदान करने के लिये सक्षम संविधान देने की स्थिति में ग्राम* पंचायतों से सम्बन्धित, चार पंक्ति की धारा ४० और कुटिर उद्योंगो के अत्यल्प उल्लेख को छोड़ गाँधीमार्ग को – गाँधी द्वारा दर्शाया गया ऐसा मार्ग जिसमें पिरामिड-सा संवैधानिक ढाँचा, जनसामान्य की गहरी समझ और रचनात्मक क्षमता से युक्त लाखों पंचायतों की

विशाल आधारशिला को - कोई स्थान नहीं मिला है। राजवंश ताश के पत्तो के महल के समान टूट गये और एक के बाद एक क्रान्तियाँ आई तब भी भारत की पंचायतों ने हमारे जनजीवन एवं सभ्यता की निरन्तरता किस प्रकार बनाए रखी यह १९३२ में हाउस ऑव कॉमन्स की सिलैक्ट कमेटी के समक्ष निवेदन प्रस्तुत करते समय सर चार्ल्स मेटकाफ ने अच्छी तरह बताया है। आज केन्द्रीकृत समाज में एक ही बम सभी दीपकों को बुझा देने के लिए पर्याप्त है, और आज तिमिरहरण के लिए भी दीपक नहीं बचा है। परन्तु मिट्टी की छोटी सी ढिबरी में, थोड़े तेल से प्रज्वलित कई दीपको से चौंधिया देनेवाला प्रकाशपुंज भले ही प्राप्त न होता हो तो भी पूर्ण अंधेरा कभी नहीं छा जाएगा। मुझे डर है कि अति केन्द्रीकरण से युक्त हमारे संविधान में हृदय को मूर्छित करने और अन्त में पक्षाघातसी स्थिति पैदा करने की सम्भावना प्रतीत होती है।

सब अपेक्षा करते हैं कि महान शहीद (गाँधीजी) के दृढ अनुयायियों द्वारा रचित संविधान में उनकी आत्मा एवं हृदय की धड़कनें सुनाई देगीं। परन्तु अधिक तर्क न करें और न ही भावनाओं में बह जाएँ। बुद्धिमानी का तकाजा व्यावहारिक बनने के लिए कह रहा है। अत्यधिक वास्तविक विश्व में कल्पना सृष्टि में विहार करने के लिए अवसर नहीं है। यथार्थ की माँग है कि समाज के पुनर्निमाण से पूर्व उसका दृढीकरण करना चाहिए। परन्तु यथार्थ राजनीति एवं प्रशासन कला के खिलाड़ी ही कितनी अधिक बार स्वयं अपने जाल में फँसे हैं। यथार्थ कितनी बार केवल क्षणिक समयावधि तक बना रहता है। हमें दृढता प्राप्त करनी चाहिए, साथ ही यह भी नहीं भूलना चाहिए कि आज जिसका दृढ़ीकरण कर रहे हैं वही कल भयावह बनकर कष्टदायक होगा। इतिहास की गति और मानव व्यवहार मे कोई विराम स्थल नहीं हैं। मानव इतिहास में ऐसा कभी नहीं हुआ कि उसके द्वारा हुए सृजन को धराशायी किये बिना तेज गति से नवसर्जन हुआ हो और सरलता से परिवर्तन हो गया हो। आज अत्यन्त केन्द्रीकरणवाले संविधान की आधारशिला पर सृजन करेंगे तो हमारे जनजीवन और समाज का पुन: संस्करण हम कभी नहीं कर पाएँगे।

श्री एस. एम. घोष (पश्चिम बंगाल : सामान्य)

पंचायतों के प्रावधान पर मैं अधिक बल देता हूँ। मैं जानता हूँ कि यह प्रावधान हमारी इच्छा के अनुसार नहीं है, फिर भी मुझे विश्वास है कि हम उसके पीछे पूरी शक्ति लगा देंगे और मन लगाकर काम करेंगे। पंचायतों पर आधारित इस संविधान के द्वारा कार्य करेंगे तो इश्वरेच्छा हमें सफलता दिलाऐगी।

श्री एस. नागप्पा (मद्रास : सामान्य)

मैं पुन: एक बार सदन से निवेदन करता हूँ कि हम इस बात की ओर ध्यान दें - क्योंकि संविधान की रचना करनेवाले अधिकांश लोग चाहेंगे कि उसकी रचना जिस भावना के साथ हुई है उसी रूप में वह कार्यान्वित हो। ऐसा होगा तभी संविधान की रचना करके लोगों के स्वप्न हम साकार कर पाएँगे। ग्राम पंचायतें और कुटिर उद्योगों की स्थापना जैसे सभी कार्यक्रम दरिद्र प्रजा के लिऐ बहुत सहायक बनेंगे।

श्री जसपतराय कपूर (संयुक्त प्रान्त : सामान्य)

... उग्र आलोचकों में से अन्तिम व्यक्ति उत्तरप्रदेश के शिक्षामंत्री श्री सम्पूर्णानन्द जैसे असाधारण व्यक्ति हैं। उन्होंने कहा, 'मेरा दृढ अभिमत है कि यह संविधान वास्तव में हमारे योग्य नहीं है...' संविधान कुछ ऐसे दैवी तत्त्वों से युक्त होता है, जो आनेवाली पीढ़ी को प्रेरणा देता है। महत्त्वपूर्ण राज्यों के सन्दर्भ में वह चेतना युक्त श्रद्धा एवं आस्था का, उसकी रचना करनेवाले व्यक्तियों के जीवनदर्शन का प्रकटीकरण होता है। इसे समझने के लिए आपको रूसी संविधान की ओर दृष्टिपात करने की आवश्यकता है...' '...इस मापदंड से जाँच की जाए तो हमारा संविधान दयनीय रूप से विफल है। भारतीय सभ्यता की भावना की उसमें झलक नहीं है। देश में और देश के बाहर भी हम जिस उत्कटता से गाँधीविचार के प्रति निष्ठा प्रकट करते हैं उससे यह प्रेरित नहीं हैं। यह केवल एक कानूनी अंश हैं, जिस प्रकार 'मोटर विहीकल एक्ट' है।

...जैसा कि श्री सम्पूर्णानन्द और अन्य कई लोगों ने भी कहा है... यद्यपि ऐसे लोगों की संख्या बहुत कम है, उसके अनुसार संविधान को लेकर एक आलोचना यह हुई है कि *यह गाँधी विचार से प्रेरित नहीं है। परन्तु इससे अधिक सत्य से परे कोई* बात हो ही नहीं सकती। बुनियादी अधिकारों का अध्याय और मार्गदर्शक सिद्धांत इस आलोचना को स्पष्ट रूप से आधारहीन सिद्ध करते हैं।

गाँधीजी चाहते थे ऐसी एक अन्य बात प्रजा के हाथ में, किसान एवं श्रमिकों के हाथ में शासन की धुरा सौंपने की थी। हमने इसका प्रावधान क्या सही अर्थ में नहीं किया है ? व्यक्ति मताधिकार का अन्य क्या अर्थ हो सकता है ? व्यापक मताधिकार प्रदान करने का साहसिक कदम हमने उठाया है। हम यह खतरे का प्रयोग करने जा रहे हैं। महात्मा गाँधी की इच्छा को सम्मान देने के लिए हम ऐसा खतरा उठाने के लिये

तैयार हुए हैं। मुझे आशा और विश्वास है कि इस प्रयोग के लिए हमे पश्चाताप नहीं करना पड़ेगा।

ग्राम पंचायतों की रचना करने के लिए और उन्हें कुछ मात्रा में स्वायत्तता प्राप्त हो इसके लिए महात्मा गाँधी विशेष रूप से उत्सुक थे। हमने ऐसा ही प्रावधान संविधान की धारा ४० के अन्तर्गत किया है। उसमें कहा गया है कि 'राज्य ग्राम पंचायतों के गठन के लिए कदम उठाएगा और वे स्वशासन की इकाइयों के रूप में कार्य कर सकें इसके लिए उन्हें आवश्यक शक्ति और अधिकार देगा।' यह प्रावधान हमने संविधान में स्पष्ट शब्दों में किया है। शासन के केन्द्रीकरण की बात करनेवाले लोगों को संविधान की धारा ४० की ठीक से जाँच कर लेनी चाहिए। यह सच है कि ऐसा प्रावधान मार्गदर्शक सिद्धांतों में है। परन्तु वह और किस स्थान पर हो सकता है और इस समय हम इससे अधिक कर भी क्या सकते हैं ? आप लेखनी के द्वारा जादू की छड़ी घुमाकर तो ग्राम पंचायतों की रचना कर नहीं पाएँगे ? हम इस समय केवल इतना ही कर सकते हैं कि दृढ संकल्प प्रकट करते हुए उस दिशा मे आगे बढ़ें, और इतना तो हमने किया है।

श्री अलगु राय शास्त्री (संयुक्त प्रान्त : सामान्य)

कुछ आगे बढने पर हमे प्रतीत होता है कि कथित मार्गदर्शक सिद्धांत जिसमें हमारे देश के आदर्शों को और जनता के अधिकारों को समाविष्ट किया गया है, उसकी भाषा बहुत आकर्षक, मनभावन और चमक दमकवाली है, परन्तु उसमें कहीं पर भी यह नहीं कहा गया है कि राज्य जनता को अन्न और वस्त्र देने का दायित्व पूर्ण करेगा और जनता की प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति करेगा। निःसंदेह उसमें ऐसा कहा गया है कि यह सब कुछ देने के लिए यथासम्भव प्रयास करेंगे। संविधान की रचना करने के लिए तो हम गर्व का अनुभव कर रहे हैं तो भी जब हम सार्वभौमत्व को ग्रहण कर रहे हैं तब मूल अधिकारों के अध्याय में दृढतापूर्वक खुलकर घोषित करना चाहिए था कि हम रोटी, कपड़ा, मकान एवं मनुष्य की प्राथमिक आवश्यकताओं को पूरा करेंगे। परन्तु इसके स्थान पर हम अचानक शिथिल और दबे दबे से हो गये हैं। हमारे प्राचीन राजनीतिक संगठन का सिद्धांत था कि राज्य का दायित्व है कि प्रत्येक नागरिक की प्राथमिक आवश्यकताओं को वह पूरा करे। परन्तु हमारे संविधान में अति विनम्रता दर्शाते हुए 'जहाँ तक सम्भव हो' और 'राज्य की क्षमता के अनुसार' जैसे [illegible] का प्रयोग करते हुए हमारे वचनबद्धता की मर्यादा हम स्पष्ट करते हैं और

के प्रति हमारे यथार्थ दायित्व को संकुचित बनाते हैं। वास्यतिकता यही है कि मूल अधिकारों के अध्याय में इस प्रकार की वचनबद्धता का जरा भी संकेत नहीं है। संविधान में ऐसा कोई प्रावधान होना चाहिए, यह अपेक्षा रखनेवाले लोग आज बहुत निराश हैं।

भारत का संविधान गाँधीवादी दृष्टिकोण से युक्त नहीं है ऐसे श्री शंकरराव देव के विचार का मैं सम्मान करता हूँ। उन्हें और उनके विचारों के साथ सहमत मित्रों से मैं कहना चाहता हूँ कि चाहे कैसी भी स्थिति हो, डॉ. आम्बेडकर ने पहले पंचायतों की खिल्ली उडाई हो तो भी अब उन्हें संविधान में स्थान मिला है। और मद्यनिषेध का भी उसमें उल्लेख है। साथ ही ग्रामोद्योग को भी स्थान प्राप्त हुआ है। उसकी (संविधान की) सही महत्ता तो इस वास्तविकता में है कि अस्पृश्यों की समस्या का समाधान मिला है, सामान्य जनता को व्यापक मताधिकार प्राप्त हुआ है। ये सारी बातें उसकी महान उपलब्धियाँ है, और उस विषय में हम कहेंगे कि इससे राष्ट्रपिता गाँधीजी की आत्मा प्रसन्न होगी।

श्री अमीयकुमार घोष (बिहार : सामान्य)

... हमने पंचायत पद्धति को राम राम कर दिया है, इतना ही नहीं परन्तु समन्वय और उत्तम प्रशासन के नाम पर राज्यों को केवल आज्ञापालक, हाँ में हाँ मिलानेवालों के स्तर पर उतार दिया है।

डॉ. पी. एस देशमुख (मध्य प्रान्त एवं वराड : सामान्य)

... मेरी दृष्टि से संविधान की एक बड़ी सफलता यह है कि हमारे देश की जनता पिछले दसबारह वर्षों से इससे सुपरिचित है, इससे भिन्न प्रकार का संविधान देश को प्राप्त नहीं होनेवाला है। केन्द्र के दायित्व को छोड़ सन् १९३५ भारतकानून (Govt. of India Act, 1935) ही है। ऐसा कहकर मैं उसकी रत्तीभर भी आलोचना नहीं करना चाहता। मैं तो उसे अवगुण नहीं परन्तु 'सद्गुण' के रूप में स्वीकार करने के लिए उत्सुक हूँ, क्यों कि लोगों को इस संविधान को समझने में कोई कठिनाई नहीं होनेवाली है।

...ऐसा कहना भी अतिशयोक्ति नहीं मानी जाएगी कि गहराई से या सीधी दृष्टि से नहीं देखा जा सकता है फिर भी उसमें एक ओर सरकार तथा दूसरी ओर प्रजा के बीच संघर्ष के बीज पड़े हुए हैं। यह कहकर आश्वस्त होने की आवश्यकता नहीं है कि,

प्रवर्तमान सरकार को हानि कर सके उस रूप में असन्तोष केन्द्रित हो या एक (राजनीतिक) पक्ष में रूपान्तरित हो इसकी सम्भावना नहीं है। परन्तु वह (असन्तोष) सरलता से बाहर निकल सकता है क्योंकि उसमें कई संकेत और बीज तो पडे हुए हैं ही। जनता को लगता है कि यह सरकार हमारी नहीं है क्योकि उनकी कई शिकायतें है और असन्तोष के कई विषय हैं। इस दृष्टि से संविधान के भारतीय प्रजा की प्रतिमा के अनुरूप होने में या वर्तमान युगीन समस्याओं का समाधान दे पाने की उसकी क्षमता के विषय में मुझे सन्देह है।

श्री सीताराम एस. बाबू (मध्य भारत)

.. संविधान में ऐसे प्रावधान हैं जो सूचित करते हैं कि हमने गांधीवादी दर्शन का अनुसरण किया है। गाँधीजी ने हमे जो सिखाया था उसके बीज संविधान में हैं और संविधान को उचित रूप से कार्यान्वित किया जाए तो वे बीज अंकुरित होंगे।

श्री श्यामनन्दन सहाय (विहार : सामान्य)

... संविधान की रचना के सन्दर्भ में मेरा मानना है कि, हमने संविधान को ऊपर से थोप दिया है, उसका आरम्भ ग्रामजीवन से करने का हमने कतई प्रयास ही नहीं किया है। यदि आपको स्मरण है तो, यह विषय सदन में एक गम्भीर चर्चा का विषय बना था, और मुझे स्वीकार करना चाहिए कि एक बार-पहली बार - ही मुझे प्रतीत हुआ था कि डॉ. आंबेडकर गलत दिशा में थे, यही नहीं अत्यन्त गलत दिशा में थे। हमारे देश के ग्रामजीवन के विषय में उनकी मान्यता पूर्णत: गलत थी। हमारे नगरों की सभी आवश्यकताओं को ग्रामीण क्षेत्र पूरा करता है। सैन्य सेवाएँ, या प्रादेशिक प्रशासन, या खाद्यान्न के उत्पादन, कोई भी विषय हो, ग्राम और ग्रामजन इन आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। वे अतीत की प्रतिपूर्ति करते हैं यह कहने से बात नहीं बनेगी। वे ही देश की जनसंख्या का अधिकतम भाग हैं। वे सम्भवत: कुछ व्यक्तियो की अपेक्षा के अनुसार उच्चस्तरीय न हों तो, उसमें दोष किसका है ? बीते हुए समय में केन्द्र सरकार द्वारा उनके प्रति जितना ध्यान दिया जाना चाहिए था उतना नहीं दिया गया। क्या हम भी उसी मार्ग पर चलना चाहते हैं ? यदि ऐसा ही करेंगे, तो मुझे कहने दीजिए कि, उसका दुष्परिणाम हमें भुगतना पडेगा। दुर्भाग्य इस बात का है कि हमने सन् १९३५ के कानून का ही आधार लिया है, और इसीलिए देश की उन्नति के लिए आवश्यक आयामों का उचित विचार नहीं हुआ, उसके प्रति अपेक्षित ध्यान नहीं दिया गया।

श्री लोकनाथ मिश्र

... कई मित्रों को, और विशेषकर आदरणीय श्री प्रकाशम के साथ मुझे भी लगता है कि, आज भी हमारी नाडियों में जो भाव और विचार प्रवाहित है और जनता को जो पसन्द है उसी पंचायत राज्य की ठोस आधारशिला पर ढाँचा तैयार किया गया होता तभी संविधान वास्तविकता के निकट का बन पाता। इसके द्वारा हमें छोटे छोटे गणतंत्र प्राप्त होते और जनतंत्र के समर्थको को अपने अधिकारों का दायित्वपूर्ण उत्साह एवं आनन्द के साथ उपयोग करने का अवसर प्राप्त होता। परन्तु इस संविधान के द्वारा दो वर्ग (निर्माण) होंगे - चोटी पर सत्तारूढ वर्ग और नीचे बैठा हुआ हर पाँच वर्षों में एक बार मतदान करनेवाला जनसामान्य...

श्री गोपाल नारायण (संयुक्त प्रान्त : सामान्य)

... मैं एक अन्य विषय पर बल देना चाहता हूँ। संविधान में अति केन्द्रीकरण हुआ है। स्थानीय धारागृहों को स्थानीय संस्थाओं - नगरपालिका, लोकल बोर्ड जैसे स्तर पर उतार दिया गया है और उसका सीधा तात्पर्य यह है कि प्रान्तीय विधानसभाएँ स्थानीय संस्थाएँ - लोकल बोर्ड, नगरपालिका आदि को प्रभावहीन बना देंगी। पंचायतों को कुछ सत्ता दी गई है, फिर भी मुझे भय है कि उनको कार्य करने के लिए अपेक्षित अवसर नहीं प्राप्त होगा। मेरे मतानुसार यह अच्छी बात नहीं है।

श्री एस. वी. कृष्णमूर्ति राव (मैसूर राज्य)

ऐसा आरोप हुआ है कि गाँधीवादी सिद्धांतो की बलि चढाई गई है। मैंने इससे पूर्व बताया ही है कि हमने अस्पृश्यता को दूर करना, राष्ट्रभाषा, सामाजिक बंधुत्व एवं सद्भाव के लिए प्रावधान किया है। अल्पमत को, ग्राम पंचायतो को प्रोत्साहन एवं दूधारू पशु के संरक्षण का विधारा दिया है। इस मुद्दे के आधार पर ही देश में गाँधी विचार फला फूला और देश में अहिंसक क्रान्ति का सृजन हुआ। यदि इस सिद्धांत को संविधान में समाविष्ट किया गया है तो मेरा प्रश्न है कि ऐसा कैसे कहा जा सकता है कि गाँधी विचारधारा की बलि चढाई गई है ? मुझे कहना है कि राष्ट्रपिता द्वारा बताए गए कार्यक्रम को आगे बढाने के लिए संविधान में अपेक्षित प्रावधान किया गया है। इस संविधान में श्रेष्ठ परंपराएँ, अन्य देशों के राजनीतिक एवं संवैधानिक अनुभव एवं गाँधीवादी आदर्शों का सुविचारित मिश्रण है।

श्री उपेन्द्रनाथ वर्मन (पश्चिम बंगाल : सामान्य)

... भविष्य में रचे जानेवाले वास्तविक ढाँचे के बारे में कुछ कहने से पूर्व मैं सदस्यों को बताऊँगा कि वे संविधान में समाविष्ट एक मार्गदर्शक सिद्धांत के प्रति ध्यान दें। मेरा संकेत ग्राम पंचायत संगठन की ओर एवं उसके साथ साथ १४ वर्ष की आयु तक के बच्चो को नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा देने के मार्गदर्शक सिद्धांतो की ओर है। इन दो मार्गदर्शक सिद्धांतो को कार्यान्वित करने की दिशा में आनेवाली सरकारें सतर्क रहेगी तो मुझे लगता है देश की स्थिति मे, निकट भविष्य मे, पर्याप्त सुधार होगा और वह समग्र भारत के लिए उत्तम बात होगी... हम व्यापक मताधिकार का प्रबन्ध करते हों, देश की सरकार का गठन करने के लिए कर्णधार के रूप में प्रत्येक वयस्क नागरिक के प्रति विश्वास प्रकट करते हों, तो पंचायतों की रचना में एक दिन का भी विलम्ब हानिकारक माना जाएगा। सरकार के गठन मे उनका स्वर होना ही चाहिये। इस सीमा तक हम उनमें विश्वास रखते हों तो स्वाभाविक रूप में ही उन्हे कुछ दायित्व भी हस्तान्तरित करने चाहिए। एक बार ऐसा करेंगे तो संचालन के दायित्वों से हमें पर्याप्त मुक्ति प्राप्त होगी, कम से कम दैनन्दिन बातों में तो मुक्ति मिलेगी ही। शासकीय कर्मचारी से प्रजा का दायित्व लेने की अपेक्षा जब तक रखी जाएगी तक तब प्रजा असावधान रहेगी और सरकार के प्रति असन्तोष जताती रहेगी। परन्तु, एक बार उसे स्थानीय संचालन का दायित्व सौंप दिया जाए तो वह अपना कार्य करने के लिए तत्पर रहेगी।

... निस्सन्देह, ऐसी आलोचनाएँ भी हुई हैं कि पंचायतें दायित्व नहीं निभा पाएँगी, क्योंकि हमारे ग्रामजन अज्ञानी है। और फिर सत्ता का संघर्ष भी आरम्भ होगा। परन्तु दैनिक समाचारपत्रो के प्रति एक दृष्टिपात करने से विश्वास होगा की प्रान्तीय स्तर के नेतृत्व में भी संघर्ष है ही। इसलिए यह तर्क निरर्थक है कि जनता अभी अपना स्थानीय संचालन एवं अनेक प्रयोजनों को कार्यान्वित करने के लिए सक्षम नहीं है। इसे मूर्खता माना जाएगा। मेरा कहने का तात्पर्य इतना ही है कि जहाँ तक सम्भव है ग्राम पंचायतों का गठन शीघ्रता से करते हुए गाँवो से सम्बन्धित अधिकार ग्राम पंचायतों को देना चाहिए। इसके द्वारा देश के प्रशासन के कई प्रश्नों का समाधान मिल जाएगा।

श्री पी. कक्कन (मद्रास : सामान्य)

... *संविधान में पंचायत पद्धति को स्थान दिया गया इसकी मुझे प्रसन्नता है। मुझे आशा है कि हमारे विशाल देश के कोनेकोने में पंचायत पद्धति को*

कार्यान्वित करने के लिए भारत सरकार आवश्यक कदम उठाएगी। साथ ही महात्मा गाँधी की इच्छानुसार जाति, धर्म या रंग के भेदों से रहित ग्रामस्वराज्य का विकास करेगी।

श्री आर. वी. धुलेकर : (संयुक्त प्रान्त : सामान्य)

...तीसरा विषय यह है कि हम ग्राम पंचायतों का गठन करनेवाले हैं, जिसके परिणाम स्वरूप जनतंत्र का विस्तार नीचे तक हो जाता है। कुछ वर्षों से भारत में जनतंत्र था, परन्तु सामान्य व्यक्ति को इस बात की अनुभूति नहीं हो रही थी। हम जनतंत्र की डोर गाँवों तक ले जाकर ग्राम पंचायतों की रचना के द्वारा सामान्य प्रजा को अपना शासन स्वयं चलाने के लिऐ कह रहे हैं यह बात मेरी दृष्टि से भारत के लिए कल्याणकारक सिद्ध होगी।

श्री पी. के. सेन (बिहार : सामान्य)

राष्ट्रपिता द्वारा अत्यन्त स्पष्ट रूप से प्रस्तुत की हुई पुरानी विचारधारा को मानते हुए आधारभूत रुप से पंचायत पद्धति को कार्यान्वित करना चाहिए, इस विषय पर अपेक्षित चर्चा हुई है। अर्थात् नींव में पंचायत होनी चाहिए और उसकी बृहद आधारशिला पर आधारित जनतंत्र पिरामीड आकार से ऊपर उठना चाहिए। इस प्रकार के आकारवाला जनतंत्र पूर्णता प्राप्त करेगा। अगर हम ऐसा ही करना चाहते हैं तो अभी इसे अस्पष्ट नहीं रखना चाहिए। इससे पूर्व मैंने कहा है कि व्यापक मताधिकार असुरक्षित है, और सुरक्षा रूपी स्वर्ग को खोजने के लिए हमें बहुत परिश्रम करना है। मुझे इस में सन्देह नहीं है कि पंचायत पद्धति क्रमशः कार्यान्वित होगी। हम जिसका स्वागत करने के लिए उत्सुक हैं उस जनतंत्र की आधारशिला भी सम्भवतः वही (पंचायत) बनेगी।'

श्री बी. पी. झुनझुनवाला (बिहार : सामान्य)

... अन्य सभी सत्तायें, यथासम्भव विकेन्द्रीकरण करते हुए ग्राम्य इकाइयों या ग्रामसमूहों को देनी चाहिए। इस उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए संविधान के आमुख में संशोधन करने की सूचना मैने दी थी, और सूचित किया था कि 'जनतन्त्र' शब्द के पश्चात् 'आत्मनिर्भरता के सिद्धांत के अनुसार गठित स्वायत्त ग्रामसमूहों के आधार पर उसे आकार देने का प्रयास किया जाए' ऐसे शब्द जोड़े जाएँ... संशोधन का उद्देश्य यह

था कि हम जनतांन्त्रिक सरकार स्थापित कर रहे हैं तब यथासम्भव मात्रा में छोटी इकाइयों को यथोचित अधिक सत्ता प्रदान करते हुए यथासंभव वास्तवलक्षी जनतन्त्र बनाएँ ताकि ऐसी लघु ईकाई बनानेवाले व्यक्तियों का यथोचित सुलभ एवं तैयार साधन प्राप्त हो सके।

ग्रामीण प्रजासत्ताक के विषय में एक बात के प्रति मैं सदन का ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ। द्वितीय पठन के लिए संविधान की पाण्डुलिपि प्रस्तुत करते समय डॉ. आम्बेडकर ने जो अभिमत प्रकट किया था वह उनका अपना था या समग्र प्रारूप समिति का था इसकी मुझे जानकारी नहीं है।

मैं तो इतना ही कहना चाहता हूँ कि ग्रामजनों के लिए डॉ. आम्बेडकर द्वारा प्रयुक्त शब्दों से अधिक कठोर और अन्यायपूर्ण कुछ हो ही नहीं सकता। उसमें न केवल कठोरता थी अपितु वह वास्तविकता पर आधारित भी नहीं था। डॉ. आम्बेडकर स्वयं भी इस बात को स्वीकार करते हैं कि उन्होंने (ग्रामजनोंने) अपना अस्तित्व बनाए रखा और भारत की स्वतंत्रता के लिए भी प्रयास किया। वे ऐसा भी कहते हैं कि केवल बने रहना पर्याप्त नहीं है। खाद्य सामग्री के लिए भी हमे भीख माँगनी पड़ती है। केवल खाद्यान्न के लिए भी ग्रामीण अर्थतन्त्र का अस्तित्व बना न रहा होता तो उस स्वतन्त्रता के बीच भी, हम कहीं के न रहे होते। ग्रामीण इकाइयों की पद्धति को प्रभावी बना कर ही हम सही अर्थ मे स्वातन्त्र्य का अस्तित्व सुरक्षित रख पाएँगे। गाँवों के बने रहने से ही हम बन पाए हैं और सुखी भी हुए हैं। इस बात को डॉ. आम्बेडकर ने भी स्वीकार किया है। आज हम अपनी इच्छित वस्तु भी पैदा नहीं कर पाते हैं। गाँवों में जो सम्पति थी उसे या तो छीन ली गई है, या भूमि के साथ पशुसम्पदा के रूप में जो सम्पत्ति थी उसकी गुणवत्ता कम हुई है या नष्ट हुई है। भूमि लगभग बंजर बन गई है। ऐसा क्यों हुआ। भुमि को उपजाऊ बननेवाली खाद, हड्डियाँ आदि रूप में रही खाद, विदेश व्यापार के नाम पर निर्यात होती थी। पूर्व में प्राणियों की अस्थियां आदि खेतों में रहने दी जाती थी। (पशु वहीं गाड़े जाते थे)। उसे वहीं सड़ने दिया जाता था। इससे भूमि के सेन्द्रिय तत्त्व और उसका उपजाऊपन सुरक्षित रहता था। लार्ड लिनलिथगो का आगमन हुआ और उन्होंने बैलों के उत्तम पालनपोषण के लिए प्रभावी प्रयोग आरम्भ किए, जो एक वर्ष तक चलते रहे। परन्तु युद्ध के समय क्या हुआ। सेना के लिए, ब्रिटिश साम्राज्य की सुरक्षा के लिए, देश के उत्तम 'पशुओं' को मार दिया गया। डॉ. आम्बेडकर कहते हैं कि ग्रामीण लोगों एवं ग्राम जनसत्ताओं ने देश की सुरक्षा में भाग नहीं लिया तब मैं उनसे पूछता हूँ कि क्या हमारे असहयोग आन्दोलन के इतिहास का

उन्होने अध्ययन किया है ? यदि अध्ययन किया हो तो उन्हें जानकारी होगी कि गाँव ही देश को स्वाधीनता दिलवा पाएँगे यह सोचते हुए बडप्पन छोड़कर गाँवों में कार्यरत हुए हमारे समर्थ नेताओ की प्रत्येक ललकार को ग्रामीण प्रजाजनों ने उत्तम प्रतिसाद दिया था। स्वाधीनता के आन्दोलन में ग्रामजनो ने अति महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। यह कहना उनका अपमान है कि गाँव के लोगों ने एवं ग्राम प्रजासत्ता केन्द्रों ने कुछ भी नहीं किया है या उन्होने देश का विनाश किया है। वास्तव में इससे विपरीत हुआ था। देश की जनसंख्या का ९० प्रतिशत हिस्सा गाँवों में रहता है। उन गाँवो का ब्रिटिश शासन के केन्द्रों ने विनाश किया और समग्र भारत की स्थिति, उनकी आवश्यकताओं के सन्दर्भ में भिखारी जैसी बना दी थी। केन्द्र की इस गतिविधि मे हम शामिल नहीं थे, दूसरे ही कुछ लोग थे। उनके उद्देश्य भिन्न थे। आज संचालन मे प्रजा सिरमौर है तब स्थिति मे परिवर्तन लाया जा सकता है। मैं तो कहूँगा कि देश की आर्थिक स्थिति में सुधार लाना हो और लोगों को यदि सुखी देखना हो तो केवल विचारधारा के रूप में ही नहीं, व्यावहारिक दृष्टिकोण से भी प्राचीन आधारभूमि पर ही ग्राम संगठनों की संरचना करनी होगी। पुराने समय में जिस आधार पर ग्राम पंचायतें कार्य करती थीं उसी पुरानी आधारभूमि पर ग्राम पंचायतों का गठन करना चाहिए, और इस प्रकार देश के अर्थतंत्र का विकेन्द्रीकरण करना चाहिए। विश्व में आज जो स्थिति बनी है उसमें भीमकाय उद्योगों की उपेक्षा हम नहीं कर सकते, फिर भी यथासम्भव देश के अर्थतन्त्र का शीघ्र ही विकेन्द्रीकरण करना चाहिए। जितनी तेजी से यह करेंगे, इस बात के प्रति जितनी शीघ्रता से ध्यान देंगे उतना ही हमारे लिए उत्तम होगा। संविधान के मुख्यभाग में इसका उल्लेख नहीं है, और ग्राम पंचायतों को केन्द्र की इकाई बनानेवाली संविधान की कोई प्रभावी भूमिका नहीं है। परन्तु मार्गदर्शक सिद्धांतो में प्रावधान किया गया है कि अधिक से अधिक अधिकार देकर ग्राम पंचायतों की रचना करनी चाहिए। नेताओं से मेरा नम्र निवेदन है कि यह बात इतनी तेजी से क्रियान्वित करनी चाहिए, मानो इसका प्रावधान संविधान के मुख्यभाग में ही हुआ है। ऐसा होने के बाद ही हम वास्तविक अर्थों मे स्वाधीनता का अनुभव कर पाएँगे।

श्री अलादी कृष्णास्वामी अय्यर (मद्रास : सामान्य)

... व्यापक मताधिकार का स्वीकार करने के लिए सदन अभिनन्दन का अधिकारी है। यह कहा जा सकता है कि विश्व के इतिहास में इससे पूर्व इतने साहसपूर्वक ऐसा प्रयोग नहीं किया गया है। व्यापक मताधिकार का केवल एक विकल्प

ग्राम समाज या स्थानीय संस्थाओं के आधार पर परोक्ष चुनाव करने का था। उनके मतदाता-मंडल बनाना और वे मतदाता मंडल व्यापक मताधिकार के आधार पर निर्वाचित हों ऐसा प्रावधान सोचा गया था। परन्तु वह व्यावहारिक प्रतीत नहीं होता है।

श्री बलवन्तसिंह मेहता (राजस्थान के संयुक्त राज्य)

... अन्य कुछ लोगों ने आक्षेप किया है कि हमने अपनी प्राचीन एवं ऐतिहासिक संस्थाओं के साथ एकसूत्रता नहीं बनाए रखी। परन्तु ऐसे आलोचकों से मेरा विनम्रतापूर्वक निवेदन है कि आज हमारे प्राचीन राजनीति तन्त्र का एक धुंधला और अधूरा चित्र ही हमारे सामने है इसे भी हम स्मरण में रखें। सत्य यह है कि उसकी क्षीणसी रूपरेखा भी हम नहीं जान सकते हैं। ऐसा होते हुए भी हमारी ऐतिहासिक परम्पराओं के कई तत्त्वों का समावेश किया गया है। इसके द्वारा हमारी सभ्यता को उचित सुरक्षा प्राप्त होगी।

परन्तु एक बात आत्यन्तिक रूप से हानिकारक प्रतीत होती है जिसको मैं स्वीकार करता हूँ। इस सन्दर्भ में भी गाँधीजी के आदर्शों को यदि समाविष्ट किया गया होता तो वह आदर्श संविधान बन पाता, एक एसा संविधान जो विश्व की प्रजा एवं राष्ट्रों के लिए उदाहरण रूप और सन्देश देनेवाला होता। आज विश्व उथलपुथल एवं विसंगतियों से पीड़ित है। इस दु:खदायी स्थिति से मुक्ति पाने के लिये विश्व के सारे राष्ट्र हमारे भारत की ओर दृष्टि लगाए बैठे है। इसलिए मैं केवल इतना ही कहना चाहता हूँ कि हमारे संविधान मे गाँधीविचार और विशेषरूप से उनके आर्थिक आयोजन तथा सामाजिक आदर्शो को यदि समाविष्ट किया गया होता तो वह सम्बन्धित प्रत्येक व्यक्ति के लिए हितकारी होता। उसकी उपेक्षा के लिए खेद होता है, तो भी मुझे लगता है कि राष्ट्र ज्यों ज्यों आगे बढता जाता है त्यों त्यों संविधान में भी परिवर्तन आता है।

... जन सामान्य के लिए तो अन्न, वस्त्र, आश्रयस्थान और शिक्षा प्राप्त हो तभी स्वाधीनता एवं संविधान सार्थक सिद्ध हो सकता है। संविधान में ऐसा कुछ भी स्पष्ट शब्दों में समाविष्ट नहीं किया गया है, फिर भी उन्हें ये सभी प्राप्त हो और उनकी आपत्तियाँ शीघ्रता से दूर हों इस प्रकार के संविधान को हम कार्यान्वित कर सकते है। परन्तु उसमें (संविधान में) समाविष्ट महात्मा गाँधी के आदर्शो का अनुसरण करने से ही वह हो पाएगा। ऐसा करने के लिए व्यय में भी कटौती करनी पड़ेगी। चोटी पर बैठे लोगों का जीवनस्तर नीचे लाना पड़ेगा और नीचेवाले लोगों का स्तर ऊँचा उठाना पडेगा। हमारा प्रशासन तंत्र बहुत अधिक व्ययशील बनता जा रहा है। मुझे लगता है

ब्रिटिश राज का यह प्रभाव है। हमारी संवैधानिक पद्धति भी अधिक व्ययशील बनेगी क्योंकि प्रवर्तमान ढाँचा ही अत्यधिक व्ययकारी है। इस विषय में संशोधन करने के प्रति यदि ध्यान दिया होता तो अच्छा रहता। अब उन लोगों के लिए लाभदायक हो ऐसा आकार देने का दायित्व भी तन्त्र का ही है।

श्री नन्दकिशोर दास (उडिसा : सामान्य)

... यह स्वीकार करना ही चाहिए कि हमारा संविधान लिखित संविधानों में सर्वश्रेष्ठ होते हुए भी देश में अपेक्षित उत्साह उत्पन्न करने में विफल रहा है। साथ ही संविधान के उत्साहपूर्ण प्रशंसकों के मन में भी यह सन्देह बना हुआ है कि कहीं पर कुछ अनुचित हुआ है, और जिस दिशा में गति होनी चाहिए थी उस दिशा में नहीं हुई है। कुछ मित्र इस बात से असन्तुष्ट हैं कि संविधान सैद्धांतिक रूप से गाँधीवादी नहीं है, और इस बात को लेकर वे अत्यन्त निराशा का अनुभव कर रहे हैं... गाँधीवादी संविधान केवल यांत्रिक प्रक्रिया के द्वारा नहीं रचा जा सकता। इन आदर्शों के साथ सुसंगत रहकर सावधानीपूर्वक समाज के दृढ़ संगठन में दृढ़ श्रद्धा एवं संकल्प उत्पन्न होना चाहिए। समग्र देश में ऐसा दृढ संकल्प दिखाई नहीं देता। इसलिए गाँधीवादी मस्तिष्क के बिना गाँधीवादी संविधान की रचना करने का कोई प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता। गाँधीजी ने अपने जीवनकाल में निरन्तर सत्ता के विकेन्द्रीकरण पर ही बल दिया था, परन्तु हमारा संविधान उलटी राह पर अर्थात् अधिकाधिक केन्द्रीकरण की ओर मुडा है।

सरदार सोचेत सिंह (पटियाला एवं पूर्व पंजाव संघ)

... केवल नारों एवं निरर्थक सूत्रों की संतुष्टि के लिए अत्यधिक केन्द्रीकरण का वैभव हमें अनुकूल नहीं होगा...

श्री टी. जे. एम विल्सन (मद्रास : सामान्य)

देश के प्रत्यक्ष शासन में व्यक्ति की परिणामकारी साझेदारी ही जनतंत्र का सारतत्त्व है। सरकार में व्यक्ति की साझेदारी जितनी अधिक एवं प्रभावी होगी, संविधान उतना ही महान होगा, क्योंकि जनतंत्र अभी केवल एक वैचारिक धरातल पर है और मानवसमाज को अभी उसे प्राप्त करना है। संविधान में अगर प्रावधान हुआ होता तो विकेन्द्रीकरण इस दिशा में कुछ कर पाया होता।

... कुछ सदस्यों ने ग्राम पंचायतों का उल्लेख किया। वे भारत के ऐसे स्वायत्त

सामाजिक समूह थे जिनमें कृषि एवं हाथनुबाई के उद्योगों का समावेश था। उन्होने आक्रमण एवं जयपराजय की शताब्दियो में अपना अस्तित्व बनाए रखा था। उन्हे ब्रिटिश साम्राज्यवाद ने पूर्णरूप से नष्ट कर दिया था। उनकी श्रेष्ठतम उपलब्धियों के सम्बन्ध में सन् १९३४ में, गवर्नर जनरल ने रिपोर्ट दी थी, 'हाथकरघे के बुनकरों की हड्डियों से भारत के मैदान बिलकुल सफेद हो गए हैं।' पंचायतों को परिपूर्ण एवं शाश्वत माननेवालों में से नहीं हूँ। मैं केवल इतना ही कहना चाहता हूँ कि भारतीय समाज के प्रकृतिप्रदत्त एवं जन्मजात आयामों से संकेत लेकर सदन ने कुछ इस तरह की रचना करनी चाहिए थी, जो व्यक्ति को सरकार में प्रभावीरूप से साझेदार बनने के लिए सक्षम बनाए और सत्ता चोटी से नीचे की ओर नहीं अपितु मूल से चोटी की ओर जाए। कई सदस्य मानते हैं कि शक्ति केन्द्रीकरण में और सुदृढ केन्द्र में स्थित है। ऐसा होते हुए भी व्यक्ति की साझेदारी के लिए मेरा निवेदन है कि केवल जनतन्त्र के हित में ही वह आवश्यक है इसलिए नहीं अपितु मैं अनुभव करता हूँ कि केवल उसके आधार पर ही केन्द्र को बलवान एवं प्रभावी बनाया जा सकता है। मैं पुन: एक बार दोहराता हूँ कि सभी दृष्टि से जागरूक एवं प्रभावशाली समाज अधिक बलवान और अधिक प्रभावी होता है। जनतन्त्र की निर्बलता के सम्बन्ध में रूढिगत बातें अर्थहीन हैं।'

श्री कमलापति त्रिपाठी (संयुक्त प्रान्त: सामान्य)

... संविधान की पहली आधारभूत न्यूनता यह है कि वह अति केन्द्राभिमुखी है। मेरा मानना है कि जिस प्रकार का राज्य प्रशासन हम संविधान के द्वारा दे रहे हैं उसमें सारी सत्ताएँ और अधिकार केन्द्र के हाथ में रहेंगे। मुझे इस प्रकार का केन्द्रीकरण हानिकारक और भयोत्पादक प्रतीत होता है। मुझे लगता है कि ऐसा केन्द्रीकरण हानिकारक प्रवृत्तियां अवश्य उत्पन्न करेगा। साथ ही जिस नेता के पथप्रदर्शन में सौभाग्य से हम पिछले तीस वर्षों से चलते रहे हैं उन्होंने एक दृष्टि और विचारधारा हमें प्रदान की है। बापूने कहा था कि केन्द्रीकरण प्रजा की राजनीतिक एवं आर्थिक स्वाधीनता छीन लेता है। वे सही थे। ऐसी नई दृष्टि और नया विचार उन्होंने हमें दिया था। वे कहते थे कि प्रभावी जनतंत्र चोटी से नहीं अपितु मूल से ऊपर उठता है। सत्ता और अधिकार चोटी पर केन्द्रित नहीं करने के बजाय समाज के नीचले स्तर पर निवास करनेवाले सुदूर के समाज में वितरित करना चाहिये। उसी रूप से वास्तविक अर्थों में जनतंत्र की स्थापना की जा सकती है और लोग स्वाधीनता का आनन्द उठा सकते हैं। हम जो व्यवस्था प्रस्थापित करने जा रहे हैं उसका मस्तक नीचे की ओर है। जड़ें

आसमान में हों और डाली-पत्ते भूमि पर छाये हुए हों इस प्रकार से वृक्ष बोया जा रहा है। परन्तु राजनीतिक क्षेत्र में अधोमुखी ढाँचा सही जनतन्त्र के निर्माण का उपकरण नहीं बन सकता। केन्द्रीकरण वर्तमान समय का भयानक अभिशाप है। उत्पादन के केन्द्रीकरण ने पूँजीवाद को जन्म दिया और उसने समग्र विश्व मे आर्थिक स्वतंत्रता को समाप्त कर दिया। राजनीतिक क्षेत्र में फ्रांस की राजनीतिक क्रान्ति के पश्चात् जो तन्त्र अस्तित्व में आया वह भी केन्द्रस्थ प्रकार के शासनों की स्थापना तथा सत्ता एवं केन्द्रीकरण के साथ विलुप्त हो गया। आज के रूस को देखने से प्रतीत होगा कि वहाँ विश्व का सब से बड़ा जनतन्त्र प्रस्थापित करने का दावा किया गया है फिर भी वह वास्तव में जनतन्त्र का समादर नहीं कर पाया है। इसका कारण यही है कि केन्द्ररूपी भयानक राक्षस लोगों पर अधिकार प्रस्थापित करके उनके व्यक्तित्व एवं स्वाधीनता को कुचल रहा है। इतना याद रखें कि भारत में अगर केन्द्रीकरण को लाएँगे तो अधिकारों की सुरक्षा केन्द्र द्वारा होगी। यह भाव उत्पन्न होगा और अन्त में निष्कर्ष वह होगा जो केन्द्र को अधिकाधिक शक्ति और सत्ता देगा। सब जानते हैं कि केन्द्र के हाथ में प्रभावी सत्ता का आधार सैन्यशक्ति होता है, और सैन्य के सामर्थ्य के प्रति ध्यान केन्द्रित करने का अर्थ लोगों के अधिकारों को पूर्णतः निर्मूल करने का मार्ग खुला करना ही होगा। यह एक ऐतिहासिक सत्य है। हमारे संविधान में यह भय अपने आप ही निहित है। केन्द्रस्थ सरकार के लिए परिस्थिति ने हमें विवश किया होगा, परन्तु भय सामने ही खड़ा है इसके प्रति ध्यान देना चाहिए। ऐसी प्रत्यक्ष समझ को लेकर ही गाँधीजी ने केन्द्रीकरण का विरोध करना सिखाया था। उन्होंने कहा था कि उत्पादन के उपकरण विकेन्द्रित हों ऐसा जनतन्त्र प्रस्थापित करना चाहिए। ऐसी आधारभूमि पर खड़ी समाजरचना भी विकेन्द्रित प्रकार की होनी चाहिए और ऐसे समाज की सरकार भी विकेन्द्रित स्वरूप की होनी चाहिए। अधिकार नीचे से ऊपर की ओर क्रमिक रूप से जाने चाहिए और व्यक्तियों के द्वारा दिये जानेवाले अधिकारों का ही उपयोग सरकार को करना चाहिए। यह जनसामान्य का संविधान है, सामान्य व्यक्ति का संविधान है ऐसा हमें कहा गया है। कहा गया है कि सत्ता लोगों में व्याप्त है। फिर भी उसमें सत्ता चोटी पर केन्द्रित हुई है। आप सबको इसके प्रति ध्यान देना चाहिए।

इसके उपरांत मुझे यह भी अनुभव होता है कि इस संविधान में कुछ भी भारतीय नहीं है। केवल समय की माँग को ध्यान में रखकर, उसकी माँग पूरी क़रने के लिए ही संविधान की रचना हुई है।

मुझे दूसरा दुःख इस बात का है कि हमने विशेष रूप से विदेशों के संविधानों

से ही प्रेरणा ली है... हमने भारत के ऐतिहासिक सत्य एवं संस्कृति की ओर दृष्टि तक करने का कष्ट नहीं किया है। जीवन के प्रति भारतीय अभिगम पर भी विचार नहीं किया है। संविधान को स्वीकार करते समय हमने इतिहास जिसका साक्षी है ऐसे अपने विश्व के प्राचीनतम और इतिहास में गरिमामय स्थान पर प्रतिष्ठित महान देश ने राजनीतिक क्षेत्र में किये भव्य एवं गौरवशाली प्रयोगों के प्रति ध्यान ही नहीं दिया है। उसकी घोर उपेक्षा ही की है ...

श्री दीप नारायण सिन्हा (बिहार : सामान्य)

... अब, संविधान के सम्बन्ध मे सामान्य व्यक्ति के दृष्टिकोण से कुछ कहना चाहता हूँ। ग्रामीण क्षेत्र का सामान्य मनुष्य संविधान के पृष्ठ पलटते समय उसका सौंदर्य देखना नहीं चाहेगा, या फिर उसकी गहराई में उतरने का प्रयास नहीं करेगा। वह तो इतना ही देखना चाहेगा कि सविधान उसे पोषणयुक्त आहार, वस्त्र, स्वास्थ्य एवं समुचित शिक्षा का विश्वास दिलाता है या नहीं। मैं आपना ध्यान केन्द्रित करना चाहता हूँ कि ग्रामीण प्रजा और सामान्य मनुष्य ऐसा कोई विश्वास संविधान में खोज नहीं पाएगा... मेरे सहित सभी लोग जानते हैं कि भारत गाँवों का देश है और हमारी प्रजा गाँवो मे निवास करती है। मैं कह सकता हूँ कि विश्व के अनेक देशों में आज नगरों का आधिक्य है, परन्तु मेरा भारत गाँवों का देश है। हमारी सभ्यता और संस्कृति ग्रामीण है और उसमें से कुछ बच पाया है वह गाँवों के कारण है। संविधान में गाँवों को प्रभावी स्थान देने की बात तो दूर, उन्हें किसी प्रकार का स्थान ही नहीं दिया गया है। एक छोटी सी पंक्ति में ग्राम पंचायतों का उल्लेख मैंनें देखा है। उसमें सामान्य से निर्देश को छोड़ और कुछ भी नहीं है। हमारे गाँव का भविष्य में कैसा स्वरूप बन पाएगा और वे कैसा स्थान प्राप्त करेंगे इस विषय में हमारा संविधान मौन है। संविधान में प्रशासकीय तंत्र और समाज का जो चित्र खींचा गया है उसमें गाँवों को कोई स्थान नहीं है। मैं चाहता था कि प्रशासन एवं अन्य बातों में गाँवों को सर्वोत्कृष्ट स्थान प्राप्त हो, परन्तु हमारे संविधान में ऐसा प्रावधान नहीं है। मैं इसे बड़ी गलती मानता हूँ। ऐसा इसलिए हुआ है कि उसके लिए पर्याप्त रूप से सोचा ही नहीं गया है, ऐसा मेरा मत है। हमारा देश कल्पनातीत प्रगति करे, इस भूमि पर तत्काल सुख और शान्ति का साम्राज्य प्रस्थापित हो यही अगर हम चाहते हैं तो सभी बातों में गाँवों को सर्वोच स्थान देना ही पड़ेगा। हमें सभी प्रशासनिक एवं अन्य योजनाएँ ग्राम पर आधारित करनी पडेंगी ऐसा यदि नहीं करेंगे तो हमारे दुःखदायी इतिहास में नया अध्याय ही जुडेगा।

संविधान को कार्यान्वित करते समय इस गलती पर हम ध्यान दें। मैं चाहता हूँ कि गाँवों की आधारभूमि पर राष्ट्रनिर्माण की योजनाएँ बनाई जाएँ।

श्री व्रजेश्वर प्रसाद (विहार : सामान्य)

'... विकेन्द्रीकरण के सिद्धांत का सार है राज्य के प्रति पूरा अविश्वास। बाकुनिन और प्रिन्स क्रोपोट्कीन ने इस सिद्धांत का समर्थन किया था कि राज्य एक दूषण है। उसकी नीव में हिंसा है और इसलिए मानवजीवन में जो उत्तम और श्रेष्ठ बातें है उसके प्रति उसे शत्रुता है। वही श्रेष्ठ राज्य है जो सब से कम शासन करता है। मैं सदन के सदस्यों से पूछता चाहता हूँ कि क्या वे इन अवधारणाओं पर आधारित राज्य की रचना करने जा रहे हैं ?

महात्मा गाँधी विकेन्द्रीकरण के पक्षघर थे। उनके विकेन्द्रीकरण के सिद्धांत के साथ 'रामराज्य' का प्रगाढ़ सम्बन्ध था... केवल अहिंसक समाज में ही सभी हिंसक तत्त्वों को दूर करने से विकेन्द्रीकरण का लक्ष्य प्राप्त हो सकेगा। जहाँ तक युद्धपिपासु राष्ट्रों का अस्तित्व बना हुआ है तब तक विकेन्द्रीकरण का हम विचार भी नहीं कर सकेंगे। जब तक आर्थिक असमानता है तब तक विकेन्द्रीकरण का लक्ष्य हमारी पकड़ में नहीं आएगा। राज्य की समाप्ति के पश्चात् ही विकेन्द्रित समाज की संरचना हो सकेगी। जब तक सेनावाद है तब तक किसी भी रूप में विकेन्द्रीकरण की सम्भावना नहीं है।

श्री वसंतकुमार दास (पं. बंगाल : सामान्य)

ऐसी आलोचना हुई है कि जनतन्त्र का स्वरूप अधिक प्रभावशाली एवं यथार्थ बनाने के लिए सूचित मतदान की पद्धति मे समुचित परिवर्तन करते हुए सरकार का गठन ग्राम पंचायतों की आधारशिला पर उनकी इकाई बनाकर करना चाहिए। मुझे स्वीकार करना पड़ेगा कि विकेन्द्रित सरकार के उद्देश्य के लिए ऐसा क्रान्तिकारी परिवर्तन हम नहीं कर सके हैं। अहिंसा और सत्य के महान उद्घोषक के उपदेश के पश्चात् भी हम अपने जीवन, विचार एवं राजनीति को विकेन्द्रित पद्धति में अपना प्रारूप पाने के लिए उसे आध्यात्मिक नहीं बना पाए हैं, परन्तु क्रान्ति अभी आनेवाली है और जब कभी वह आएगी तब हमें संविधान में परिवर्तन करना पड़ेगा।

श्रीमती जी. दुर्गाबाई (मद्रास : सामान्य)

...परन्तु हमारा संविधान एक एसा संविधान है जो न तो समाजवादी है न ही

साम्यवादी। वास्तव मे वह पंचायत राज्य का संविधान भी नहीं है। यह जनसामान्य का संविधान है - एक ऐसा संविधान जो भारत के जनसामान्य को, अपनी संकल्पना के अनुसार, देश को समृद्ध और सुखी बनाने में सक्षम ऐसे समाजवाद या अन्य किसी 'वाद' के प्रयोग करने के लिए स्वतंत्रता एवं पर्याप्त अवसर देता है। संविधान के रचयिताओं ने अपना राजनीतिक दर्शन संविधान में प्रविष्ट किया होता तो ठीक नहीं होता। मेरे मतानुसार उन्होंने समुचित ढग से संविधान की रचना की है। एक शतप्रतिशत सामान्य जन के संविधान की रचना कर उसे उन्हीं पर छोड़ दिया है।

श्री सतीशचन्द्र सामंत (पश्चिम बंगाल : सामान्य)

... मैं व्यापक मताधिकार के लिए दो शब्द कहना चाहता हूँ। एक ग्रामवासी और सामान्य मनुष्य के रूप में मैं ग्रामीण लोगों की कमियों को जानता हूँ। उन्हें अपने आपको पहचानने का अवसर जब तक नहीं देंगे तक तब वे खड़े नहीं होंगे। वे अच्छे मनुष्य हैं और अभी भी गाँवों में अच्छे मनुष्य रहते हैं। अगर उन्हें वास्तविक दायित्व सौंपा जाए तो वे अपनी योग्यता अवश्य सिद्ध करेंगे और इस संविधान को उचित रूप से कार्यान्वित करेंगे।

ग्राम पंचायतो को मूल अधिकारों में समाविष्ट करने का एक संशोधन मैंने प्रस्तुत किया था। पर उसे मार्गदर्शक सिद्धांतो में समाविष्ट किया गया है। मार्गदर्शक सिद्धांतो के प्रावधानानुसार उचित रूप से यदि ग्रामपंचायतों का गठन होता है तो महात्मा गाँधी की इच्छा को परिपूर्ण किया जा सकता है। संविधान में ऐसी कई धाराएँ हैं जो राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी के आदर्शों को पूरा करती हैं। ये आदर्श पूर्ण होने चाहिए।

श्री ओ. पी. अलगेसन (मद्रास : सामान्य)

... एक ऐसी आलोचना हुई है कि गाँव को राजनीतिक इकाई के रूप में मान्यता नहीं दी गई है। मुझे भय है कि इस आलोचना के पीछे व्यापक मताधिकार के प्रति अविश्वास की झलक है। ग्रामीण इकाइयों की पद्धति की अवधारणा कुछ ऐसी थी कि ग्रामीण मतदाताओं को ग्राम पंचायतों का चुनाव करने के लिए कहा जाए, और ग्राम पंतायतों के (निर्वाचित) सदस्य ही विभिन्न विधायिकाओं के प्रान्तीय एवं केन्द्रीय चुनावों में भाग लें। परन्तु अब, स्वयं गाँव के मतदाता को ही, देश के सामने उपस्थित हुई समस्याओं का महत्त्व समझते हुए, अपने प्रतिनिधि को निर्वाचित करने के लिए निमंत्रित किया जाएगा। इस प्रकार चुनाव में वह सीधा भाग लेगा। मेरा दावा है कि

ग्रामीण इकाइयाँ मतदाता मंडल के परोक्ष चुनाव करें इसकी तुलना में यह प्रावधान अधिक प्रगतिशील है। यह कहा गया है कि नैसर्गिक शक्तियों की उद्घोषणा संविधान में नहीं है। मेरी समझ में नहीं आता कि इस आक्षेप का सही अर्थ क्या है ?

श्री रामचन्द्र उपाध्याय (राजस्थान के संयुक्त राज्य)

... मैं मानता हूँ कि सविधान के अन्तिम पठन के लिए छह महीने की समयावधि निश्चित की होती तो अच्छा होता। ... मेरे मतानुसार छह महीने के परिश्रम के पश्चात् हमारा संविधान आज की तुलना में अधिक परिपूर्ण होता।

श्री रामचन्द्र गुप्त (संयुक्त प्रान्त : सामान्य)

... मुझे ऐसी आलोचना से सन्तोष नहीं है कि केन्द्रीकरण कम और विकेन्द्रीकरण अधिक होना चाहिए। मैं इससे एक सीमा तक ही सहमत हो सकता हूँ, अधिक नहीं। एक सुदृढ केन्द्रीय सरकार समय की माँग है। मैं अपनी दृष्टि से अनुमान लगाता हूँ, और भविष्य भी हमें कहेगा कि यह केन्द्रीकरण एक आशीर्वाद है। अनेक युग, और हमारा इतिहास इस बात की साक्षी देते हैं कि भारत के सामने सबसे बड़ी समस्या अखंडता, दृढीकरण एवं ऐक्य थी। एकतन्त्रीय और उचित मात्रा में केन्द्रस्थ सरकार का स्वरूप देश की आवश्यकता के अनुरूप है। तो भी भविष्य में यदि कतिपय बातों में ग्रामीण इकाइयों को अधिक सत्ता प्रदान करने की बात अनुभव में आती है तो संविधान की धारा ३६८ में ऐसा संशोधन करने में और परिवर्तन करने में कोई कठिनाई नहीं आएगी।

श्री महावीर त्यागी (संयुक्त प्रान्त : सामान्य)

... परन्तु ग्रामजनों के दृष्टिकोण से देखने पर चित्र धुंधला एवं निराशाजनक है। ग्रामवासियों की समझ में आनेवाला कोई तर्क प्रस्तुत करने की स्थिति में नहीं हूँ कि २६ जनवरी, १९५० के पश्चात् उनकी स्थिति बेहतर होगी। इसमें ठोस ऐसा कुछ भी नहीं है जिसके द्वारा वह संविधान को भली भाँति समझ सके। क्योंकि हमने गाँव के लोगों को मत के सिवा और कुछ भी नहीं दिया है। और वह भी दो वर्ष के बाद। हमने उन्हें केवल इतना ही दिया है। इसलिए मेरा प्रस्ताव है कि हल चलानेवाले व्यक्ति को ही यदि संविधान बनाने को कहेंगे तभी वे उसे अपने अधिकार एवं स्वाधीनता का घोषणापत्रक मानेंगे। नहीं तो संविधान सर्वथा नीरस है। मुझे आशा है कि भारत की

भूमि इतनी बाँझ नही है कि वह ऐसे नेता को जन्म नहीं दे पाएगी जो संविधान को मुखरित करने के लिए उसके वर्तमान ढाँचे में प्राण फूंक सके... वह मुखरित हो सके ... यदि हम निम्नलिखित प्रावधान उसमें संलग्न करें ...

संविधान के प्रावधानों के अधीन रहकर कोई भी नागरिक अपने व्यक्तिगत उद्देश्य के लिए, सरकारी तिजोरी या व्यक्तिगत प्रयास से सामान्य वेतनधारी व्यक्ति से अधिक वेतन, लाभांश या भत्ते नहीं लेगा।

श्री एल. कृष्णस्वामी भारती (मद्रास : सामान्य)

... यह संविधान कतिपय विशेष एवं उत्तम लक्षणों से युक्त है, परन्तु गाँधीदर्शन के आधार पर यदि इसका मूल्यांकन करना हो तो वह अत्यन्त अपूर्ण है यह मैं स्वीकार करता हूँ। मेरा स्पष्ट अभिमत है कि गाँधी विचार के नींव के और मूलभूत सिद्धांतों के प्रति उसकी दृष्टि अधूरी, संदेहयुक्त और द्विधापूर्ण है।

...गाँधीजी ने जनतंत्र के विकेन्द्रीकरण की जो अवधारणा प्रस्तुत की थी उसे प्रभावी रूप से समाविष्ट नहीं किया गया है। ग्रामीण स्तर पर, जीवन की प्राथमिक आवश्यकताएँ - खाद्यान्न एवं वस्त्र के विषय में स्वायत्तता के विचार का सुचारु रूप से समावेश नहीं किया गया है।

श्री सारंगधर दास (उडिसा के राज्य)

...गाँधीजी की जनतन्त्रीय योजना के विषय पर बोलनेवाले कई आदरणीय सदस्यों के वक्तव्य की स्मृति ताजा हो उठती है। उन्होंने असन्तोष व्यक्त किया है कि गाँधीजी के सिद्धांतो से संविधान में कुछ भी नहीं लिया गया है। मै इस विषय में अधिक बोलना नहीं चाहता। परन्तु इतना कहूँगा कि हम एक स्वर से एक ऐसे समाज की रचना के सम्बन्ध में बात करते हैं जिसमें न कोई ऊँचा होगा न कोई नीचा। अर्थात् यथासम्भव उनकी आय समान होगी।

मैं अधिकांश मित्रों के साथ सहमत नहीं हूँ - विशेषकर प्राचीन हिन्दु राज्य प्रशासन में *प्रजातान्त्रिक शासनपद्धति अर्थात प्रजातन्त्र (स्वायत्त इकाइयाँ) के अस्तित्व* के सम्बन्ध में विस्तृत रूप से प्रस्तुतिकरण करनेवाले मित्रों के साथ मेरा तर्क है हि हमारे निम्न स्तरीय वर्ग, हमारे समाज की हलकी जातियाँ जिन्हें हम हरिजन कहते हैं उन्हें निरन्तर दलित एवं दबी हुई स्थिति में ही रखा, और उसके सहज परिणामस्वरूप जनतन्त्र उस समय था ही नहीं। जनतन्त्र था, प्रजासत्तात्मक था तो केवल उच्च वर्णों

में - जिसे आज ऊँची जाति कहते हैं उसमें ही था। संविधान के प्रति यदि इस दृष्टि से देखेंगे तो मुझे लगता है कि अस्पृश्यता निवारण और व्यापक मताधिकार जैसे दो अति श्रेष्ठ तत्त्वों को संविधान में समाविष्ट किया गया है।

श्री एल. एस. भटकर (मध्य प्रान्त एवं वराड : सामान्य)

...पुन: एक बार कहूँगा कि स्वीकृत होने को प्रस्तुत संविधान में किसान एवं श्रमिकों को अपेक्षित महत्त्व नहीं दिया गया है।

अगर उन्हें महत्त्व दिया गया होता तो समग्र भारत एक ही स्वर में संविधान के साथ होता। जब तक यह बात उसमें नहीं होगी तब तक भारत उसका सम्मान नहीं करेगा, क्योंकि संविधान केवल उन लोगों की रोजीरोटी को सुरक्षा प्रदान करेगा जिनके हाथो में सम्पन्नता है, ऐसे लोगों को नहीं जिनके हाथ खाली हैं।

८. भारत के संविधान में पंचायतों के स्थान के विषय में संविधान परामर्शदाता की टिप्पणी

मई १९४८

इस समय पंचायतो की अवधारणा को पाण्डुलिपि में सम्मिलित करने का कार्य कदाचित सरल नहीं है। मुझे लगता है कि संविधान की धारा ६९(५) (ए) और १४९(१) में, संविधान सभा द्वारा किये गए निर्णय के अनुसार, केन्द्र एवं राज्यों की इकाइयों के लिए (राज्यों के) नीचले सदनो के प्रत्यक्ष चुनाव का प्रावधान है। पंचायत योजना की आवश्यकता के अनुसार परोक्ष चुनाव का प्रावधान यदि करना है तो सर्वप्रथम इन दोनों निर्णयों (दोनों धाराओं) को बदलना पड़ेगा। मैं नहीं जानता यह कितना व्यावहारिक है। विश्व के सभी प्रमुख समवायतंत्र और संघ राज्यों में नीचले सदन का सीधा चुनाव होता है। अमेरिका के संयुक्त राज्यों में ऊपरी सदन अर्थात् 'सिनेट' का चुनाव पहले परोक्ष रूप से होता था, परन्तु अब (१९३९ से) उसका चुनाव भी सीधा होता है।

इस प्रकार विश्व अभिमत स्पष्ट रूप से प्रत्यक्ष चुनाव के पक्ष में है। इसलिए संविधान सभा द्वारा जो प्रत्यक्ष चुनाव का निर्णय लिया गया है उसे बदलना अर्थात् परोक्ष चुनाव का प्रबन्ध करना सरल नहीं है। इसलिए, सब से अच्छा उपाय यह हो सकता है कि दोनों में से किसी एक को अपनाने की स्वीकृति दी जाए। साथ ही किसी विशेष परिस्थिति में अपनाने के लिये निश्चित पद्धति का निर्णय आधिकारिक विधायिका पर छोड़ने का प्रावधान संविधान में किया जाए। इस विचार से मैंने इस प्रकार का संशोधन प्रारूप तैयार किया है -

धारा ६७(५)(ए) में 'मतदाता द्वारा प्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित' और धारा १४९(१) में 'प्रत्यक्ष चुनाव से निर्वाचित' इन शब्दों के स्थान पर 'प्रत्यक्ष मतदाताओं के द्वारा या मतदाता द्वारा निर्वाचित व्यक्तियों के द्वारा निर्वाचित' ऐसे शब्दों को रखा जाए।

इस संशोधन के अन्तर्गत केन्द्र की विधायिकाओं को धारा २९० के तहत और प्रान्त-राज्य की इकाइयों से बनी विधायिकाओं को धारा २९१ के तहत क्रमश: केन्द्र एवं इकाई विधायिकाओं का चुनाव प्रत्यक्ष या परोक्ष पद्धति से निश्चित करना होगा।

यदि पंचायत योजना को अपनाना है तो प्रत्येक प्रान्त एवं देसी रियासतों के लिए नगरों के लिए सानुकूल परिवर्तनों के साथ सुविचारित एवं विस्तृत आयोजन करना पड़ेगा। इसमें बहुत समय व्यतीत होगा और संविधान को पारित करने में विलम्ब होगा। संविधान स्वीकृत हो जाने के पश्चात् बनाये जाने वाले पूरक कानून इन प्रावधानों पर विचार करेंगे यह अधिक उचित प्रतीत होता है।

मैं इस बात पर भी पूर्ण रूप से सहमत हूँ कि विधानसभा सदस्यों की भी आवश्यक पात्रता होनी चाहिए, परन्तु निश्चित रूप से इन पात्रताओ का निरूपण करने के सम्बन्ध में कुछ कठिनाइयाँ हैं। प्रत्याशियों के लिए शिक्षा की योग्यता निर्धारित करने का कार्य अत्यन्त सरल है, परन्तु वे आवश्यक या अपेक्षित हैं ऐसा नहीं लगता। सामाजिक सेवा, चारित्र्य, संन्यासी जैसी जीवनदृष्टि आदि बातें निश्चित शब्दों में पारिभाषित नहीं हो सकतीं। संविधान की पाण्डुलिपि के अन्तर्गत, इस सन्दर्भ में धारा २९० और २९१ में पात्रता और धारा ८३(१)(ई) के अन्तर्गत अपात्रता निर्धारित करने का दायित्व सम्बन्धित विधानसदनों के पास रहेगा।

हमारे संविधान द्वारा गाँवों से आरम्भ करते हुए ऊपर की ओर प्रान्त एवं केन्द्र तक की रचना करनी चाहिए इस प्रस्ताव के सम्बन्ध में भी मैंने सोचा है। इसका ठीक अर्थ क्या होगा इस दृष्टि से हमें विश्लेषण करना चाहिये। संविधान का सम्बन्ध सरकार के अंग-कार्यकारिणी, विधायिका, न्यायपालिका के साथ होता है और विभिन्न स्तर पर उनके बीच आपसी सम्बन्ध होते हैं। समवायी संविधान मे सामान्य रूप में, परन्तु निरपवाद रूप में नहीं, केन्द्र और घटकों के साथ काम करना होता है। उदाहरणत: केनेडा और दक्षिण आफ्रिका के संविधानो में केन्द्र और प्रान्त हैं, परन्तु अमेरिका के संयुक्त राज्यों (U.S A.) और ऑस्ट्रेलिया के संविधान प्रमुख रूप से केन्द्र पर बल देते हैं और राज्यों के ढाँचे के साथ उनका कदाचित ही कोई सम्बन्ध होता है।

यह भी सूचित किया गया है भारत के संविधान के द्वारा केवल केन्द्र और घटकों के ढाँचे का ही विचार नहीं करना चाहिए अपितु गाँवों तक जाना चाहिए। दूसरे शब्दों में, भारत के संविधान को केवल केन्द्र और प्रान्तों की कार्यकारिणी तथा न्यायपालिका जैसे अंगों की ही रचना नहीं करनी है, अपितु, जिले, उपप्रभाग, 'थाने', 'चौकीदार' एवं गाँवों के लिए भी इस प्रकार के अंगों की रचना करनी है।

उदाहरण के लिये हम क्या संविधान में जिला कार्यकारिणी, जिला विधानमंडल, एवं जिला न्यायपालिका का स्पष्ट और विस्तृत रूप से निर्देश करेंगे ? इस समय हमारे यहाँ जिले का विधानमंडल नहीं है परन्तु कुछ बातों के लिए उपकानून बनाने की सीमित सत्ता से युक्त जिला बोर्ड, नगरपालिका बोर्ड जैसी कुछ संस्थाएँ हैं। जिले की कार्यकारिणी को आन्तरिक राजस्व धारा या नियम और पुलिस आदि से सम्बन्धित अधिकार हैं, जिला न्यायपालिका के लिए नागरिक न्याय कानून, फौजदारी कार्यवाही अधिनियम आदि का प्रावधान है। क्या ये और ऐसे प्रावधानों का समावेश संविधान मे करने के लिए सूचित किया जा रहा है ? मुझे भय है कि केवल जिलों के स्तर पर नहीं अपितु ग्रामीण स्तर तक भी ऐसा होगा तो संविधान असाधारण रूप से विस्तृत हो जायेगा और वर्तमान मे उससे भी अधिक जकडनयुक्त हो जायेगा। मुझे लगता है पंचायतें, और उसके जैसी अन्य संस्थाएँ, प्रान्तीय और केन्द्रीय विधानपरिषदों के लिए मतदाता मंडलों के रूप में कार्य करें इस रूप में उसकी रचना करना कदाचित उपयुक्त होते हुए भी उन्हें या अन्य संस्थाओं को, उसी स्तर पर निश्चित प्रशासनिक, कानूनी या न्यायिक क्रियान्वयन का अधिकार संविधान के प्रावधान द्वारा प्रदान करने का कदम अव्यावहारिक सिद्ध होगा।

९. स्वतंत्र भारत के संविधान के हेतु एवं उद्देश्यों का प्रस्ताव

२२ जनवरी १९४७ को संविधान सभा द्वारा स्वीकृत

इसके साथ, यह संविधान सभा दृढता एवं गम्भीरतापूर्वक भारत को स्वतंत्र सार्वभौम प्रजासत्ताक घोषित करती है और उसके भावि शासन के लिए संविधान की रचना करने का भी निर्णय करती है...

जिसके अन्तर्गत जो प्रदेश इस समय ब्रिटिश भारत के अन्तर्गत हैं, जो प्रदेश देसी रियासतों के रूप में हैं और भारत के अन्य ऐसे प्रदेश जो ब्रिटिश भारत के दायरे के बाहर हैं तथा स्वतंत्र सार्वभौम भारत में समाविष्ट होना चाहते हैं वे सब मिलकर एक संघ बनेंगे, और

जिसमें उनकी प्रवर्तमान सीमाएँ या संविधान सभा इसके पश्चात् संविधान के नियमों के अनुसार तय करेगी ऐसी सीमाओं के साथ उपर्युक्त प्रदेश तथा शेष सत्ताओं समेत स्वायत्त इकाइयों का स्थान बना रहेगा और वे उसे बनाए रख सकेंगे। संघ राज्य में समाविष्ट या निर्दिष्ट ऐसी सभी सत्ताएँ और कार्य या संघ राज्य की जन्मजात या निहित या उसमें से उत्पन्न होनेवाले शासन और प्रशासन के अधिकारों का उपयोग कर सकेंगे; और

जिसमें सार्वभौम स्वतंत्र भारत की सभी सत्ताएँ और अधिकार, उसके घटक और सरकारी विभाग प्रजा से प्राप्त होंगे; और

जिसमें कानून तथा सार्वजनिक नीतिमत्ता के अधीन रहते हुए भारत के सभी लोगों को सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक न्याय; प्रतिष्ठा, अवसरों और कानून के समक्ष समानता; विचार अभिव्यक्ति, मान्यता, आस्था, पूजापद्धति, व्यवसाय, संगठनों की रचना करने और काम करने का स्वातंत्र्य संरक्षित एवं सुरक्षित होगा;

जिसमें अल्पमतावलम्बियों, पिछडे और आदि जाति क्षेत्रों और दलित तथा अन्य पिछडे वर्गों को पर्याप्त सुरक्षा प्राप्त होगी; और

जिसमें जनतांत्रिक एकता और अखण्डितता तथा भूमि, समुद्र और आकाश क्षेत्र के उसके अधिकारों की न्यायोचित एवं सदस्य राष्ट्रों के कानून द्वारा देखभाल की जाएगी; और यह प्राचीन भूमि विश्व में अपना न्यायपूर्ण आदरयुक्त स्थान प्राप्त करेगी तथा विश्वशांति और मानवकल्याण के लिए अपना स्वैच्छिक योगदान देगी।

विभाग २
मद्रास पंचायत पद्धति
एक सामान्य समीक्षा

१०. उपोद्घात

'पंचायत' शब्द का भावार्थ और उसके उद्भव के सम्बन्ध में भारतीय विद्वानों के विरोधाभासी अभिमत है। कुछ मानते हैं कि यह शब्द ऐतिहासिक सन्दर्भ में, अपने क्षेत्र के नागरिकों की नागरिक (civic), प्रशासनिक और राजनीतिक आदि बहुविध आवश्यकलाओं की ओर ध्यान देनेवाली, न्यूनाधिक रूप में स्वशासी ग्रामीण रचना का बोध कराती है। ऐसे अनेक विद्वान हैं जो अंग्रेज विद्वान मेटकाफ (Metcalf) समेत प्रारंभिक समय के अंग्रेज जिला प्रशासकों द्वारा नाटकीय रूप से प्रयोजित 'ग्रामीण प्रजासत्ताक', (village-republic) के समानार्थी 'पंचायत' शब्द का प्रयोग करने लगते हैं। दूसरी ओर, भारत के अधिकांश विद्वानों के मतानुसार 'पंचायत' शब्द का ऐसा अर्थ कभी नहीं था; पंचायतो का कार्यक्षेत्र ग्रामीण या अन्य स्तरों पर दीवानी या फौजदारी याचिकाओं में न्यायिक संस्थाओं के रूप में दायित्व निभाने के साथ साथ विभिन्न प्रकार के सम्प्रदाय और कर्मकांड विषयक विवादों का हल निकालने तक सीमित था।

परन्तु ब्रिटिश भारत के आरम्भिक (१८वीं शती के उत्तरार्ध और १९वीं शती के पूर्वार्ध के) अभिलेखों का निरीक्षण करने के पश्चात् इस विषय में ही सन्देह नहीं रहता है कि भारत के अधिकांश प्रदेशों मे गाँवों का अपना (सम्भवत: नगर आदि का भी) एक संगठित संस्थागत ढाँचा था और उसका कार्य लोगों की नागरिक, प्रशासनिक एवं राजनीतिक आवश्यकताओं की संस्था का था, और विभिन्न प्रकार के अपने दायित्वों को निभाने के लिए उन्हें आवश्यक अधिकार एवं संसाधन भी दिए गए थे। फिर भी सम्भव है कि ऐसे ढाँचे के लिए तब 'पंचायत' शब्द का प्रयोग नहीं होता था, बल्कि अन्य शब्द या शब्दों का प्रयोग होता होगा। पर्याप्त सम्भावना है कि ऐसी संरचना के लिए 'पंचायत' शब्द का प्रयोग ब्रिटिशरों ने किया हो। 'पंचायत' शब्द का मूल अर्थ चाहे कोई भी हो परन्तु आज की, समग्र भारत में कानून से प्रस्थापित संस्थाएँ, भारत की सुदीर्घ धरोहर के स्थान पर, केवल उन्नीसवीं शती के ब्रिटिश शासकों की देन है।

मद्रास राज्य में पचायत पद्धति के विगत आठ दशक के दौरान किये गए तीन सघन परीक्षण नये ढाँचे और इन संस्थाओं के पुनर्गठन की दिशा स्पष्ट कर देते हैं जिनका विवरण प्राप्य है ऐसे १८८०, १९०७ और १९८६ के प्रमुख तीन प्रयासों में इस स्थानीय संस्थाओं की संरचना के पीछे अमूर्त कल्पनायें और विचारधारायें थी। हर बार रचित ढाँचा संकल्पनाओं की दृष्टि से सम्बन्धित क्षेत्र के लोगों के साथ संस्थागत सम्बन्ध, उनके कार्य और कुछ अंश में आय और व्यय की पद्धति के विषय में अलग अलग रहता था। ऐसा होने पर भी, प्रारम्भिक तीनों प्रयासों में ये संस्थाएँ पर्याप्त स्वतन्त्रता के साथ शुरू हुई थीं, परन्तु क्रमश: उन्हें कुंठित और सीमित बना दिया गया और अन्त में वे स्थगित हो गई। अस्सी वर्ष के इन तीन कार्यविधियों के कालखण्ड में पंचायत पद्धति के विकास एवं पतन की प्रक्रिया में अद्भुत साम्य है। सन् १८५० और १८८० में, स्थानीय निधि (local funds) के लिए जिला स्तर पर अपेक्षा कृत सीमित औपचारिक स्थानीय संस्थाओं के गठन के वैयक्तिक प्रयास हुए। तब लन्दन स्थित तत्कालीन भारत कार्यालय (इण्डिया आफिस) के प्रशासकों में कोलकाता में भारत सरकार और मद्रास प्रेसिडन्सी में स्थानीय स्तर पर कुछ स्वशासित संस्थाओं का विचार शुरू हुआ लगता है। इस निर्णय की पृष्ठभूमि में अनेक तर्क प्रेरक सिद्ध हुए। प्रमुख तीन *विषय थे : (१) नई या पुरानी योजनाओं के ठीक प्रकार के क्रियान्वयन* हेतु, और कुछ आवश्यक बातों के लिए स्थानीय स्तर पर कुछ अधिक संसाधनों का प्रबन्ध करना, (२) इस प्रकार के स्थानीय प्रशासन तंत्र की रचना करना जो पहले से ही चल रही सरकारी व्यवस्था की तुलना में स्वतंत्र हो और उसका संचालन करनेवाले व्यक्तियों को - विशेष रूपसे सम्बन्धित क्षेत्र के जिलाधीशों को - लचीली पद्धति और मुक्त रूप से आवश्यक कार्य करने के लिए अनुकूलता निर्माण करना, और (३) गाँव से लेकर जिला स्तर तक के विभिन्न क्षेत्रों के व्यक्तियों को सहभागी, या कह सकते हैं कि अपने वैयक्तिक एवं सामाजिक सुख-स्वास्थ्य के लिये क्रियाशील होने में सहायक होना।

उनमें से प्रथम दो विषय परिस्थितिजन्य आवश्यकता और अनगिनत ब्रिटिश प्रशासकों के विगत आधी शती के अनुभवों से उत्पन्न हुए प्रतीत होते हैं। तीसरे विषय का विशेष् सम्बन्ध मद्रास के प्रशासक या कोलकाता की इम्पीरीयल गवर्नमेन्ट ऑफ इण्डिया के (उस समय ऐसा ही कहा जाता था) के प्रशासकों के साथ नहीं था। वास्तव में वह ग्लेडस्टन के विचार और वायसराय लार्ड रीपन की कल्पनाओं का विस्तृतीकरण था। यह सच है कि लार्ड रीपन का अनुकरण करते हुए *अन्य कुछ*

व्यक्तियों ने भी ऐसी भावना प्रकट की थी, और उनमे से कुछ व्यक्तियोंने मृतप्राय बने हुए ग्राम समूहों और परिषदों को प्राणवान बनाने की और ऐसे समूह जहाँ नष्टप्राय प्रतीत होते हों उनकी पुनर्रचना करने की इच्छा प्रकट की थी। ऐसे भाव प्रकट करने में मद्रास भी किसी से पीछे नहीं था। परन्तु ग्लेडस्टन का विचार वास्तव में अधिक आगे नहीं बढ पाया। विख्यात 'रीपन प्रस्ताव' और प्रत्येक कानून के प्रारम्भ में एक सिद्धांत निवेदन (statement of principles) रखने तक ही सीमित रहा।

सन् १८८४ के कानून के परिणाम स्वरूप मद्रास प्रेसिडेन्सी में जिला स्तर पर, प्रत्येक जिले में तहसील स्तर पर, और ग्रामीण स्तर पर कुछ गाँवों मे त्रिस्तरीय ढाँचे की रचना हुई। भवन निर्माण एवं मार्गों की देखभाल, विद्यालय, औषधालय, औषध केन्द्र आदि की सुरक्षा जैसी गतिविधियां आरम्भ करते हुए कई क्षेत्रों में ये संस्थाएँ बलशाली बनीं। उनका संपूर्ण व्यय (आज की अपेक्षा वह अधिक नहीं था) उस समय के सरकारी व्यय की तुलना मे बहुत कम था। ऐसा होते हुए भी कहीं कहीं स्थानीय संस्थाएँ और प्रेसिडेन्सी सरकार, या उसके अध्यक्ष (जो सरकारी अधिकारी थे) और सामान्य सदस्यों के बीच इन संस्थाओं के कार्यों को लेकर मतभिन्नता निर्माण होने लगी। परिणाम स्वरूप अनेक स्थानों पर इन संस्थाओं से लोगों का जुडाव कम होने लगा जबकि कुछ स्थानों पर सदस्य दृढता के साथ अपने अधिकार प्रस्थापित करने के लिए प्रेरित हुए। कुछ मात्रा में जिला परिषदों मे सामान्य रूप से अधिकार प्रस्थापित करने का एक प्रकार जिलाधीश या अध्यक्ष के एक या दूसरे निर्णय की, विशेषकर जिला परिषद के किसी कर्मचारी को की गई सजा की अवमानना करने का था। सरकार और जिलाधीश दोनों के लिए यह बात असहनीय नहीं तो भी सन्ताप पैदा करनेवाली थी। सन् १८५० में सरकार ने जिलाधीश या अध्यक्ष, जिला परिषद के इस प्रकार के निर्णय के विरूद्ध, गवर्नर- इन- कौन्सिल के समक्ष निवेदन कर सकें ऐसा प्रावधन बना। ढाँचे में तब सचमुच ही अस्थिरता पैदा होने की स्थिति निर्माण हो गई।

सन् १९०७ के रायल डिसेन्ट्रलाइजेशन कमिशन ने भारत की सरकारों के (उप जिलों से लेकर राज्य की राजधानी तक के) प्रशासनिक ढाँचे के परीक्षण के प्राथमिक कार्य के अतिरिक्त लोकल बोर्ड एवं ग्राम पंचायतों की समस्या में भी रुचि ली। उसे अनेक प्रमाण प्राप्त हुए, उन्हें शब्दश: अंकित किये गये और ४५८११ प्रश्नोत्तरों को दस खण्डो में प्रकाशित किया गया। केवल मद्रास से सम्यन्धित प्रथम खण्ड में ही १०,०७९ प्रश्नोत्तर हैं। आयोग ने स्वयं को प्राप्त सीमा में रहकर विभिन्न स्तर पर प्रवर्तमान स्थिति का व्यापक मूल्यांकन किया तथा समुपस्थित समस्याओं के

समाधान के लिए अभिशंसाएँ भी कीं।

सन् १९०९ से १९२० के कालखण्ड में स्थानीय स्वराज्य की संस्थाओं के विषय पर व्यापक रूप से चर्चाओं का क्रम जारी रहा। ऐसा प्रतीत होता है कि सार्वजनिक जीवन के साथ न्यूनाधिक मात्रा में सम्भवित रुचि रखनेवाले सभी इस विषय के प्रति आकर्षित हुए थे। राजनीतिक रूप से जो विशेष रुचि नहीं रखते थे, ऐसे व्यक्ति भी इन संस्थाओ को सुदृढ बनाने की माँग करने में और उसका समर्थन करने में अग्रसर थे। इस कालखण्ड विषयक शोध दर्शाता है कि पंचायत संकल्पना, इन संस्थाओं को कैसा होना चाहिये और कैसा नहीं इसका निरूपण करने वाली सामग्री १८९०-१९२० के दशक में इतनी विपुल मात्रा में प्रकाशित हुई है जितनी इसके बाद किसी के दशक में नहीं हुई, स्वतंत्रता के बाद भी नहीं। ऐसे दो विस्तृत निरूपण - एक गोपालकृष्ण गोखले द्वारा और दूसरा, सी. पी. रामास्वामी अय्यर द्वारा किया हुआ - यहाँ प्रस्तुत करने योग्य हैं :

'प्रवर्तमान जिला प्रशासनिक तंत्र के तीन दूषण हैं - गोपनीयता, निरी अफसरशाही और विभागीय विलम्ब। जनता के हित से सम्बन्धित प्रश्नो के विषय में सोचने और निर्णय लेने की प्रक्रिया उसकी अनुपस्थिति में, केवल अधिकारियों की रिपोर्टों के आधार पर होती है। अन्तिम आदेश इस प्रकार प्रकट किए जाते हैं मानो प्रजा केवल आदेशों का पालन करने के लिए ही बाध्य हो। कितने ही प्रकार के केन्द्रीय विभाग, और उसके आपसी सन्दर्भो की निरन्तरता के परिणाम स्वरूप प्रश्नों के समाधान में होनेवाला असहनीय विलम्ब सीधे सरल ग्रामजनों के मन में तनाव एवं संताप निर्माण करनेवाला होता है। जिले मे कार्यकारी सरकारी प्रशासन का प्रमुख प्रतिनिधि जिलाधीश है, और सत्ता के दूषण तथा सत्ता के अनियंत्रित उपयोग पर रोक लगाने के लिये उसके कार्यों पर अनेक अंकुश लगाए गए हैं। वैसे ये अंकुश नियमानुसार हैं और उन्हें लगाने का अधिकार नियमानुसार वरिष्ठ अधिकारियों के पास ही है, और वे अपने सहायक अधिकारियों के माध्यम से ही उन्हें लगाते हैं और सत्ता का व्यापक दुरूपयोग रोकने के लिए लगाए गऐ हैं तो भी कुशल सक्षम संचालन की दृष्टि से उसका अधिक मूल्य नहीं है और इसलिए उनके (जिलाधीशों के) दायित्वों को निभाने में बहुत बाधाएँ उत्पन्न करते हैं। वास्तव में परिस्थिति की माँग है कि ऐसे सरकारी अंकुशों को दूर से प्रभावी करने के बजाय संचालनतंत्र का जिन पर प्रभाव पड़ता है ऐसे व्यक्तियों के प्रति स्थान पर ही कुछ नियंत्रण होना चाहिए। मैं तो चाहता हूँ कि इस उद्देश्य के लिए प्रत्येक जिले में एक छोटी गैरसरकारी सदस्यों की समिति का गठन किया जाए,

उसके दो तिहाई सदस्य जिला समिति के गैरसरकारी सदस्यों द्वारा निर्वाचित हुए हो और एक तिहाई सदस्य जिलाधीश द्वारा नियुक्त किये गये हों। सभी महत्त्वपूर्ण बातों मे इस समिति के साथ परामर्श करने की बात को मैं अनिवार्य बनाना चाहूँगा। इसके साथ ही उन्हें (जिलाधीशों को) इस समिति को साथ रखकर उन्हें उपयोग में लेने के अधिक अधिकार भी देना चाहूँगा जिससे अकारण उच्च अधिकारियों तक भेजने के स्थान पर जिला प्रशासनिक तंत्र से सम्बन्धित प्रश्नों का वहीं पर समाधान हो जाऐ।'

'सरकार के आन्तरिक नियंत्रणों से रहित स्थानीय विषयों को निपटाने में लोगों का जब तक विश्वास नहीं किया जाएगा तब तक वे अपने दायित्व को सही ढंग से निभाना नहीं सीख पाऐंगे। इस प्रकार की पद्धति जब तक आरम्भ नहीं होगी, और आय प्राप्त करने के लिए बजट तैयार करने की, नौकरी के स्थानों का प्रबन्ध करने की तथा संक्षेप में कहा जाए कि इस समय जिस प्रकार से कड़े नियंत्रणो के नीचे काम किया जाता है ऐसी सभी बातों मे उनके अधिकारों मे आवश्यक संशोधन नहीं किया जाता है तब तक पहल करने का उत्साह और व्यावसायिक वृत्ति इन संस्थाओं का स्वभाव बनने की सम्भावना अत्यल्प है।'

मुझे लगता है कि इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए कुछ अपेक्षाओं और प्रस्तावों का इन दो अवलोकनों में समावेश हो जाता है।

इस दृष्टि से सन् १९२० का विधान इन विचारों को कुछ ठोस स्वरूप देने का प्रयास था। आरम्भ वास्तव में आशाजनक था। दो कानून और उनके अन्तर्गत रचे गये नियम इस विचार को साकार करने में सहायक बने। इसमें सन्देह नहीं है कि इन दोनों कानूनों के अन्तर्गत अनेक अधिकार सरकार के लिए आरक्षित रखे गए। परन्तु, उनमें से अनेक अधिकार जिला एवं तहसील बोर्ड या उनके अध्यक्षों को सौंपे गये। ऐसा प्रतीत होता है कि इन संस्थाओं के दैनन्दिन क्रियाकलाप या नियम एवं विनिमयों में उनके द्वारा किये गए सुधारों मे १९३० तक किसी प्रकार का अवरोध पैदा नहीं हुआ था। ऐसा होते हुए भी १९२४ से ही सरकारी विवरणों में, और विशेषकर वित्तीय विषयों के साथ सम्बन्धित सरकारी अधिकारियों में उसकी कार्यपद्धति के प्रति चिन्ताएँ निर्माण हुई थीं। सन् १९३० तक तो यह स्थिति संकटपूर्ण हो गई। सरकारी विवरणों की चर्चा के समय ऐसे विषय उपस्थित हुए कि, 'इससे पूर्व सरकार द्वारा निर्धारित पत्रको में प्रस्तुत किए जाते रहे अनुमानित आँकड़ों के परीक्षणों के लिये अपेक्षित जानकारी नहीं थी। स्थानीय समितियों के बजटों की प्राथमिक तैयारी, नियंत्रण और पारित करने की प्रक्रिया के महत्त्वपूर्ण कदम निश्चित करनेवाले कोई लिखित नियम नहीं

थे, उसकी प्रस्तुतिकरण की पद्धति अंकित नहीं थी, और कागज पर दर्शाई गई अनुमानित जमा राशि के निरीक्षण करने का विषय स्वयं विवेकयुक्त संतोष पा सके' ऐसी कोई व्यवस्था सरकार के पास नहीं थी। साथ ही यह भी स्वीकार किया गया कि सैद्धांतिक रूप से कोई पद्धति भले ही आदर्श हो परन्तु उसे किस प्रकार और किस भावना के साथ कार्यान्वित किया जाता है इस पर उसकी सफलता निर्भर करती है। ऐसा होते हुए भी उस बात पर बल दिया गया कि पद्धति का उद्देश्य 'मानवीय हानियों को समान रूप से, निम्नतम स्तर पर ले जाना' ही है। इसक्रे उदाहरण के रूप में *तत्कालीन समयावधि में किसी तहसील बोर्ड द्वारा हुई कुछ गलतियां दर्शाई गई थीं।* समग्र राजनीतिक ढाँचे में स्थानीय संस्थाओं के स्थान और उसके गठन के उद्देश्यों को स्पष्ट रूप से *अंकित किया गया था : (१) 'कार्य के प्रकार और देश की विशालता की* दृष्टि से केन्द्रीय संस्था के द्वारा प्रभावी रूप से कार्य करना असम्भव हो ऐसे क्षेत्रो में केन्द्रीय प्रशासको के दायित्व को हल्का करना और (२) जनता को स्वशासन के लिए प्रशिक्षित करना।'

इस प्रकार के तर्क के कारण ऐसी धारणा बनी कि स्थानीय संस्थाओं की गतिविधियों को कानूनी प्रावधान के द्वारा सीमित कर दिया जाए, इसके अन्तर्गत निश्चित क्षेत्रों के विषय में लोकल बोर्ड का लचीला ढाँचा तैयार किया जाए, नियंत्रण केन्द्रीय सत्ता के पास रहे जिससे ये संस्थाएँ अर्थाभाव के कारण टूट कर बिखर न जाए।

इस धारणा के आधार पर इस प्रकार के संगठन के अनुकूल वित्तीय पद्धति निर्मित की गई। प्रमुख सुझाव इस प्रकार थे : (१) नियम बनाने के सरकार के अधिकार के अन्तर्गत वैधानिक नियम बनाना और (२) बजट के प्रस्तुतिकरण आदि के विषय में दिशानिर्देश करनेवाले विभागी आदेशों का एक विस्तृत सेट *तैयार करना।* सम्बन्धित सत्ताधिकरणों ने इन सुझावों पर विचार किया। नियमों के एक प्रारूप में निश्चित किया था कि 'लोकल बोर्ड एवं ग्रामविकास निधि के बजट स्थानीय सरकार की अनुमति के पश्चात् प्रभावी होंगे'। एक प्रावधान, सम्बन्धित कानून की धारा ११६ को बाधा पहुँचाता था इसलिए उसे निरस्त कर दिया गया, अन्य कुछ नियम जोड़े गये। तब से अर्थात् सन् १९२० से कानूनों के अन्तर्गत संस्थाओं की गतिविधियों में वैधानिक नियम और विस्तृत विभागीय आदेशों का 'शासन' आरम्भ हुआ।

अन्य अतिरिक्त प्रयासों ने एक परम्परा निर्माण की और उसे गति दी। इसका स्वाभाविक परिणाम हुआ। सन् १९३१-३२ में जो कानून की धारा ११६ का खंडन

करनेवाला प्रतीत होता था वह सन् १९३५ मे वैसा नहीं लगा। वास्तव में बात इससे आगे बढ़ चुकी थी। तब कहा गया था कि, 'केवल बजट के स्वीकृत हो जाने से पंचायत को उन्हें दी गई राशि खर्च करने का अधिकार प्राप्त नहीं हो जाता है। सरकार को अन्य सत्ताधिकरण की स्वीकृति की जहां आवश्यकता है और स्वीकृति भी प्रदान की गई है तो भी खर्च करने से पूर्व पंचायत को अनुमति लेनी ही होगी।'

सरकार को इतना भी पर्याप्त नहीं लगा। इन्स्पेक्टर ऑव म्युनिसिपल कौन्सिल के सामने, १९३९ में, एक गम्भीर समस्या आई। उसे सरकार को लिखने के लिए बाध्य होना पड़ा। उस पत्र को यहाँ उदधृत करना उचित होगा :

'इस विषय में मेरे २०-३-१९३९ के पत्र के अन्तिम हिस्से के प्रति मैं सरकार का ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ। लोकल बॉर्ड एक्ट, विनियम १-ए (२) के प्रावधान के अन्तर्गत इस बात के लिए विशेष विवरण भेजने का वचन मैंने दिया था कि पंचायत किस प्रकार अन्धाधुंध तरीके से अपने कोष का उपयोग करती है। इस कानून की अनुसूचि-५ नियम १-ए (२) मे प्रावधान है कि स्थानीय सरकार की इच्छानुसार रचे गए नियमों के अधीन रास्तों के दोनों ओर वृक्ष लगाना, गाँव के भवनों को नियंत्रित करना, गोठ-बस्ती मे वृद्धि करना, गॉव की सुरक्षा, कृषि में उपयोगी-पशुओं में सुधार, कुटिर उद्योगों को प्रोत्साहन आदि गाँव के लिए आवश्यक निश्चित बातों के लिए पंचायतों को अनुकूल प्रतीत होनेवाले प्रावधान करने का उन्हे अधिकार होगा। परन्तु ऐसी घटनाएँ ध्यान में आईं कि अपनी आर्थिक स्थिति के विषय में बिना सोचे समझे और ग्रामसफाई में सुधार, पेयजल की सुविधाएँ, गाँवों की आधारभूत आवश्यकताओं के प्रति ध्यान न देकर अपने दायित्वों की अनदेखी कर गोपालन, कुटिर उद्योगों को प्रोत्साहित करना, मधुमक्खी केन्द्र, गोठ-बस्ती को बढाने के प्रावधानों के लिए ग्राम पंचायतें अत्यधिक व्यय करती हैं कानून में ऐसा प्रावधान है कि सरकार इस विषय में नियम बना सकती है, परन्तु कानून की अनुसूचि-५ के नियम १-अ (२) मे समाविष्ट सम्बन्धित विषयों के लिए व्यय करने से पूर्व नियम बनाने की पूर्व स्थिति नहीं है। मेरे मतानुसार ग्राम पंचायत के प्रशासन के हित हेतु, यह उचित होगा कि ऐसे अपव्यय पर अंकुश रखने का अधिकार निरीक्षक को दिया जाए। अतः मैं सरकार का ध्यान आकर्षित करता हूँ कि पंचायत अनुसूची-५ के नियम १-अ (२) अन्तर्गत निर्दिष्ट निश्चित विषयों के लिए व्यय करना चाहती है तो निरीक्षक की पूर्व अनुमति प्राप्त करने का नियम बनाना मेरी दृष्टि से उचित है। मैंने ग्राम पुस्तकालय एवं वाचनालयों के व्यय पर अंकुश रखने के लिए एक नियम बनाने की बात को महत्त्व देने के लिए सरकार को

लिखा ही है, और उस विषय में मैं सरकार के आदेश की प्रतीक्षा कर रहा हूँ। मेरा सुझाव है कि सरकार उपर्युक्त सुझावों पर विचार करने का कष्ट करे और उस विषय में त्वरित आदेश दे।'

इसके परिणाम स्वरूप दो अध्यादेश जारी किए गये। पहला, ३१ अगस्त १९३९ के दिन और दूसरा कुछ महिनों के पश्चात् २ फरवरी १९४० के दिन। पहला अध्यादेश बैल के लिए स्थान के विषय में था। उसके तहत पंचायत को बैल न रखने के लिये और जिला वोर्ड को अपना बैल पंचायत से वापस लेने का आदेश दिया गया था। दूसरे अध्यादेश के अन्तर्गत कानून की अनुसूचि में संशोधन करते हुए कहा गया कि 'इन्स्पेक्टर ऑव म्युनिसिपल कौन्सिल एण्ड लोकल बोर्डज' या 'डिप्टी इन्स्पेक्टर ऑव म्युनिसिपल कौन्सिल एण्ड लोकल बॉर्डज' की लिखित अनुमति के बिना कोई भी पंचायत मद्रास लोकल बॉर्ड एक्ट-१९२० की अनुसूचि-५ के उप-नियम(२) या नियम १-ए अन्तर्गत निर्दिष्ट किसी भी बात के लिए व्यय नहीं करेगी।' लगभग उसी समय में ग्राम पुस्तकालय एवं वाचनालय को नियंत्रित करने के लिए भी एक नियम सरकार ने जारी किया। इस प्रकार, नियम बनाने की सत्ता के आधार पर, पंचायतों की सभी गतिविधियो पर सरकार का नियंत्रण हो गया।

अन्य विषयों मे भी इसी प्रकार के परिवर्तन किये गए। आरम्भ में ही इन संस्थाओं को तकनीकी रूप से मान्य करने का अधिकार उनके तकनीकी कर्मचारियों को दिया गया, परन्तु बाद में उन्हीं कर्मचारियों को स्थानीय समितियों की सेवाओं से निकाल दिया गया। अन्य संस्थाओं की सेवा में जो अल्पमात्रा में कर्मचारी शेष रहे थे वे भी उन संस्थाओ के द्वारा कार्यशैली के नियमों के अधीन नहीं अपितु कानूनी नियमों में बँधे रहे। प्रवास भत्ता एवं दैनिक-भत्तों के नियम भी अछूते नहीं रहे। कुछ क्रियात्मक और प्रक्रियात्मक ढाँचा तो १९४४ तक बन गया था, और कुछ सुधार के साथ १९५८ के मद्रास पंचायत कानून के रूप में आज भी वही ढाँचा अस्तित्व में है।

वास्तव में सन् १९४६ से १९५८ का कालखण्ड सभी छोटी मोटी बातों में सन् १९०७ से १९२० के कालखण्ड से तुलना करने योग्य है। स्थानीय संस्थाओं को प्रोत्साहित करने की उत्सुकता एक ही प्रकार की थी। एक ही प्रकार के विचारविमर्श हुए थे और एक ही प्रकार के आयोग एवं समितियों की नियुक्ति हुई थी। परन्तु १९२० के लोकल बार्ड अपेक्षाकृत कोरी स्लेट के साथ शुरू हुए थे। जब कि १९५८ की पंचायत संस्थाएँ कार्यपद्धति की जटिलता से दबी हुई थीं। १९५८ का लक्ष्य पुराने क्रियात्मक एवं प्रक्रियात्मक ढाँचे से ही सभी प्रकार की सफलताएँ प्राप्त करना था।

१९५८ के कानून के द्वारा त्रिस्तरीय ढाँचा रचा गया, परन्तु उसमें बीच के स्तर को अधिक अच्छा स्थान एवं संसाधन दिए गए। इससे पूर्व निकटवर्ती अतीत में प्राप्त संसाधनों से अधिक साधन उपलब्ध कराये गये। १९५८ की सर्वाधिक लक्षणीय उपलब्धि तो प्रत्येक गाँव एवं कस्बे में ग्राम पंचायतों की स्थापना की थी। सन् १९३० के दशक में संयुक्त प्रेसिडेन्सी का केवल एक तिहाई क्षेत्र ही आवृत्त किया गया था।

ऐसा होते हुए भी, १९२० से १९४० के दो दशकों में प्राप्त वित्तीय संसाधनों से अधिक संसाधन १९५८ में प्राप्त नहीं थे। अपितु राज्य के कुल व्यय की तुलना में प्रवर्तमान संसाधन इससे पूर्व के कार्यकाल से कम ही हैं। लगभग १९४० तक मद्रास क्षेत्र की स्थानीय संस्थाओं का व्यय कुल मिलाकर १६ से २० करोड रूपयों का था। सन् १९६१ में प्रवर्तमान ढाँचा पूर्णरूप से विकसित हुआ, और तब से व्यय रू. २९ करोड से ३० करोड के मध्य रहता है, जब कि राज्य का खर्च, १९६४-६५ में बढ़कर रू. १९५ करोड तक पहुँचा था। इसका अर्थ यह कदापि नहीं है कि ये संस्थाएँ धन के अभाव से त्रस्त हैं। केवल रीति कैसी है इसे समझाने के लिये यह संकेत दिया है।

प्रस्तुत ग्रन्थ में मद्रास राज्य के पंचायत राज की व्यवस्था और कार्यपद्धति का मूल्यांकन करने का प्रयास किया गया है। अध्ययन हेतु कुछ जिलों की व्यापक यात्रा के दौरान प्राप्त जानकारी और धारणाओं पर आधारित यह मूल्यांकन है। कुछ चयनित पंचायत और पंचायत संघो का अध्ययन गहराई से किया गया था। निवेश, कार्यक्रम, उसमें जुडे हुए मानव संसाधन और कार्यरत संस्थागत साधनों के रूप में स्थित पंचायत पद्धति के समन्वित प्रभाव का मूल्यांकन सर्वसामान्य रूप में किया गया। कुछ समस्यात्मक (जैसे कि भ्रष्टाचार, ग्रामीण जनता के लिये पंचायत की भूमिका) प्रश्नों की चर्चा की गई है। इसका उद्देश्य समस्याओं को जानना और मद्रास राज्य के पंचायत राज के सिद्धांत और व्यवहार में स्थित खाई को पाटने के लिये उपाय सुझाने का था।

११. पंचायत राज के राज्यव्यापी आयाम

पंचायत व्यवस्था का पूर्ण या आंशिक, विस्तृत एवं आलोचनात्मक सर्वेक्षण करने से पूर्व यह जानना अनिवार्य प्रतीत होता है कि प्रवर्तमान पंचायत पद्धति का प्रभाव क्या है, और इस पद्धति द्वारा कुछ प्रत्यक्ष उपलब्धि है या नहीं। साथ ही पंचायत संस्थाओं का महत्त्व और उसके संवाहको के प्रदान को जानना भी अनिवार्य है। इन दोनों को राज्य के सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक परिप्रेक्ष्य में यहाँ देखने का प्रयास किया गया है क्योंकि ऐसा करने से ही इस नवीन पद्धति का सही मूल्यांकन किया जा सकेगा। इसके लिए समग्र पद्धति की भव्यता रचना एवं कार्य को जानना उतना ही आवश्यक है। तभी हम इस पद्धति को भलीभाँति समझ सकेंगे।

प्रशासनिक व्यवस्थायें

समग्र राज्य को २१ विकास जिलों में बाँटा गया है। मद्रास को छोड अन्य राजस्व जिलों मे जिला विकास परिषदों की स्थापना की गई है (जैसे कि नीलगिरि, चेंगलपट्ट और कन्याकुमारी में एक एक, जब कि अन्य जिलों में दो दो जिला विकास परिषदों की स्थापना की गई है।) इस प्रकार संपूर्ण राज्य मे लगभग ३७४ पंचायत संघों के द्वारा राज्य की १२,८९५ ग्राम पंचायतों की रचना की गई है। इन संघों का क्षेत्र और जनसंख्या समान नहीं है। नीलगिरि में ४ संघ हैं, जब कि दक्षिणी सेलम में २९ हैं। प्रत्येक विकास जिले में पंचायत संघों की संख्या को सारिणी १ में दर्शाया गया है।

पंचायत संघ का परिक्षेत्र लगभग १०० वर्गमील है और जनसंख्या लगभग ७५,००० है। ऐसा होते हुए भी विभिन्न पंचायत संघो के क्षेत्र और जनसंख्या में अत्यधिक भिन्नता या अंतर भी देखे जा सकते हैं। जैसे, पूर्व कोईम्बतूर जिले में सब से विशाल पंचायत संघ है, जिसका क्षेत्रफल १,८९,८८५ वर्ग मील है तो पश्चिमी कोईम्बतूर जिले में स्थित पंचायत संघ क्षेत्रफल १६.४८ वर्ग मील ही है। १५ पंचायत सघों में जनसंख्या १ लाख से अधिक है जब कि ८ संघों में ३०,००० से भी कम।

मद्रास से केवल दस मील की दूरी पर स्थित विल्लिवाकम पंचायत संघ की जनसंख्या सब से अधिक लगभग १,४७,७३७ है। उसका क्षेत्रफल केवल ६२.०५ वर्ग मील ही है। राज्य की राजधानी के निकट होने के कारण ऐसी स्थिति है।

सारिणी -१

विकास जिला	संघों की संख्या	विकास जिला	संघों की संख्या
उत्तरी वेलोर	१९	पूर्वी रामानाथपुरम्	२१
दक्षिणी वेलोर	१७	पश्चिमी रामनाथपुरम्	११
उत्तर कडलूर	१६	उत्तरी सेलम	२२
दक्षित कडलूर	१९	दक्षिणी सेलम	२९
चेंगलपट्टु	२७	पूर्वी तंजावुर	१९
पूर्वी कोयम्बतूर	२०	पश्चिमी तंजावुर	१७
पश्चिमी कोयम्बतूर	२१	उत्तरी तिरुचिरापल्ली	२१
कन्याकुमारी	९	दक्षिणी तिरुपलापल्ली	१८
उत्तरी मदुराई	१५	उत्तरी तिरुनेलवली	१६
दक्षिणी मदुराई	१९	दक्षिणी तिरुनेलवेली	१५
निलगीरी	४		

प्रत्येक पंचायत संघ के साथ संलग्न पंचायतों की संख्या भी भिन्न भिन्न होती है। सेलम जिले में स्थित यरकाड संघ में केवल एक ही पंचायत है, जब कि चेंगलपट्टु जिले में उत्तरामेरूर संघ में सबसे अधिक ७३ पंचायतें हैं।

सामान्य विकास एवं महत्त्व के संदर्भ में भी संघो में पर्याप्त भिन्नता है। किसी भी क्षेत्र का महत्त्व निर्धारित करने के लिए वहाँ टेलिग्राफ कार्यालय है या नहीं, या रेलवे स्टेशन है या नहीं इसकी जानकारी भी आवश्यक है, क्योंकि ये दोनों सुविधाएँ सम्बन्धित क्षेत्र के आर्थिक महत्त्व को दर्शाती हैं। ध्यान आकर्षित करनेवाली बात यह है कि ऐसे ३७४ संघों में से लगभग आधे से कम में रेल्वे स्टेशन की सुविधा है और

११. पंचायत राज के राज्यव्यापी आयाम

पंचायत व्यवस्था का पूर्ण या आंशिक, विस्तृत एवं आलोचनात्मक सर्वेक्षण करने से पूर्व यह जानना अनिवार्य प्रतीत होता है कि प्रवर्तमान पंचायत पद्धति का प्रभाव क्या है, और इस पद्धति द्वारा कुछ प्रत्यक्ष उपलब्धि है या नहीं। साथ ही पंचायत संस्थाओं का महत्त्व और उसके संवाहकों के प्रदान को जानना भी अनिवार्य है। इन दोनों को राज्य के सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक परिप्रेक्ष्य में यहाँ देखने का प्रयास किया गया है क्योंकि ऐसा करने से ही इस नवीन पद्धति का सही मूल्यांकन किया जा सकेगा। इसके लिए समग्र पद्धति की भव्यता रचना एवं कार्य को जानना उतना ही आवश्यक है। तभी हम इस पद्धति को भलीभाँति समझ सकेंगे।

प्रशासनिक व्यवस्थायें

समग्र राज्य को २१ विकास जिलों में बाँटा गया है। मद्रास को छोड अन्य राजस्व जिलो मे जिला विकास परिषदों की स्थापना की गई है (जैसे कि नीलगिरि, चेंगलपट्टु और कन्याकुमारी में एक एक, जब कि अन्य जिलों में दो दो जिला विकास परिषदो की स्थापना की गई है।) इस प्रकार संपूर्ण राज्य में लगभग ३७४ पंचायत संघों के द्वारा राज्य की १२,८९५ ग्राम पंचायतों की रचना की गई है। इन सघों का क्षेत्र और जनसंख्या समान नहीं है। नीलगिरि में ४ संघ हैं, जब कि दक्षिणी सेलम में २९ हैं। प्रत्येक विकास जिले में पंचायत संघों की संख्या को सारिणी १ में दर्शाया गया है।

पंचायत संघ का परिक्षेत्र लगभग १०० वर्गमील है और जनसंख्या लगभग ७५,००० है। ऐसा होते हुए भी विभिन्न पंचायत संघों के क्षेत्र और जनसंख्या में अत्यधिक भिन्नता या अंतर भी देखे जा सकते हैं। जैसे, पूर्व कोईम्बतूर जिले मे सब से विशाल पंचायत संघ है, जिसका क्षेत्रफल १,८१,८८५ वर्ग मील है तो पश्चिमी कोईम्बतूर जिले में स्थित पंचायत संघ क्षेत्रफल १६.४८ वर्ग मील ही है। १५ पंचायत सघों में जनसंख्या १ लाख से अधिक है जब कि ८ संघों में ३०,००० से भी कम।

मद्रास से केवल दस मील की दूरी पर स्थित विल्लिवाकम पंचायत संघ की जनसंख्या सब से अधिक लगभग १,४७,७३७ है। उसका क्षेत्रफल केवल ६२.०५ वर्ग मील ही है। राज्य की राजधानी के निकट होने के कारण ऐसी स्थिति है।

सारिणी –१

विकास जिला	संघों की संख्या	विकास जिला	संघों की संख्या
उत्तरी वेलोर	१९	पूर्वी रामानाथपुरम्	२१
दक्षिणी वेलोर	१७	पश्चिमी रामनाथपुरम्	११
उत्तर कडलूर	१६	उत्तरी सेलम	२२
दक्षित कडलूर	१९	दक्षिणी सेलम	२९
चेंगलपट्टु	२७	पूर्वी तंजावुर	१९
पूर्वी कोयम्बतूर	२०	पश्चिमी तंजावुर	१७
पश्चिमी कोयम्बतूर	२१	उत्तरी तिरुचिरापल्ली	२१
कन्याकुमारी	९	दक्षिणी तिरुपलापल्ली	१८
उत्तरी मदुराई	१५	उत्तरी तिरुनेलवली	१६
दक्षिणी मदुराई	१९	दक्षिणी तिरुनेलवेली	१५
निलगीरी	४		

प्रत्येक पंचायत संघ के साथ संलग्न पंचायतों की संख्या भी भिन्न भिन्न होती है। सेलम जिले में स्थित यरकाड संघ में केवल एक ही पंचायत है, जब कि चेंगलपट्टु जिले मे उत्तरामेरूर संघ मे सबसे अधिक ७३ पंचायतें हैं।

सामान्य विकास एवं महत्त्व के संदर्भ में भी संघो में पर्याप्त भिन्नता है। किसी भी क्षेत्र का महत्त्व निर्धारित करने के लिए वहाँ टेलिग्राफ कार्यालय है या नहीं, या रेलवे स्टेशन है या नहीं इसकी जानकारी भी आवश्यक है, क्योंकि ये दोनों सुविधाएँ सम्बन्धित क्षेत्र के आर्थिक महत्त्व को दर्शाती हैं। ध्यान आकर्पित करनेवाली वात यह है कि ऐसे ३७४ संघों में से लगभग आधे से कम में रेल्वे स्टेशन की सुविधा है और

टेलिग्राफ कार्यालय भी हैं। कुछ संघ स्थान ऐसे भी हैं, जो रेल्वे स्टेशन या बस सुविधा से कई कि.मी. की दूरी पर हैं। अनेक क्षेत्र ऐसे हैं जहाँ जीप ही परिवहन का साधन है और उन जीपों को पेट्रोल लेने के लिऐ ५०/६० कि.मी. तक जाना पड़ता है। परंतु प्रत्येक संघ में कम से कम एक माध्यमिक विद्यालय अवश्य है। कुछ में तो पाँच से छह माध्यमिक विद्यालय हैं।

पंचायत संघों के मुख्य केन्द्र सामान्य रूप से तहसील स्थान पर या सब डिविजन के प्रमुख स्थान पर होते हैं। तो कुछ संघों ने अपने केन्द्र अधिक दूरी पर स्थित स्थान पर भी अपना प्रमुख कार्यालय रखा है।

सारिणी २

जिला	जनसंख्या (हजार मे)	क्षेत्रफल वर्ग मील में	पचायत संघो की सख्या	नगर पंचायतो की संख्या	ग्राम पंचायतों की सख्या	गाँवों की संख्या
मद्रास	१,७२९	४९	-	-	-	-
चेगलपट्टु	२,१९६	३,०३१	२७	२७	१,१९२	२,३०७
उत्तरी आर्कोट	३,१४६	४,९४२	३६	२७	१,५४१	२,०५५
दक्षिणी आर्कोट	३,०४८	४,२०४	३४	२२	१,६८२	२,२५५
सेलम	३,८०४	७,०२८	५१	५३	१,३५२	१,७१५
कोयम्बतूर	३,५५७	६,०१८	४१	५८	८४६	९७६
नीलगिरि	४०९	९५४	०४	१६	४६	५४
तंजावुर	३,२४६	३,७४०	३६	३१	१,५६८	२,६८६
मदुराई	३,२११	४,९१०	३४	४३	८५७	१,१४३
तिरुचिरापल्ली	३,१९०	५,५१४	३९	३३	१,२३५	१,५५५
रामनाथपुरम्	२,४२२	४,८४९	३२	२५	१,२८५	१,७२८
तिरुनेलवेली	२,७३०	४,४१९	३१	५८	८५२	१,०१६
कन्याकुमारी	९९७	६४३	०९	४६	-	६५

अध्याय के अंत में पंचायतों के चुनावों का विवरण और उस समय के आँकडे दिये गए हैं।

सारिणी ३

विकास जिला	ग्रामपंचायतें और राजस्व के गाँव			एक से कम राजस्व गाँव युक्त ग्राम पंचायतें			एक से अधिक राजस्व गांव युक्त ग्राम पंचायत		
	जनसंख्या १०००से कम	जनसंख्या १०००से ३०००	जनसंख्या ३०००से अधिक	जनसंख्या १०००से कम	जनसंख्या १०००से ३०००	जनसंख्या ३०००से अधिक	जनसंख्या १०००से कम	जनसंख्या १०००से ३०००	जनसंख्या ३०००से अधिक
उत्तरी वेलोर	१२९	२९०	७४	२८	६१	२	१८	७५	२६
दक्षिणी वेलोर	२६०	२७०	२९	०८	०७	-	५७	१६१	२१
पूर्वी तंजावुर	१६७	३५१	४८	०७	१४	०५	१९	१३६	२६
पश्चिमी तंजावुर	१२१	२७६	४३	१५	२७	०३	६७	१८२	३२
पू. रामनाथपुरम्	७२	१५४	१८	१०३	१२१	१४	११३	२२३	१४
प. रामनाथपुरम्	५९	१०३	२४	८०	६०	१३	२२	५६	०७
पूर्वी कोयम्बतूर	४९	१२१	१०३	०२	०८	१२	०५	२९	४३
प. कोयम्बतूर	३०	२१२	१२७	०३	१३	१५	०४	०७	१३

सारिणी ४

नगर	जिला	रचना की तिथि
अरुवनकाडु	नीलगिरि	१४-४-१९६३
मदुक्कराई	कोयम्बतूर	१४-४-१९६३
अन्नामलाई युनि. परिसर	दक्षिणी आर्कोट	१४-४-१९६३
शंकरनगर	तिरुनेलवेली	१४-४-१९६३
हरवईपट्टी	मदुराई	१४-४-१९६३
मणिमुतार	तिरुनेलवेली	१४-४-१९६३
वलपरई	कोयम्बतूर	१४-४-१९६३
हाईवे	मदुराई	१-१०-१९६४
महाबलिपुरम्	चेंगलपट्टु	१-११-१९६४
अम्बत्तूर	चेंगलपट्टु	१-१०-१९६५
कन्याकुमारी	कन्याकुमारी	१-१०-१९६५

प्रत्येक जिले के गाँव और ग्राम पंचायतों की संख्या में इतनी अधिक असमानता है कि, उसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। महत्त्वपूर्ण वात तो यह है कि जिले का क्षेत्रफल, या उसकी जनसंख्या या राजस्व गाँव की संख्या किसी भी जिले की ग्राम पंचायतों या नगर पंचायतों की संख्या को निर्धारित करने के लिए मूल आधार नहीं मानी जा सकतीं। सारिणी २ में राज्य की पंचायतों का एक सामान्य चित्र दर्शाया गया हैं।

संघों की स्थापना के पश्चात् सरकार ने ११ 'टाउनशीप' अर्थात् नये नगरों की रचना की है। (देखिए सारिणी-४) इन क्षेत्रों की पंचायतों के कार्य और अधिकार नगर समिति को हस्तान्तरित किये गये हैं।

इस कानून के प्रभावी होने के पश्चात् अनेक नगर पंचायतों को नगर पालिकाओं के रूप में मान्यता प्राप्त हो गई है। सन् १९६५ में ही ९ पंचायतों को नगर पालिकाओं के रूप में मान्यता प्राप्त हो गई है। तिरूनेलवेली जिले में स्थित रिंगनल्लूर पंचायत संघ के समग्र क्षेत्र को एक नगरपालिका में परिवर्तित कर दिया है।

अर्थ व्यवस्था

पंचायतों की अर्थ व्यवस्था का महत्त्व भी उसकी भौगोलिक एवं भौतिक स्थिति से जरा भी कम नहीं है, क्योंकि इन संघों का गठन होने के कारण उनके हाथ में जो आर्थिक संचालन आया उसकी मात्रा पर भी उन पंचायतों का महत्त्व निर्भर करता है। सम्बन्धित क्षेत्र के भूमिकर की मात्रा का आधार कई बातों पर है, जैसे कि भूमि का उपजाऊपन और उस क्षेत्र का अपेक्षाकृत विकास, नगरीय क्षेत्रो से उसकी दूरी एवं क्षेत्र की ऐतिहासिक पार्श्वभूमि, आदि को भी इसमे समाविष्ट किया जाता है।

जैसा कि प्रथम खण्ड मे दर्शाया गया है, सरकार द्वारा निर्मित संविधान नीति के अनुसार, पंचायत संघों को आर्थिक दृष्टि से चार भागों में विभाजित किया गया है। और इस वर्गीकरण के अनुसार उन्हें श्रेणियों में कम अधिक मात्रा में धन दिया जाता है। यह वर्गीकरण स्थानीय उपकर के साथ जुड़े हुए अनुदान और शैक्षणिक अनुदान को निश्चित करने के लिए आधाररूप माना जाता है। इस वर्गीकरण का मूल आधार उस संघ के द्वारा प्राप्त प्रति व्यक्ति राजस्व पर निर्भर करता है। उसमें से नगर पंचायतों को अलग रखा गया है। इसका उद्देश्य समृद्ध संघों की तुलना में निर्धन संघों को अधिक अनुदान प्रदान कराने का है।

सारिणी ५ में गाँवो से प्राप्त होनेवाले राजस्व के विषय मे राज्य में स्थित पंचायत संघों का आर्थिक वर्गीकरण किया गया है।

इस आर्थिक वर्गीकरण की व्यावहारिकता को लेकर सन्देह उपस्थित किया गया था। कुछ समाहर्ताओं ने कहा था कि राज्य के अधिकांश गाँवों को दो वर्गों में रखे जायेंगे। दूसरा सुझाव यह था कि प्रत्येक संघ को सड़क के लिए समान रूप में ५० प्रतिशत अनुदान ही देना चाहिए। वित्तीय वर्गीकरण के विषय में यह सूचित किया गया कि (१) समय समय पर या तो हमेशा के लिए पंचायत आर्थिक निगम की रचना करना (२) पंचायत आर्थिक निगम द्वारा निश्चित किए गए अनुदान के अतिरिक्त, प्रत्येक पंचायत को प्रति व्यक्ति रु. २ का अधिक राजस्व भी दिया जाए। (३) एकड के अनुसार निश्चित मात्रा मे प्रति एकड स्थानीय सेस और उसके निश्चित प्रतिशत का सरचार्ज लेने का अधिकार देना। (४) पंचायत संघ के प्रति एकड़ उत्पादन को वित्तीय वर्गीकरण का आधार मानना चाहिए।

सारिणी ५

विकास जिला	खंडों का वर्गीकरण			
	अ	ब	क	ड
उत्तरी वेलोर	१	६	८	४
दक्षिणी वेलोर	५	६	४	२
उत्तरी कडलूर	८	७	१	-
दक्षिणी कडलूर	१०	७	१	-
चेंगलपट्ट	१३	२	४	२
पूर्वी कोयम्बतूर	१२	२	४	२
पश्चिमी कोयम्बतूर	३	६	१०	२
दक्षिणी मदुराई	७	७	३	२
उत्तरी मदुराई	२	४	७	२
पूर्वी रामनाथपुरम्	११	७	१	२
पश्चिमी रामनाथपुरम्	२	८	१	-
उत्तरी सेलम	४	१२	५	-
दक्षिणी सेलम	६	८	११	५
पूर्वी तंजावुर	१९	-	१	-
पश्चिमी तंजावुर	१५	१	-	-
उत्तरी तिरूचिरापल्ली	९	९	३	-
दक्षिणी तिरूचिरापल्ली	५	५	४	४
उत्तरी तिरुनेलवेली	६	४	३	३
दक्षिणी तिरुनेलवेली	६	३	१	४

इतना होते हुए भी संघों के पुनर्वर्गीकरण का प्रश्न पुन: जनवरी १९६३ में विचारार्थ आया। परन्तु सरकार ने उसके विषय में विचार विमर्श स्थगित कर दिया, क्योंकि उस समय पंचायत कानून १९५८ में सार्वत्रिक संशोधन का विचार चल रहा था। उस निदर्शनपत्र में दर्शाया गया था कि 'जब तक खण्डों के सभी पक्षों को समाविष्ट करनेवाला सर्वग्राही विधेयक प्रसारित नहीं होता और उसका पंचवर्षीय पुनर्वर्गीकरण नहीं होता तब तक इस वर्गीकरण विषयक अस्थायी आदेश प्रभावी रहेगा।'

अत: चतुर्थ पंचवर्षीय योजना के लिए मार्गनिर्माण विषयक बजेट जब तक नहीं हुआ तब तक इस का निर्णय स्थगित कर दिया गया।

साथ ही सरकार के ध्यान पर यह तथ्य भी लाया गया कि 'अ' और 'ब' वर्ग के कुछ गाँव संघों में स्थित अन्य कुछ गाँवों की तुलना में अधिक निर्धन हैं। परिणाम स्वरूप सरकार ने निर्णय लिया कि वित्तीय वर्गीकरण के लिए केवल खण्ड की ही आर्थिक स्थिति पर ध्यान केन्द्रित किया जाए। पुन: यह भी स्पष्ट किया गया कि कोई ग्राम पंचायत वर्गीकरण के आधार पर सरकार द्वारा दिये गए अनुदान का प्रमुख भाग विकास के लिए व्यय करती है तो सरकार को कोई आपत्ति नहीं है। उस आदेश में स्पष्ट रूप से दर्शित है कि बिना सरकार के अनुदानों को प्रभावित किये समग्र ब्लोक *में परस्परानुकूल व्यवस्था करने के लिये भी सरकार को कोई आपत्ति नहीं है।'*

ब्लॉक का वित्तीय वर्गीकरण एक प्रान्तीय व्यवस्था है। ब्लॉक का प्रथम और द्वितीय में किया गया वर्गीकरण मूल रूप में समुदाय के अन्तर्गत खंड की रचना का दिनांक दर्शाने के लिये था। योजनाबद्ध कार्यक्रम के अन्तर्गत एक वर्ग से दूसरे वर्ग में परिवर्तन भी उसी दृष्टि से था। वह आज भी चल रहा है। जिलों मे स्तर १ और २ के खंडो की संख्या सारिणी ६ में दर्शाई गई है।

इन संघों के संसाधनों का वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है। (१) राज्य सरकार द्वारा किया गया परिवर्तन (२) उनके द्वारा प्रत्यक्ष रूप से निर्धारित किये गये मूल्य यथा (सरकार द्वारा वैधानिक रूप से निर्धारित किये गये मूल्य के अनुसार) संग्रह किए जा रहे कर, ड्यूटी आदि है। आगे सामान्य एवं विशिष्ट उद्देश्यों के लिए दिये जा रहे अनुदान के रूप में भी वर्गीकरण हो सकता है। इन इकाइयों के द्वारा जो संसाधन निश्चित किये जाते हैं वे अधिकांशत: नगर पंचायतों के द्वारा संग्रहित होते हैं। *मद्रास सरकार के स्थानीय प्रशासन विभाग के द्वारा प्रकाशित की गई विवरणिका के* आधार पर इन इकाइयों की आर्थिक स्थिति की जानकारी प्राप्त होगी। देखें सारिणी ७(अ) एवं (ब)।

उल्लेखनीय है कि पिछले तीन वर्षों में विधानसभा द्वारा दी जा रही राशि और पंचायतों द्वारा सीधे प्राप्त किये जा रहे भवन, वाहन एवं व्यवसाय करों में वृद्धि हुई है (यद्यपि यह राशि पंचायतों के द्वारा ही लिये जा रहे मुद्रा कर की राशि से बहुत कम है।) फिर भी वर्ष १९६२-६४ में तिरूची जिले में श्रेष्ठ कार्य होने के समाचार के बावजूद पंचायतों के करों के ३३ प्रतिशत वसूल करना बाकी रह गया था। कुछ जिलों में तो स्थिति ऐसी बनी हुई थी कि संग्रहित करों से भी अधिक राशि वसूल करनी शेष

सारिणी ६			
	खण्डों की संख्या		
जिला	स्तर १	स्तर २	२ के वाद का स्तर
उत्तरी आर्कोट	२१	१२	३
दक्षिकी आर्कोट	१९	३०	५
चेंगलपट्टु	१२	११	४
कोयम्बतूर	१६	११	१३
मदुराई	१२	३८	१४
रामनाथपुरम्	११	११	३
सेलम	३२	१३	६
तंजावुर	१४	१७	४
तिरुचिरापल्ली	२३	१२	१४
तिरुनेलवेल्ली	१५	११	५
नीलगिरि	-	३	१
कन्याकुमारी	३	५	१

रह गई। कहीं कहीं शेष राशि का योग प्राप्त की गई राशि के योग से दुगुना था। साथ ही कर वसूल करते समय ग्रामजनों को परेशान किया जाने का वृत्त भी प्राप्त हुआ था। इस विषय में सन् १९६२ में राज्य विधानसभा में प्रश्न भी उठाया गया था। भारत सरकार द्वारा बताया गया था कि, लगभग १२ दिवालिये ग्रामीणों की सम्पत्ति को अधिग्रहित करना पडा था। परन्तु बाद में उसे मुक्त कर दिया गया था। सारिणी ८ में प्रति जिला प्राप्त की गई राजस्व की राशि का विवरण दिया गया है।

ग्राम एवं नगर पंचायतों द्वारा प्राप्त कर में सबसे अधिक आय तो मुद्रा कर द्वारा प्राप्त होनेवाली आय का है। १९६०-६१ से निरन्तर यह सम्पूर्ण आय का ४० प्रतिशत होता है। १९६३-६४ में सम्पूर्ण आय रू. ५८७.१५ लाख हुई थी जिसमें व्यवसाय कर तो केवल ५.२० लाख ही था। इस प्रकार व्यवसाय कर के द्वारा पंचायतों को सब से कम आय होती है। सारिणी ९ में विभिन्न प्रकार के करों के द्वारा प्राप्त होनेवाली राशि तुलनात्मक महत्त्व के अनुसार दर्शाई गई है।

सारिणी ७ (क)

सरकार द्वारा स्थानीय संस्थाओं (पंचायत एवं पंचायत संघ) को विवरण १ हस्तान्तरण

अनुदान एवं कर	तीसरी योजना का कालखंड (रूपये लाख में)					
	१९६१-६२	१९६२-६३	१९६३-६४	१९६४-६५	१९६५-६६	कुल
			बजट अनुमात	बजट अनुमान		
१. कर						
२. स्थानीय उपकर	१९५	२५७	२३५	२३२	२३२	१,१५१
३. स्थानीय उपकर अधिभार	८५	१२८	१६०	१६८	१७०	७११
४. मुद्राक कर अधिभार	१६१	२२९	२१२	२२१	२२१	१,०४४
५. मनोरंजन कर पर अधिभार	-	७	४४	५७	५७	१६५
कुल	४४१	६२१	६५१	६७८	६८०	३,०७१
२. अनुदान						
१. स्थानीय राजस्व अनुदेशन	१६३	२७४	२७१	२७७	२७७	१,२६२
२. स्थानीय शिक्षा अनुदान	४५५	४७१	४७६	४९६	५६६	२,४६४
३. पूरक शिक्षा अनुदान	-	१९८	२०६	२२६	२५१	८८१
४. समाज शिक्षा अनुदान	१४	२६	२२	१४	१६	९२
५. विद्यालय भोजन अनुदान	१५२	१४४	१२७	१४४	१८६	७५३

सारिणी ७ (क)

सरकार द्वारा स्थानीय संस्थाओं को (पंचायत एवं पंचायत संघ) को विवरण १ हस्तान्तरित

अनुदान एवं कर	तीसरी योजना का कालखंड (रूपये लाख में)					
	१९६१–६२	१९६२–६३	१९६३–६४	१९६४–६५	१९६५–६६	कुल
६. स्थानिक 'सेस' अधिभार को पूरक अनुदान	८५	१२८	१६०	१६८	१७०	७११
७. ग्रामनिवारा कर को पूरक अनुदान	३७	७७	८६	१०२	१०५	४०७
८. महिला एवं शिशु कल्याण अनुदान	-	४	११	५	५	२५
९. स्थानीय सडक अनुदान	७९	९९	१२९	११०	१११	५२८
१०. ग्रामकार्य अनुदान	३१३	३४६	२६८	२६४	२६५	१,४५६
११. स्थानीय सिंचाई अनुदान	४०	२६	२९	३४	३४	१६३
१२. कृषि अनुदान	४२	८८	१२२	१२७	१२९	५०८
योग	१,३८०	१,८८१	१,९०७	१,९६७	२,११५	९,२५०

सारिणी ७ (ख) विवरण २

पंचायत संस्थाओ द्वारा सीधे प्राप्त संसाधन

राजस्व प्रकार	तीसरी योजना की समयावधि					
	१९६१-६२	१९६२-६३	१९६३-६४	१९६४-६५	१९६५-६६	कुल
				बजट अनुमान	बजट अनुमान	
निवास कर	११८	१२६	१६०	१४३	१४३	६८९
व्यवसाय कर	११	१४	१६	१५	१५	७१
वाहन कर	१४	२१	२२	२२	२२	१०१
अन्य स्रोत यथा बाजार शुल्क, मत्स्य केन्द्र का किराया और उत्पादन आदि	८४	११२	९३	१०९	१०९	५०७
योग कुल	२२७	२७२	२९१	२८९	२८९	१,३६८

सारिणी ८

भवन, वाहन एवं व्यवसाय कर द्वारा प्राप्त राशि और नकद शेष वर्ष १९६१-६२ का विवरण

जिला	प्राप्ति (रूपये)	नकद शेष (रूपये)	प्राप्ति (प्रतिशत)
उत्तरी आर्कोट	६,३५,९४३	११,०२,५६२	३७
दक्षिणी आर्कोट	३,६७,४९१	७,३१,१४३	३४
चेंगलपट्टु	२,८९,१५४	६,६७,५१७	३०
कोयम्बतूर	११,५५,६२६	८,६८,७२२	५७
मदुराई	६,७८,३८७	८,२५,८२८	४५
नीलगिरि	१३,५४५	४१,९९८	२४
रामनाथपुरम्	४,९७,५१६	१०,४९,७२८	३२
सेलम	७,१६,८४०	७,२९,७७४	५०
तंजावुर	६,५३,२२७	१०,२१,६१७	३९
तिरुचिरापल्ली	११,७९,५१३	८,०६,४८१	५९
तिरुनेलवेली	५,१८,९७४	८,८३,५५७	३७
योग	६७,०६,२१६	८८,२९,९२७	४३

वर्ष १९६२–६३ के लिए			
उत्तरी आर्कोट	६,७९,३०८	१२,५६,४९३	३२
दक्षिणी आर्कोट	६,६९,८६१	११,२६,५४६	३७
चेंगलपट्टु	६,०९,१९२	६,८५,८१३	४९
कोयम्बतूर	१८,००,५५३	१७,७०,१०८	५०
मदुराई	९,१९,३०६	६,७६,११७	५८
नीलगिरि	१,२५,८४३	१,२७,३८७	५०
रामनाथपुरम्	७,६९,८९२	१३,२२,००४	३७
सेलम	११,७०,६१०	३,५५,९१७	६८
तंजावुर	१२,९३,६१५	११,६१,६३७	५३
तिरुचिरापल्ली	१५,०७,७३५	८,६१,९९७	६४
तिरुनेलवेली	४,९१,१९४	७,३७,१३७	४०
योग	११,३७,१०७	१०,४०,१२६	४९

वर्ष १९६२–६३ के लिए

जिला	प्राप्ति (रुपये)	नकद शेष (रुपये)	प्राप्ति (प्रतिशत)
उत्तरी आर्कोट	१२,९२,१४५	१२,१२,१३७	५२
दक्षिणी आर्कोट	११,९७,१५३	१०,८५,६०५	५२
चेंगलपट्टु	७,३१,९९४	५,८१,४८४	५६
कोयम्बतूर	२७,४२,२६०	१८,०६,९२३	६०
मदुराई	११,८०,१९३	८,४४,७४८	५८
नीलगिरि	१,६२,७६०	१,२२,३५३	५७
रामनाथपुरम्	१०,४६,०१५	११,५१,७००	४८
सेलम	११,१८,७२६	५,८५,०५५	६६
तंजावुर	१२,१५,२८६	१४,०३,०४८	४६
तिरुचिरापल्ली	१२,७९,२९२	६,४२,५०६	६७
तिरुनेलवेली	१२,५३,०७७	९,७७,९६५	५६
योग	१,३२,१८,९०१	१,०४,९३,८२२	५६

सारिणी ९

कर	आय (लाख रूपये में)			
	१९६०-६१	१९६१-६२	१९६२-६३	१९६३-६४
१. स्थानिक सेस का अंश				
नगर पंचायत	१ ७८	१ ८२	४.३०	४ ८०
ग्राम पंचायत	२८.६४	२९.२२	५५.४३	५९.७०
२. आवास कर				
नगर पंचायत	४९ १८	५० २३	४०.४९	६९ ८१
ग्राम पंचायत	६६.८७	६८ २३	८४.२४	९० २९
३. व्यवसाय कर				
नगर पंचायत	८.२६	८.४३	९.७१	१०.८१
ग्राम पंचायत	२.४५	२.५०	४.६९	५.२०
४. वाहन कर				
नगर पंचायत	२.८९	२ ९५	५.१९	४.११
ग्राम पंचायत	११.८१	११.३९	१५.५१	१८.२५
५. मुद्रांक कर पर अधिभार				
नगर पंचायत	२८.९७	२९ ५६	४०.६४	३३.५३
ग्राम पचायत	१२८.९५	१३१.५८	१८८.५३	१७८.६१
६. मनोरंजन कर				
नगर पंचायत	३४ ५४	३५.२४	३४.५९	३५.५६
ग्राम पंचायत	१३.२८	१३.५५	१८.९९	१७.७७
७. आय हो सके ऐसे साहस				
नगर पंचायत	३१.८०	३२.४५	३४.५५	३७.६६
ग्राम पचायत	१६.५०	१६.८३	२६ ६५	२१.०५
८. योग				
नगर पंचायत	१५७.४२	१६०.६८	१६९.४७	१९६.२८
ग्राम पंचायत	२६७.८५	२७३.३०	३९४.०४	३९०.८७
९. योग	४२५.२७	४३३.९८	५६३.५१	५८७.१५

पंचायतों को अपने विवेक से कृषि भूमि पर कर तय करने का वैधानिक अधिकार है। यद्यपि इसे लागू करने में अनेक अवरोध हैं। (और उसे लागू करना अत्यंत कठिन भी है) कोयम्बतूर जिले में इस कानून को व्यापक रूप से लागू किया गया है। (इसे सारिणी १० और ११ में दर्शाया गया है।) इसकी जानकारी रूरल डेवलपमेन्ट एण्ड लोकल एडमिनिस्ट्रेशन डिपार्टमेन्ट ऑव मद्रास (मद्रास सरकार के ग्रामीण विकास एवं स्थानीय प्रशासन विभाग) द्वारा दी गई है।

सारिणी १०

जिला	मद्रास पंचायत कानून १९५८ के विभाग ११९(३) के तहत कर प्राप्त करनेवाली पंचायतों की संख्या
चेंगलपट्टु	१
उत्तरी आर्कोट	शून्य
दक्षिणी आर्कोट	३
तंजावुर	५
तिरूचिरापल्ली	शून्य
कोयम्वतूर (कुल ग्राम पंचायत) ८४६	५५७
सेलम	५
मदुराई	१०
रामनाथपुरम्	६
तिरुनेलवेली	४७
नीलगिरि	१
कन्याकुमारी	शून्य
योग	६३५

पंचायत संघों के सामान्य व्यव्य में आधी राशि का व्यय शिक्षा के लिए किया गया है जिसे मद्रास सरकार ने अपने ग्रामीण विकास एवं स्थानीय प्रशासन विभाग के द्वारा, सन् १९६४-६५ के वर्ष के दिये गए आंकडों से ज्ञात किया जा सकता है। (देखिये सारणी १२)

पंचायत संघों मे कार्यरत कर्मचारी वर्ग को भी विभिन्न समूहों में बाँटा जा सकता है। (१) समाज विकास कर्मचारी वर्ग (२) संघ के नियमित नियुक्त कर्मचारी (३) प्रवासी कर्मचारी (४) तकनिकी काम करनेवाले कर्मचारी

सारिणी ११

राज्य के विकास जिलों की विभिन्न पंचायतो में विभाग ११९(३) के तहत कृषि-भूमि पर आधारित विभिन्न करो का विवरण

क्रम विकास जिले का नाम	पंचायत का नाम	असिंचित भूमि	सिंचित भूमि कुँए आदि	बंजर भूमि
१. नीलगिरि	हुलातुर	-	-	०.२५
२. रामनाथपुरम (पूर्व)	---	-	-	-
३. रामनाथपुरम (पश्चिम)	अनुपंकुलम	०.६३	-	०.६३
४. सेलम (उत्तर)	अवतावाडी	१.५०	-	१.५७
५. सेलम (दक्षिण)	---	-	-	-
६. तंजावुर (दोनों)	मेलातुर	४.५०	-	०.५०
७. तिरुनेलवेली (दक्षिण)	सेवंतिपुरम	८.००	-	-
	काशिहारमम्	-	-	२.००
	मेन्टीयूर	-	२.००	-
८. तिरुनेलवेली (उत्तर)	तरकुर	-	-	-
	शंकरनकोइल	२.००	-	१.००
९. चेंगल पट्ट	कुनरातुर	२.००	-	१.००
१०. मदुराई (पूर्व)	मत्तुर	१.२५	-	०.५०
११. मदुराई (पश्चिम)	मार्कयन कोट्टाई	५ ३७	१.००	-
	कन्नेसेवांई पट्टी	-	-	३.००
१२. कोयम्बतूर (पश्चिम)	पापनकुलम्	-	-	४.००
१३. कोयम्वतूर (पश्चिम)	कन्नियूर	१५.००	८.००	-
१४. कोयम्बतूर (पूर्व)	पंजैतलायुर	६.००	-	-

१५. कोयम्बतूर (पूर्व)	कल्पावी	-	४.००	-
१६. कडलूर (दक्षिण)	-	-	-	-
१७. कडलूर (उत्तर)	अरुदनगुडी	१०.००	८.००	-
१८. कडलूर (उत्तर)	एलामंगलम्	-	-	१.५०
१९ उत्तरी आर्काट (दोनों)	-	-	-	-
२०. तिरुचिरापल्ली (")	-	-	-	-
२१. कन्याकुमारी	-	-	-	-

सारिणी १२
राज्य के पंचायत संघों का १९६४-६५ का व्यय

	रूपये	(लाख में)
प्रबन्धन		
पत्राचार		१२७
परिरक्षण व्यय	१७१	
लिंक मिलानेवाली सड़कें	२२८	३९९
स्वास्थ्य एवं ग्रामीण जल व्यवस्था		
स्वास्थ्य सुरक्षा	७७	
ग्रामीण जल व्यवस्था	१४८	२२५
शिक्षा		
सामान्य	१,२१२	
विद्यालय भवन	१२२	१३३४
विद्यालय भोजन अनुदान		१५८
उत्पादन कार्यक्रम		
कृषि, सिंचाई एवं ग्रामोद्योग		६६८
योग		२९११

सारिणी १३ स्थानीय संस्थाओं द्वारा आकारित व्यय

विवरण	तीसरी योजना की समयावधि					
	१९६१-६२	१९६२-६३	१९६३-६४	१९६४-६५	१९६५-६६	कुल
राजस्व						
शिक्षा परियोजना	६२६	१,१६१	१,२१२	१,२१२	१,२१२	५,४२३
प्रशासन (अनायोजित)	१०६	१५४	१६९	१६९	१६९	७६७
सड़क (अनायोजित)	१८६	३२०	३०८	३०८	३०८	१,४३०
सार्वजनिक स्वास्थ्य (अनायोजित)	२१२	२१८	१८०	१८०	१८०	९७०
विद्यालय भोजन (अनायोजित)	८४	११४	१५८	१५८	१५८	६७२
योग	१,२१४	१,९६७	२,०२७	२,०२७	२,०२७	९,२६२
पूँजी परियोजना						
सड़कें (निर्माण)	४३	२३५	२२८	२२८	२२८	१,०५२
जल आपूर्ति	११८	२२९	१४८	१४८	१४८	७९१
विद्यालय भवन	६२	१०७	१२२	१२२	१२२	५३५
कृषि, ग्रामोद्योग आदि उत्पादन परियोजना	८९	२७६	६६८	६६८	६६८	२,३६९
योग	३१२	९३७	१,१६६	१,१६६	१,१६६	४,७४७

ग्राम पंचायत में प्रशासनिक अधिकारी और लिपिक के अतिरिक्त ग्राम अधिकारी भी पंचायतों की गतिविधियों के सहभागी होते हैं। सारिणी १४ में पंचायतों के एवं पंचायतसंघों में कार्यरत सभी कर्मचारियों का वर्गीकरण दिया गया है। पंचायतों के प्रशासन पर सरकार द्वारा विभिन्न स्तर पर निरीक्षण की व्यवस्था की जाती है। इसमें राज्य सचिवालय, समाहर्ता कार्यालय एवं उपविभाग न्यायालयों का समावेश होता है।

इसके अतिरिक्त, पंचायतों के अधिकारी एवं अन्य कर्मचारी तथा प्रचार कार्य के साथ संलग्न सभी व्यक्तियों के प्रशिक्षण के लिए आवश्यक व्यय करना पड़ता है। इस व्यय की राशि १९६१-६२ में १ करोड थी, वह १९६४-६५ में बढकर रू. १ करोड ३५ लाख हुई थी। वह राशि ग्राम विकास एवं स्थानीय प्रशासन विभाग के लिए दी गई कुल राशि से लगभग ११ लाख अधिक है और अधिक विकास आयुक्त (एडीशनल डेवलपमेन्ट कमिशनर) के कार्यालय के लिए दी गई राशि से लगभग ३ लाख रुपये अधिक है। सब से अधिक खर्च स्थानीय निधि अंकेक्षण के लिए किया जाता है। इसके लिए १९६५-६६ में रू. २२ लाख दिये गए थे। यह राशि १९६१-६२ में दी गई राशि से दुगुनी है। इसी प्रकार ग्राम अधिकारियों को दिये जानेवाले पंचायत विकास भत्ते की राशि भी १९६१-६२ में रू. १५ लाख से बढकर १९६४-६५ में रू. २६ लाख तक पहुँची है।

उपलब्धियाँ

सरकार ने राज्य विधानसभा में बताया था कि पचायतों के विकास कार्यों में सर्वाधिक प्राथमिकता पेय जल, संलग्न सडकें और प्रत्येक गाँव को विद्यालय प्राप्त करवाने के प्रति ही है।

पंचायत प्रशासन की प्राप्त उपलब्धियों की समीक्षा स्थानिक प्रशासन विभाग के मंत्री ने मद्रास राज्य में १९६४-६५ के समय पंचायतों के विकास के संदर्भ में की गई समीक्षा के साथ है। उल्लेखनीय है कि उस समय पंचायत संघ की समयावधि केवल ३ या ४ वर्ष की थी।

महत्त्वपूर्ण क्षेत्रों में प्राप्त सफलताएँ इस प्रकार हैं।

कृषि

पंचायत संघों के द्वारा, पाँच वर्ष के बजट में, तीसरी योजना के ६० महीनों में से पहले ४३ महीनों में कृषि के लिए दी गई रू. ४.१६ करोड की राशि में से लगभग

रू. २.३१ करोड की राशि कृषि विकास के लिए खर्च की गई थी। इससे पंचायतों का बागान, पंचायत के उपकरण एवं सहकारी संस्थाएँ, वैयक्तिक खेत उत्पादन को प्रोत्साहन, ग्राम सेवकों के लिए उपकरण, और ब्लॉक मुख्यालय में रखे जानेवाले निदर्शन उपकरण आदि के लिए निर्धारित राशि का पूर्ण या या उससे भी अधिक उपयोग हो सका था। इस कालखंड में कुल २५,९४० एकड भूमि को पंचायतों की बागान परियोजना में समाहित कर लिया गया था। चेंगलपट्ट एवं तंजावुर जिले, पूर्वी रामनाथपुरम् और उत्तरी सेलम विकास जिलों में से प्रत्येक में २,५०० एकड मे बागान निर्मित किए गए थे। अन्य बातो के लिए पूर्वनिर्धारित राशि से बहुत कम व्यय किया गया था। जैसे कि ग्राम सहायकों के लिए पाँच वर्ष में अनुमानित राशि रू. १,१२,५०,००० में से केवल रू. ११,५६,००० व्यय किये गये जो निर्धारित राशि का १० प्रतिशत ही था। 'निदर्शन भूखंड और निदर्शन क्षेत्रों के निर्वाह' की स्थिति इससे थोडी अच्छी थी। सारिणी १५ में संख्यात्मक और व्यय का विवरण दिया गया है।

पशुपालन

पशुपालन का कार्य भी पंचायत संघ करते हैं। इस हेतु होनेवाले व्यय की भी इसी प्रकार की पद्धति निश्चित है। पंचायत संघों द्वारा ४२ महीनों में कुल लगभग रू. १२,७९,४५१ का व्यय (३० सितम्वर १९६४ तक) इस कार्य में किया गया था।

संघो के द्वारा किये जा रहे पशुपालन के लिए पाँच वर्ष में लगभग रू. १ करोड का प्रबन्ध किया गया था। इस राशि में विभिन्न स्थानो पर लगभग २५ पशुचिकित्सालयों के भवन निर्माण के लिए सरकार द्वारा दिये गये रू. ४ लाख कों भी समाविष्ट किया गया है। सारिणी १६ में इस कालखंड मे प्राप्त संख्यात्मक सफलताएँ और इसके लिए किये गये व्यय का विवरण भी दर्शाया गया है।

मत्स्योद्योग कार्यक्रम

३१ अक्तूबर १९६४ तक तंजावु जिले में और राज्य के विभिन्न क्षेत्रों में स्थित ४६ संघों मे कुल १८३ मत्स्य पालनकेन्द्र भी शुरू किये गए हैं जब कि अन्य संघों में इसे शुरू किया जाना था।

सारिणी १४

वर्ग		संख्या	वेतनमान
समुदाय विकास एवं राष्ट्रीय विस्तरण सेवा	खण्ड विकास अधिकारी एवं कमिशनर	३७५	२५०-४००
	विस्तरण अधिकारी, कृषि	३७९	२१०-४००
			१५०-२००
	विस्तरण अधिकारी, सहकारिता	३७५	२००-२७०
	विस्तरण अधिकारी, उद्योग	३७५	१४०-२२०
	विस्तरण अधिकारी, पशुपालन	३७५	१४०-२२०
			१००-१५०
	संघ अभियता	३७५	१५०-३५०
	विस्तरण अधिकारी, पंचायत	३६७	१४०-२२०
	विस्तरण अधिकारी, शिक्षा	३७५	१२५-२५०
	मुख्य सेविका	३७५	१२५-२५०
	ग्राम सेविका (प्रति संघ दो)	७४१	९०-१४०
	ग्राम सेविका-१ (प्रति संघ तीन)	१०९४	१२५-१७५
	ग्राम सेविका-२ (प्रति संघ सात)	२३६०	९०-१४०
	समाज कल्याण कार्यकर (प्रति संघ दो)	७५०	९०-१२५
			९०-१४०
	विस्तरण अधिकारी, सांख्यिकी	९८	१२५-१७५
	(प्रति तहसील एक)	३७५	१५०-२००
कार्यालय कर्मचारीगण	प्रबंधक	३७५	१२५-१७५
	लेखाकार		विशेष वेतन रु. १५)
	श्रेयान लिपिक (प्रति संघ दो)	७५०	१२५-१७५
	जीप चालक	३७५	७०-८०
तकनिकी सहायक	गौण सिंचाई प्रमुख	३७५	१२०-१७५
सार्वजनिक राजस्व से वेतन प्राप्त अन्य कर्मचारी	(क) ग्राम अधिकारी (ग्राम अध्यक्ष,कर्णम्, तलैयारी आदि	४९,८०३	वर्ष १९६२-६३ के लिए वार्षिक बजट रू. १०९, ८१ लाख प्रति व्यक्ति प्रतिवर्ष औसतन (रू. २२०)
	(ख) प्राथमिक और उच्च प्राथमिक विद्यालय के अध्यापक (१९६३)	९०,२३५	
	(ग) माध्यमिक विद्यालय के अध्यापक (१९६०-६१)	१२,९००	

सारिणी १५

कृषि कार्यक्रम के अंतर्गत विभिन्न योजनाओं के क्रियान्वयन का विवरण और प्रत्येक विवरण के लिए सुरक्षित की गई राशि (३१ अक्तूबर १९६४ तक)

योजना का नाम	आवंटित राशि १९६१-६२	खर्च की गई राशी ३१ अक्तू ६४ तक
पूरक अनुदान		(लाख रूपये में)
१. पचायत बागान वृक्षारोपण में वृद्धि	१०१.२५	८०.०२
२. पंचायत द्वारा खाद-उत्पादन के लिए प्रोत्साहन	१५.००	३.०३
३ जैविक खाद तैयार करने के लिये प्रोत्साहन	१५ ००	४.८५
४. पंचायत एव सहकारी मडली के लिए उपकरण	१८.७५	२५.३१
५. अन्य	२४.३६	२.१३
पूरक अनुदान का योग	१७४.३८	११५.३४
२. अपूरक अनुदान		(लाख रूपये में)
१. ग्राम सहायक सेवा	११२.५०	११.५६
२. सब्जी के बीज एवं फलों के पौधो का वितरण	२६.२५	१३.९३
३. व्यक्तियों को पौधो की सुरक्षा के लिए उपकरण	२८.१३	१८.२७
४ व्यक्तियो को खाद तैयार करने के लिए प्रोत्साहन	२२.५०	१७.२३
५. जैविक खाद तैयार करने के लिए व्यक्तियों को प्रोत्साहन	१८.७५	४.०१
६. ग्रामसेवक के लिए कृषि उपकरण	११.२५	११.८६
७. ब्लॉक केन्द्र पर ससाधनों की खरीदी	१६.८७	१४.४८
८. निदर्शन के लिए स्थान का संचालन	९.००	३.७७
९. निदर्शन के लिए कीटाणुनाशक	२१.००	६.८९
१०. खाद्यान्न रोपों के लिए कीटाणुनाशक	५६.२५	१४.२६
योग	३२२.५०	११६.२६
महायोग (१ एव २)	४९६.८८	२३१.६०

लघु सिंचाई

लघु सिंचाई के लिए अक्तूबर १९६४ तक राज्य में २१,७०० तालाब तैयार किये गए। इसके लिए ८,५१,००० एकड भूमि पंचायत संघों को १९६३-६४ में हस्तांतरित की गई थी। इस लघु सिंचाई योजना की देखभाल के लिए रू. २८,५९,००० का व्यय भी उस समयावधि में किया गया था।

शिक्षा

१९६२-६३ में शिक्षा के क्षेत्र में पंचायत संघो ने लगभग ४/९ स्थानिक उपकर शिक्षानिधि में देने के साथ साथ सामान्य निधि से भी लगभग रू. ६४ लाख का खर्च प्राथमिक शिक्षा के लिए किया था। इस प्रकार पंचायत संघों का १९६३-६४ में प्रदान लगभग रू. १०९ लाख तक पहुँच गया था, जो १९६४-६५ तक रू. १३६ लाख होने का अनुमान था।

इन संघों ने लगभग १०० विद्यालयों मे पर्यावरणीय स्वच्छता के लिए परियोजना भी शुरु की थी जिसके लिए रू. २,००,००० का व्यय भी किया गया था। कुल मिलाकर २१ संघों (प्रत्येक जिले में एक के हिसाब से) में ७३० प्राथमिक विद्यालय भी आरम्भ किये गए थे। मद्रास शहर के निकट पूनामल्ली पंचायत संघ की लगभग १५ पंचायतों में संकलित बालकल्याण एवं बालविकास परियोजना भी शुरू की गई थी। इसके अतिरिक्त पंचायतों को लगभग १४,००० रेडियो सेट भी दिये गये थे। प्रत्येक पंचायत को दिये गए रेडियो सेट के लिए रू. १८० सहायता निधि दी गई थी जब कि पंचायत क्षेत्र सहाय के छोटे कस्बों को तो दूसरे सेट के लिए भी रू. १०० सहायता राशि दी गई थी। इस रेडियो सेट की संरक्षा के लिए, पंचायत रेडियो मेन्टेनन्स कार्पोरेशन की स्थापना की गई थी। उसे प्रतिवर्ष रू. २० शुल्क लेकर (प्रतिसेट) पंचायत के रेडियो सेट की देखभाल का दायित्व सौंपा गया था। यद्यपि सेट के फुटकर कलपुर्जो के लिए १० प्रतिशत अधिभार लेकर पंचायतों को उसका व्यय करना था।

सारिणी १६

पशुपालन परियोजना के अंतर्गत निर्धारित व्यय और प्रत्यक्ष लक्ष्य प्राप्ति का विवरण
(३० सितम्बर १९६४ तक)

परियोजना का विवरण	उपलब्धि (संख्या)	व्यय (रुपये)
१. सांडों का वितरण	१,५४२	५,९७,६१३
२. आदानप्रदान के स्तर पर भेडों का वितरण	१५,८२५	५,६७,७१८
३. आदानप्रदान के स्तर पर मुर्गी बतकों का वितरण	६४,१५५	८,६०,९७८
४. विस्तरण अधिकारी एवं ग्राम सेवकों के लिए प्राथमिक चिकित्सा बक्सा (पशुपालन)	७३१	७६,५९९
५. ब्लॉक के मुर्गापालन केन्द्र का आरंभ	२९	६४,५३२
व्यक्तिगत पालन करनेवाले को दी गई सहायता	१,८७३	२,०६,९८५
६. पशु चिकित्सालय का मकान परिचर्याखाना सहित	-	४,०५,०२६

ग्राम सुरक्षा दल में लगभग १४ लाख पंजीकृत स्वयंसेवक थे और १०,३१० मातृसंगम थे (प्रति संघ ३० का लक्ष्य था।) इस ग्रामसुरक्षादल के सदस्यों ने रू. १,४५,००० दान भी दिया था।

सेलम जिले में स्थित दो विकास खण्ड कोली हिल्स और येरकाड को पंचायत संघों के द्वारा प्राप्त होनेवाले सामान्य संसाधन के अतिरिक्त भारत सरकार द्वारा, पाँच वर्ष तक वार्षिक रू. १० लाख से अधिक अनुदान भी दिया गया था। इसके अतिरिक्त सरकार द्वारा ग्रामीण मानव शक्ति को कार्यरत करने के लिए आरम्भ की गई ग्रामीण कार्य परियोजना लगभग ५५ पंचायत संघों में कार्यरत थी। इसके अतिरिक्त १९६३ के अन्त तक तो ग्रामीण उद्योगों के लिए तीन अग्रिम परियोजनाओं को केन्द्र सरकार की अनुमति भी प्राप्त हो गई थी। भारत सरकार ने इस परियोजना को सूचित किया था। साथ ही प्रारम्भ से उसे सहायता देने का विश्वास दिलाया था और इसका पालन भी केन्द्र सरकार ने पूर्ण रूप से किया था।

जहाँ तक पंचायत संघों के द्वारा जमा किये जानेवाले करों का सम्बन्ध है उसमें

लगभग प्रत्येक संघ ने स्थानिक उपकर (अधिकार) भी लगाया था। उसकी दरें उस क्षेत्र से जमा किये गये राजस्व का प्रतिशत थीं। साथ ही सरकार को संघ क्षेत्र में जमा किये गए कर के ७५ प्रतिशत से १५० प्रतिशत अनुदान भी देना था।

इन पंचायत संघों के द्वारा जमा किये जा रहे कर का औसत लगभग ३१ पैसे था, जिसके प्रति सरकार ने १९६१-६२ में रू. ८५,२४,००० अनुदान भी दिया था, जो १९६५-६६ में बढ़कर रु. १ करोड ७० लाख हुआ था।

इस प्रकार लगभग ३२९ पंचायत संघों द्वारा मनोरंजन एवं प्रदर्शन करों पर अधिभार लेना शुरू करने पर १९६४-६५ तक उन संघों नें ५,७०,००,००० की आय का अनुमान भी लगाया था।

राज्य विधानसभा के साथ सम्बन्ध

राज्य विधानसभा के सदस्यों को पंचायतों में रुचि होना स्वाभाविक है। उन्होंने पंचायतों की गतिविधियों के विषय में कुछ चिन्ता भी दर्शाई थी। विधानसभा के ये सदस्य सदन में पंचायतों के सम्बन्ध में निश्चित या सामान्य विषयों में सम्बन्धित प्रश्न पूछते थे। इसके अतिरिक्त मद्रास सरकार के विभागों के द्वारा घोषित किये गये वैधानिक नियमों के प्रकाश में (सहायक विधान समिति) पंचायतों की गतिविधियों पर निगरानी रखनी है।

यहां उल्लिखित ये वैधानिक नियम राज्य के कई कानूनों को ध्यान में रखकर रचे गऐ हैं। नियमों की समीक्षा करने की और पंचायत पद्धति में परिवर्तन करने की भी राज्य विधानसभा की वैधानिक सत्ता है।

पंचायतों मे सदस्य कई बार विधानसभा एवं विधान परिषद में प्रश्न उठाते ही रहते हैं। पंचायत से सम्बन्धित विभिन्न विषय, यथा चुनाव, अध्यक्ष, सदस्य एवं पंचायतों की कार्यवाही तथा अधिकारों के सम्बन्ध में उनका प्रश्न उठाना सहज है। इसके अतिरिक्त, पंचायतों के आर्थिक विषय एवं प्रशासन जैसे विषय में भी प्रश्न पूछे जाते हैं। इसके उत्तर में सरकार समय समय पर महत्वपूर्ण आंकडों की, घटनाओं की तथा अपनी नीतियाँ और कार्यक्रमों की जानकारी देती है।

मद्रास पंचायत कानून (१९५८) और जिला विकास परिषद कानून (१९५८) पारित किए गये वैधानिक नियमों का परीक्षण विधानसभा सबोर्डीनेट लेजिस्लिटिव समिति द्वारा होता है।

गत चार पाँच वर्षों में इस समिति ने अधिकांश वैधानिक नियम बिना किसी भी

प्रकार के परिवर्तन पारित किये हैं। यद्यपि आलोचना अवश्य होती रही है। जैसे कि ९ वे वृत्तांत मे (मार्च १९६५) उसने जिला विकास समिति के अध्यक्ष के द्वारा बनाया गया विवरण सीधा सरकार को देने के बजाय जिला विकास समिति को सौंपना चाहिए। इससे पूर्व मार्च १९६४ के वृत्तांत में समिति को कुछ अधिकारियों द्वारा किये जा रहे अधिक हस्तक्षेप की भी आलोचना करते हुए बताया था कि ये अधिकारी उनके जॉच अधिकारों का अधिक उपयोग करते हैं।

समिति ने अपने मार्च १९६५ के नवें प्रतिवेदन मे पंचायतों और पंचायत संघों की समिति द्वारा प्रस्तुत की गई प्रशासनिक बातों के विषय में निम्न लिखित बातें दर्शाई हैं :

उपरोक्त आदेश (जी.ओ. (आर.टी.) २१६० आर. डी. एण्ड एल.ए. १० अक्तूबर १९६३) सरकार ने प्रशासनिक प्रतिवेदन तैयार करने के कुछ नियम बनाये हैं जिसकी जानकारी २२ जनवरी १९६४ के राजपत्र कानून विभाग के ५५(१) में प्रकाशित की गई है। पंचायत संघों की परिषदों का पहला बैच अक्तूबर १९६० में और अन्तिम बैच १९६१ में प्रस्थापित किये जाने के कारण क्या सरकार के सम्बन्धित विभाग को पंचायत संघों की परिषदों ने इससे पूर्व के वर्षो के लिए प्रतिवेदन प्रस्तुत किया है या नहीं इसकी जानकारी देने का निवेदन विभागों को किया गया था। इसके उत्तर में सरकार के पंचायत प्रशासन विभाग ने बताया था कि पंचायत संघों की परिषदों के वर्ष १९६१-६२ के प्रतिवेदन मदुराई और कोयम्बतूर के समाहर्ताओं के कार्यालयों द्वारा प्राप्त हुए हैं और १९६२-६३ के लिए प्रतिवेदन मदुराई, रामनाथपुरम् और सेलम के समाहर्ताओ के कार्यालयों की ओर से प्राप्त हुए हैं ... १० अक्तूबर, १९६३ के जी. ओ. (एमएस) २१६० आर. डी. एण्ड एल.ए. मे पंचायत संघों एवं पंचायतों ने अपने प्रशासन प्रतिवेदन किस स्वरूप में और किस ढाँचे के अनुसार तैयार करने होंगे इसके लिए समाहर्ताओं को सूचना दी जाए और उस प्रतिवेदन के आधार पर एक राज्यव्यापी प्रतिवेदन भी तैयार किया जाए। इसके लिए सरकार द्वारा आवश्यक कदम भी उठाये जा रहे हैं।

कमिटी ऑन सबोर्डीनेट लेजिस्लेशन ने इस उत्तर को ध्यान में रखते हुए, पूर्व में किये गए अपने निर्देशों के प्रति ध्यान आकर्षित किया था। इस कानून की रचना के साथ या इसके तुरन्त पश्चात उसके (कानून) आधार पर आनुषांगिक नियमों की रचना करना आवश्यक था। साथ ही इस समिति का मानना है कि इस निश्चित मामले में नियम जारी करने में अकारण विलंब हुआ था। इस विषय में समिति इस निष्कर्ष पर

पहुँची थी कि,

'...ऐसी स्थिति में सम्बन्धित समाहर्ता कार्यालयों को प्रशासनिक प्रतिवेदन पहुँचाने में पंचायत संघों की समितियाँ स्वाभाविक ही कानून का पालन सक्षम रूप से नहीं कर पाएँगी।'

इससे पूर्व १९६१-६२ के प्रतिवेदन के सम्बन्ध में सरकार के घोषणापत्र में (जी.ओ. १६७७ एल ए ८ अक्तूबर १९६० की आलोचना करते हुए समिति ने यह अभिप्राय दिया था कि, रू. ५० से कम राशि को आयुक्त पंचायत संघ परिषद की अनुमति से दे सकता है। जब कि रू. ५० से ऊपर की राशि देने का निर्णय पंचायत संघ ही कर सकता है। उस निर्णय को अन्तिम माना जाए। पंचायत सम्बन्धित इसी प्रकार के एक अन्य प्रावधान अधिसूचना क्र. ४५ नियम-६-जी-ओ (एमएस) १२४८, एल. ए. २६ अप्रैल १९६१) पर टिप्पणी करते हुए समिति ने बताया था कि, जब रु. ५० से अधिक राशि का कर, शुल्क या अन्य राशि को रद्द करना हो, तब आर.डी.ओ. की अनुमति अनिवार्य बनती है। यद्यपि समिति ऐसी अनुशंसा भी करती हैं कि इस राशि को बढाकर रु. १०० करनी चाहिए क्योकि पंचायतों को अधिक अधिकार देना भी आवश्यक है। समिति ने यह अनुशंसा भी की थी कि अधिसूचना ५१(२) सी के अन्तर्गत घोपित किये गये नियमों को भी इसे लागू करना चाहिए।

१९६१-६२ के एक अन्य प्रतिवेदन में समिति ने बताया था कि पंचायत अध्यक्ष, उपाध्यक्ष और पंचायत समिति के अन्य सदस्यों को अधिसूचना नं. १६ जी.ओ. (एम.एस.) १२४८ एलए-२६ अप्रैल १९६१ के अनुसार कम से कम रेलवे के दूसरे दर्जे के एक टिकट का मार्गव्यय या स्टीमर का मार्गव्यय देना चाहिए।

इन नियमों को विधानसभा के सम्मुख प्रस्तुत करने में कई यार छह महीने का विलम्ब भी हो जाता है, जिसके प्रति भी समिति ने सरकार का ध्यान आकर्षित किया था। समिति ने अपने १९६१-६२ में दिये गए १७ वें प्रतिवेदन में ऐसी अनुशंसा की थी कि, मद्रास पंचायत धारा १९५८ के अन्तर्गत प्रस्थापित सभी नियमों को मिला कर उसे विषय के अनुसार वर्गीकृत करना चाहिए जिससे जब कभी आवश्यक हो तब सन्दर्भ प्राप्त करने में सरलता हो। ऐसी सर्वग्राही पुस्तक अभी तक (जुलाई-१९६५ तक) प्रकाशित नहीं की गई है।

इस 'कमिटी ऑन सबोर्डीनेट लेजिस्लेशन' के अतिरिक्त विधानसभा की एक अन्य समिति 'लेजिस्लेटिव कमिटी ऑन पब्लिक एस्योरन्सीज' भी है। यह समिति इस सरकार द्वारा विधानसभा को समय समय पर दिये गये आश्वासन पर ध्यान रखती है।

इस समिति की कारवाई के समय मे जो प्रश्न उपस्थित किये गये थे उसमे से एक प्रश्न किसी पंचायत संघ के प्रमुख कार्यालय के स्थान के विषय मे भी था। परन्तु बाद में इस विषय को समिति ने ही स्थगित मान लिया था।

न्यायिक गतिविधियाँ

पंचायत पद्धति के कई विषय कई बार न्यायालय तक पहुँचते हैं। उनमें अधिकांश तो चुनाव मे निषेधाज्ञा माँगनेवाली याचिकाएँ होती है जो कुछ व्यक्तियों द्वारा अपने निजी असन्तोष के कारण भी अंकित की जाती हैं। ऐसे खटले कई बार दीर्घ काल तक चलते रहते हैं। कई बार अविश्वास प्रस्ताव की 'याचिका' द्वारा चुनौती दी जाती है। इसमें एक याचिका तो ऐसी भी थी कि, जिसमें सभा का स्थल बदल कर अविश्वास प्रस्ताव पारित करने के कारण अंकित की गई थी। उच्च न्यायालय में प्रस्तुत की गई इस याचिका में दर्शाया गया था कि, इस सभा को ही अनियमित माना जा सकता है और, इस सभा में ही उसकी नियमानुसारता के संदर्भ में तीखी चर्चा हुई थी (क्योंकि उस सभा में प्रस्तुत विषयों के अनुसार कार्यवाही नहीं की गई थी)। यद्यपि यह वाद १९६४ में पंचायतों के नये चुनाव होने तक लटका ही रहा था।

प्रशिक्षण

तमिलनाडु पंचायत संघ (टीऐनपीयु) द्वारा १९५५ के अंत में पंचायत के सदस्यो को प्रशिक्षित करने की एक परियोजना तैयार की गई थी। उसे कार्यान्वित करने के लिए सरकार से सहायता भी माँगी गई थी। इस परियोजना को सरकार ने विभिन्न स्तर पर विचारविमर्श के लिए रखा, परन्तु बार बार किसी प्रकार का निश्चित कारण दर्शाए बिना ही इस बात को स्थगित किया गया था। अगस्त १९५८ में पुनः टीएनपीयु ने पंचायत सदस्यों के लिए प्रशिक्षण स्थल के विषय में सरकार से अनुमति माँगी थी। सरकार ने इसका स्वागत किया फिर भी इसके लिए तत्काल तो अनुमति नहीं दी। अन्त में १९६१ मे तमिलनाडु पंचायत संघ के अध्यक्ष, उपाध्यक्ष के प्रशिक्षण के लिए अनुमति दी गई थी।

इस परियोजना के प्रथम भाग में दिसम्बर १९६१ में ४ संगोष्ठियां आयोजित की थीं जिसमें (१) ११ अधिकृत प्रशिक्षक (प्रत्येक जिले के लिए एक) जो विभागीय स्तर के अधिकारी हों उन की नियुक्ति करने का निर्णय लिया गया। (२) इसके अलावा पंचायतों के तालुका संघों के इस कार्य के लिए सक्षम अध्यक्ष को समाविष्ट

करने का भी निर्णय लिया गया।

अप्रैल १९६२ में प्रशिक्षण शुरू किया गया और एक वर्ष तक चलता रहा। पंचायत के अध्यक्ष एवं उपाध्यक्षों को दिए जा रहे इस प्रशिक्षण में लगभग रु. ७०,८४४ का व्यय हुआ। इसमें लगभग रु. ५०,००० का खर्च तो कर्मचारियों के वेतन और भत्ते पर हुआ था। अध्ययन शिविर या प्रशिक्षण का जो कार्यक्रम आयोजित किया था वह सामान्य रूप से प्रत्येक समूह के लिए दो से तीन दिन तक चलता था। वह अध्ययन शिविर सरकार के (ग्रामीण विकास और स्थानिक प्रवन्धन) रूरल डेवलपमेन्ट एण्ड लोकल एडमिनिस्ट्रेशन - आर. डी. एण्ड एल.ए) विभाग के विशेष अधिकारी की देखरेख में चलता था। अप्रैल १९६३ तक पंचायतों के अध्यक्ष और उपाध्यक्षों को मिलाकर कुल २१,७३५ प्रशिक्षार्थी (कुल संख्या ८० प्रतिशत) इस से लाभान्वित हुए थे।

इन अध्ययन शिविरों के अलावा, पंचायत संघों के विभिन्न स्तर के कर्मचारियों को भी प्रशिक्षित करने के लिए नियमित रूप से प्रबन्ध किया जाता है। ग्रामसेवकों के लिए प्रशिक्षण का प्रबन्ध सात ग्रामीण क्षेत्रो के केन्द्रों पर किया जाता है। इसके लिए दो वर्ष का कार्यक्रम रहता है। इन केन्द्रो में से कुछ केन्द्रों में गृहविज्ञान की प्रशाखा भी है, जिसमें ग्रामसेविकाओं को एक वर्ष तक प्रशिक्षित किया जाता है। प्रशिक्षण की अवधि में प्रत्येक ग्रामसेवक और सेविका को रु. ४० और रु. ४५ प्रतिमाह भत्ता भी दिया जाता है।

क्षेत्रीय अधिकारियों को तिरूपति में (केन्द्रीय मंत्रालय और रिझर्व बेंक द्वारा) चलनेवाले प्रशिक्षण केन्द्रों में साढ़े तीन मास का प्रशिक्षण लेना पड़ता है जब कि विस्तरण अधिकारी (प्रशिक्षण) के लिए यह समयावधि छह महीने की है। यह शिक्षण सामाजिक शिक्षा संयोजक प्रशिक्षण केन्द्र में दिया जाता है। प्रमुख सेविका के लिए प्रशिक्षण १० मास १५ दिन का है। विस्तरण अधिकारी (कृषि) को कोयम्बतूर के कृषिमहाविद्यालय में पुनरध्ययन करना होता है, और ऐसा ही पुनरध्ययन वर्ग विस्तरण अधिकारी (पशुपालन) को करना होता है।

स्वास्थ्य विभाग के कर्मचारियों को सामूहिक रूप में, पूनामल्ली में स्थित प्रशिक्षण केन्द्र में प्रशिक्षण लेना होता है। (यह केन्द्र के स्वास्थ्य मंत्रालय द्वारा चलाया जाता है।) जब कि विकास खण्ड अधिकारियों को ग्रामोद्योग, ऋण एवं कार्यालयीन विषयों में १५ दिन का प्रशिक्षण लेना होता है और जो राजस्व से सम्बन्धित नहीं हैं उन कर्मचारियों को जिला सर्वेक्षक द्वारा एक सप्ताह का प्रशिक्षण दिया जाता है।

इस के अलावा चयन किये गए विकास खण्ड अधिकारी और विस्तरण अधिकारी के लिए मैसूर के भवानी सागर में, हैदराबाद स्थित हैदराबाद अभिविन्यास एवं प्रशिक्षण केन्द्रों में २२ या ४५ दिन का 'अभिविन्यास' पाठ्यक्रम भी चलाया गया था। राजस्व विभागीय अधिकारियों के लिए गाँधीग्राम में पॉच दिन का प्राथमिक पाठ्यक्रम निश्चित किया गया था। कालुपत्ती में उन्हें इसके पश्चात पॉच दिन का ग्रामोद्योग का पाठ्यक्रम भी करना होता है।

सेवारत ग्रामसेवक एवं ग्रामसेविकाओं के लिए एक से तीन दिन का सेवाकालीन प्रशिक्षण का कार्यक्रम भी है। साथ ही ग्रामीण नेताओं के लिए तीन दिन का प्रशिक्षण रहता है। यह प्रशिक्षण ५०-५० के समूह मे दिया जाता है।

केन्द्र के समाज विकास एवं सहकार मंत्रालय द्वारा दर्शाई गई रूपरेखा के अनुसार राज्य में एक भी प्रशिक्षण केन्द्र नहीं है। १९६५ के प्रारम्भ तक तो लगभग ४२ प्रतिशत विकास खण्ड अधिक प्रशिक्षित नहीं थे। इसी प्रकार समाज शिक्षा अधिकारियो में से अधिकांश प्रशिक्षित नहीं थे। जब कि ग्रामसेवक और ग्रामसेविकाओं में प्रशिक्षित लोगों की संख्या क्रमश: १७ प्रतिशत और ४ प्रतिशत थी, जो अपर्याप्त थी। सन् १९६४ में भी विस्तरण अधिकारियों की संख्या १० प्रतिशत कम थी।

मद्रास राज्य के पंचायत संघों में पंचायत के विकास में परामर्शक समिति की भूमिका

प्रवर्तमान पंचायत पद्धति की कार्यवाही से उत्पन्न समस्याओं पर विचारविमर्श करने के लिए सरकार ने सन् १९६४ में तीन परामर्शक समितियों की रचना की थी। उसमें प्रत्येक विकास परिपद की स्थायी समिति के अध्यक्षों को सदस्य बनाया गया था। समाहर्ता, राज्यस्तरीय अधिकारी और जनसमुदाय में से सन्मानीय व्यक्तियों को भी इसमें समाविष्ट किया गया है। ये समितियाँ पंचायत पद्धति, उसकी कमियों और उसमें से उत्पन्न होनेवाले प्रश्नों के संदर्भ में चर्चा करती है। सामान्य रूप से इन समितियों की बैठक में मुख्यमंत्री स्वयं अध्यक्षता करते हैं। सरकारी स्तर पर इन समितियों के समानान्तर गठित समिति की बैठक में समाहर्ता सदस्य रहते हैं। वे अपनी वार्षिक बैठक मे प्रमुख रूप से पंचायत संचालन के संदर्भ में विचारविमर्श करते है।

राज्यस्तरीय अन्य संस्थाओं में मद्रास राज्य पंचायत संघ तमिलनाडु पंचायत संघ के रूप में विख्यात है। यद्यपि यह संघ असंवैधानिक और अशासकीय है परन्तु

वह पंचायत संचालन की कारवाई के संदर्भ में विचारविमर्श करता है। यह संघ प्रति दो वर्ष में राज्य सरकार की परिषद का आयोजन भी करता है। अभी अभी ऐसी दो परिषदें, एक तिरूचिरापल्ली में सन् १९६२ में और दूसरी मुंबई में १९६४ में आयोजित की गई थीं। सन् १९६४ में आयोजित इस परिषद में कुछ विषयों पर चर्चा की गई थी और अनेक प्रस्ताव भी पारित किये गए थे।

तमिलनाडु पचायत संघ की १९६२ में आयोजित संघ की बैठक में भी कुछ सकारात्मक परिणाम प्राप्त हुए थे। उसके प्रस्तावों पर सरकार ने विचारविमर्श किया था। इनमें से कुछ प्रस्ताव पर सितम्बर, १९६२ में उस राज्य के प्रमुख सचिव के साथ टीएनयुपी के प्रतिनिधियों ने विचारविमर्श भी किया था। इस बैठक में टीएनयुपी द्वारा दिये गए निर्देशों को स्वीकार भी किया गया था। फिर भी, इस बैठक में उपस्थित हुए कई प्रश्न राज्य सरकार के सामने सन् १९६४ के अंत तक केवल प्रक्रिया के स्तर पर ही उलझते रहे थे।

इस टीएनयुपी में तालुका पंचायत संघों को भी संलग्नित संस्थाकीय सदस्य के रूप में जोड़ा गया है। तामिलनाडु पंचायत युनियन को तो राज्य सरकार ने १९५२ में ही मान्यता दे दी थी और ५ रु. सदस्यता शुल्क देकर उसका सदस्य बनने के लिए पंचायतों को अनुमति भी दे दी थी। इसके अतिरिक्त ये पंचायतें अगर पंचायत संघ की पत्रिका की ग्राहक बनना चाहें तो इसके लिए भी उन्हें अनुमति दी गई थी। इससे पूर्व मद्रास प्रेसिडेन्सी में भी जिला मंडलों तक सीमित रूप से इसका प्रबन्ध किया गया था और वह अपनी इकाइयों के लिए इसी प्रकार से कारवाई करती थी। सन् १९५७ जिला मंडलों के विलीनीकरण के साथ ये संस्थाएँ भी विलुप्त हो गईं। विभिन्न जिलों में पिछले एक-दो वर्ष में पंचायत परिषद जैसी कई इकाईयों की रचना हुई है। सरकार के द्वारा अभी-अभी लिये गए कुछ निर्णयों के कारण ऐसी इकाइयों और संस्थाओं की भी संख्या बढ़ गई है और ये अधिक सक्रिय भी बन गई हैं। फिर भी इन इकाइयों ने मुख्य रूप से स्वयं के आंतरिक प्रश्नों की चर्चा की है।

पंचायत द्वारा किये गए निवेदनों के प्रकार

पंचायतों के संचालन के अलावा राज्य सरकार के कानूनी एवं प्रशासनिक नियंत्रण के संदर्भ में इससे पूर्व चर्चा हो ही चुकी है। इसमें दर्शाया गया है कि किसी भी बात में पंचायतें अपनी इच्छानुसार निर्णय नहीं ले सकती हैं। सरकार पंचायतों पर किस सीमा तक नियंत्रण रखती है इसके कई दृष्टांत दिये जा सकते हैं। जो बातें केवल

पंचायतों या गाँवों के ही संदर्भ में हों उसके लिए भी उन्हें सरकार से अनुमति लेनी पडती है। पंचायत राज के वास्तविक रूप को समझने के लिए इन इकाइयों के द्वारा उत्पन्न प्रश्न और उसके समाधान के लिए पंचायतों और पंचायत संघों ने जो निवेदन किये हैं इस से ज्ञात होता है।

इस संदर्भ में विचित्र दृष्टांत मदुराई जिले की एक पंचायत का ही मिल जाएगा। इस पंचायत के सभी सदस्यो ने सरकार से अपना विरोध दर्शाने के लिए एक साथ त्यागपत्र दे दिये थे। बाद में पंचायत को विसर्जित कर दिया था। घटना कुछ इस प्रकार हुई थी।

मदुराई के जिलाधीश द्वारा अपने ३१-१२-१९६१ के पत्र में बताया गया था कि, तालुका 'अ' की पंचायत 'ब' के अध्यक्ष, उपाध्यक्ष एवं पंचायत के सभी सदस्यों के द्वारा २१-१२-१९६० को पारित किये गए एक प्रस्ताव के रूप में सभी के त्यागपत्र सादर प्रस्तुत किये है। इसके पश्चात् पंचायत की किसी भी प्रकार की कारवाई नही चली थी। इसके पश्चात विभागीय पंचायत अधिकारी 'अ' द्वारा त्यागपत्र देने के कारण दर्शाए गये थे जो इस प्रकार हैं; सबंधित सत्ताधीशों ने इस पचायत २७-११-१९६० के प्रस्ताव २७ की उपेक्षा की है। इस प्रस्ताव के द्वारा ऐसा निवेदन किया गया है कि पंचायत के अधिकार क्षेत्र मे निर्मित होनेवाली अनियमित शराब और जूएखानों के संदर्भ में किसी प्रकार के कदम नहीं उठाये गए हैं। पंचायत तो इस संदर्भ में केवल अपनी आवाज़ उठा सकती है परन्तु पंचायत के अध्यक्ष, उपाध्यक्ष समेत अन्य सभी सदस्यो ने भी केवल इसी कारण से अपने त्यागपत्र दे दिये हैं ऐसा कहना समुचित नहीं है। और इसी कारण से ही पंचायत कारवाई बंद कर दी है ऐसा कहना भी समुचित नहीं है। वास्तव में तो इन सभी सदस्यों ने २१ दिसम्बर १९६० को ही एक प्रस्ताव पारित करते हुए अपने त्यागपत्र दे दिये थे और तभी से पंचायत की कारवाई बंद है। इसलिए जिलाधीश ने माना कि पंचायत ने अपना दायित्व नहीं निभाया है और उसका संचालन पूर्णतया स्थगित हो गया है।

इस परिस्थिति के आधार पर पंचायत 'क्ष' को कारणदर्शी नोटिस द्वारा बताया गया कि १-६-१९६२ से पंचायत को एक साल के लिए क्यों स्थगित न कर दिया जाए? यह नोटिस पंचायत को १-५-१९६२ के दिन विधिवत् पहुँचाया गया था। परन्तु उत्तर देने की निश्चित की गई समयावधि तक किसीने प्रत्युत्तर नहीं दिया। इसलिए ऐसा दर्शाते हुए कि पंचायत को दिये गए समुचित अवसर का उपयोग पंचायत ने नहीं किया है, सरकार ने १-८-१९६२ के दिन उस पंचायत को विसर्जित करने की घोषणा की।

इसके साथ ही सरकार ने पंचायत आयुक्त को उस पंचायत का अधिकार, सत्ता, जब तक पंचायत विसर्जित स्थिति मे रहे तब तक, अपने हाथ में लेने के लिए भी बता दिया।

राज्य की विधानसभा मे भी इस पंचायत के संबंध में प्रश्न उठाया गया था और आवश्यक जानकारी प्राप्त कर ली गई थी। सरकार ने सामूहिक त्यागपत्र की बात को स्वीकार भी किया और इसको भी स्वीकार किया कि पंचायत के २१-१२-१९६० के प्रस्ताव के द्वारा वे त्यागपत्र उसे प्राप्त भी हो गये हैं। इसके साथ त्यागपत्र के कारण भी बताये गए । पंचायत ने जो कारण दर्शाए थे कि उनके क्षेत्र में नियमविरुद्ध शराब बनाने की गतिविधि के साथ जूए की आपराधिक गतिविधियों के सामने सरकार ने किसी भी तरह के कदम नहीं उठाए हैं, उसके विरोध में पंचायत के अध्यक्ष, उपाध्यक्ष और अन्य सदस्यों के साथ सभी ने त्यागपत्र दिया है यह भी बताया। (पंचायत का प्रस्ताव क्रमांक २७, २७-११-१९६०)

(२) पंचायत संघ के एक सदस्य को यह कहते हुए सदस्यपद से हटा दिया गया था कि उन्होंने दो दिन के लिए प्रतिदिन रु. ५ के हिसाब से सरकार से वेतन लिया है इसलिए वे सदस्यपद के लिए अयोग्य सिद्ध होते हैं। इसके विरुद्ध उस सदस्य ने बताया था कि उन्होंने तो स्वयंसेवक के रूप में दायित्व निभाया था। इसके उपरान्त साबित हुआ था कि वह राशि उन्हें वेतन के रूप में नहीं अपितु पुरस्कार के रूप में दी गई थी। वह सरकार की आरक्षित जमाराशि से दी गई थी। इसके अतिरिक्त राज्य की ओर से यह भी स्पष्ट किया है कि ऐसी जमाराशि से रकम पानेवाले को सरकारी कर्मचारी माना नहीं जा सकता है। इसके उपरान्त सरकार ने उस सदस्य को पंचायत के सदस्य के स्थान पर पुनः नियुक्त किया था और पंचायत संघों की परिषद को बताया था कि किसी भी सदस्य को पद से मुक्त करने का उसके पास अधिकार नहीं है। इतना ही नहीं ऐसी प्रत्येक कार्यवाही में उन्हें सरकार से पूछना ही चाहिए।

(३) एक पंचायत संघ के अध्यक्ष का यात्रा भत्ता यह बताते हुए रोक दिया गया था कि बिल समय समाप्त हो जाने के पश्चात् प्रस्तुत किया गया है। इतना ही नहीं नये संशोधित पत्रक में प्रस्तुत नहीं किया गया है। यह उल्लेखनीय है कि संघ के अध्यक्ष ने यात्रा जिला विकास परिषद की बैठक में उपस्थित रहने के लिए ही की थी। अंत में सरकार ने 'विलंबित होने की' क्षति को क्षमायोग्य मानकर अध्यक्ष को राशि दे दी थी।

(४) एक पंचायत संघ के अध्यक्ष ने अपने अधिकृत दायित्वों के अनुसार संघ के क्षेत्र में चल रहे कुछ विकास कार्यों का अवलोकन किया था। इसके लिए केवल रु. १७.५० का मार्गव्यय ही दिया गया था। फिर भी उस अवलोकन के लिए मार्गव्यय पर

आपत्ति दर्शाते हुए ऑडिट अधिकारी ने बताया था कि, अध्यक्ष के द्वारा ऐसे (विकास) कार्यो के अवलोकन के लिए मार्गव्यय सरकार द्वारा पूर्व घोषित सूचना के अनुसार खर्च में समाविष्ट नहीं किया जाता है। इसके पश्चात् सरकार के समक्ष प्रस्तुति से आपत्ति को छोड दिया गया था।

(५) कुछ निवदनो एव अनुसधानों पर सरकार द्वारा विचारविमर्श करते हुए स्थानीय स्वराज्य संस्थाओं को अपने कार्यालयों मे पू. बापू और राष्ट्रपतिजी की तसवीरें रखने के लिए रु. ५० का व्यय करने की अनुमति दी थी। जब कि संघ के पूर्वाध्यक्ष और सदस्यों के चित्रो का व्यय स्वयं संघ द्वारा वहन करना था। इतना ही नहीं अन्य किसी भी नेता के चित्र रखने का प्रस्ताव मान्य हुआ परन्तु इसके लिए शर्त रखी थी कि उसका व्यय संघ को उठाना होगा।

(६) राज्य के या केन्द्र के मंत्रियों के स्वागतार्थ किये जानेवाले व्यय को अस्वीकृत किया जाता था परन्तु उस आदेश को निरस्त करने के निवेदन पर ध्यान देते हुए सरकार ने इसके लिए ग्राम पंचायतों के द्वारा रु. २० और नगरपालिकाओं के द्वारा रु. ५० की सीमा तक होनेवाले खर्च को मान्य रखा था। ऐसी अनुमान्य राशि का उपयोग *आतिथ्य के लिए था। 'कास्केट'* खरीदने के लिए होनेवाले *व्यय* पर रोक *लगा* दी गई थी। इसी प्रकार सरकार ने अपने आदेश क्र १९२८ मे पंचायत को छोड़ स्थानीय संस्थाओ को सूचना दी थी जिसके अंतर्गत मद्रास से महामहिम राज्यपाल को दिये गए 'प्रशस्तिपत्र' के लिए रु. २००/- का व्यय मान्य रखा था, परन्तु मंत्रियो के लिए आतिथ्य या 'कास्केट' के लिए किये गये व्यय को अमान्य कर दिया था।[१८]

(७) एक पूछताछ के उत्तर मे स्थानीय स्वराज्य की संस्थाओं को बता दिया गया था कि, अपवाद रूप विषयों को छोडकर उनके क्षेत्र के नेताओं की आवक्षप्रतिमा खरीदने *या* उन्हे *लगाने का व्यय भी मान्य नहीं किया जा सकता है।*[१९]

(८) एक निश्चित केन्द्रीय मंत्री की प्रशस्ति के लिए रु. २००/- व्यय मान्य किया गया था।[२०]

(९) एक पंचायत द्वारा अपने मकान में रखे गए छायाचित्रों को सुधारने के लिए रु ६०० का व्यय मान्य किया गया था।

(१०) तिरुनेलवेल्ली जिले में स्थित एक पंचायत संघ ने, अपनी कार्यसूची मुद्रित करने के लिए अक्तूबर १९६२ में रु. २६ का व्यय किया था। इसके पश्चात् तुरन्त ही सरकार ने ऐसी किसी भी कार्यसूची मुद्रित करवाने पर प्रतिबंध *लगा* दिया *था*। इतना ही नहीं मुद्रण के लिए रखे गए बिल को भी अस्वीकृत कर दिया। तब संघ परिषद के नाम

पर जिलाधीश ने ही पहले दिये गए मुद्रित खर्च की ओर सरकार का ध्यान आकर्षित किया था। इसके पश्चात् सरकार ने विशेष उदाहरण के रूप में बिल मान्य किया था।

(११) सन् १९६० में मदुराई जिले में हुए ग्रामदान गांवो को ऋण के लिए प्रार्थना की गई थी। यह पर्याप्त विलंब से मई १९६२ में विचारार्थ लिया गया । इसके पश्चात् मार्च, १९६३ तक तो इस संदर्भ में कोई निर्णय ही नहीं लिया गया। इसके कुछ समय पश्चात् पंचायत संघों के आयुक्त ने (जिनके अधिकार क्षेत्र में ये गाँव थे) सरकार को बताया कि निश्चित ऋण को देना आरम्भ कर दिया गया है। ऐसा होने से विषय को छोड दिया गया था।

(१२) प्रत्येक जिले के समाहर्ता को सरकार द्वारा बताया गया था कि प्रत्येक पंचायत संघ और जिले के कार्यालय में (अ) संचार व्यवस्था (ब) प्राथमिक विद्यालय और पेय जल की सुविधा (क) स्वास्थ्य सुविधाएँ और (ड) लघु सिचाई परियोजनाओं को दिखानेवाले चार मानचित्रों को इस तरह रखा जाए, जिससे जनता उन्हें देख सके। ऐसे मानचित्रों के प्रत्येक संच के लिए जिलाधीश ने रु. ८०/- के व्यय की अनुमति माँगी। इसे लेकर विभिन्न जिलों और उनके समाहर्ता कार्यालयों में जाँच की गई और अंत में ऐसी माँग प्रस्तुत करनेवाले जिलाधीश को बता दिया गया कि ऐसे व्यय को अनुमति नहीं मिलेगी, क्योंकि ऐसी माँग अन्य जिलों से नहीं आई है।

(१३) एक पंचायत संघ की परिषद ने अपनी नवम्बर १९६१ की बैठक में (ऐसी बैठक में संबंधित क्षेत्र के उप समाहर्ता अध्यक्षपद पर रहते हैं) कार्यसूची में निर्धारित भूमिकर पर प्रति रुपया ५० पैसे का स्थानीय उपकर लेना घोषित किया था। इससे पूर्व उस क्षेत्र के आयुक्त ने ५५ पैसों का अधिभार निर्धारित किया था। इस संबंध में एक महिने के बाद संघ परिषद की विशेष बैठक बुलाकर उसमें ५५ पैसों के अधिभार को निरस्त किया गया। इतना ही नहीं इस बैठक में परिषद के ३२ सदस्यों में २७ सदस्य उपस्थित थे। इस बैठक का अध्यक्षपद उस समाहर्ता ने संभाला था। वे अपने पद के आधार पर अध्यक्ष भी थे। पूर्व निर्धारित ५५ पैसोंवाला प्रस्ताव निरस्त किया गया है यह जानकारी विकास आयुक्त, समाहर्ता एवं तहसिलदार को भी दी गई थी। परन्तु सरकार ने इस निर्णय को अविचारित माना। फिर भी उसने प्रस्ताव को निरस्त तो घोषित नहीं किया क्योंकि तुरंत ज्ञात हुआ कि इसके लिए तो मद्रास पंचायत विनियम की धारा ११६ में परिवर्तन करना पड़ेगा तभी इस प्रस्ताव को रोका जा सकता है। इस लिए समाहर्ता एवं राजस्व अधिकारियों को बताया गया कि पंचायत संघों की परिषदों को (५५ पैसे के अधिभार को घोषित करने के प्रस्ताव) सूचित कीजिए कि संबंधित वित्तीय

वर्ष में उन प्रस्तावो को निरस्त नहीं करना चाहिए।

(१४) दिसम्बर १९६१ में एक पचायत परिषद ने प्रस्ताव पारित कर संघ की परिषदों के अध्यक्ष, उपाध्यक्ष एवं सदस्यों को यात्रा भत्तों के संदर्भ में उसके अधिनियम २७ के अनुसार दी गई सूचनाओं का विरोध किया। परिषद का कहना था कि ऐसे निर्णय से तो कनिष्ठि सरकारी क्लर्क की तुलना मे निर्वाचित सदस्यो का वर्ग निम्न माना जा सकता है। क्योंकि सामान्य क्लर्क भी प्रति मील यात्रा-भत्ते के लिए ११ पैसे के अधिकारी हैं जब कि निर्वाचित सदस्यो को प्रति मील केवल ६.५ पैसा ही यात्रा-भत्ता दिया जाता है। इसलिए इस प्रस्ताव के द्वारा सरकार से प्रार्थना की गई कि उसे निरस्त कर दिया जाए। इसके पश्चात् सरकार ने इस पर विचारविमर्श किया, परन्तु पश्चात् घोषित किये गए आदेश में बताया गया कि 'सरकार ने उपर्युक्त विषय का भलिभाँति अध्ययन किया है, परन्तु इसको स्वीकार करना संभव नहीं है।'

(१५) सन् १९६१ के आरंभ में एक जिलाधीश ने सरकार से प्रार्थना करते हुए बताया था कि जिला विकास परिषद की बैठक प्रातः सायं दो सत्रों में चलती है इसलिए रु. ५०/- अल्पाहार के लिए स्वीकृत किये जाएँ। अत्यन्त अनुत्साह से सरकार ने इस प्रार्थना को स्वीकार किया था।

सरकार द्वारा किसी नीतिविषयक निर्णय लेने के पश्चात् संबंधित अधिकारियों को आदेश द्वारा बताने में लगभग एक वर्ष का समय बीत जाता है। इतना ही नहीं बात चाहे कितनी भी महत्त्वपूर्ण हो परन्तु वह राज्यस्तरीय अधिकारियो के पास पड़ी ही रहती है। एक उदाहरण मे तो यह समयावधि ८ वर्ष तक की देखी गई थी। प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक विद्यालयो के भवनों के प्रकार के लिये १९५० में निर्णय ले लिया गया था, परंतु उस निर्णय की अधिकृत जानकारी भी संबंधित अधिकारियों को अत्यन्त विलंब से १९५८ मे दी गई थी। कृषि-विकास जैसी अति महत्त्वपूर्ण बातों के संदर्भ में लिये गए निर्णय भी संबंधित अधिकारी तक पहुँचने में कम से कम एक वर्ष का समय लग जाता है। जैसे, राज्य कृषि परामर्शक निगम ने (स्टेट एग्रीकल्चर एडवाज़री बोर्ड ने) ३ जनवरी १९६४ मे आयोजित पाँच बैठकों मे पंचायत संघ के स्तर पर कृषि उत्पादन समिति की रचना करने के लिए सूचित किया था। इसके अतिरिक्त इस समिति की वैठक हर माह आयोजित होती रहे और ब्लोक क्षेत्र में कृषि से संबंधित उत्पन्न होने वाली समस्याओं के समाधान के लिए ध्यानाकर्पण करने को बताया गया था। इस समिति में खण्ड विकास अधिकारी, विस्तरण अधिकारी (कृषि एवं पशुपालन) और तीन अनुभवी कृषिकारों को भी सदस्य पद पर नियुक्त करने के लिए सूचित किया गया। परन्तु इस

निर्णय की जानकारी ही परिषदो को १० महिने के बाद १९६४ में दी गई थी।

इससे भिन्न विषय पंचायतों को दी गई भूमि से संबंधित है। इस विषय पर मई १९६१ में आयोजित जिलाधीशों की बैठक में विचारविमर्श किया गया था। परन्तु इस पर की गई अभिशंसाएँ सरकार को विलंब से मई १९६२ में पहुँचाई गई थीं। इसके छह महीनों के बाद जिलाधीशों को सूचित किया गया कि अपने जिलों मे जिसका नाप न किया गया हो ऐसी नहीं जोती गई भूमि के संदर्भ में अपनी टिप्पणियाँ भेजी जाएँ। यह जानकारी जिलाधीशों ने दिसम्बर १९६२ से अक्तूबर १९६३ तक भेज दी थी। दिसम्बर ६३ में सरकारी स्तर पर यह प्रश्न उठाया गया कि जिसे नापा न गया हो और जोती न गई हो ऐसी भूमि की सूची सरकार द्वारा क्यों तैयार की जानी चाहिए ? क्यो कि यह कार्य बहुत बृहद है। इतना ही नहीं इसकी क्या आवश्यकता है ? इसके पश्चात् जिन दो जिलों ने इसकी जानकारी नहीं भेजी थी उन्हें बता दिया गया कि अब उन्हें भेजने की आवश्यकता नहीं है। इस तरह १००० पृष्ठों की फाईल पर किसी प्रकार की कारवाई न करने की घोषणा कर दी गई।

कन्याकुमारी और अन्य विशेष क्षेत्रों के लिए नियम

कन्याकुमारी जिले के ९ पंचायत संघ और ४६ पंचायतें तथा तिरुनेलवेली जिले में अवस्थित शेनकोटा पंचायत संघ एवं येरकाड पंचायत संघ अपने स्वयं के ही बने नियमाधीन ढाँचे में कार्यरत हैं। राज्य के अन्य पंचायत संघों से भिन्न रूप में वे कारवाई करते हैं। इसके उपरांत तिरुनेलवेली जिले के कई पंचायत संघ और नीलगिरि जिले के कुछ संघ तथा पंचायतें सामान्य नियमों से हटकर अपनी कारवाई करते हैं। तिरुनेलवेली जिले की अक्षरज्ञान की औसत दशकों से राज्य औसत से अधिक है। इतना ही नही लोगों द्वारा संचालित शिक्षा संस्थाओं की संख्या भी अन्य जिलों की तुलना में सब से अधिक है। इसलिए इस जिले की पंचायतों पर प्राथमिक एवं उच्चतर प्राथमिक विद्यालयों के संचालन एवं देखभाल का सीधा बोज तुलना में अत्यल्प है। विद्यालय जानेवाले बच्चों की संख्या अन्य जिलों से कन्याकुमारी जिले में सब से अधिक है। यह संख्या मद्रास शहर में भी विद्यालय जानेवाले बच्चों की संख्या से अधिक है।

तिरुनेलवेली इस संदर्भ में मद्रास से कुछ पिछड़ा है, परंतु वह अन्य जिलों की तुलना में अत्यधिक आगे है। सम्भवतः इसी कारण से इन दोनों जिलों का पंचायत प्रशासन अन्य जिलों से भिन्न प्रतीत होता है। नीलगिरि जिला तो पूर्ण रूप से पर्वतीय क्षेत्र है। इतना ही नहीं उसमें कई जातियाँ निवास करती हैं। इस कारण उसकी पंचायत

व्यवस्था, विशेषतः ग्राम पंचायत व्यवस्था अन्य जिलो की व्यवस्था से भिन्न रही है। अन्य उल्लेखनीय बात यह है कि तंजावुर, रामनाथपुरम्, कोयम्बतूर और उत्तरी आर्कोट जिलो में स्थित पंचायत संघ और पंचायतो के सम्वन्ध में पूर्ण रूप में शोधकार्य नहीं हुआ है इसलिए उन पंचायतों और पंचायत संघों के ऐतिहासिक एवं भौगोलिक पक्षों के विषय में जानकारी प्राप्त करने के लिए अधिक प्रयास नहीं किया गया है। केवल कन्याकुमारी जिले में अवस्थित पंचायत संघ और पंचायतो की कारवाई के निश्चित भेद जानने का प्रयास किया गया है। उसमे विभिन्न वैधानिक कदम और प्रशासनिक कारवाई के सम्बन्ध में तो विचार किया ही गया है, परन्तु साथ ही इन पंचायतों और पंचायत संघों पर शैक्षकि दायित्वों का बोझ न्यून होने से उसकी कारवाई में जो अन्तर है इसका भी अध्ययन किया गया है। साथ ही इसका भी अध्ययन किया गया है कि यह अन्तर वैधानिक एवं प्रशासनिक कदम के कारण किस सीमा तक पडा है, उसका प्रभाव कारवाई और कार्यक्रम पर कितना पड़ा है।

कन्याकुमारी जिला और शेनकोटा पंचायत संघ ये दोनों विलम्ब से सन् १९५६ में मद्रास राज्य के अंग बने। इससे पूर्व कन्याकुमारी जिला केरल के साथ जुड़ा हुआ था। इसे लेकर उसके प्रशासकीय एवं व्यवस्थापकीय अंग विशिष्ट थे। इस पर भी उसकी विशिष्ट भौगोलिक परिस्थिति एवं अन्य सामाजिक तथा सांस्कृतिक विशिष्टताओं के कारण उसने अपनी अलग पहचान बनाई थी।

आश्चर्य इस बात का है कि कानूनी ढाँचे में कन्याकुमारी जिले की सभी पंचायतों को नगर पंचायतो के रूप मे दर्शाया है परंतु उसमें कई नगरपंचायतों की जनसंख्या केवल ५००० ही है। इस प्रकार वे सभी गाँवों के समान ही हैं, क्यों कि उनके अधिकांश निवासी कृषि पर निर्भर हैं और अन्य आनुषंगिक ग्रामीण व्यवसाय या अर्थाजन में प्रवृत्त है। यह भी स्वीकार करना पड़ेगा कि मद्रास राज्य की अन्य किसी पंचायत से इस जिले की नगर पंचायतें क्षेत्र एवं जनसंख्या की दृष्टि से बड़ी है।

इनमें से दो सबसे बड़े क्षेत्र अझाकीयापांडीपुरम्(८२.३५० वर्ग मील) और पुनामान आरुविकारा (६७.९४३ वर्ग मील-इन में से ४० वर्ग मील के क्षेत्र में जंगल) हैं। सबसे अधिक जनसंख्या कोलाचल मे है (३४,९६५)। अन्य अधिकांश पंचायतों की जनसंख्या १०,००० से २०,००० के बीच है और उनका क्षेत्र ३ से १५ वर्ग मील के मध्य है। प्रत्येक कस्बे में २० से ३० कस्बों को संलग्न किया गया है। जिले की ९,९६,९१५ की जनसंख्या में से ७,०७,२७५ व्यक्ति गाँवों में बसते हैं।

इन पंचायतों को नगर पंचायत कहने के पश्चात्, और उन्हें राज्य की अन्य

पंचायतों के समान बताने के पश्चात् कुछेक अपवाद रखने पड़े हैं। इनमें एक अपवाद निवासकर के संबंध में प्राप्त हो रहे अनुदान का है। ऐसा अनुदान राज्य की अन्य नगरपंचायतों को प्राप्त नहीं होता है।

अन्य महत्त्वपूर्ण अन्तर पंचायत संघ के स्तर पर है। सब से प्रथम अन्तर यह है कि पंचायत संघ से परिषद की रचना अलग से हुई है। राज्य की अन्य पंचायतों के अध्यक्ष ही संघ की परिषदों के सदस्य पद पर होते हैं, जब कि इस पंचायत संघ में संघ के साथ जुडी हुई सभी पंचायतों के सारे सदस्य, सदस्यपद पर हैं। ऐसा होने से उन सभी सदस्यों को अपनी पंचायत परिषद समिति के उपरांत पंचायत संघ की परिषद में भी विचारविमर्श करने का अवसर मिलता है। यद्यपि इन पंचायतों में सदस्यों की संख्या सीमित ही होती है। (प्रत्येक संघ में ऐसे कुल मिलाकर ५७-६० सदस्य ही होते हैं।) इसलिए यह व्यवस्था अनुकूल बनी है।

ऐसा होते हुए भी राज्य के कुछ पंचायत संघ, जैसे कि कोयम्बतूर जिले के वल्लाकोइल संघ में केवल २० से ३० कस्बे हैं। उन्हें इस नियम का लाभ नहीं मिलता है।

दूसरी बात, प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक शिक्षा तथा विद्यालयों के संचालन के साथ मध्याह्न भोजन परियोजना कन्याकुमारी जिले में स्थित पंचायत या पंचायत संघ के कार्यक्षेत्र में नहीं आती है। यहाँ सरकारी विद्यालय ही अधिक हैं और ऐसे विद्यालय का संचालन सरकार के शिक्षा विभाग द्वारा ही होता है। इतना ही नहीं किसी नागरिक या नागरिकों के द्वारा संचालित विद्यालयों को पंचायत या पंचायत संघों के द्वारा अनुदान नहीं मिलता है, अपितु सरकार के शिक्षा विभाग द्वारा सीधा ही उन्हें अनुदान दिया जाता है। इसके परिणाम स्वरूप संघ के बजट भी छोटे हैं। जिस प्रकार, अगस्तीश्वरम् पंचायत संघ के १९६४-६५ के बजट में २,८८,२७१ की आय की तुलना में लगभग रु. २,९४,९९४ के व्यय का अनुमान रखा गया था। इसमें आरंभिक या बंद शेष बची राशि को समाविष्ट नहीं किया गया है। जब कि अन्य पंचायत संघों के बजट लगभग रु. ६ से ८ लाख तक होते हैं। इसे लेकर पंचायत संघ के सामाजिक शिक्षा प्रबंधक शिक्षा और विद्यालयों के संचालन विषयक दायित्वों से मुक्त होते हैं। साथ ही इस बात की जानकारी नहीं मिलती है कि संघ की अन्य गतिविधियों में वे किस सीमा तक योगदान कर सकते हैं।

इस संदर्भ में पंचायत संघ के प्रबंधक बताते हैं कि व्यय लेखा द्वारा जमा-उधार निश्चित करना कठिन है। यह बात तिरूनेलवेली जिले के पंचायत संघों के लिए भी

उतनी ही सही सिद्ध होती है। इस जिले में भी संघों के द्वारा संचालित विद्यालयों की संख्या सीमित है। इस संदर्भ में पंचायत संघ के अध्यक्ष, अधिकारीवर्ग एवं कर्मचारियों का मानना है कि यह प्रश्न सर्वथा विचारबाह्य है। वे विश्वास के साथ कहते हैं कि इस प्रकार के बड़े उतार चढाव से संघ के कार्यक्रम एवं गतिविधि को प्रभावी करने में किसी प्रकार का विशेष अन्तर नहीं पड़ता है।

तीसरी बात, कन्याकुमारी जिले के (और नीलगिरि जिले के भी) पंचायत संघों को आर्थिक दृष्टि से (वर्ग 'घ' में रखा गया है। इसे लेकर उन्हें स्थानीय अधिभार के अनुरूप अनुदान भी अधिक प्राप्त होता है। कन्याकुमारी एवं नीलगिरि जिलों को तुलना में भूमिकर कम मिलता है इसलिए इन जिलों में स्थित संघों के द्वारा इस प्रकार का अधिक अनुदान पाने के वे अधिकारी बनते हैं।

कन्याकुमारी पंचायत संघों की समितियों की बैठकों में उत्साह रहता है। इसका एक कारण यही रहता है कि संघ के अधिकार क्षेत्र की सभी पंचायतों के निर्वाचित सदस्य चर्चा में भाग लेते हैं। इस व्यवस्था से संघ की सामान्य समस्याओं के संदर्भ में सर्वग्राही अभिगम अपनाया जा सकता है, जो केवल पंचायत अध्यक्षों की बनी हुई संघ परिषद में संभव नहीं है। इसका कारण यह है कि प्रतिनिधि रहे होते हैं तब अधिकांश रूप से वे इतना ही सोचते है कि उनकी पंचायत के लिए वे कितना लाभ उठा सकते हैं। समग्र संघ के लिए वे चिंता न भी करते हों।

कन्याकुमारी जिले के पंचायत संघो में होनेवाला विचारविमर्श अधिक गहन एवं मनोरंजक इसलिए भी होता है कि जिले में शिक्षा का स्तर और मात्रा दोनों ऊँचे हैं। व्याप भी बढा है। इसके अतिरिक्त सांस्कृतिक रूप से भी वह जिला प्रगतिशील माना जा सकता है। महत्त्वपूर्ण बात यह भी है कि ऐतिहासिक रूप से भी तुलना में एकरूपता अधिक है।

यद्यपि पंचायतों की कारवाई में भी उतार चढ़ाव तो होंगे। अधिकांश पंचायतों के पास अपने भवन होते है। उनके बजट बड़े होते हैं। १९६४-६५ में प्रत्येक के बजट औसतन लगभग १ लाख के थे। इसमें प्रति व्यक्ति आय रु. ४ से ७ के मध्य थी। उनका वार्षिक संचालन व्यय औसतन लगभग रु. १०,०००/- था। इसमें से ३० से ५० प्रतिशत व्यय कर संग्रह कर्ताओं पर होता था। अन्य पंचायतों ने जिसकी उपेक्षा की थी वह बात थी कि कन्याकुमारी जिले में संघ मध्याह्न भोजन परियोजन के लिए अपनी ओर से भी पर्याप्त योगदान देते हैं।

इससे पूर्व हमने देखा था कि वास्तव में मध्याह्न भोजन परियोजना का दायित्व

राज्य के शिक्षा विभाग का है। इसलिए यह कहना कठिन है कि योगदान वे संघ स्वैच्छिक रूप से देते हैं या सरकार के प्रभाव मे विवशता से देते हैं। पंचायत संघों की ओर से दी जा रही राशि के संदर्भ में निरीक्षण करने से ज्ञात हुआ कि १९६४-६५ की समयावधि में पंचायतों ने इस परियोजना में लगभग रु. १०२० से रु. ५१७६ का योगदान संबंधित क्षेत्र विद्यालयो को दिया है।

कुछ जिलों में पंचायतो के अपने उद्यान हैं, परन्तु कई पंचायतों का क्षेत्र अत्यन्त विशाल है। इसकी तुलना में इस दिशा में उनके प्रयास लगभग नहीं के बराबर हैं। पंचायतों के द्वारा अपने क्षेत्र के कस्बों के विकास कार्यों के संदर्भ मे भी स्थिति कुछ वैसी ही प्रतीत होती है।

कन्याकुमारी जिले के अधिकांश पंचायत संघों में सरकार ने ग्रामसेवकों के लिए आवास का प्रबंध कर दिया है। इसके लिए उन्हें किराया देना पड़ता है। ग्राम सेवक को अपने आवास में कृषि विषयक उपकरण, अन्य सामान एवं औजारों के लिए एक खण्ड भी अलग रखना पड़ता था। इसलिए ऐसे आवास असुरक्षित एवं अनुपयोगी भी बने रहते हैं। ये आवास छोटे तो होते ही हैं, परन्तु उसमे कृषि औजार एवं उपकरण के लिए कक्ष अलग रखना पड़ता है इसलिए यह सुविधा इतनी निरर्थक बन जाती है कि ग्रामसेवकों को अपना व्यक्तिगत आवास अलग से रखना पड़ता है। इस लिए ऐसी निरर्थक एवं करुण स्थिति का समाधान करना ही पड़ेगा।

कन्याकुमारी जिले के संघ इस समय क्या कर रहे हैं और भविष्य में क्या करनेवाले हैं, उनके द्वारा वे अपने जिले में सामाजिक, आर्थिक, विद्याकीय एवं सांस्कृतिक क्षेत्र में क्या प्रदान करना चाहते हैं इसका अध्ययन मद्रास राज्य के अन्य संघों के लिए और समग्र देश के संघों के लिए भी प्रोत्साहक होगा। इस समय कन्याकुमारी जिले में उपलब्ध शिक्षा का उच स्तर, जनसंख्या की निरन्तर वृद्धि एवं कृषिविषयक भूमि का अन्य नगरो के साथ समायोजन अन्य पंचायत संघों के लिए अनुकरणीय बना हुआ है। कुछ वर्षों में तो हम अपने राज्य के अन्य जिलों में भी ऐसी उच स्थिति देख पाएँगे। कृषि एवं नगर दोनों की आवश्यकताओं को हमें एक ही संस्था द्वारा पूर्ति का प्रबंध करना पड़ेगा। इतना ही नही, सड़कें, पुल, सार्वजनिक स्थानों पर प्रकाश की व्यवस्था, सार्वजनिक भवन, कुँए, तालाब, नालियाँ जैसी सुविधाओं की देखभाल के पीछे हर वर्ष व्यय बढ़ता रहेगा । इस समय कन्याकुमारी के पंचायत संघ इसके पीछे अपेक्षित ध्यान दे रहे हैं। फिर भी कृषि विषयक विस्तृत आवश्यकताएँ और जो लोग अन्य व्यवसाय अपनाना चाहते हों उन्हें उचित मार्गदर्शन देने के प्रति हमने

ध्यान नहीं दिया है। कृषि क्षेत्र में भी अब बजट, नये उपकरण आदि की भूमिका बन चुकी है, परन्तु कन्याकुमारी के विशाल क्षेत्रों में अभी भी वह नहीं हो पाता है। व्यक्तियों को काम पर लगाने की ओर किसी का भी ध्यान नही जाता है। फिर भी कृषि और व्यवसाय हीनता की समस्याएँ उस क्षेत्र में प्रमुख बनी रही हैं।

पंचायत चुनाव १९६५

कुछ समय तक निलंबित होते रहने के पश्चात् जनवरी १९६५ में समग्र राज्य में एक साथ पंचायत चुनाव आयोजित हुए। इसके तीन महीने पश्चात् अप्रैल १९६५ में पंचायत संघों के अध्यक्ष, पंचायत अध्यक्ष एवं उपाध्यक्षों के चुनाव हुए।

इस चुनाव के परिणामो में बहुत समानता भी सामने आई । १२,४५४ ग्राम पंचायत और ४२४ नगर पंचायतों के, १,१७,६२९ सदस्यों मे से ४७,६३६ (४० प्रतिशत) तो निर्विरोध निर्वाचित हुए थे। इतना ही नहीं पंचायत अध्यक्षों के चुनाव में तो प्रतिस्पर्धा सर्वथा नहीं थी। इसमें कोयम्बतूर जिले को समाविष्ट नही किया गया है, क्योकि इस समय तक उसके परिणाम घोषित नहीं हुए हैं। शेष ११ जिलों के १२,०२७ पंचायत अध्यक्षों में से ७७५३ (६४.०२ प्रतिशत) निर्विरोध निर्वाचित हुए थे। यद्यपि इस संदर्भ में स्पष्ट जानकारी प्राप्त नहीं हुई है, क्यो कि उस वर्ष जिला बोर्डो के चुनाव नहीं हुए थे। जब कि पंचायत के सदस्यों के चुनाव में बहुत स्पर्धा देखी गई थी। उधर पंचायत संघ के ३६७ अध्यक्षों में से केवल ८१ अध्यक्ष (२२ प्रतिशत) ही सर्वसम्मनि से निवार्चित हुए थे, चालू अध्यक्षों में से ३८ प्रतिशत पुनः निर्वाचित हुए थे। (३६७ में से १४०)

१२,८७८ पंचायत अध्यक्षों में से ५२३ अनुसूचित जाति के हैं और ५७ अनुसूचित जनजाति के हैं। अनुसूचित जाति या जनजाति के सदस्यों में से कितने सदस्यों ने अध्यक्ष के चुनाव में नामांकनपत्र भरा था इसकी जानकारी प्राप्त नहीं होती है। उनमें से कितने निर्वाचित हुए थे इसकी भी जानकारी नहीं है। सारिणी १७ और १८ में पंचायत चुनाव का विस्तृत एवं प्रत्येक जिले का चित्र दर्शाया गया है।

मद्रास राज्य में पंचायत विकास का प्रबंधकीय ढाँचा

(अ) राज्य के स्तर पर

'राज्य के स्तर पर पंचायत विकास' सचिवालय के ग्रामीण विकास एवं स्थानीय प्रशासन द्वारा चलता है। स्थानीय, प्रबंधक मंत्री 'समाज विकास एवं पंचायत विकास' का कार्यभार संभालता है। वित्त सचिव 'विकास आयुक्त पद' भी संभालता है। समग्र

राज्यस्तरीय आयोजन एवं विकास का कार्यभार भी उनके अधिकार में रहता है। यद्यपि विकास आयुक्त प्रत्यक्ष रूप से समाज विकास एवं पंचायत विकास की कारवाई नहीं करते हैं। इसके लिए सरकार में एक सचिव का पद रहता है। इसके अतिरिक्त अधिक एक विकास आयुक्त भी होते हैं। इस विकास आयुक्त के पद पर सरकार के सचिव की नियुक्ति होती है। इस प्रकार अधिक विकास आयुक्त (एडीशनल डेवलपमेन्ट कमिशनर) विभागीय पदाधिकारी और अधिक सचिव (एडीशनल सेक्रेटरी) के पद पर सचिवालय में सचिव का कार्यभार भी संभालते हैं। ग्रामीण विकास और स्थानीय संचालन विभाग को सचिवालय के स्तर पर, कार्यक्रम प्रशाखा और लेखा एवं वित्तीय प्रशाखा, प्रशासनिक शाखा एवं नगर पालिका प्रशासनिक प्रशाखा के रूप में विभाजित किया जाता है। ये राज्य के 'प्रवासी अधिकारी' का दायित्व भी संभालते हैं।

अन्य उपसचिवों में, उपसचिव प्रशासन एवं नगरपालिका प्रशासन, और उपसचिव (विशेष) पंचायत्त संबंधित नियम, कानून एवं विधेयकों का कार्यभार संभालते हैं।

(२) राज्य में पंचायत प्रशासन के सफल संचालन के लिए सरकार को परामर्श देने के लिए सरकार ने इस प्रकार की पंचायत विकास परामर्शदात्री समितियों की रचना की है।

(१) प्रशासन एवं विकास कार्यो के लिए पंचायत विकास परामर्शक समिति।

(२) उत्पादन कार्यक्रम के लिये पंचायत विकास परामर्शक समिति, (उत्पादन)

(३) ठीक इसी प्रकार समाज कल्याण सेवाओं के लिए भी पंचायत विकास परामर्शक समिति (समाज कल्याण) है।

इन समितियों की बैठक वर्ष में दो बार होती है। इन समितियों की रचना एवं *कार्यवाही ग्रामीण विकास एवं स्थानीय संचालन कार्यवाही क्रमांक ७९७, ३१-३-*१९६२ में प्राप्त होती है। (प्रतिलिपि संलग्न है)

जिला स्तर पर

जिला स्तर पर जिलाधीश 'समानों के बीच मुख्य' की भूमिका निभाते हैं। वे ही इस समग्र ढाँचे की धुरी बने रहते हैं। इसके साथ जिला विकास विभागों के वरिष्ठ अधिकारियों के नेता की भूमिका भी निभाते हैं। प्रत्येक विभाग को 'विकास जिला' कहा जाता है। ऐसे प्रत्येक 'विकास जिले' के लिए 'जिला विकास समिति' रहती है। यह समिति विकास परियोजना को कार्यान्वित करने का दायित्व निभाती है। जिला समाहर्ता

(पंचायत विकास) के निजी सहायक के रूप में, जिला विकास समिति के सचिव पदभार संभालते है। विकास विभाग के जिलास्तरीय अधिकारी जिला विकास समिति के सदस्य होते हैं।

खण्ड स्तर पर

प्रत्येक विकास खण्ड में ६५ से ६० हजार की जनसंख्या को समाविष्ट कर लिया जाता है। इसमें विकास कार्यों का दायित्व खण्ड विकास अधिकारी संभालता है। मद्रास पंचायत कानून १९५७ में लागू किया गया। इसके पश्चात् ब्लोक (खण्ड) में पंचायत संघ की स्थापना की गई। खण्ड विकास अधिकारी पंचायत संघ के आयुक्त एवं खण्ड विकास अधिकारी का दोहरा दायित्व निभाते हैं। अधिकांश रूप से पंचायत संघ अधिकारी कार्यक्रमों को सफलता से कार्यान्वित करने के लिये पंचायत संघ परिषद पर दायित्व रहता है और संबंधित खण्ड से संलग्न अधिकारियों के दल के नेता बने रहते हैं।

१. पंचायती कानून, १९५८, खण्ड ४
२. जी.ओ. ६१३ आर.डी. एण्ड एल.ए. ३ मार्च १९६१ जिसके अंतर्गत कन्याकुमारी एवं नीलगिरि जिलों का वर्गीकरण समाविष्ट नही है क्यों कि इन दोनों जिलों के संघों का वर्गीकरण उसके प्रतिव्यक्ति भूमिकर को ध्यान में रखते हुए 'घ' वर्ग में किया गया था।
३. जी.ओ. २१६७, आर.डी. एण्ड एल.ए. अक्तूबर, १९६३
४. मेमो ८४३१८३/एफ १/६२-५, आर.डी. एण्ड एल.ए , १२ सितम्बर १९६२
६ जी.ओ. २२७४, आर.डी. एण्ड एल.ए. १९ नवम्वर १९६२
७. समीक्षा में दर्शाई गई उपलब्धियों का आलेख परिशिष्ट १ में दिया गया है।
८. इस समिति की सर्वप्रथम रचना १९५५ में हुई थी।
९. जी.ओ. (एम.एस.) ३१, आर.डी. ४ जनवरी, १९६४
१०. जी.ओ. (एम.एस.) २८७६, आर.डी. एण्ड एल.ए., ३० अक्तूवर १९६१
११. जी.ओ. (आर.टी.) २४५६; आर.डी. एण्ड एल.ए. दिसम्बर १९६२
१२. जी.ओ. (आर.टी.) ३४५६; आर.डी. एण्ड एल.ए., १ दिसम्बर १९६२
१३. जी.ओ. (एम.एस.) १३९४; आर.डी. एण्ड एल.ए., १ दिसम्बर १९६२
१४. जी.ओ. (एम.एस.) ३७०; आर.डी. एण्ड एल.ए., १९६३ १८ फरवरी १९६४
१५ जी.ओफ़(एम.एस.) आर.डी. एण्ड एल.ए.
१५. जी.ओ. (एम.एस.) १७; एल.ए. ३ जनवरी १९६३

१६. जी ओ. (एम एस.) ३८७; आर.डी एण्ड एल.ए., १९ फरवरी १९६२
१७. जी ओ. (एम. एस.) १३८४; एल.ए. १७ मई १९६१
१८. जी ओ. (एम.एस.) ५४०; एल.ए. २५ फरवरी १९६१
१९. जी ओ. (एम एस) १९१५; एल. ए. २ दिसम्बर १९६०
२०. जी.ओ. (आर.टी.) १७४०; एल. ए. २ दिसम्बर १९६०
२१. जी ओ. (आर.टी.) १५२० आर.डी. एण्ड एल.ए., १४ अगस्त १९६२
२२. जी.ओ. (आर.टी.) ९५९; आर.डी. एण्ड एल. ए., १४ मई १९६३
२३. जी.ओ. (आर.टी.) १५८०; आर.डी. एण्ड एल. ए., ७ अगस्त १९६३
२४. जी.ओ (आर.टी.) १३९७; आर.डी. एण्ड एल. ए. १८ मई १९६१
२५. जी.ओ. (एम. एस.) २१७५; आर. डी. एण्ड एल. ए., ५ अक्तूबर १९६२
२६. जी.ओ (एम.एस.) २१७५; आर.डी. एण्ड एल ए., ५ अक्तूबर १९६२
२७. जी.ओ. (एम.एस.) ९३५; आर.डी. एण्ड एल. ए., २८ मार्च १९६१
२८ जी जो. (एम.एस.) २४१५; आर.डी. एण्ड एल. ए., १९ नवम्बर १९६४
२९. जी.जो. (आर.टी.) २६०४ आर डी. एण्ड एल. ए., २६ दिसम्बर १९६३

सारिणी–१७

पंचायती संघ के अध्यक्ष का चुनाव (अप्रैल–१९६५)

जिला	अध्यक्षों की संख्या का योग			पुनः चुनाव			पुनः निर्वाचित			अध्यक्ष के पद
	चुनाव के पात्र	निर्वाचित	सर्वसमत निर्वाचित	सर्वसमत निर्वाचित	चनाव संपन्न	योग	सर्वसमत निर्वाचित	चनाव संपन्न	योग	पर निर्वाचित विधानसभा सदस्य
उत्तरी आर्कोट	३६	३६	८	३	९	१२	५	१९	२४	२
दक्षिणी आर्कोट	३४	३४	६	४	१५	१९	२	१३	१५	-
चेंगल पट्ट	२७	२६	६	५	७	१२	१	१३	१४	-
कोयम्वतुर	३९	३९	१५	८	६	१४	७	१८	२५	४
नीलगिरि	४	४	३	२	-	२	१	१	२	-
मदुराई	३४	३४	५	१	७	८	४	२२	२६	२
रामनाथपुरम्	३२	३१	२	१	१४	१५	१	१५	१६	२
सेलम	५०	५०	१३	९	७	१६	१	१५	१६	२
तंजावुर	३६	३४	८	२	१०	१२	६	१६	२२	१
तिरुचिरूपल्ली	३९	३९	७	१	१४	१५	६	१८	२४	१
तिरुनेवेली	३१	३१	६	३	६	१	३	१९	२२	१
कन्याकुमारी	९	९	२	२		६	-	३	३	१
योग	३७१	३६७	८१	४१	९९	१४०	४०	१८७	२२७	१५

सारिणी–१८

पंचायतों का निर्वाचन १९६५ (मद्रास–वर्तमान चैन्नई–राज्य)

जिला	ग्राम पंचायतों की संख्या	नगर पंचायतों की संख्या	ग्रामीण जनसंख्या	मतदाताओं की संख्या	मताधिकार का उपयोग करनेवालों का प्रतिशत	अमान्य मत (प्रतिशत)	निर्वाचन योग्य प्रत्याशियों की संख्या	सर्वसम्मति से निर्वाचित		सर्वसम्मति से निर्वाचित अध्यक्ष		निर्वाचित अनुसूचित जनजाति के अध्यक्षों की संख्या	निर्वाचित अनुसूचित जाति के अध्यक्षों की संख्या
								संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत		
उत्तर आर्कोट	१,५७५	२७	२७,००,२६६	१३,४७,९२५	५०.८	३	१३,९९०	६,२०४	४४	८३२	५१.९	३८	१५
दक्षिण आर्कोट	१,७३८	२२	२८,३१,९६४	१६,०२,७५९	४५	३	१४,९७८	६,८६८	४६	१२८१	७२.८	१००	–
चेंगलपट्टु	१,२०२	२५	२०,१०,५१९	१०,७६,७७८	६१.७	३.४	९,६००	४,०६२	४२.३	८६५	–	११	१
कोइम्बतूर	७९८	५३	२८,५५,०७९	१५,५८,४६३	४३	२.७	९,०३६	३,२८४	३६	–	–	३	–
कन्याकुमारी	–	४६	८,४६,८३६	४,३१,३२०	६७	२.५८	६७२	१०५	१५.६	२३	५०	–	–
मदुराई	८५४	४३	२५,२५,९३३	१४,२४,६३८	–	३.८	८,८०१	३,०५०	३५	५८३	६५	१८	–
रामनाथपुरम्	१,२९८	२४	१९,८५,६८२	६,१०,३२२	७३	२.८	११,११०	५,५६९	४९	९८४	७२	–	–
नीलगिरि	३२	१६	३,१३,२८५	१६,१६,७००	५०	३.०८	५७२	२५१	४३.८	२५	४३	१	२
सेलम	१,३१९	४८	३३,४२,०७५	१५,११,६९३	५४.९८	४.३९	१३,७५०	५,९८४	४३.५	७९२	५८	१२	३५
तंजावुर	१,५९५	३०	२८,५४,५१८	१६,६०,०२९	७०.२४	३.४७	१४,२४९	५,४४७	३८	११००	६८	१५४	–
तिरुनेलवेली	८११	५७	२४,०७,७२५	१३,१०,६२४	६०.३०	२.०३	८,६६१	२,९२०	३३.७	५७४	६५.५	७८	–
तिरुचिरापल्ली	१,२२४	३३	२७,१७,०१२	१४,९६,३८३	५०.२८	३	१२,१७०	३,८९२	३१.९	७३०	५८.२	२१	४
कुल	१२,४५४	४२४	–	–	–	–	१,१७,६२९	४७,६३६		७,७५३		५२३	५७

मद्रास राज्य में पंचायती विकास व्यवस्था का संगठन ढाँचा

(क) राज्य स्तरीय

स्थानीय प्रबंध के लिए मंत्रीगण

सरकार के अधिक सचिव

सरकार के सचिव एवं विकास आयुक्त

उपसचिव एवं पंचायती नियामक (वित्तीय) — उपनियामक वित्तीय आयुक्त समाज

उपसचिव एव पंचायती नियामक कार्यक्रम — सहायक विकास आयुक्त (प्रशिक्षा)

उपसचिव भवन प्रबंध — सहायक विकास

उपसचिव स्थानीय संचालन

नायब सचिव (विशेष) कानूनी पक्ष के उत्तरदायी जिम्मेदार अधिकारी
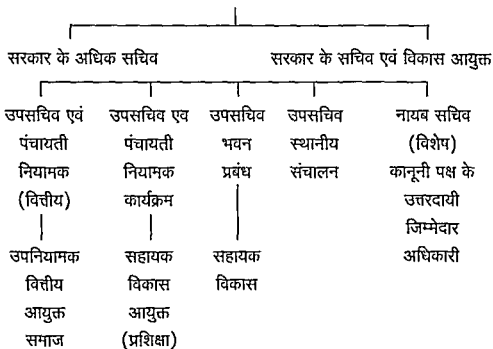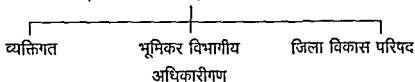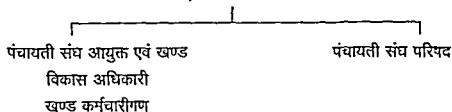
१२. उदाहरण स्वरूप कतिपय पंचायतों का सर्वेक्षण

पंचायतों के गहन अध्यन के लिए, तंजावुर, रामनाथपुरम्, कोयम्बतुर और उत्तरी आर्कोट जिलों का चयन किया गया था । ऐसा यह अध्ययन तीन रूपों से करना था ।

(१) *विभिन्न ग्रामीण व्यक्तियों, निर्वाचित सदस्यों एवं अधिकारियों* के साक्षात्कार द्वारा (२) प्रशिक्षित संशोधकों के द्वारा इन पंचायतों की कारवाई का छह महीने तक निरीक्षण करते हुए और; (३) इन संस्थाओं के कार्यालयों में (पंजीकृत दस्तावेज) अध्ययन के द्वारा ।

वैसे समूची कार्ययोजना जिस उद्देश्य के साथ आरम्भ की गई थी उस उद्देश्य में *कई काणरों से सफलता संभव नहीं हो पाई थी । एक तो साक्षात्कार में जल्दबाजी* हुई थी । इसे लेकर समग्र व्यवस्था की वास्तविक जानकारी प्राप्त नहीं हो पाई थी । परिणामतया संपूर्ण माहिती के अभाव में उसका सुचारू और विधिवत् अध्ययन एक ओर रह गया, उस पर अपेक्षित ध्यान नहीं दिया गया । दूसरी बात, स्थल पर प्राप्त हुए अभिलेख तुलना में असंवद्ध थे । दूसरा एक यह कार भी था कि कई वरिष्ट खोज *सफल तामिल भाषा जानते ही नहीं थे और पंचायतों की संस्थाओं के आवश्यक* (अभिलेख) कागज़ात भी पूर्णतया उपलब्ध नहीं थे । इसके अतिरिक्त, इसकी जानकारी भी प्राप्त नहीं हो सकी कि ये संस्थाएँ निश्चित निर्णय पर कैसे पहुँची थी । इन संस्थाओं की बैठकॉकी कारवाईयो में कार्यसूचि के किस विषय को स्वीकार किया गया है या उसे स्थगित रखा गया है या फिर (शायद ही) उसका अस्वीकार किया गया है इस सदर्भ में अधिक कुछ दर्शाया नहीं गया था ।

कंस जाँच के लिए जिन १२ पंचायतों का चयन किया गया था उनके नाम इस प्रकार हैं । (१) तिरूवैयुर (२) नीडमंगलम् (३) तंजावुर जिले में स्थित मुथुपेट (४) साक्कोताई (५) राजसिंगमंगलम् (६) रामनाथपुरम् जिले में स्थित तिरुपावान्नम् (७) पोल्लाची (८) वेल्लाकोइल (९) कोयम्बतुर जिले में स्थित मोडाकुरी (१०) कान्डीली (११) वांदीवाश और (१२) उत्तरी आर्कोट जिले में स्थित चेट्यार ।

इस बारह में से प्रत्येक संघ मे आई हुई तीन-तीन ग्राम पंचायतो का असंबद्ध रूप से चयन किया गया था, जिनमें से पॉच पंचायते थीं । इसके उपरांत सक्कोताई में स्थित तीनों पंचायतो, तिपुवानम् में स्थित एक (ग्राम) पंचायत, और एक चैय्युर मे स्थित (ग्राम) पंचायत का भी गहन अध्ययन किया गया था । इसके द्वारा इन पंचायतों का विस्तार, जनसंख्या, पंचायती बोर्ड की सबसे पहले हुई रचना, उनकी कुल आय एवं खर्च का विवरण सारिणी ४१ में दर्शाया गया है ।

१

इन ३६ पंचायतों में से, प्रति पंचायत उनकी सूचियों मे पंजीकृत किये गये २० व्यक्तियों का चयन साक्षात्कार के लिए किया गया था । इस प्रकार कुल मिलाकर ७२० व्यक्तियों का चयन किया गया था । (इनमे से १०० व्यक्तियों का चयन नगर पंचायतों में से किया गया था ।) एक सामान्य प्रश्नोत्तरी के द्वारा इन सब का साक्षात्कार किया गया था । प्रत्येक पंचायत से पंचायत परिषद के अध्यक्ष, और ८ से १० सदस्य तथा (ग्राम) पचायत स्तर के तीन अध्यक्षों के साक्षात्कार किये गये थे । इसके अलावा विभिन्न जिलो के पंचायती संघों के अध्यक्षों के एवं परिषद के सदस्यों के भी साक्षात्कार किये गये थे । इस प्रकार कुल मिलाकर लगभग २७२ निर्वाचित सदस्यों के एक अन्य प्रश्नोत्तरी के अनुसार साक्षात्कार किये गये थे ।

इसके अतिरिक्त, तीसरे समूहने तीसरी सूची के अनुसार साक्षात्कार किये । जिसमें २६८ अधिकारियों के अलावा ३६ पंचायतों में से प्रत्येक ३ अधिकारी, १२ पंचायती संघोमे से प्रत्येक से १० और शेष ३८ अधिकारियों के साक्षात्कार जिला स्तर पर किये गये थे । इन जिलास्तरीय अधिकारियों में पॉच जिला समाहर्ता का समावेश होता है । इस प्रकार कुल मिलाकर ६७२ अधिकारियो के साक्षात्कार किये गये थे । इन साक्षात्कारों को पहले लगभग विभिन्न सारिणियों मे समाहित किया गया था और बाद मे उन्हें लगभग १३० शीर्षको मे वर्गीकृत किया गया । इस साक्षात्कार में उत्तर देनेवाले अधिकारी एवं निर्वाचित सदस्यों में अधिकांश पुरुष ही थे, जब कि ग्रामीण स्तर पर लगभग (७१७ में से २५३) महिलाओं के भी साक्षात्कार किये गये थे ।

साक्षात्कार देनेवाले के अभिप्राय

इस साक्षात्कार के द्वारा सामान्य स्तर यह निकलता था कि इस समय जो कुछ भी चलता है, यह स्वीकार्य हो सकता है । यद्यपि, इस बात को स्वीकार करना

पड़ेगा कि ग्रीण स्तर पर साक्षात्कार देनेवालों में से लगभग ४० से ५० प्रतिशत गाँव के लोगों ने या तो उत्तर ही नहीं दिये थे, या उत्तर देने से दूर रहे थे । इसका एक कारण साक्षात्कार लेने की विधि या कारवाई भी हो सकता है । जब कि दूसरा कारण साक्षात्कार देनेवालों का अज्ञान या उपेक्षावृत्ति भी हो सकता है । चलो जो भी हो, परंतु यह बताना कठिन है कि साक्षात्कार देनेवाले उत्तर देने से क्यो दूर रहे थे । परंतु जितने भी प्राप्त हुए थे उन उत्तरों में विशेष प्रकार का अन्तर देखने को नहीं मिला था ।

प्रत्येक उत्तर देनेवालों को ग्रामपंचयात के अस्तित्व के बारे में जानकारी थी ही । इसके लिए पंचायती संघ परिषद के अधिकांश सदस्यों के पास अपने संघ में कितनी ग्रामपंचायतें हैं इसकी भी जानकारी थी । सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि उनमें से लगभग सभी का कहना था कि पंचायतों के कार्यक्रमों में सब से अधिक प्राथमिकता सड़कें, पेय जल एवं विद्यालयों को ही देनी चाहिए और वह दी जा रही है । इतना ही नहीं वे सभी इसके लिए पूर्णतया सतर्क भी थे । सामान्य ग्रामजन या पंचायत के निर्वाचित सदस्य और जिला स्तरीय अधिकारी भी इन तीनों प्रश्नों के संदर्भ में सहमत तो थे ही परंतु साथ ही सबने बताया था कि कृषि के प्रति भी अधिकारियों को अधिक ध्यान देना चाहिए ।

अन्य एक ध्यानाकर्षित करने योग्य बात - इन संस्थाओं के साथ जुड़े हुए किसी के मन में कोई बड़ा विवाद या अशांति या अधिकआशा - आकांक्षाओं के दर्शन नहीं हुए थे । शायद ऐसी संभावना हो सकती है कि तुम्हें पूछे गए प्रश्न अस्पष्ट हों कि ऐसी बातें प्रकट ही न हो सके । अन्य एक बात देखने को मिली कि नगरों में निवास करनेवाले अधिकारी और ग्रामीण लोगों के मंतव्यों के बीच कुछ विसंगति पाई गई थी । यद्यपि वह विसंगति सब से अधिक तो चुनाव के संदर्भ में उनके द्वारा दर्शाए गए अभिप्रायों में देखने को मिली थी ।

ग्रामीण लोग पंचायती स्तर के चुनाव के स्थान पर संसद के चुनावों को अधिक महत्त्व देते थे । इससे विपरीत नगरों में निवास करते अधिकारी एवं पंचायती संघों के अध्यक्षों का कहना था कि गाँव के लोग विशेषकर पंचायतों के चुनाव के संदर्भ में ही अधिक उत्तेजित होते हैं । यद्यपि यह उत्तर तो सन् १९६५ में मद्रास राज्य में आयोजित पंचायतों के चुनाव के समय दिया गया था । अगर अन्य किसी समय पर त अध्यक्षों ने उत्तर दिये होते तो शायद कुछ भिन्न होते ।

सारिणी–१९

प्रश्न : किस चुनाव में आपने मत दिया है ?

कुल प्रतिक्रियाएँ	अनुत्तर	पता नहीं	पंचायत सर्व संमत से	केवल पंचायत	दोनों	सामान्य चुनाव	एक भी नहीं
७१७१	५	५	२७	७३	२४५	३२९	६३

सारिणी–२०

प्रश्न : नीचे दर्शाए गए किस चुनाव में आपको अधिक उत्तेजना का अनुभव हुआ ?

कुल प्रतिक्रियाएं	अनुत्तर	अप्राप्य	पता नहीं	केवल पंचायत	दोनों	सामान्य चुनाव	एक भी नहीं
७१७	६१	१४	२१	१५१	८६	२८१	१०३

सारिणी-२१ निर्वाचित प्रतिनिधि

प्रश्न : पंचायती चुनाव और सामान्य चुनाव में से गाँव के लोगों को किस चुनाव में उत्तेजना का अनुभव अधिक होता है ?

उत्तरदाता की कक्षा	कुल	अनुत्तर	अप्राप्य	अनजान	केवल पंचायत	दोनों	केवल सामान्य	एक भी नहीं
पंचायत के सदस्य	२०८	२	-	२	६९	३७	९१	७
पचायत के अध्यक्ष	३१	-	-	-	८	५	१८	-
पंचायत के परिषद सदस्य	११२	-	-	-	४२	१६	५४	-
पंचायत के परिषद अध्यक्ष	१२	-	-	-	९	-	२	-
जिलाविकास समिति के सदस्य	९	-	-	-	४	२	३	-
	३७२	२	१	२	१३२	६०	१६८	७

सारिणी-२२(निर्वाचित प्रतिनिधि)

प्रश्न : आपको कैसी अनुभूति हुई है ?

उत्तरदाता की वर्ग	कुल	अनुत्तर	अप्राप्य	अनजान	केवल पंचायत	दोनों	केवल सामान्य	एक भी नहीं
पंचायत के सदस्य	२०८	२४	-	१२	६५	२६	७३	५
पंचायत के अध्यक्ष	३१	३	-	-	१५	४	९	-
पंचायत के परिषद सदस्य	११२	९	-	१	४७	१७	३३	४
पंचायत के परिषद अध्यक्ष	१२	-	-	१	९	-	२	-
जिलाविकास समिति के सदस्य	९	१	-	२	४	१	१	-
	३७२	३७	-	१६	१३६	४८	११८	९

सारिणी–२३ (अधिकारी गण)

प्रश्न : पंचायत के चुनाव एवं सामान्य चुनावो मे से कौन से चुनाव ग्रामीण लोगों में अधिक उत्तेजना जगाते हैं ?

उत्तरदाता की कक्षा	कुल संख्या	अनुत्तर	अप्राप्य पंचायत	अनजान	केवल सामान्य	दोनों	केवल	
गाँव के मुनसक	१९	१	-	-	६	४	८	-
गाँव के कर्णम	१६	-	-	-	५	६	५	-
अध्यापक	३२	-	१	-	९	३	१९	-
पंचायत सचिव	७	-	-	-	२	२	३	-
ग्राम सेवक	४०	-	-	-	२१	२	१४	२
ग्राम सेविका	४	१	-	-	२	-	१	-
विस्तरण अधिकारी	९८	२	१	-	३४	१६	४३	२
खण्डीविकास अधिकारी	१३	-	-	-	५	१	७	-
जिला अधिकारी	२९	४	-	-	१५	३	७	-
जिलाधीश	५	१	-	-	२	१	१	-

मतदान के संदर्भ में रहते नागरिकों से पूछा गया तब उन्होंने बताया कि पंचायत के चुनावों में वे अपने विचारों के आधार पर ही मत देते हैं, उसमें जाति, राजनीतिक दल भावना, पद या गुटबंदी आदि को स्थान ही नहीं है । परन्तु नगरों में निवास करनेवाले अधिकारी एवं पंचायती संघ परिषद के अध्यक्षों ने साक्षात्कार के समय दर्शाया था कि ज्ञाति, राजनीतिक दल-भावना, पद (आर्थिक या राजनीतिक) और गुटबंदी का मतदान पर अधिक प्रभाव पड़ता है ।

इन दोनों अभिप्रायों में विरोधाभास प्रतीत होता है । परन्तु इसका कारण उनका अपना दृष्टिकोण है । ग्रामीण समाज के बीच रहनेवाले नागरिक और उनके दूर रहनेवाले नागिरों के दृष्टिकोण के बीच का यह भेद है । इसका एक कारण यह भी हो सकता है कि या तो वे (ग्रामीण समाज से दूर रहनेवाले) केवल साक्षीभाव से ही परिस्थिति का निरीक्षण करते हैं, या तो उनके मन में रूढ हो गये विचारों के अनुसार परिस्थिति का निरीक्षण करते हैं ।

सारिणी-२४

प्रश्न : पंचायत के चुनाव में किस ज्ञाति के उम्मीदवार को आपने मत दिया ।

कुल प्रतिक्रियाएँ	स्वयं की	अन्य की
३२१	१२४	१९७

सारिणी-२५

प्रश्न : बताइए कि क्यां पंचायती चुनावों के किसी भी उम्मीदवार को किसी भी राजनीतिक पक्ष का समर्थन मिला था ?

कुल प्रतिक्रियाएँ	अनुत्तर	पता नहीं	हाँ	ना
७१७	९६	१९६	३६	३८९

सारिणी-२६

प्रश्न : मत देने से पूर्व आप किसकी परामर्श करेंगे ?

कुल प्रतिक्रियाएँ	अनुत्तर	पता नहीं	गाँव	मित्र	ज्ञाति के नेता	पक्ष के नेता	किसी को नहीं	परिवार
७१७	५२	९	९४	३३	५३	२६	४३३	१७

सारिणी–२७ (निर्वाचित सदस्य)

प्रश्न : आपकी पंचायत या पंचायत परिषद का चुनाव क्या पक्ष के आधार पर हुआ ? मान लीजिए किसी प्रत्याशीने अपने प्रचार में पक्ष के सूत्रों का उपयोग किया था क्या ?

उत्तर देनेवालों का वर्ग	कुल संख्या	अनुत्तर	जानकारी नहीं	हाँ	ना
पंचायत के सदस्य	२०८	४	५	१४	१८५
पंचायत के अध्यक्ष	३१	-	-	१	३०
पंचायती परिषद के सदस्य	११२	१	१	१५	९५
पंचायती परिषद के अध्यक्ष	१२	१	-	२	९
जिला विकास समिति के सदस्य	९	-	-	३	६
	३७२	**६**	**६**	**३५**	**३२५**

सारिणी–२८ (निर्वाचित प्रतिनिधि)

प्रश्न : किसी प्रत्याशी ने क्या अपने पक्ष में ज्ञाति के आधार पर नारे का प्रयोग किया था ?

उत्तर देनेवालों का वर्ग	कुल संख्या	अनुत्तर	जानकारी नहीं	हाँ	ना
पंचायत के सदस्य	२०८	२	६	२१	१७१
पंचायत के अध्यक्ष	३१	१	-	२	२८
पंचायती परिषद के सदस्य	११२	२	-	१०	१००
पंचायती परिषद के अध्यक्ष	१२	-	-	९	३
जिला विकास समिति के सदस्य	९	१	-	२	६
	३७२	**६**	**६**	**४४**	**३१६**

सारिणी-२९ (अधिकारी)

प्रश्न : पंचायती चुनाव के समय किसी प्रत्याशि ने क्या पक्ष के नारों का उपयोग किया था ? या पक्ष की सहायता ली थी ?

उत्तर देनेवाले का वर्ग	कुल संख्या	अनुत्तर नहीं	जानकारी नहीं	हाँ	कुछ-कुछ	ना
गाँव के मुनसफ	१९	-	-	१	१	१७
गाँव के कर्णम	१६	-	-	३	२	११
शिक्षक	३२	१	४	३	३	२१
पंचायती सचिव	७	-	-	१	१	५
ग्राम सेवक	४०	-	५	८	३	२४
ग्राम सेविका	४	१	-	१	-	२
विस्तरण अधिकारी	९८	-	१७	२७	८	४६
खण्डविकास अधिकारी	१३	-	२	३	-	८
जिला अधिकारी	२९	-	२	१८	५	४
जिलाधीश	५	-	१	२	१	१

पंचायती संघों के परिषदों के अधिकार में चलने वाले विद्यालयों के संदर्भ में अधिकांश ग्रामीण लोग एवं अधिकारियों ने भी (अधिकारियों मे से ३२, शिक्षकों में से १७ के साक्षात्कार किये गये) ऐसा अभिप्राय व्यक्त किया था कि अब विद्यालय में आनेवाले बच्चों की संख्या में वृद्धि हो रही है । केवल सीमित व्यक्तियों ने ही ऐसा बताया था कि पंचायती संघों द्वारा संचलित विद्यालयों में संख्या कम हो रही है ।

सारिणी-३०

उत्तर देनेवाले का वर्ग	७१७	-	१६२	५०१	५८	

सारिणी-३१ (उत्तर देनेवाले ग्रामवासी)

प्रश्न : पिछले तीन-चार वर्षो मे क्या आप को लग रहा है कि गाँव में शिक्षा के संदर्भ में अच्छा या बुरा अन्तर आया है

उत्तर देने-वाले का वर्ग	निकट से निरीक्षण	शिक्षा के स्तर में सुधार	अच्छी उपस्थिति	शिक्षकों की संख्या में वृद्धि	विद्यालय का पक्का मकान	मध्याह्न भोजन
७१७	१२९	१८२	२३६	१६७	९९	२५०

सारिणी-३२

प्रश्न : पिछले चार वर्षों में शिक्षा की पद्धति में अच्छा या बुरा प्रभाव पड़ा हो क्या ऐसा आपको लग रहा है ?

उत्तर देनेवाले का वर्ग	कुल संख्या	निरूत्तर	अनजान	हाँ	ना
पंचायत के सदस्य	२०८	०५	१७	१६६	२०
पंचायत-अध्यक्ष	३१	-	-	२८	०३
पंचायती परिषद के सदस्य	११२	-	१	१०५	०६
पचायती परिषद-अध्यक्ष	१२	-	-	११	१
जिला विकास समिति के सदस्य	९	-	-	८	०१
	३७२	०५	१८	३१८	३१

सारिणी–३३ (निर्वाचित प्रतिनिधि)

प्रश्न : क्या आपको लगता है कि पिछले तीन-चार वर्षों में शिक्षा के क्षेत्र में अच्छा या बुरा परिवर्तन हुआ है ? अगर हुआ हो तो किस प्रकार का ?

उत्तर देनेवालों का वर्ग	अच्छा संचालन और निकट से निरीक्षण	शिक्षा के स्तर में सुधार	छात्रों की संख्या में वृद्धि	हस्त व्यवसाय की प्रशिक्षण दिया जाता है	निशुल्क शिक्षा	–	शिक्षा के स्तर में कमी	माध्याह्न भोजन
पंचायत के सदस्य	७५	६६	४३	१	९	१०	६	३९
पंचायत-अध्यक्ष	१३	११	८	१	२	१	१	१०
पंचायती परिषद के सदस्य	१३	४४	२७	१	१२	५	४	२८
पंचायती परिषद-अध्यक्ष	९	२	२	-	-	-	-	२
जिला विकास समिति के सदस्य	६	५	२	-	-	-	-	२

सारिणी–३४ (अधिकारी)

प्रश्न : जिला बोर्ड से प्राथमिक शिक्षा का संचालन परिषदों ने अपने अधिकार में लिया इसके पश्चात् किस प्रकार का परिवर्तन आपको प्रतीत होता है ?

उत्तर देनेवाले का वर्ग	कुल संख्य	अनुत्तर	जानते नहीं	नजदीक से निरीक्षण और अच्छा संचालन	स्तर में कमी	विद्यार्थी संख्या में वृद्धि	अधिक अध्यापक	पक्का मकान	अधिक विद्यालय
गाँव के मुनसक	१९	-	३	१०	३	१६	११	-	२
गाँव के कर्णम	१६	१	४	१०	२	१०	७	१	३
अध्यापक	३२	३	४	१८	३	१७	२३	२	३
पंचायत सचिव	७	-	२	५	-	६	३	१	१
ग्राम सेवक	४०	-	११	३३	२	३१	१८	३	३
ग्राम सेविका	४	-	२	१	१	३	२	१	-
विस्तरण अधिकारी	९८	१	७	६९	४	७१	७०	३	१२
खण्डविकास अधिकारी	१३	-	१	११	-	१०	९	१	-
जिलाधिकारी	२९	२	१	१७	६	१५	१०	-	५
जिलाधीश	५	१	-	२	१	२	१	-	-

उत्तर देनेवाले गाँवनिवासियों में से लगभग प्रत्येक को मध्याह्न भोजन के बारे मे जानकारी थी । बहुत कम लोगों का कहना था कि वह ठीक से नहीं चलती है । तो अधिकांश लोगों ने बताया कि आम लोगों से भी अनुदान मिलते रहते हैं । जब कि बहुत कम लोगों ने बताया था कि इसके अलावा किस संदर्भ में योगदान मिला हो इसके बारे में उनके पास कोई जानकारी नहीं है । यद्यपि इस संचालन के संदर्भ में, ३२ में से २० अध्यापकों ने और १३ में से ७ खण्डविकास अधिकारियों ने असंतोष प्रकट किया था ।

सारिणी–३५ (गाँववासी)

प्रश्न : पंचायतें विद्यालय के बच्चों को मध्याह्न भोजन देती हैं ?

कुल प्रतिक्रिया	अनुत्तर	जानकारी नहीं है	हाँ	ना
७१७	-	६४	६२४	२९

सारिणी–३६ (गाँववासी)

प्रश्न : क्या लोगों का सहयोग संतोजनक है ?

कुल प्रतिक्रिया	अनुत्तर	जानकारी नहीं है	हाँ	ना
७१७	२३४	५७	३७१	५५

सारिणी–३७

प्रश्न : कर एवं शुल्क के अतिरिक्त आपने पंचायत में आर्थिक योगदान दिया है ?

कुल प्रतिक्रिया	अनुत्तर	जानकारी नहीं है	हाँ	ना
७१७	९	३	९९	६०६

सारिणी–३८ (अधिकारीगण)

प्रश्न : क्या गॉव के लोगों की ओर से आर्थिक योगदान संतोषजनक मिलता है ?

उत्तर देनेवालों का वर्ग	कुल संख्या	अनुत्तर	जानकारी नहीं है	हाँ	अप्राप्य	ना
गाँव के मुनसक	१९	३	-	१३	१	२
गॉव के कर्णम	१६	-	१	८	१	६
अध्यापक	३२	१	-	१०	१	२०
पंचायत सचिव	७	-	-	२	२	३
ग्राम सेवक	४०	१	-	२०	२	१७
ग्राम सेविका	४	-	-	३	-	१
विस्तरण अधिकारी	९८	३	१	५१	८	३५
खण्डविकास अधिकारी	१३	-	-	६	-	७
जिलाधिकारी	२९	-	-	१२	३	१४
जिलाधीश	५	-	-	३	१	१

सारिणी–३९ (निर्वाचित प्रतिनिधि)

प्रश्न : क्या पंचायत की धनराशि ग्रामपंचायत को ही रखनी चाहिए या विकास खण्ड को ? आपका अभिप्राय बताइए और उसका कारण दर्शाइए ।

उत्तर देनेवाले का वर्ग	कुल संख्या	अनुत्तर	जानकारी नहीं है	पंचायतों को ही रखनी चाहिए	परिवर्तन आवश्यक नहीं है	किसीके पास रहे रहे इससे अंतर नहीं पड़ता
पंचायत सदस्य	२०८	२६	३२	१०२	३०	१८
पंचायत अध्यक्ष	३१	३	१	१७	६	४
पंचायत परिषद सदस्य	११२	७	५	६४	३२	१४
पंचायत परिषद अध्यक्ष	१२	२	-	४	६	-
जिला विकास समिति	९	१	-	४	२	२

उत्तर देनेवाले गाँवनिवासियों में से लगभग प्रत्येक को मध्याह्न भोजन के बारे में जानकारी थी । बहुत कम लोगों का कहना था कि वह ठीक से नहीं चलती है । तो अधिकांश लोगों ने बताया कि आम लोगों से भी अनुदान मिलते रहते हैं । जब कि बहुत कम लोगों ने बताया था कि इसके अलावा किस संदर्भ में योगदान मिला हो इसके बारे में उनके पास कोई जानकारी नहीं है । यद्यपि इस संचालन के संदर्भ में, ३२ में से २० अध्यापकों ने और १३ में से ७ खण्डविकास अधिकारियों ने असंतोष प्रकट किया था ।

सारिणी–३५ (गाँववासी)

प्रश्न : पंचायतें विद्यालय के बच्चों को मध्याह्न भोजन देती हैं ?

कुल प्रतिक्रिया	अनुत्तर	जानकारी नहीं है	हाँ	ना
७१७	–	६४	६२४	२९

सारिणी–३६ (गाँववासी)

प्रश्न : क्या लोगों का सहयोग संतोजनक है ?

कुल प्रतिक्रिया	अनुत्तर	जानकारी नहीं है	हाँ	ना
७१७	२३४	५७	३७१	५५

सारिणी–३७

प्रश्न : कर एवं शुल्क के अतिरिक्त आपने पंचायत में आर्थिक योगदान दिया है ?

कुल प्रतिक्रिया	अनुत्तर	जानकारी नहीं है	हाँ	ना
७१७	९	३	९९	६०६

सारिणी-३८ (अधिकारीगण)

प्रश्न : क्या गाँव के लोगों की ओर से आर्थिक योगदान संतोषजनक मिलता है ?

उत्तर देनेवालों का वर्ग	कुल संख्या	अनुत्तर	जानकारी नहीं है	हाँ	अप्राप्य	ना
गॉव के मुनसक	१९	३	-	१३	१	२
गॉव के कर्णम	१६	-	१	८	१	६
अध्यापक	३२	१	-	१०	१	२०
पंचायत सचिव	७	-	-	२	२	३
ग्राम सेवक	४०	१	-	२०	२	१७
ग्राम सेविका	४	-	-	३	-	१
विस्तरण अधिकारी	९८	३	१	५१	८	३५
खण्डविकास अधिकारी	१३	-	-	६	-	७
जिलाधिकारी	२९	-	-	१२	३	१४
जिलाधीश	५	-	-	३	१	१

सारिणी-३९ (निर्वाचित प्रतिनिधि)

प्रश्न : क्या पंचायत की धनराशि ग्रामपंचायत को ही रखनी चाहिए या विकास खण्ड को ? आपका अभिप्राय बताइए और उसका कारण दर्शाइए ।

उत्तर देनेवाले का वर्ग	कुल संख्या	अनुत्तर	जानकारी नहीं है	पंचायतों को ही रखनी चाहिए	परिवर्तन आवश्यक नहीं है	किसीके पास रहे रहे इससे अंतर नहीं पड़ता
पंचायत सदस्य	२०८	२६	३२	१०२	३०	१८
पंचायत अध्यक्ष	३१	३	१	१७	६	४
पंचायत परिषद सदस्य	११२	७	५	६४	३२	१४
पंचायत परिषद अध्यक्ष	१२	२	-	४	६	-
जिला विकास समिति	९	१	-	४	२	२

उत्तर देनेवालें गाँवनिवासियों में से लगभग प्रत्येक को मध्याह्न भोजन के बारे मे जानकारी थी । बहुत कम लोगों का कहना था कि यह ठीक से नहीं चलती है । तो अधिकांश लोगों ने बताया कि आम लोगों से भी अनुदान मिलते रहते हैं । जब कि बहुत कम लोगों ने बताया था कि इसके अलावा किस संदर्भ में योगदान मिला हो इसके बारे में उनके पास कोई जानकारी नहीं है । यद्यपि इस संचालन के संदर्भ में, ३२ मे से २० अध्यापकों ने और १३ में से ७ खण्डविकास अधिकारियों ने असंतोष प्रकट किया था ।

सारिणी-३५ (गाँववासी)

प्रश्न : पंचायतें विद्यालय के बचों को मध्याह्न भोजन देती हैं ?

कुल प्रतिक्रिया	अनुत्तर	जानकारी नहीं है	हाँ	ना
७१७	-	६४	६२४	२९

सारिणी-३६ (गाँववासी)

प्रश्न : क्या लोगों का सहयोग संतोजनक है ?

कुल प्रतिक्रिया	अनुत्तर	जानकारी नहीं है	हाँ	ना
७१७	२३४	५७	३७१	५५

सारिणी-३७

प्रश्न : कर एवं शुल्क के अतिरिक्त आपने पंचायत में आर्थिक योगदान दिया है ?

कुल प्रतिक्रिया	अनुत्तर	जानकारी नहीं है	हाँ	ना
७१७	९	३	९९	६०६

सारिणी–३८ (अधिकारीगण)

प्रश्न : क्या गॉव के लोगों की ओर से आर्थिक योगदान संतोषजनक मिलता है ?

उत्तर देनेवालों का वर्ग	कुल संख्या	अनुत्तर	जानकारी नहीं है	हाँ	अप्राप्य	ना
गाँव के मुनसक	१९	३	-	१३	१	२
गाँव के कर्णम	१६	-	१	८	१	६
अध्यापक	३२	१	-	१०	१	२०
पंचायत सचिव	७	-	-	२	२	३
ग्राम सेवक	४०	१	-	२०	२	१७
ग्राम सेविका	४	-	-	३	-	१
विस्तरण अधिकारी	९८	३	१	५१	८	३५
खण्डविकास अधिकारी	१३	-	-	६	-	७
जिलाधिकारी	२९	-	-	१२	३	१४
जिलाधीश	५	-	-	३	१	१

सारिणी–३९ (निर्वाचित प्रतिनिधि)

प्रश्न : क्या पंचायत की धनराशि ग्रामपंचायत को ही रखनी चाहिए या विकास खण्ड को ? आपका अभिप्राय बताइए और उसका कारण दर्शाइए ।

उत्तर देनेवाले का वर्ग	कुल संख्या	अनुत्तर	जानकारी नहीं है	पंचायतों को ही रखनी चाहिए	परिवर्तन आवश्यक नहीं है	किसीके पास रहे रहे इससे अंतर नहीं पड़ता
पंचायत सदस्य	२०८	२६	३२	१०२	३०	१८
पंचायत अध्यक्ष	३१	३	१	१७	६	४
पंचायत परिषद सदस्य	११२	७	५	६४	३२	१४
पचायत परिषद अध्यक्ष	१२	२	-	४	६	-
जिला विकास समिति	९	१	-	४	२	२

सारिणी–४० (अधिकारीगण)

प्रश्न : पंचायत एवं पंचायत के आर्थिक संवंधों के वारे में आपकी क्या राय है ? वर्तमान पद्धति में यदि किसी भी प्रकार के परिवर्तन की आवश्यकता हो तो कृपया दर्शाइएँ ।

उत्तर देनेवाले की कथा	कुल	अप्राप्य	जानकारी नहीं है	परिवर्तन अनावश्यक	प्रवर्तमान व्यवस्था ठीक है	जनसंख्या के अनुपात के अनुसार निधि देनी चाहिए	धननिधि पंचायत को रखनी चाहिए	अधिक सावधानी की आवश्यकता है	व्यय के शीर्षक परिवर्तन आवश्यक	ऋण देने का प्रबंध सरकार के पास रहना चाहिए
गाँव के मुनसक	१९	१	५	-	११	१	-	-	१	-
गाँव के कर्णम	१६	१	१	२	८	१	१	१	-	१
अध्यापक	३२	५	१०	१	११	१	३	१	-	-
पंचायत सचिव	७	-	२	-	३	-	१	१	-	-
ग्राम सेवक	४०	१	८	२	२९	३	-	३	-	२
ग्राम सेविका	४	१	-	-	२	१	-	-	-	-
विस्तरण अधिकारी	१८	३	२०	११	५३	७	१	३	४	१
खण्डविकास अधिकारी	१३	१	-	१	७	-	१	२	१	-
जिलाधिकारी	२९	३	१२	०	१४	-	-	-	-	-
जिलाधीश	५	१	१	१	२	-	-	-	-	-

इस अध्याय में अब आगे जो कुछ अधिक जानकारी दी गई है वह पचायतें, पंचायती संघ और जिला विकास परिषद के कार्यालय में से प्राप्त अभिलेखों से ली गई है ? यद्यपि यह जानकारी एकत्र करनेवाला समूह इन अभिलेखों के सीमित भाग का ही अध्यन कर पाया था, इतना ही नहीं अध्यन का क्षेत्र भी सीमित ही था । इसलिए किसी एक क्षेत्र में किसी निश्चित विषय के सम्बन्ध में इन अभिलेखीय आधारों में से टिप्पणी न ली गई हो तो इसका अर्थ यह मानना चाहिए कि इस समूहने उसके सम्बन्ध

में जाँच नहीं की है या, उसके सदर्भ में किसी प्रकार के अभिनंदन-उपलब्ध नहीं है ।

उदाहरण स्वरूप पंचायतें :

सारिणी-४१ से ज्ञात हो सकेगा कि इन ३१ पंचायतों में सेलगम आधी पंचायतें तो तुलना में नई है, क्योंकि उनका गठन १९५८ से १९६० की समयावधि ही हुई थी अन्य कुछेक का गठन १९५०-५८ की समयावधि ही हुआ था और कुछ इससे पुरानी हैं । इसके अलावा पाँचों नगर पंचायते ४० से ८० वर्ष पुरानी हैं । इन उदाहरण स्वरूप ली गई पंचायतों का क्षेत्रफल १ से १८ वर्ग कि.मी. का है, और जनसंख्या लगभग ७०० से ६००० है । इन संघों में से कुछ तो एक ही ग्राम पंचायत के बने हुए है तो कतिपय लगभग बीस छोटे-छोटे कस्बा से बने हुए हैं ।

इन पंचायतों की वार्षिक आय-व्यय में बहुत अन्तर रहा है । कुछ संघों की वार्षिक आय १९६३-६३ में तो केवल रु. १,५०० ही थी, जब कि कुछेक की रु. २०,०००/- व्यय में तो इससे भी बड़ा अन्तर ज्ञात होता है । दो या तीन पंचायतों में तो केवल (प्रति व्यक्ति) ०/५० ही व्यय हुआ है, जब कि कुछ संघो की प्रति व्यक्ति वार्षिक आय लगभग रु. ८ होते हुए भी व्यय तुलना में अत्यल्प होता है । इसका एक कारण यह भी हो सकता है कि भविष्य के लिए बचत करते हों या फिर इतनी समझ न हो कि उस राशि का उपयोग कहाँ और कैसे किया जा सकता है । इसी १९६३-६४ को समयावधि पंचायतों में से कुछ पंचायतों ने प्रति व्यक्ति रु. १० का व्यय किया हो ऐसी जानकारी भी प्राप्त होती है । सामान्यतया व्यय का आधार आय होता है । परन्तु कुछ पंचायतों में घाटापूर्ति पूर्वसंचित विधि से की जाती थी । इसके अतिरिक्त यह भी सर्वस्वीकृत सत्य है कि अधिकांश पंचायतों के पास १९६०-९१ में पर्याप्त जमा राशि थी, परन्तु उन्होंने उस निधि को १९६४-६५ तक व्यय कर दिया था ।

अधिकांश पंचायतों में मुद्रांकर अधिकार स्टेम्प ड्युटी-आय का प्रमुख साधन

है । ऐसा होते हुए भी वेल्लाकोईल पंचायती संघ की ३ पंचायतों को इनमें से अपवाद स्वरूप माना जा सकता है । इसके उपरांत पारावाने मोदककुरिची के पंचायती संघ में बनी तीन पंचायतों ने अपने ढंग से ही विकास कर अपने आपको अपवाद सिद्ध किया है । हम जिस दृष्टांत स्वरूप पंचायतों का सर्वेक्षण कर रहे हैं उसमें अन्य पंचायतों ने विकास कर लागू किया हो यह यह जानकारी प्राप्त नहीं होती है । यह अन्तर अधिकांश प्रति जिले में दिखाई देता है ।

इसके अलावा प्रत्येक पंचायत के द्वारा लागू किया जानेवाला निवासकर भी उनकी आय का प्रमुख साधन है । भारी वाहन-कर आय का बहुत छोटा साधन है । कुछ पंचायतें सरकार या पंचायती संघों के अनुदानों को आय के रूप में दर्शाती हैं । इसके उपरांत इसमें भी आय-व्यय की टिप्पणी की दृष्टि से भिन्न भिन्न पद्धति अपनाई हुई प्रतीत होती है । मानो, पंचायती संघ या सरकार के द्वारा किसी निश्चित निर्माण के उद्देश्यों के लिए दिया जानेवाला अनुदान पंचायतें अपनी बहियों में आय के रूप में दर्शाती है । इसलिए किसी भी क्षेत्र की पंचायतों की बहियों से उनकी आय-व्यय का वास्तविक चित्र स्पष्ट नहीं होता है ।

जहाँ तक व्यय का संबंध है तो कार्यालय के कर्मचारियों पर अल्पल्प खर्च देखने को मिलता है । इसी तरह डाक-व्यय एवं यात्रा-व्यय भी अल्पल्प सा रहता है । स्टेशनरी के लिए अधिक खर्च होता है । यह खर्च कभी-कभी रु. १०० से २०० का देखा जाता है । स्टेशनरी के अलावा प्रकाश के प्रबंध के लिए भी पर्याप्त व्यय होता है । जब कि कुछ पंचायतें मध्याह्न भोजन के लिए भी समुचित योगदान देती थी । यद्यपि यह खर्च १९६२-६३ और १९६३-६४ में तो पंचायतों की कुल आय का २५ प्रतिशत ही होता था । सब से अधिक व्यय तो सड़कों के निर्माण में, पुलों के निर्माण में, पानी की टंकी के लिए और पेय जल की अन्य सुविधाओं के लिए ही हुआ था । इसी प्रकार विद्यालय के भवन एवं सार्वजनिक केन्द्रों के निर्माण में भी समुचित खर्च होता था । इसके अतरिक्त जिन पंचायतों ने विकास कर लेना आरम्भ किया था उसमें चिकित्सालय आदि के पीछे समुचित व्यय किया था । वृक्षारोपण के लिए भी पंचायतों की ओर से महत्त्वपूर्ण व्यय होता था । इस व्यय में केन्द्र की सहायता का उपयोग होता था । शेष व्यय पंचायत के सामान्य बजट से किया जाता था । उद्यानों पर प्रत्येक पंचायत का व्यय भिन्न-भिन्न था । यद्यपि उद्यानों पर कुछ पंचायतें अपनी आय से अधिक व्यय भी करती थी । इसका एक कारण उद्यानों के लिए संघीय स्तर पर दर्शाया जानेवाला अधिक उत्साह भी हो सकता है ।

सारिणी–४१

(कुछ चयनित पंचायत (कुछ जानकारी)

पंचायत का नाम	आरंभ वर्ष	क्षेत्र	मुहल्लों की संख्या	जन संख्या	आय १९६३–६४ रुपये में	व्यय १९६३–६४ (रुपये में)
तंजादुर						
तिरुवायर पंचायत परिषद						
१. वेल्लमपेराम्बुर						
२. पेरामुर						
३. मन्नगुडी						
नीडमंगलन पंचायत परिषद						
४. कलशेरी	१९५८	२.४६ (वर्गमील)	६	१,८४९	२६,५२६	
५. रायापुरम		३.६३ (वर्गमील)	२	१,९३२	१२,९१९	
६. वडवुर वडपति	१९३१	४.६४ (वर्गमील)	२	५,१५७	२३,०४२	
मुतुपेट पंचाय परिषद						
७. तोंडियाकडु	१९५५	३,८२८ (एकड)	अनुत्तर	२,९३५	६,६७९	
८. कलिकुडी	१९५४	९२२ (एकड)	अनुत्तर	१,७३४	७,४४०	
९. मन्नगुडी	१९५५	१,१०८ (एकड)	अनुत्तर	२,९१८	१०,५०१	

पंचायत का नाम	आरंभ वर्ष	क्षेत्र	मुहल्लों की संख्या	जन संख्या	आय १९६३–६४ रुपये में	व्यय १९६३–६४ (रुपये में)
रामनाथपुरम						
सक्कोताई पंचा. परि.						
१०. कनडुकतम (ता. पंचा.)	१९२४	अनुत्तर	अनुत्तर	५,२००	-	
११. पालातूर	१९१८	अनुत्तर	अनुत्तर	५,५६०	-	-
१२. कोटाइपूर	१९२६	अनुत्तर	अनुत्तर	५,७७८	३८,२६८	३४,३५१
आर.एस. मंगलम् पंचा. परि.						
१३. ए. मनकुडी	१९५८	३.३८ (वर्गमील)	२	१०५८	१,४९५	५६१
१४. सेवईपटई	१९५८	१.४७ (वर्गमील)	२	६८७	८,२०६	१३,१५२
१५. सतनूर	१९५८	६.६८ (वर्गमील)	३	१,९२०	१,७७७	१,५३३
निरुप्पुवनम् पंचा. परि.						
१६. तिरुपुवन्नम्	१८८८	अनुत्तर	अनुत्तर	१०,२२६	-	-
१७. पलयनूर	१९५८	२,०९८ (एकड)	अनुत्तर	२,०६३	-	-
१८. कीलाडी	१,९६०	३०० (एकड)	अनुत्तर	१,५००	-	-
कोयम्यतुर						
पोलाची पंचा. परि.						
१९. सेवईकर पलयम्	१९६०	६.४ वर्गमील	४	२,८६६	४,७२१	१,२८६

पंचायत का नाम	आरंभ वर्ष	क्षेत्र	मुहल्लों की संख्या	जन संख्या	आय १९६३–६४ रुपये में	व्यय १९६३–६४ (रुपये में)
२०. तिमनकुडु	१९६०	४.१ वर्गमील	५	२,०३९	६,१२८	७,९८५
		२.५ वर्गमील	१	१,७३४	३,७८८	३,३९७
केलकोईल पंचायत परि.						
२१. लकमबाईकेन पत्तिनम्	१९४९	१०,६५२ (एकड)	१३	५,२५२	१७,५०५	१८,४८६
२३. वेलापलईकेनवलसू	१९२८	११,३०९ (एकड)	२३	५,९७२	२७,०४०	२८,११५
२४. वेरा सोलापुरम्	१९४९	४,६९१ (एकड)	१९	२,१०७	१५,७२६	१७,८६१
मोडाकुरिची पंचा. परि.						
२५. पालमंगलम्	१९५७	२,६६१ (एकड)	११	१,९४०	२१,५५०	१६,५८०
२६. नंजी कोतकुली	१९३६	३,६७८ (एकड)	७	३,९३०	२५,१८५	१९,६००
२७. वेल्लम पेलयम्	१९५७	३,५९१ (एकड)	१७	२,४५०	१६,६८५	१०,५४०
उत्तरी आर्कोट						
ओदिली पंचायत परि.						
२८. विशामंगलम्	अनुत्तर	५,२४४ (एकड)	४	४,४२२	१७,१२५	१३,९७६
२९. नातम्	१९३०	३.६४ (वर्गमील)	४	२,४५१	४,३४४	४,३४८
३०. चिन्नकांदिली	१९२७	२.१२ (वर्गमील)	१	६८८	१४,३०६	१४,३६५

पंचायत का नाम	आरंभ वर्ष	क्षेत्र	मुहल्लों की संख्या	जन संख्या	आय १९६३-६४ रुपये में	व्यय १९६३-६४ (रुपये में)
वंदीवास पंचा. परि.						
३१. आर सुर	१९२६	२.१८ (वर्गमील)	जानकारी नही	१,१७९	९,७५४	१०,४४६
३२. ओलपक्कम कोसापट्ट	१९२७	१.०९ (वर्गमील)	जानकारी नहीं	५७४	५,४९१	३,३१३
३३. कोवलाई	१,९३५	४.४७ (वर्गमील)	जानकारी नहीं	१,७६८	५,४९१	३,३१३
चेय्यर पंचा. परि.						
३४. कील पलनाडाई	१९६०	१.१४ (वर्गमील)	१	९९५	१,८३९	४५४
३५. एरापुर	१९२७	१.७३ (वर्गमील)	१	१,०९५	१,४७३	१,६३७
३६. तिरुवत्तीपुरम्	१९०६	१,२२५ (एकड)	जानकारी नहीं	१५,३८६	-	-

विभिन्न ग्राम पंचायत की बैठके भी भिन्न-भिन्न समय पर आयोजित होती थीं। इसकी जानकारी उनके द्वारा की गई टिप्पणी से मिलती है। कुछ पंचायतो की बैठक प्रति माह आयोजित होती थी और कुछ पंचायतों की बार बार, जबकि कुछ की वर्ष में केवल चार पाँच बार ही आयोजित होती थी। लगभग किसी भी पंचायत के पास निजी भवन नहीं था। उनकी कार्यवाही अध्यक्ष के निवास पर ही चलती थी। यद्यपि इस पर्यवेक्षणो के लिए चयनित नमूने को स्वरुप पंचायतों में सभी पाँचों नगर पंचायतो के पास निजी भवन थे। सामान्यरूप से पंचायतों की प्रत्येक बैठक में कार्यसूची में तीन से पाँच विषय विचारार्थ रहते हैं जिन में से लेखा पारित करनेवाले और पूर्व-बैठक की कार्यवाही पारित करनेवाले विषय अवश्य रहते हैं। यद्यपि पूर्व में लिये गये निर्णयों के संदर्भ में क्या कार्यवाही हुई इसकी जानकारी प्राप्त नहीं होती है। इसी कारण से एक ही प्रस्ताव कभी कभी दो या तीन बार पारित हुआ पाया जाता है।

इन बैठकों में पंचायत के सदस्यों की उपस्थिति अपेक्षाकृत बहुत अच्छी पाई जाती है। सामान्यरूप से कुल सदस्यो के २/३ सदस्यों की उपस्थिति अंकित हुई है। जिन पंचायतों में एकाध ही महिला सदस्य है तो उनकी उपस्थिति बहुत कम पाई जाती है। इन बैठकों के लिए विशेष सूचनापत्र जारी नहीं किया जाता है। परन्तु कार्यसूची के सूचनापत्र पर ही संबंधित बैठक के विषय में जानकारी दी जाती है। यह प्रक्रिया गलत नहीं है, क्योंकि संबंधित कार्यसूची के बिना सदस्यों को बुलाना कठिन होता है। इतना ही नहीं उस सूचना पत्र में इसके अतिरिक्त और कोई जानकारी नही दी जाती है।

नमूने के पंचायत संघ

नमूने के चयनित १२ पंचायती संघों के क्षेत्रफल, जनसंख्या आदि सहित संलग्नित ग्राम पंचायतों एवं उनके कार्यक्षेत्र की सूची सारिणी ४२ में दी गई है। पोलाची ग्राम पंचायत संध को छोड अन्य संघों में सामान्यरूप से उच्च प्राथमिक विद्यालयों में जानेवाले बच्चों की संख्या लगभग ८,००० से १०,००० है। इनमें लड़कों की संख्या ५५ से ६५ प्रतिशत जब कि लड़कियों की संख्या ३५ से ४५ प्रतिशत रहती है। पोलाची को छोड अन्य पंचायत संघों में लगभग २५० से ३०० अध्यापक हैं। जिनमें २५-३० महिला अध्यापिकाएँ हैं। प्रत्येक संघ में ४ से ६ हाईस्कूल हैं, जो काफी बडी हैं। इन हाईस्कूलों में अधिकांश उच्च विद्यालयों में सामान्यरूप से २५ से ३० अध्यापक रहते ही हैं। सात्तकोताई एवं पोल्लाची पंचायत संघों को छोड़ अन्य संघों में बडे

पोलिटेकनिक एवं कोलेज भी हैं। प्रत्येक संघ में नगर की एक नगरपालिका भी है। लगभग प्रत्येक संघ में एक या अधिक सिनेमागृह भी हैं। इन बारह संघों में तिरुवायर, नीडमंगलम्, मुथुपेट, साक्कोताई, तिरुपुवनम् एवं पोलाची संघों में रेलवे स्टेशन भी है जब कि वेल्लाकोइल, कांदीली, वांदीवाश और चेयार राज्य के परिवहन एवं राजमार्गों पर है। केवल दो ही संघ, राजसिंगमंगलम् और मोडक्कुरिची ऐसे हैं जो परिवहन सेवा के साथ जुडे हुए अवश्य हैं परन्तु उधर सरलता से पहुँच पाना कठिन है। राजसिंगमंगलम् क्षेत्र में तो पेट्रोल पंप भी नहीं है इसलिए जीप में पेट्रोल भरवाने के लिए लगभग २० कि.मी. दूर जाना पड़ता है।

आगे सारणियों में दर्शाये गये भू राजस्व के आंकडों के अनुसार मोडक्कुरिची, तिरुवैयार, नीडमंगलम्, मुथुपेट, तिरुप्पुवनम् और चेरिया सब से अधिक उपजाऊ हैं। पोलाची, वेल्लाकोइल, वांदीवांश और कांदिली में अनुपजाऊ के साथ कम उपजाऊ भूमि भी है। जब कि राजसिंगमंगलम् (उसे वित्तीय उद्देश्यों की दृष्टि से सारिणी 'ब' में वर्गीकृत किया गया है फिर भी)में कम उपजाऊ क्षेत्र है और साक्कोताई तो कृषि की दृष्टि से गरीब क्षेत्र है। ऐसा होते हुए भी इस संघ की पाँच नगरपंचायतों में भव्य महालय सबसे अधिक मात्रा में हैं। उसमें राज्य की किसी भी पंचायत की तुलना में उनकी संख्या अधिक है। उसमें कई कोलेज भी हैं। यह क्षेत्र चेट्टीयारों का प्राचीन स्थल है। ये चेट्टीयार व्यापार-उद्योग, वाणिज्य एवं दाता के रूप में विख्यात है।

पंचायत संघो की बैठकें प्रति दो महीने या उससे कम समयावधि में सामान्य सभा या विशेष सभा या आपातकालीन सभा के रूप में भी आयोजित होती हैं। ऐसी तत्काल या विशेष सभाओं में कार्यसूची पर ३० से ४० विषय रहते हैं। इसी कारण से ऐसी सभाएँ दो से तीन घण्टे चलती है। इसमें दो विषय तो हमेशा रहते ही हैं। एक पूर्व बैठक की कार्यवाही की स्वीकृति और दूसरा फुटकर खर्च को स्वीकृति। इसमें एक दो प्रश्न भी पूछे जाते हैं, जिसके उत्तर दिये जाते हैं। ग्राम पंचायतों की तरह ही पंचायत संघों की बैठक में पूर्व में लिये गये निर्णयों के सम्बन्ध में क्या कार्यवाही की गई इसका विवरण अप्राप्य होता है। इतना ही नहीं इस कार्यवाही के सम्बन्ध में क्या चर्चा हुई इसकी जानकारी कहीं पर नहीं दी जाती है। केवल पारित किये गये प्रस्तावों की जानकारी दी जाती है। सामान्य रूप से प्रत्येक निर्णय सर्वसम्मति से ही किया जाता है जब कि कुछ विषयों को विचारविमर्श के लिए आगे के लिए छोड़ दिया जाता है। कार्यसूची में विधिवत प्रस्तुत किये गये विषय कदाचित् भी अस्वीकृत होते हैं। सारिणी-४३ में विभिन्न संघों की सभाओं की संख्या, और उदाहरण स्वरुप संबंधित संघों की

कार्यसूची के विषय में जानकारी दी गई है।

तीन वैधानिक समितियाँ, नियुक्ति समिति, ऋण देय समिति और सामान्य विषयों के लिये बनी समिति के अतिरिक्त पंचायत संघों को (१) महिला कल्याण समिति, (२) हरिजन कल्याण समिति (३) अस्थायी विद्यालय परामर्शक समिति (४) खण्डस्तरीय समिति का गठन करने के लिए भी सूचित किया गया था। अंतिम दो समितियाँ विशेषरूप से अधिकारियों की बनी होती है जब कि विद्यालय परामर्शक समिति के अध्यक्ष के पद पर पंचायत संघ के आयुक्त रहते हैं। प्रसार अधिकारी (शिक्षा) और विद्यालय के उपनिरीक्षक उसके सदस्य होते हैं। यद्यपि वैधानिक या अवैधानिक रूप से बनी इन समितियों में केवल एक नियुक्ति समिति को छोड़ अन्य समितियाँ मुश्किल से पायी जाती हैं।

इस गहन अध्ययन के लिए चयनित १२ संघो की वैधानिक समितियों के आवर्तन सारिणी-४४ में दर्शाए गये हैं। जब कि सारिणी ४५ में दो या तीन संघों की महिला कल्याण समिति एवं अस्थायी विद्यालय परामर्शक समिति की बैठक के आवर्तन सारिणी ४५ मे दर्शाए गये हैं।

पंचायत संघों के प्रमुख कार्यवाहक पंचायत संघ के आयुक्त रहते हैं। पंचायत कानून की धारा ४४ के अंतर्गत उनके दायित्व, कार्य एवं पंचायत के साथ उनके संबंधों के विषय में उन्हें मार्गदर्शन करते हुए बताया गया है कि,

कानून (कानूनी अधिकारों के) अनुसार सौंपे गये सभी कर्तव्य उन्हें निभाने होंगे और उसके अंतर्गत दर्शाए गए सभी अधिकारों का उपयोग भी ये कर पाएँगे। सत्ता का उपभोग वे कानून की सीमा में रहकर, पंचायत संघ परिषद के अध्यक्ष की अनुमति को ध्यान में रखकर और उस शक्ति का उपयोग उसमें दर्शाई गई सीमाओं में रहकर करना होगा। इस संदर्भ में यें पूर्णरुप से और सीधे उत्तरदायी माने जाएँगे।

केन्द्र के समाज विकास मंत्रालय और समाज विकास निगम द्वारा की गई पूछताछ के प्रत्युत्तर में तमिलनाडु सरकार ने परिषद के साथ आयुक्त के संबंधों के विषय में बताया था कि आयुक्त की नियमित कार्यवाही और मद्रास पंचायती कानून के तहत उन्हें सौंपी गई विशेष कार्यवाही को निभाने में पंचायत संघ परिषद को मार्गदर्शन करने का अधिकार आयुक्त को है और परिषद को उचित प्रतीत होता है उस रूप में आयुक्त अपनी सत्ता का उपभोग कर सकेंगे। मद्रास पंचायती कानून १९५८ के अनुसार इस बात को छोड़ आयुक्त पर संघ परिषद के अध्यक्ष का कोई अधिकार नहीं है।

सारिणी–४२

नमूने के स्वरूप पंचायत संघ

पंचायत का नाम	विकास के लिये निर्धारित	क्षेत्र वर्ग मील	जन संख्या	पंचायत की संख्या		नागरिकीय श्रेणी	प्राथमिक विद्यालय		उच्च प्राथ. विद्यालय		माध्यमिक विद्यालय	भूमिकर (हजार में)
				ग्राम	नगर		पंचायत परिषद	अन्य	पंचायत परिषद	अन्य		
१. तिरुवल्लयरु	पं. तंजावुर	६४.६२	८५,४९३	४१	२	क	४८	-	१५	-	-	४०९
२. नीडमंगलम्	पूर्वी तंजावुर	९५.९०	७६,८१५	३५	-	क	५७	८	६	-	५	५१५
३. मुथुपेट	पूर्वी तंजावुर	९१.१२	६२,०४६	२२	१	क	४६	११	१	-	१	२६७
४. साकोताई	पूर्वी रामनद	१२५.००	६२,९१८	२६	५	घ	३५	१९	३	५	७	३२
५. राजसिंग मंगलम्	प्रर्वी रामनद	१७५.००	५१,७८६	३९	-	ख	६४	१	१४	५	३	१४२
६. तिरुप्पुवनम्	पूर्वी रामनद	१२५.००	६६,८८५	४०	१	क	५१	२	१६	३	३	१७७
७. पोलाची	प. कोयम्बतूर	१०९.२९	१,२६,५७२	६८	१	ख	९८	१२	२१	३	-	१७७
८. चेलाकोईल	पूर्वी कोयम्बतूर	८१.००	८७,०७५	१०	१	ख	६३	५	१७	-	-	२०८

पंचायत का नाम	विकास के लिये निर्धारित	क्षेत्र वर्ग मील	जन संख्या	पंचायत की संख्या		नाणीकिय श्रेणी	प्राथमिक विद्यालय		उच्च प्राथ. विद्यालय		माध्यमिक विद्यालय	भूमिकर (हजार में)
				ग्राम	नगर		पंचायत परिषद	अन्य	पंचायत परिषद	अन्य		
९. मोडाकुरिची	पूर्वी कोयम्बतूर	८१.००	८७.०७५	२५	-	क	६७	८	१५	१	३	७७७
१०. कांदिली	उत्तरी वेलूर (उ. आर्कोट)	९२.५७	६४,४९०	३६	-	स	५८	-	९	-	५	८२
११. वंदीवेश	दक्षिणी वेलूर (उ. आर्कोट)	११३.६	८२,६४२	५६	१	ग	५६	११	१४	२	-	१७५
१२.	चेय्यूर	१०३.३६	७५,६४७	५२	१	क	५५	५	१६	३	-	१६८

सारिणी–४३ पंचायत संघ परिषद की बैठकें (आवृत्ति–विचारविमर्श के विषय)
(नमूने के पंचायत संघों से प्राप्त)

	१९६१–६२				१९६२–६३				१९६३–३४			
पं. सं. पं. का नाम	सामान्य	विषय संख्या	विशेष और तत्कालिक	विषय संख्या	सामान्य	विषय संख्या तत्कालिक	विशेष और	विषय संख्या	सामान्य	विषय संख्या तत्कालिक	विशेष और	विषय संख्या
१. तिरुवायरू	*	*	*	*	*	*	*	*	*	*	*	*
२. निडमंगलम्	२	२८	२	२	१०	२८२	१३	४६	५	२३५	८	३४
३. मुथुपेट	८	२२८	७	७	६	३३०	६	६	६	३६५	४	४
४. साकोताई	*	*	*	*	*	*	*	*	*	*	*	*
५. आर.एस. मंगलम्	१२	१६०	५	६	८	१९३	९	१९	८	१८५	२	२
६. तिरुपवनम्	५	१९२	५	७	१०	४५६	६	७	१०	३३४	–	–
७. पोलाची	३	६३	४	५५	६	२५७	८	८	७	२८६	१	१
८. वेलाकोईल	१०	३७२	३	६	९	३१०	–	–	८	३३७	६	२६७
९. मोडाकरुची	*	*	*	*	*	*	*	*	७	४००	८	*
१०. कान्दिली	*	*	*	*	*	*	*	*	*	*	*	*
११. वेंदीवेश	४	९	३	३	५	१३७	५	१७	१२	१९६	१	१
१२. चेय्यूर	*	*	*	*	*	*	*	*	*	*	*	*

* अपंजीकृत

* = अनुत्तर

सारिणी–४४ (क) (बैठकों की आवृत्ति)
नियुक्ति समिति (वैधानिक) (वर्ष में आयोजित बैठकें)

	१९६१–६२	१९६२–६३	१९६३–१९६४	१९६४–६५
१. तिरुवायरु	*	*	*	*
२. नीडमंगलम्	*	*	*	*
३. मुत्तुपेट	५	७	४	*
४. साक्कोताई	*	*	*	*
५. आर एस. मंगलम्	५	५	६	*
६. तिरुपुवनम्	३	१३	८	४
७. पोलाची	३	६	१३	*
८. वेलकोईल	१३	१२	७	१०
९. मोडाक्कुरीची	*	*	१७	*
१०. कान्दिली	३	८	८	९
११. वंदीवाश	४	६	१५	९
१२. चेयूर	५	१२	१६	१७

* अपंजीकृत

सारिणी–४४ (ख) (बैठकों की आवृत्ति)
शिक्षा समिति (वैधानिक) (साल के दौरान आयोजित बैठकें)

	१९६१–६२	१९६२–६३	१९६३–१९६४	१९६४–६५
१. तिरुवायरु	*	*	*	*
२. नीडमंगलम्	*	*	*	*
३. मुत्तुपेट	२	२	–	–
४. साक्कोताई	*	*	*	*
५. आर. एस. मंगलम्	३	४	३	२
६. तिरुपुवनम्	*	*	*	*
७. पोलाची	१	५	२	१
८. वेलकोईल	१	–	–	–
९. मोडाक्कुरीची	*	*	४	*
१०. कान्दिली	–	–	२	–
११. वेंडीवाश	–	२	२	२
१२. चेयुर	७	२	१	३

* अपंजीकृत

सारिणी-४४ (ग) (बैठकों की आवृत्ति)
सामान्य उद्देश्य समिति (वैधानिक)

	१९६१-६२	१९६२-६३	१९६३-१९६४	१९६४-६५
१. तिरुवायरु	*	*	*	*
२. नीडमंगलम्	*	*	*	*
३ मुत्तुपेट	४	-	-	-
४. साकोताई	*	*	*	*
५. आर. एस. मंगलम्	२	-	-	-
६ तिरुपुवनम्	*	*	*	*
७. पोलाची	*	*	*	*
८. वेलकोईल	१	-	-	-
९. मोडावकुरीची	*	*	२	*
१०. कान्दिली	-	५	६	-
११. वेंडीवाश	-	१	-	३
१२. चेयुर	६	८	८	३

* अपंजीकृत

सारिणी-४५ (क) (अवैधानिक)
महिला कल्याण समिति बैठकें

	१९६१-६२	१९६२-६३	१९६३-१९६४	१९६४-६५
१ कान्दिली	-	२	२	२
२. वांदीवाश	-	२	२	४
३. चेयूर	२	३	२	२

* अपंजीकृत

सारिणी-४५ (ख)
अस्थायी विद्यालय परामर्शक समिति (संविधानेतर)
बैठकों की आवृतिकी

	१९६१-६२	१९६२-६३	१९६३-१९६४	१९६४-६५
१. वांदीवाश	-	-	६	-
२. चेयूर	५	७	४	६

सारिणी-४६

प्रति माह प्राप्त और प्रेषित होनेवाली

(उदाहरण स्वरूप पंचायती संघो से प्राप्त)

पंचायती संघ के नाम		जनवरी	फरवरी	मार्च	अप्रैल	मई	जून	जुलाई	अगस्त	सित.	अक्टू.	नवे.	डिसे.
तिरुवायरु	प्राप्ति	अप्राप्य	अप्राप्य	अप्राप्य	अप्राप्य	अप्राप्य	अप्राप्य	अप्राप्य	अप्राप्य	अप्राप्य	अप्राप्य	अप्राप्य	अप्राप्य
	प्रेषक	अप्राप्य	अप्राप्य	अप्राप्य	अप्राप्य	अप्राप्य	अप्राप्य	अप्राप्य	अप्राप्य	अप्राप्य	अप्राप्य	अप्राप्य	अप्राप्य
नीडमंडलम्	प्राप्ति	१,३७९	१,४२६	१,४०६	१,५५१	१,३०९	१,४१८	१,८०४	२,२३६	२,१४५	१,९५८	२,०१५	२,०६४
(१९६४)	प्रेषण	२,८२४	२,६४६	२,४१७	३,०४०	२,०१४	२,४०६	१,४१७	३,५७१	३,०४९	२,०१२	३,४१७	२,५८३
मुथुवेट	प्राप्ति	१,३२४	१,७६३	१,६११	१,७८५	१,५६०	१,३८८	१,६३०	१,४५८	१,६५७	१,४०३	१,३३०	१,७०५
(१९६३)	प्रेषण	७२६	१,०७७	९८०	१,०४३	९४१	९८५	९९७	६२७	९०७	६६९	८६०	१,०१०
साक्कोताई	प्राप्ति	१,३६३	१,४२८	१,३८०	१,१४४	१,१४८	१,१४९	१,३०९	१,३५७	९५८	१,११०	१,३४१	१,०८७
(१९६४)	प्रेषण	९२१	१,१४१	१,१६०	७७९	९१२	८१८	१,१०८	८६२	१,२३८	८९१	१,०३६	९५७
राजसिंग	प्राप्ति	१,१३८	१,२१४	१,२४६	१,०१०	१,०२२	९००	१,३७५	१,२३८	१,२८९	१,०७३	१,१२७	९९३
मंगलम् (१९६४)	प्रेषण	१,१०८०	१,०१०	१,०१३	१,१२७	१,२१३	१,११७	९१९	१,०५०	१,१७८	१,४१३	१,२५७	१,१५३

पिंचायती संघ के नाम		जनवरी	फरवरी	मार्च	अप्रैल	मई	जून	जुलाई	अगस्त	सित.	अक्टू.	नवे.	डिसे.
तिरुप्पुवनम् (१९६३)	आय	१,५११	१,४३५	१,३७५	१,३३४	१,३०२	१,२९०	१,४०३	१,०३८	१,३७७	१,३०७	१,३७१	१,४३१
	व्यय	४७३	३८१	४३२	४३८	५०३	४९२	५६६	३९७	४११	३८७	३९६	४९६
पोलाची (१९६४)	आय	१,६६३	१,४१७	१,४२३	१,३५७	१,३२१	१,२१७	१,४८५	१,५०१	१,३४०	१,३६९	१,३९३	अप्राप्य
	व्यय	अप्राप्य	अप्राप्य	अप्राप्य	अप्राप्य	अप्राप्य	अप्राप्य	अप्राप्य	अप्राप्य	अप्राप्य	अप्राप्य	अप्राप्य	
वेल्लकोइल (१९६४)	आय	१,२९५	१,९८२	१,४९४	१,९३६	१,९६२	१,०४४	१,४७४	१,४०५	१,२९४	१,१७२	१,९६०	१,२९२
	व्यय	१,४०२	१,५९०	१,५८२	१,७१३	१,६१७	१,३९८	१,९१७	१,८९९	१,०३३	१,९२१	२,०००	१,३२३
मोडाकुरिचा (१९६४)	आय	१,३४६	१,३३६	१,५०८	१,१६३	१,०५१	१,२४२	१,६०५	१,४२०	१,३५६	१,३९२	१,२२९	१,२८०
	व्यय	८८०	८०५	८७५	१,०३५	८५०	८९५	१,०८०	७२०	६००	८४०	७६२	६२५
कांदिली (अप्रैल १९६३) से मार्च, १९६४)	आय	८३३	९२३	१,१३५	१,००२	१,०७५	९६५	१,२०१	१,०३४	१,०००	१,०५७	८७९	८८८
	व्यय	९६४	८९६	९८१	१,१७४	९०५	१,४९९	९९८	८४६	१,५५९	१,३५८	९०८	१,१०२
वादिवाश (१९६४)	आय	१,०५८	१,०५९	१,३९३	१,२५२	१,०००	१,०१७	१,५५३	१,४३७	१,२०८	१,१८३	१,०८७	५२७
	व्यय	९४८	१,१२४	८७०	१,५४३	९७८	१,०२०	७६०	१,३२८	९८४	१,२४३	१,३२७	८९०
चेय्यूर (१९६४)	आय	अप्राप्य	अप्राप्य	अप्राप्य	अप्राप्य	अप्राप्य	अप्राप्य	अप्राप्य	अप्राप्य	अप्राप्य	अप्राप्य	अप्राप्य	अप्राप्य
	व्यय	१,०७९	१,४६०	१,१८०	१,३०१	१,०८६	९०६	१,२४९	१,२६०	१,३०४	८३१	१,११२	अप्राप्य

नमूने के पंचायत संघों में से एक पंचायत संघ कमिश्नर द्वारा लिखी गई टिप्पणी आयुक्त अपने दायित्व के प्रति कैसा रुख अपनाते हैं यह दर्शाने के लिए पर्याप्त हैं। खण्ड विकास अधिकारी (ब्लक डेवलपमेन्ट फिसर) और पंचायत संघ आयुक्त के कार्यो के विषय में टिप्पणी

खण्ड विकास अधिकारी (ब्लॉक डेवलपमेन्ट ऑफिसर) और पंचायत संघ आयुक्त के कार्यो के विषय में टिप्पणी खण्ड विकास अधिकारी के रूप में . राज्य द्वारा प्राप्त होनेवाली निधि से, संचालन व्यय के भुगतान के लिए खण्ड विकास अधिकारी सक्षम अधिकारी है। साथ ही, पंचायतों को नहीं सौंपे गये सभी कार्यो के लिए भी वे सरकारी निधि का उपयोग कर सकते हैं।

पंचायत के दायित्व में हरिजन कल्याण की परियोजनाएँ, समाजकल्याण केन्द्रों के लिए सामग्री उपकरण आदि के लिए किये गये व्यय को समाविष्ट किया जाता है। कृषि ऋण कानून एवं भूमिसुधार ऋण कानून के तहत कृषकों को विभिन्न परियोजनाओं के द्वारा दिये जा रहे ऋण एवं व्यवसाय के लिए ऑयल एन्जिन, नई कुँआ राहत परियोजनाएँ, उत्पादन के लिए सघन परियोजना एवं कृषि औजारों के लिए ऋण जैसी परियोजनाओं के लिए पंचायत के अधिकार में विशेष नियम भी रहते हैं।

आयुक्त के रूप में

आयुक्त पंचायत संघों के प्रमुख कार्यवाहक अधिकारी होते हैं। पंचायत निधि से जिन कर्मचारियो को वेतन दिया जाता है, उन सब की नियुक्ति, दंड या नौकरी से निष्कासन आदि की सम्पूर्ण सत्ता कमिश्नर के अधिकार में रहती है। नियुक्ति समिति के द्वारा चयनित सभी उम्मीदवारो को वे नियुक्ति दे सकते हैं। पंचायत परिषद के अध्यक्ष के साथ विचारविमर्श करने के पश्चात् वे कर्मचारी को नश्यत भी कर सकते हैं। सरकार द्वारा निर्दिष्ट नियमो के अधीन रहकर पंचायती परिषद द्वारा पारित किये गये प्रस्तावों को कार्यान्वित करने का दायित्व उनका है। पंचायत संघ के संचालन से संबंधित सभी व्ययों के लिए वे चेक दे सकते हैं। आयुक्त के अधिकार में स्थित पंचायत संघ के कर्मचारियों की संख्या एवं स्तर दोनो को परिशिष्ट-२ में दर्शाया गया है। यह जानकारी तिरुपुवनम् पंचायत संघ द्वारा दी गई है।

पंचायतों की कार्यवाही का नियम वैधानिक कानूनी कारवाई के संदर्भ में दी गई सूचनाओं और सरकार द्वारा दी गई धनराशि द्वारा होता है। इसके अतिरिक्त पंचायत संघों के लिए एक्सटेन्शन पर्सोनल्स (अलग कर्मचारी) प्रति पखवाडा मिलते हैं। संघ परिषद के अध्यक्ष एक दिनके अंतराल में आयोजित होनेवाली ऐसी बैठकों में अध्यक्षपद

पर रहते हैं। अन्य बैठकों के अध्यक्ष पद पर आयुक्त रहते हैं। पंचायत संघ के कार्यक्रम और कार्यवाही का सर्वेक्षण करने के लिए प्रति माह एक बैठक का आयोजन होता है, जिसके अध्यक्षपद पर विभागीय अधिकारी रहते हैं। इस बैठक में आयुक्त, विस्तार अधिकारीगण और तहसील में स्थित प्रत्येक पंचायल संघ के प्रबंधक उपस्थित रहते हैं। इसके अलावा प्रति दो माह राजस्व विभागीय अधिकारी के कार्यालय पर पंचायत संघों के अध्यक्ष मिलकर, भूमिकर के संदर्भ में उनसे विचारविमर्श करते हैं। ये आरंभ में जिला विकास परिषद की बैठक से पूर्व मिलते हैं; पंचायत संघ के अध्यक्ष एवं राजस्व विभागीय अधिकारी सदस्य होते हैं। पंचायत संघ के अध्यक्ष एवं राजस्व विभागीय अधिकारी जिला विकास परिषद के सदस्य होते हैं अत: परिषद की बैठक के पूर्व वे आपस में मिलते हैं।

संघ के कार्यालयों में कार्य का बोझ बहुत रहता है। वहाँ लगभग प्रतिदिन अस्सी या उससे अधिक डाक आती है और लगभग उतनी ही डाक के प्रत्युत्तर दिये जाते हैं। इनमें कुछ बातें ऐसी होती हैं जिनमे विस्तृत ब्यौरा देना पड़ता है या फिर ऐसे विस्तृत ब्यौरे आते भी हैं। इसी प्रकार नमूने के पत्रक भी भेजने पड़ते हैं। मद्रास में ऐसे सर्वेक्षण को डाक ही कहा जाता है, जिसमें प्रेपित और प्राप्त डाक को समाविष्ट किया जाता है। ऐसे नमूने के चयनित पंचायत संघों में प्राप्त प्रेषित डाक की जानकारी सारिणी-४६ में दी गई है।

कर्मचारियों की नियुक्ति - विशेषकर सरकार द्वारा जिन्हें वेतन दिया जाता है ऐसे विस्तार अधिकारी, ग्रामसेवक और सेविकाएँ, प्रबंधक आदि की नियुक्ति अधिक कठिनाइयाँ पैदा करती है। छोटे विद्यालयों में इसके कारण दुगुना बोझ.पड़ता है। अन्य कार्यक्रमों में भी ऐसा ही होता हैं। क्योंकि, नये कर्मचारी की नियुक्ति होकर वह कार्यभार संभालता है तब तक और अपने दायित्व की जानकारी प्राप्त कर लेता है तब तक कई बार कार्यक्रम ही स्थगित हो जाते हैं। कुछ संघों में तो, यह समस्या अति विकट बनी हुई है। इसका उदाहरण उत्तर आर्कोट जिले के समाहर्ता द्वारा १९६३ में दिया गया विवरण है जिस के अनुसार इन पंचायत संघों में अप्रैल १९६२ से विस्तार अधिकारी (सहयोग), विस्तार अधिकारी (शिक्षा), प्रमुख सेविका, खाद सुधार निरीक्षक दो सहयोगकर्ता, एक समाजकल्याण कार्यकर्ता, तीन ग्रामसेवक वर्ग-१ और दो ग्रामसेविकाओं के पद रिक्त थे।

ऐसी ही न्यूनाधिक स्थिति अन्य पंचायत संघो में भी उत्पन्न हुई थी। राजसिंह मंगलम् पंचायत संघ में नवम्बर २४, १९६८ को ऐसे ही रिक्त पदों की स्थिति बनी

हुई थी जिसे सारिणी-४७ में दर्शाया गया है।

सारिणी-४७

रिक्त स्थान का नाम	कारण	कब से रिक्त है
१. विस्तार अधिकारी (शिक्षा)	५ महीने के लिए प्रशिक्षण	१० अगस्त १९६४
२. संघ पर्यवेक्षक	अस्वस्थता अवकाश (अवकाश मे फुटकर वृद्धि)	३ सितम्बर १९६४
३. प्रमुख सेविका	अवकाश पर	३ अक्तूबर १९६४
४. खाद विकास निरीक्षक	स्थानातरण	२५ अगस्त, १९६४
५. ग्राम सेविका	स्थानांतरण	३ सितम्बर १९६४
६. ग्राम सेवक	स्थानांतरण	३१ अगस्त १९६४
७. ग्राम सेवक (२ महा के लिए)	अभिविन्यास प्रशिक्षण	१७ अक्तूबर १९६४
८. ग्राम सेवक	प्रशिक्षण (२ मास)	७ नवम्बर १९६४

सारिणी-४८

पंचायत का नाम	स्थानांतरित व्यक्ति की संख्या	समयावधि	स्थानांतर की वार्षिक औसत
नीडमंगलम्	४०	३ वर्ष	१३
मुत्तुपेट	६०	४५ मास	१६
साक्कोलाई	१४	३ वर्ष	५
राजसिंह मंगलम्	३२	४० मास	१०
तिरुप्पुवनम्	१४	३ वर्ष	५
वैल्लाकोइल	२८	४५ मास	७
मोडक्कुरिची	१७	४० मास	५
चैयूर	२३	४५ मास	६

इस प्रकार विलंबित नियुक्तियों की परंपरा में औसतन १/२ या १/४, सरकार द्वारा नियुक्त कर्मचारियों के प्रति वर्ष स्थानांतरण एवं पदों के स्थान परिवर्तन हुआ

करते हैं। इसके अनुसार सबसे अधिक मात्रा प्रशासनिक (सचिव) कर्मचारियों की तुलना में विस्तार कर्मचारी गण में है। सारिणी-४८ में जिन पंचायत संघो से जानकारी प्राप्त हुई है, उन में स्थानांतरण की जानकारी दर्शाई गई है।

इन पंचायत संघों के खर्च में भी बहुत बड़ा भेद पाया जाता है। समाज विकास एवं राष्ट्रीय विस्तार कर्मचारीगण के (जिनको केन्द्रीय बजट में समाविष्ट नहीं किया जाता है) बारहों संघों के १९६३-६४ के दौरान हुए व्यय की जानकारी सारिणी ४९ में दी गई है। उसमें देखा जा सकता है कि साक्कोताई, वेल्लाकोइल एवं कांदिली में वह व्यय ६ लाख से कम था, जब कि तिरुवायरु में वह ९ लाख से भी अधिक था।

इसके अलावा प्रति माह भी संघों के व्यय में परिवर्तन होता दिखाइ देता है। इसका एक कारण यह भी हो सकता है कि अध्यापकों का वेतन प्रति माह किसी निश्चित तिथि को नहीं दिया जाता है। अनेक बार एक महीने में कभी-कभी ऐसा व्यय दो बार तक किया गया देखने को मिलता है। फिर भी कुछ अन्य राज्यों के संघों में व्याप्त स्थिति की तुलना में इन पंचायत संघों को महीनों तक धनराशि का अभाव झेलना नही पड़ता या आर्थिक वर्ष को अन्त के पूर्व दो-तीन महीनों में धनराशि का अधिक्य भी नहीं हो जाता। कुछ पंचायत संघों के माहवार व्यय का विवरण सारिणी-५० में दर्शाया गया है।

कार्यक्रम

सडकों का निर्माण, पेय जल की परियोजनाएँ और विद्यालय के भवन,

नई सड़कों का निर्माण किस स्थान पर कितना करना, पेयजल की सुविधाएँ किस तरह पहुँचाना, और विद्यालयों के नये भवनों के निर्माण आदि के लिए पंचायत संघ स्वतंत्र रूप से निर्णय ले सकते हैं। ये विषय पंचायती संघ परिषद के अधिकार मे हैं, इस लिए इन बातों मे स्वतंत्र रूप से निर्णय लेने के पर्याप्त अवसर उन्हें प्राप्त हैं। यद्यपि, इस प्रकार के निर्णय लेने में आवश्यकताएँ या उसके प्रभाव के विषयों को महत्त्व दिया जाता है। ऐसे स्वतंत्र निर्णय लेने पर भी संघ के कर्मचारी, विशेष रूप से आयुक्त एवं संघ के इन्जिनियर का अभिमत महत्त्वपूर्ण बनता है। इसलिए जो क्षेत्र स्थानीय आर्थिक योगदान नहीं दे पाते उन्हें इसका लाभ तुलना में कम मिलता है या बिल्कुल नहीं मिलता। जिन ग्राम पंचायतों की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं होती है उनको इस धनराशि में कुछ मुक्ति भी दी जाती है। समृद्ध पंचायतो को अपने ही क्षेत्र के लिए समुचित मात्रा में अधिक धनराशि देने के लिए भी कहा जाता है या फिर कई

सारिणी–४९

नमूने के पंचायत संघ (व्यय विवरण १९६३–६४)

	तिरुवायरु	नीलमंगलम	मुथुपेट	सक्कोताई	राजसिग मंगलम	तिरुप्पु-वनम	पोलाची	वेल्ला कोईल	मोडक्युरिची	कांदिली	वांदीवाश	चेय्यूर
१. जनसंख्या	८५	७७	६२	६३	५२	६७	१२७	५५	८७	६४	८३	७६
२. आर्थिक स्तर एवं सामान्य व्यय	क	क	क	घ	ख	क	ख	ख	क	ख	ग	क
३. प्रशासन	२८	३६	३९	४५	२६	३२	२९	३०	२९	३४	४६	३८
४. वेतन देने योग्य साहस	-	-	-	-	-	-	३	२	-	-	-	-
५. रुग्णालय	३०	२६	५	११	१९	-	१०	२	५	२५	३	४
६. मातृ संभाल केन्द्र	-	-	६	-	९	-	-	९	९	-	१३	७
७. महिला एवं बाल कल्याण -	३	४	३	६.७	६	३	३	८	६	३	६	
८. पत्राचार	३९	५७	२९	३४	२६	२९	५४	१८	३६	४१	४९	४२

	तिरुवायरु	नीलमंगलम	मुथुपेट	सक्कोताई	राजसिंग मंगलम	तिरुप्पु-वनम	पोलाची	वेल्ला कोईल	मोडक्युरिची	कांदिली	वांदीवाश	चेय्यूर
९. सिंचाई	४७	३४	-	११	२	-	-	-	-	१८	१४	१२
१० समाजशिक्षा	-	-	३.५	-	२.७	-	-	५	९	-	७	५
११. प्राथमिक शिक्षा	४०२	२८०	२४३	२५३	३०६	३५३	३८८	२०४	२२०	२४०	४१२	३३२
१२. विद्यालय भोजन	३३	२२	५५	१०	६६	९	२७	३०	२५	१५	६४	४५
१३. खेती, पशुपालन	१०५	-	८१	-	३६	-	-	३०	७५	-	६८	५१
१४. ग्रामोद्योग	-	-	-	-	३	-	-	३६	-	-	१	१८
१५. अन्य कार्यक्रम एवं मुख्य व्यय	-	-	४	-	३.६	-	-	७	४	-	३	३
१६. पत्राचार	१११	११६	१०८	७१	१३	४२	२०	१७	१४६	४९	५३	६९
१७. ग्रामीण जलपूर्ति	३६	५१	१२	४६	४०	२०	४०	२९	४६	२४	७	६
१८. विद्यालय भवन	२५	२१	३०	७	-	२५	६५	१७	५६	१९	२	१०
१९. कृषि	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	२
२०. ग्रामोद्योग	-	-	-	-	२७	-	-	-	-	-	२	८
२१. अन्य	-	-	-	-	-	-	-	४८	९	-	-	-

बार पंचायत संघ स्वयं भी अपनी जमा धनराशि से योगदान देते है। क्योंकि इस समय ऐसी स्थिति का निर्माण हुआ है कि पडौस की ग्रामपंचायत की आर्थिक स्थिति अच्छी न होने के कारण अन्य ग्रामपंचायत अधिक योगदान देना ही नहीं चाहती। इस घाटे को संतुलित करने के लिए अपनी जमा धनराशि से योगदान देना पडता है, और ऐसा बार बार होता है। यद्यपि अधिकांश संघो के पास इस प्रकार की जमा धनराशि नही होती है। ऐसा कभी कभार ही होता है, लेकिन इसके परिणाम स्वरूप जिन क्षेत्रों से आर्थिक भाग कम प्राप्त होता है, उसे कम लाभ मिलता है। ऐसा कई बार देखा गया है। इसी कारण पंचायत संघों के वित्तीय वर्गीकरण को अधिक तर्कशुद्ध तरीके से कार्यान्वित करने की आवश्यकता रहती है।

एक और महत्त्वपूर्ण बात, पंचायत संघों के द्वारा विभिन्न पंचायतों को (प्रति व्यक्ति) दी जानेवाली राशि न्यायिक एवं समान होती है। विभिन्न कार्यक्रमों (परियोजनाएँ) के लिए पंचायत संघों के द्वारा ग्रामपंचायतो को आरक्षित धनराशि से दी जानेवाली प्रतिव्यक्ति राशि का अनुमान १.२ का ही रहता है। यद्यपि यह अलग बात है कि किसी पंचायत को आरंभ में अधिक राशि चाहिए तो उसे ही दी जाती है। इसलिए तुलना अप्रस्तुत है। मान लीजिए, किसी क्षेत्र को अपने कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने के लिए पर्याप्त सुविधाएँ होती है जब कि किसी पंचायत के पास ऐसी सुविधाऐं न भी हों। इसलिए ऐसी आवश्यक समयावधि के लिए किये जानेवाले प्रबंध को एक समान ही मानना चाहिए। यद्यपि सर्वेक्षक इसकी जानकारी नही पा सके हैं कि गाँव या कस्बे स्वयं को प्राप्त धनराशि का किस सीमा तक उपयोग कर पाते हैं। यह होते हुए भी समानता का विचार तो, संघस्तर से ग्रामपंचायत के स्तर तक एक समान देखने को मिलता है।

प्राथमिक शिक्षा

प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में पंचायतों का सबसे बड़ा दायित्व अध्यापकों को वेतन देने का रहा है। इसके अलावा पंचायत संघ के स्तर पर एवं उसकी सहायता से कार्यरत विद्यालयों के संबंध में अन्य महत्त्वपूर्ण बात यह है कि जो पंचायत नया विद्यालय खोलना चाहती है उसे राज्य के शिक्षा विभाग के नियमों को ध्यान में रखना पड़ेगा। संघ के अधिकार में कार्यरत विद्यालयों में अध्यापकों की (नये स्थान उपस्थित करने का और रिक्त स्थान को भरने का) नियुक्त का दायित्व भी संघ का ही है, और संचालन के संबंध में भी दायित्व निभाना पड़ता है। इस प्रकार पंचायत संघों की

परिषद का प्रमुख कार्य नये विद्यालयों की शुरूआत, नये अध्यापकों की नियुक्ति और कार्यरत अध्यापकों के स्थानांतरण का रहता है। यद्यपि नये विद्यालयों को आरम्भ करना और नये अध्यापकों की नियुक्ति करने कार्य निरन्तर नहीं करना पड़ता है।

कहा जा सकता है कि पंचायत संघों का सबसे अधिक कार्य स्थानांतरण का है। सारिणी-५१ में, जिन पंचायतों से जानकारी प्राप्त हुई है उन के अध्यापकों के निश्चित समयावधि में हुए स्थानांतरण के विषय में जानकारी दी गई है। यद्यपि इन स्थानांतरणों की अनुमानित संख्या और मात्रा विभिन्न संघों से भिन्न भिन्न होती है। किसी संघ में उसकी मात्रा ५ प्रतिशत रहती है तो, किसी में २०-२५ प्रतिशत। (पंचायत संघों के किये गये सर्वेक्षण में दो ऐसे पंचायतों में तो यही देखने को मिला है। यद्यपि जिन्हें सरकार से वेतन प्राप्त है ऐसे पंचायत कर्मचारियों के स्थानांतरण की मात्रा सीमित रहती है।

कृषि, पशुपालन एवं मत्स्योद्योग

कृषि, पशुपालन एवं मत्स्योद्योग के संबंध में शोध कर्ताओं के द्वारा अधिक खोज नहीं हो पाई है। परन्तु परियोजनाओ या कार्यक्रमों के लिए व्यय की मात्रा में अधिक भिन्नता प्रतीत नहीं होती है। यद्यपि कुछ संघों में यह व्यय उन्हें दी गई राशि की सीमा में ही रहा है, जब कि कुछ संघों में तो वह, अपेक्षाकृत बहुत कम रहा है। यथा, सुधारित बीज-वृद्धि विषयक निदर्शन भूखंड या निर्दिष्ट खेत या निदर्शन के लिए मत्स्य पालन केन्द्रों के लिए ग्रामीण सहायक सेवाओं में ऐसा पाया गया। यद्यपि, जहाँ पंचायत हैं संघ आयुक्त विस्तरण अधिकारी (कृषि) से पदोन्नति द्वारा नियुक्त हुए हैं वहाँ विस्तृत रूप से इससे संबंधित व्यय की उचित मात्रा प्रतीत हुई है। इसका एक कारण यह भी हो सकता है कि मूलतः राज्य के कृषिविभाग से आयुक्त की नियुक्ति होने से वे पंचायत संघ और कृषिविभाग के बीच सुचारू रूप से सेतु बन सकते हैं। इसके साथ ही, ऐसे आयुक्त को सहज ही कृषि विभाग के प्रति अधिक लगाव रहता है। कई बार ऐसा भी होता है कि एक कार्यक्रम के लिए व्यय सीमित करना है तो ऐसी राशि से अन्य कार्यक्रम के लिए व्यय होता है और कृषि निदेशक यह प्रबंध सरलता से करवा सकते हैं। इस विषय में भी विस्तरण अधिकारी (कृषि) विभाग से आयुक्त के पद पर पदोन्नति पाकर आए हुए अधिकारी अत्यंत महत्त्वपूर्ण योगदान दे सकते हैं।

सारिणी–५०

मासिक व्यय का विवरण (१९६३–६४)

	अप्रैल	मई	जून	जुलाई	अग.	सित.	अक्तू.	नव.	दिस.	जन.	फर.	मार्च
१. नीडमंगलम्	१३	३०	६२	५४	३८	३०	४६	२८	२८	६५	४४	३६
२. मुथुपेट	२०	५९	७६	३६	५६	७७	१०	४०	५६	४३	११३	१३०
३. साक्कोताई	२६	३४	३१	२५	३४	२७	६४	१०	३४	२५	४८	६६
४. राजसिंग मंगलम्	३६	४०	५	७	३१	७२	१३	६१	१२	९८	१८	११२
५. पोलाची	४२	५०	३६	६४	४४	९१	५६	६६	७१	९७	८४	११२
६. वेलाकोइल	२५	३६	२७	४३	३४	५६	७०	१४	४३	३३	३१	४६
७. मोडाक्कुरुची	२५	३८	३०	२८	२५	३८	३४	४८	५१	४१	४३	५४
८. कांदिली	२६	२५	२२	२४	२६	४२	३१	३६	४२	३३	२८	८८

सारिणी-५१

मासिक व्यय का विवरण (१९६३-६४)

१ नीडमंगलम्	३०	१ वर्ष	३०
२. मुथुपेट	२८	२ वर्ष	१४
३. सक्कोताई	१९	२ वर्ष	९
४ राजसिंह मंगलम्	५२	२१/२ वर्ष	२१
५ पोलाची	७७	२ वर्ष	३९
६. वेलाकोइल	११७	२ वर्ष	५९
७. मोडाक्कुरिची	१३७	२ वर्ष	६९
८ कांदिली	३२	१ वर्ष	३२
९. चेय्यूर	४४	१३ मास	४०

कृषिनियामक द्वारा अभी अभी जारी किये गए विकास की प्रगति के विषय में दिये गये वृत्तांत से कुछ अंश यहाँ दिये गये हैं, जिसमें इस प्रकार की धनराशि की परिवर्तित देयगी के सम्बन्ध में नियामक द्वारा दी गई जानकारी और उस विषय में कृषि विभाग के अभिप्राय भी दिये गये हैं, जो इस प्रकार हैं।

पौधे की सुरक्षा एवं कृषि के लिए अन्य उपयोगी उपकरण व्यक्तिगत रूप में पहुँचाने के लिए दिये गये रु. ७,५००/- के सामने रु. ११,३६४ का व्यय किया गया है जो रु. ३,८६० अधिक हैं। दी गई जानकारी के अनुसार, किसानों को वैयक्तिक रूप में किया गया। हरी खाद के लिये दी गई राशि का उपयोग उपकरणों के लिए मुझे ऐसा भी बताया गया है कि किसानों को वैयक्तिक रूप दी जाने वाली हरी खाद की राशि रु. ५,००० में से, केवल रु. ४४२/- का ही व्यय किया गया है। इसके साथ ही यह जानकारी भी प्राप्त हुई है कि इसमें से बची हुई राशि एक विभाग से दूसरे विभाग में परिवर्तित करने की अनुमति भी पंचायती परिषद ने दे दी है। इसलिए उनका ध्यान आकर्षित किया गया था कि यह कारवाई अनुचित है, परन्तु ऐसा लगता है कि उपकरण एवं औजार खरीदने का कार्य अपेक्षाकृत सरल होने से संघ ने इतनी बड़ी [illegible] लिए व्यय कर दी है परंतु किसानों के लिए वैयक्तिक रूप से अति

महत्त्वपूर्ण हरी खाद की परियोजना के पीछे जानबूझकर व्यय कम किया गया है, क्योंकि, यह बड़ा कठिन कार्य है। इस संदर्भ में संघ आयुक्त और संघ के अध्यक्ष का भी ध्यान आकर्षित किया गया था।

बहुत संभव है कि किसी पंचायत संघ परिषद द्वारा लिये गये इस निर्णय की तुलना में उसके संबंध में दर्शाया गया यह अभिप्राय अधिक प्रस्तुत हो, परन्तु महत्त्वपूर्ण बात यह है कि ऐसा अभिप्राय गुणवत्ता के आधार पर नहीं, परंतु गतिविधि के कारण दर्शाया गया था और इसलिए तो उसके संदर्भ में केवल ध्यान आकर्षित किया गया था।

ग्रामोद्योग

ग्रामोद्योग की कार्यवाई के संबंध में नीचे दिये गये अनुच्छेद, चयनिल इन १२ संघों के अलावा तिरुनेलवेली और कन्याकुमारी जिलों के कुछ क्षेत्रों से प्राप्त जानकारी पर आधारित है। यहाँ उसके लिए निश्चित क्षेत्रों का संस्थाकीय प्रबंध और ग्रामोद्योग इकाईयों की जनता के लिए सापेक्ष उपयोगिता पर ध्यान केन्द्रित किया गया है। उसका कार्यान्वित की गई तकनीक के साथ कोई संबंध नहीं है।

अधिकांश पंचायत संघों ने अपनी औद्योगिक इकाइयों को अपेक्षाकृत विलम्ब से आरम्भ किया था। इसका एक कारण यह भी हो सकता है कि नियुक्त किये गये विस्तरण अधिकारी (उद्योग) और अन्य आवश्यक कर्मचारीगण की नियुक्ति ही देर से हुई थी। इसके अलावा, ये अधिकारी एवं कर्मचारी ही सही अर्थ में ग्रामोद्योग को प्रोत्साहन देने के लिए सक्षम थे। साथ ही, अधिकांश संघों ने ग्रामोद्योगों के प्रशिक्षण एवं उसके उत्पादन के लिए कुछ औद्योगिक नीतियों को कार्यान्वित कर दिया था, परन्तु १९६१ से ६५ तक के पांच वर्ष की समयावधि के लिए दी हुई लगभग रु. ५०,००० की राशि को इन संघों ने १९६३-६४ तक ही व्यय कर दिया था।

इनमें प्रस्थापित की गईं सबसे अधिक सामान्य परियोजनाओं में (१) सिलाई एवं कशीदेकारी की इकाई (२) बढई एवं लोहारी प्रशिक्षण और उत्पादन केन्द्र (३) मिट्टी के काम के लिए इकाइयाँ (इन इकाइयों में से विशेषकर तिरुनेलवेली जिले में स्थित कुछ सामान्य सुविधा केन्द्र (४) चर्मउद्योग केन्द्र (५) मधुमक्खी के छत्तों के केन्द्र (६) बैलों से चलनेवाले कोल्हू के लिए सहकारी संस्थाओं के द्वारा की जानेवाली सहायता और महिलाओं के लिए धान कूटने की इकाइयाँ और रस्सी बनाने की इकाइयों का समावेश होता है।

इसके अतिरिक्त संघों के द्वारा कुछ परियोजनाएँ चलाई जाती हैं और मद्रास खादी एवं ग्रामोद्योग संघ भी कुछ परियोजनाएँ चलाता है। इसके साथ ही संघ अपने जिलास्तरीय कार्यालयो द्वारा कई ग्रामोद्योगों को सहायता देता है।

पंचायत संघों के द्वारा कार्यान्वित किये जाने वाले कार्यक्रमों से लाभान्वित होनेवालों की संख्या बहुत सीमित है। जैसे कि सिलाईकला की एक इकाई दो-तीन वर्षों में ३० से ४० महिलाओं को प्रशिक्षित करती है। इसके लिए एक वर्ष का पाठ्यक्रम है। इसलिए कई बार एक ही स्थान पर यह पाठ्यक्रम चलाया जाता है। इसके उपरांत, यह प्रशिक्षण केन्द्र छोड़ जाने के पश्चात् महिलाएँ उनके द्वारा लिए गए प्रशिक्षण का कितना लाभ उठा पाई हैं इसकी जानकारी प्राप्त करने के लिए कोई अनुवर्ती कार्यक्रम भी नहीं है। उनमें से कुछ महिलाएँ इतनी गरीब होती हैं कि उनके पास सिलाई की मशीन खरीदने के पैसे नहीं होते हैं और इच्छा होने पर भी वे खरीद नहीं पाती हैं। इसलिए ऐसी महिलाएँ और किशोरियों के लिए सिलाई की मशीनें खरीदने में कुछ आर्थिक सहायता का प्रबंध होगा तभी यह कार्यक्रम सार्थक हो सकता है।

इस प्रशिक्षण कार्यक्रम के व्यापक आयाम उसका शैक्षणिक मूल्य है। सिलाई एवं कशीदेकारी के इन प्रशिक्षण-केन्द्रों को अधिक स्वतंत्रता और सुविधाएँ प्रदान की जाएँ तो ये प्रशिक्षार्थीयों और प्रशिक्षक के बीच पारस्परिक शिक्षा एवं विचारों के आदान प्रदान के महत्त्वपूर्ण केन्द्र बन सकते हैं। इस स्तर पर जाने अनजाने ही कुछ सीमा तक उसके द्वारा शिक्षा का प्रसार होता ही है। इसलिए अगर प्रशिक्षकों को पाठ्यक्रम के संदर्भ में अधिक स्वतंत्रता एवं सुविधाएँ दी जाएँ तो ये केन्द्र ग्रामीण जीवन में अधिक योगदान दे सकेंगे।

इसी प्रकार बढई एवं लुहारी काम के लिए २० से ३० युवकों को प्रशिक्षण दिया जाता है परन्तु उनके लिए रोजगारी के अवसर अत्यन्त सीमित होते हैं। इस समय अधिकांश केन्द्र, पंचायत संघों के कार्यालय एवं पंचायतों के द्वारा चलाए जा रहे विद्यालय आदि संस्थाओं के लिए उपस्कर बनाते हैं। प्रशिक्षण के लाभ या रोजगारी और सेवा की सुविधाएँ उस वस्ती तक ही सीमित रहती हैं। साथ ही स्थानिय टैकनोलोजी को सर्वस्पर्शी रूप में विकसित करने में भी इन केन्द्रों का योगदान सीमित पाया गया है। ऐसी ही स्थिति चमड़े कमाने के औद्योगिक प्रशिक्षण केन्द्र या अन्य उद्योगों के लिए खोले गये प्रशिक्षण केन्द्रों के संदर्भ में बनी हुई है।

इसके साथ यह स्मरण में रखना चाहिए कि मिट्टी के कामका उद्योग, कुम्हारों

के लिए सामान्य सुविधाकेन्द्र, बैलों से चल रहे कोल्हू के लिए सहकारी संस्थाएँ और धान कूटने के उद्योगों की समस्याएँ भी भिन्न होती हैं। कुछ सहकारी संस्थाओं को सुचारु ढंग से चलाने के लिए कार्यालय होते हैं। हिसाब के बहीखाते समुचित रूप से तैयार किये जाते है। ऐसा होते हुए भी इन संस्थाओं के सदस्यों मे या प्रशिक्षार्थियों मे अपनेपन की भावना का विकास नहीं हो पाया है। इसलिए ये सभी केन्द्र यंत्रवत् कार्य करनेवाले ही बने रहे हैं। ये केन्द्र कारीगरों के सहायता अवश्य करते हैं, परन्तु इसके पश्चात् वे कारीगर वैयक्तिक रूप से तो उनके दृष्टिपथ से दूर हो जाते हैं। परिणाम स्वरूप कोई संस्था या सहकारी सोसायटी बड़ी संख्या में प्रशिक्षार्थी तैयार करती है तो भी, वैयक्तिक रूप से तो, कारीगर की स्थिति दारुण ही बनी रहती है। ऐसी स्थिति कोल्हू तेल उत्पादक इकाइयों की सहकारी संस्थाएँ, धान कूटनेवाली सहकारी संस्थाएँ आदि में अधिक पाई जाती है। इसका एक कारण यह भी हो सकता है कि जो व्यक्ति ऐसे प्रशिक्षण केन्द्र चलाते हैं या उन पर निगरानी रखते हैं वे अपने दायित्व को केवल संख्या की दृष्टि से और यांत्रिक रूप से देखते हैं। उन्हें केवल अपने दफ्तर और आलेख से मतलब रहता है। इसके अलावा जब वे प्रतिव्यक्ति आय आदि की गिनती करते हैं (जो उन्हें बार-बार करते रहना होता है) तब वे असंबद्ध जानकारी और मनगढंत बातों के आधार पर निष्कर्ष तैयार करते हैं और उसमें भी कई प्रकार की गलतियाँ करते रहते हैं। इसलिए इन गतिविधियों के द्वारा जिस लक्ष्य को सिद्ध करने का प्रारंभिक उद्देश्य था इससे बिल्कुल विपरीत ही परिणाम देखने को मिलते हैं। इसके पीछे प्रमुख उद्देश्य तो ग्रामोद्योग द्वारा बड़ी संख्या में लोगों को सार्थक रोजगारी प्रदान करने का था।

इसके अलावा रोजगारी देनेवाले उद्योगों को अन्य कई समस्याओं का सामना करना पड़ता है, जैसे धान कूटने के उद्योग में कच्ची सामग्री की कमी, क्योंकि इस समय तो चावल पर ही कई क्षेत्रों में सरकारी नियंत्रण है। उधर मिट्टीकाम के उद्योगों के सामने बिक्री की समस्याएँ हैं, जब कि (हाथ से बने) कागज.उद्योग को सरकारी नियंत्रणों की समस्या सताती है। तेल के देशी कोल्हू के संदर्भ में भी सरकार का एक नियम ऐसा है कि अगर कोल्हू की सहकारी संस्थाएँ निर्धारित संख्या से (बीस से अधिक) कर्मचारी रखती हैं तो उन्हें बिक्रीकर देना पड़ता है। इसका नतीजा ७यह रहता है कि ये संस्थाएँ कानून में संशोधन करने या कर देने की बजाय निश्चित सीमा से अधिक कर्मचारियों को नौकरी से निकाल कर, सीमित संख्या में ही कर्मचारी रखती हैं।

संक्षेप में, कारण कोई भी हो, पंचायत संघ ग्रामोद्योग में अधिक रुचि नहीं रखते हैं या उस संदर्भ में नेतृत्व लेकर आरंभ भी नही करते हैं। इसका प्रमुख कारण यह है कि उनकी यह मान्यता रही है कि उन्हें निश्चित परियोजना मे दर्शाए गये दायित्व से अधिक कुछ करने की आवश्यकता नही है। कई बार ऐसा भी होता है कि सिलाइ वर्ग के कार्यक्रम (सरकार द्वारा) निश्चित की गई समयावधि से अधिक समय के लिए भी चलाए जाते हैं तब उसे रोकने के अधिकार का उपयोग नहीं किया जाता। परन्तु तकनीकी या निरीक्षण विभाग के सत्ताधीश उसके प्रति हीनभावना से देखते हैं। यह स्थिति दूर होनी चाहिए। इसके स्थान पर जिन ग्रामपंचायत संघों के पास अधिक धनराशि है और वे अपने आप ऐसे कार्यक्रम चलाते हैं तो उन्हें आगे बढने के लिए समुचित अवसर एवं प्रोत्साहन देना चाहिए।

अन्य गतिविधियां

इसके साथ ही पंचायत संघ अन्य कुछ गतिविधियां भी चलाते हैं। यथा, महिलाएँ और बचों के लिए कल्याणकारी परियोजनाएँ, सामाजिक शिक्षा एवं ग्रामीण रुग्णालय तथा प्रसूतिकेन्द्र, इसके लिए सरकारी अनुदानों से प्रति वर्ष रु. १,०००/- या रु. ५,०००/- तक की राशि भी दी जाती है। इसके अलावा कई संघ, अपनी अतिरिक्त केन्द्रीय धनराशि से भी इस प्रकार की गतिविधियों के लिए धनराशि का प्रबंध करते हैं। कई संघ अब तक ऐसी एक या दूसरी गतिविधि करते ही रहते हैं। यद्यपि इन अन्य कार्यो के लिए धन का प्रबंध बहुत कम या आंशिक होता है। इसका एक कारण यह रहता है कि उनके पास फुटकर या निश्चित किये गये कार्यों को छोड धन का प्रबंध नहीं होता है जब कि उधर किसी निश्चित कार्य के लिए व्यय के संदर्भ में सरकार की ओर से घोषित विशेष सूचनाओं का पालन अनिवार्य होता है।

जिला विकास परिषद

पंचायतों के सघन अध्ययन के लिए चयनित पंचायत संघों से पूर्व रामनाथपुरम् के एक ही विकास जिले से चयन किये गये संघों से तीन पंचायते हैं। इसे छोड़कर अन्य सभी नौ पंचायत संघ तंजावुर, कोयम्बतूर एवं उत्तरी आर्कोट जिले की दोनों ओर स्थित है।

एक विशेष नियम द्वारा जिला विकास परिषदों का गठन हुआ है फिर भी मूलतः ो, परामर्श देनेवाली एवं अभिशंसा करनेवाली संस्थाएँ हैं। सामान्य रूप से इस परिषद

की बैठक प्रति दो मास आयोजित होती है और उसके अध्यक्ष पद पर जिलाधीश रहते हैं। यही समूह कुछ बातों के संदर्भ में प्रति छह मास विस्तृत चर्चा करते हैं। प्रत्येक परिषद में विभिन्न विषयों के लिए एक प्रवर समिति होती है, जो इस प्रकार है (१) खाद्य एवं कृषि (२) उद्योग एवं श्रमिक (३) लोक निर्माण (४) शिक्षा (५) स्वास्थ्य एवं कल्याण (६) सामान्य कार्य।

इन समितियों के सदस्यों का निर्वाचन जिला विकास परिषद द्वारा होता है। सामान्य कार्यों की समिति का अध्यक्षपद जिला समाहर्ता संभालते हैं। अन्य समितियों के अध्यक्ष अशासकीय व्यक्ति होते हैं। पूर्व में (१९६०-६१ तक) विधान परिषद या विधानसभा के कोई सदस्य अध्यक्ष पद पर रहते थे, परतु इस समय प्रति वर्ष निर्वाचित इन समितियों के अध्यक्ष ही अध्यक्ष पद का दायित्व निभाते हैं। इन प्रवर समितियों की बैठक जिला विकास परिषद की बैठक से पूर्व आयोजित होती है और इस बैठक में चर्चित विषयों को जिला विकास परिषद की बैठक में प्रस्तुत किया जाता है। जिला विकास परिषद की बैठक में विचार विमर्श के लिए निश्चित विषयों की संख्या लगभग ३० से ४० रहती है। इन विषयों के अलावा कुछ सदस्यों द्वारा कुछ प्रश्न उठाएँ जाते हैं। उनकी संस्था प्रत्येक बैठक और प्रति संघ परिषद में कम या अधिक रहती है। इन प्रश्नों के उत्तर जिलाधीश, अध्यक्ष या संबंधित अधिकारी देते हैं।

जिला विकास परिषद की कार्यवाही दो भागों में होती है। (अ) सरकार द्वारा निश्चित की हुई और (ब) अशासकीय

सरकार द्वारा निश्चित की गई कार्यवाही में प्रमुखरूप से नियोजित विकास के लिए परियोजनाएँ, उसके लक्षांक और उसकी समीक्षा को समाविष्ट किया जाता है। सामान्यरूप से जिला विकास परिषद की बैठक दो से तीन घंटे चलती है, परन्तु कई बार सारा दिनभर भी चलती है। रामनाथपुरम् जैसे जिलों में प्रमुखरूप से ये बैठकें क्रमश: रुप से विभिन्न संघों के प्रधान कार्यालयों में आयोजित होती हैं। जिलाधीश के निजी सचिव (पंचायत विकास) उस जिले की परिषद के प्रमुख कार्यवाहक का दायित्व निभाते हैं। उनके अधिकार में पर्याप्त संख्या में कर्मचारी काम करते हैं।

पश्चिम संजावुर जिले में १९६२-६३ और १९६३-६४ (दिसम्बर ३१) की समयावधि में पारित विषयों के संदर्भ में २५ फरवरी, १९६४ के दिन एक सदस्य द्वारा पूछे गये प्रश्न के उत्तर इस परिषद में हो रही चर्चा का उदाहरण प्रस्तुत करता है।

प्रश्न : जिला विकास परिषद में अब तक कितने प्रस्ताव पारित किये गये हैं? कितने प्रस्तावों के कार्य संपन्न हुए हैं ? कितने प्रस्ताव सरकार में अनिर्णित पड़े हैं?

उत्तर : जिला विकास परिषद में पारित प्रस्तावों की संख्या -

(१) १९६२-६३	१६४
(२) १९६३-६४ (३१ दिसम्बर १९६३ तक)	१८१
कुल	३४५

जिन प्रस्तावों के अनुसार कारवाई हुई है उसकी संख्या

(१) १९६२-६३	११२
(२) १९६३-६४	१२८
कुल	२४०

सरकार में भेजे गये प्रस्तावों की संख्या

(१) १९६२-६३	५२
(२) १९६३-६४	५३
कुल	१०५

सरकार द्वारा जिन प्रस्तावों पर आदेश दिये गये हैं उनकी संख्या :

(१) १९६२-६३	२५
(२) १९६३-६४	७
कुल	३२

सरकारी में अनिर्णित प्रस्तावों की संख्या

(१) १९६२-६३	२७
(२) १९६३-६४	४३
कुल	७०

राज्य में अवस्थित २१ जिला विकास परिषद प्रतिवर्ष १५०-२०० प्रस्ताव पारित करती है। इनमे लगभग २५ से ५० प्रस्ताव राज्य सरकार या सरकार के विभिन्न विभागों को भेजे जाते हैं जो निवेदन अथवा अनुशंसा के रूप में होते हैं। यद्यपि, किसी निश्चित समयावधि में इन संदर्भों के विषय में क्या कदम उठाये गये हैं उसका किसी टिप्पणी में कोई संकेत नहीं पाया जाता है। एक ही उदाहरण लें तो मार्च १९६० से दिसम्बर १९६१ तक उत्तर त्रिची विकास परिषद द्वारा लगभग ७८ प्रस्ताव सरकार को विचारार्थ प्रस्तुत किये गए थे।

यद्यपि इस प्रकार के संदर्भो के प्रकारों में भी विविधता होती है। चयनित जिलो के दो या तीन जिला विकास परिषदों को भेजे गये कुछ संदर्भ यहाँ पर दिये गये है।

(१) युवा कृषक क्लब एवं कृषक मंच को समाप्त करने के लिए सरकार को इस प्रस्ताव के द्वारा अभिशंसा की जाती है, क्योकि ये संस्थाएँ कोई सार्थक उद्देश सिद्ध नहीं कर पाई हैं।

(२) मातृ संगमों के द्वारा किराये पर लिये गये भवनो के लिए प्रति माह रु. ५ तक की राशि देने के लिए सरकार से निवेदन किया जाता है।

(३) सरकार को अभिशंसा करनेवाला हुआ एक प्रस्ताव पारित किया गया था कि, विद्यालय परामर्शक समिति की प्रभावोत्पादक कारवाई के लिए उचित पर्यवेक्षण हो सके इस हेतु से विद्यालय उपनिरीक्षक का कार्यक्षेत्र एक ब्लोक से अधिक नहीं होना चाहिए।

(४) रेडियो सेटस् की मरम्मत के लिए रु. १०/- तक का व्यय स्थानीय स्तर पर करने के लिए पंचायतों को अनुमति देने के लिए प्रवर समिति द्वारा सरकार को की गई अनुशंसा की पुष्टि करनेवाला एक प्रस्ताव भी परिषद ने पारित किया था।

(५) जिन प्रशिक्षार्थियों ने सिलाई का प्रशिक्षण पूर्ण किया हो, उन को कारीगर के उपकरण के रूप मे सिलाई मशीने प्राप्त करवाने के लिए सरकार से निवेदन करनेवाला प्रस्ताव भी पारित किया गया था।

(६) जिन पंचायत संघों से पचास से अधिक पंचायतें संलग्न हैं, उन संघों को दो के स्थान पर पाँच ग्रामसेवकों की नियुक्ति करने देने हेतु सरकार से निवेदन करनेवाला प्रस्ताव भी पारित किया गया था।

(७) कुछ आपातकालीन किस्सों में रु. ५००/- तक की दवाइयों के क्रय के संदर्भ में जिला स्वास्थ्य अधिकारी को सरकारी औषध भण्डार, मद्रास की ओर से प्राप्त अप्राप्य प्रमाणपत्र के बिना ही दवाई के क्रय का अधिकार देनेवाला प्रस्ताव भी पारित किया गया था।

(८) कक्षा ६ से ८ के निर्धन छात्रों को मध्याह्न योजना के अंतर्गत लेने के लिए जिला विकास परिषद ने अभिशंसा की थी।

(९) विद्यालयों में अध्यापक और छात्र का अनुपात प्रति विद्यालय नहीं, अपितु प्रति कक्षा निर्धारित करने के लिए जिला विकास परिषद ने सरकार से निवेदन करनेवाला प्रस्ताव पारित किया था।

में परिवर्तित कर दिया है। (इसके लिए वैधानिक कानून या सरकार की कारवाई भी उत्तरदायी हो सकती है।)

संदर्भ

* जहाँ जानकारी केवल एक वर्ष या उसके आसपास की है, वहाँ संभवतः ऐसा हो सकता है कि १९६२ से ६५ तक की समयावधि के बाद स्थानांतरण बहुत कम हुए हैं।

** तिरुपुवन्न में ७ अगस्त १९६४ को ४२ स्थानांतरण किये गये हैं, शायद ये स्थानांतरण नियमानुसार हुए हैं।

*** यहाँ ६६ स्थानांतरण हुए थे। इनमें ३२ का स्थानांतरण एक से अधिक बार हुआ था। एक अध्यापक का दो वर्ष में ही छह बार स्थानांतरण हुआ था।

१ इस तरह प्रतिवर्ष लगभग १००० निवेदन सरकार को भेजे जाते हैं। बहुत संभव है कि इनमें से कई तो विभिन्न जिला विकास परिषदों से समान विषयों के संदर्भ में ही आते होंगे, परन्तु इसके लिए सरकार की प्रतिक्रिया कैसी है इसकी निश्चित जानकारी जिला विकास परिषद या सरकार के आर डी. एण्ड एस. एल. विभाग के द्वारा भी प्राप्त नहीं होती। इसी प्रकार लगभग प्रत्येक पंचायत संघ के द्वारा भी सरकार को प्रतिवर्ष २० से ३० प्रस्ताव भेजे जाते हैं। इस प्रकार प्रतिवर्ष कुल मिलाकर ८,००० से १५,००० निवेदन सरकार के समक्ष राज्य की १२,००० पंचायतों के द्वारा भेजे जाते हैं, परन्तु इस संदर्भ में सरकार की प्रतिक्रियात्मक प्रश्नों की छानबीन होना शेष है। यदि वह प्राप्त हो सके तो पंचायत व्यवस्था को अच्छी तरह समझा जा सकता है।

१३. उपलब्धियाँ, सीमाएँ और संभावनाएँ

इस समय की पंचायतपद्धति सस्थाकीय, प्रशासनिक एवं वस्तवस्तुपुरक दो भिन्न व्यवस्थाओं का मिश्रण है। खण्ड १ में दोनो के विषय में विस्तार से विचार हुआ है। समुदाय विकास और राष्ट्रीय विस्तरण सेवा के समान प्रबंधों का उल्लेख पहले करने के बाद हम वर्तमान पंचायत पद्धति की उपलब्धि, सीमा और संभावनाओं के विषय में चर्चा कर पायेंगे।

समुदाय विकास और राष्ट्रीय विस्तरण सेवा की संरचना में कई तत्त्वों का प्रभाव है। आदर्शवाद एवं उत्साह की फुहारों और नित्यक्रम का मिश्रण हो जाता है। इसमें कोई आश्चर्य की बात नही है कि सरकारी तत्र का यह एक छोटा सा हिस्सा होने और अवांछित आगंतुक होने के कारण, वह आज तक इससे अलग पद्धति से अपना कार्य नहीं करता। परन्तु आश्चर्य इस बात का है कि कार्यक्षेत्र में नियमों एवं कार्यपद्धति को कुछ बदलकर या उनसे समझौता कर के, रास्ता निकालकर वर्तमान लोक से बाहर निकलकर काम करने का प्रयास किया जाता है तथापि जिन उद्देश्यों को लेकर पंचायत की रचना हुई थी उसके अनुसार कार्य होता है कि नहीं उस पर शांति से विचार या चर्चा करने का प्रयास नहीं होता है। इसमें कोई नई बात नहीं है, वास्तव में आरंभ ही इसी तरह किया गया है। जब से अर्थात् १९५२ से इस कार्यक्रम का आरंभ हुआ तव से सामुदायिक प्रकल्प संचालन सचिव के एक सूचनापत्र में ग्रामजनों के योगदान के बारे में संकेत करते हुए बताया था कि 'अगर हम मान लें कि लोग अपने परिश्रम और अधिक कमाई से रु. १३० लाख का योगदान देंगे, जिसके सामने सरकार की ओर से रु. ६५ लाख की राशि प्राप्त होगी तो यह अनुमान अधिक आशावादी नहीं होगा। यही करना होगा, इसी के आधार पर रखा जा सकेगा कि सामुदायिक प्रकल्प लोगों की परियोजना है या लोगों के सिर पर थोप दी गई है।'मुक्त एवं लोकतांत्रिक भारत में *किसी भी योजना को लोगो के सिर पर कैसे थोप दिया जा सकता है ? ब्रिटिश शासन* के समय भी ऐसा नही हो पाता था। इसलिए यह 'लोगों की परियोजना' होनी चाहिए, और वह नये कार्यालयों में सभी मुद्रित एवं प्रतिलिपित की गई सामग्री में सूचितार्थ में

'लोगों की योजना' सिद्ध हो रही है।

यह दृष्टांत केवल उसी बात के संकेत के रूप में दिया गया है कि काम किस ढंग से किये जाते थे। यही नहीं, उसमें विभिन्न अधिकारियों के बीच संकलन की समस्याएँ, विस्तरण कर्मचारी जो स्थान पर ही विषय हाथ में लेते थे, और तकनिकी विभाग द्वारा जो दायित्व निभाना था उन दोनों के संदर्भ में उपस्थित होनेवाली समस्याओं पर ध्यान देना था। इसके अलावा स्थानविशेष पर कार्यरत कर्मचारीगण और उससे संबंधित सरकारी सचिवालय के विभाग के साथ जुडी हुई सैद्धांतिक एवं कार्यवाही से संबंधित समस्याएँ, साथ ही केन्द्रीय समुदाय प्रकल्प के संचालन से संबंधित सचिवालय स्तरीय समस्याएँ थीं। ये समस्याएँ सभी राज्यों में बीच समान रूप से देखी जा सकती थीं। संभवत: मद्रास की स्थिति अपेक्षाकृत कम जटिल और अधिक आशास्पद थी, क्योंकि उसकी क्षेत्र विकास योजना अधिक सुदृढ थी और मद्रास के सरकारी कर्मचारी तथा राज्य के लोगों के बीच दूरी कम थी। इसके अतिरिक्त सन् १९५२ में इस राज्य के गाँवों में, जब समुदाय विकास कार्यक्रम का आरंभ किया गया तब अन्य राज्यो की तुलना में यहाँ शिक्षा का औसत एवं सुविधाएँ अधिक थी।

ऊपर जिसका उदाहरण दिया गया है ऐसी अवास्तविकताओं एवं समस्याओं के संदर्भ में परियोजना प्रकल्प से संबंधित भारत सरकार की समिति ने समुदाय विकास और राष्ट्रीय विस्तरण सेवा के कार्यों का पुन: सर्वेक्षण करने के लिए एक समिति की नियुक्ति की। इससे पूर्व जो समितियाँ मद्रास में नियुक्त की गई थीं वे समुदाय विकास एवं राष्ट्रीय विस्तरण योजना के संदर्भ में उपस्थित होनेवाली समस्याओं के साथ साथ ग्रामीण स्थानीय संस्थाओं के गठन से संबंधित बड़ी समस्याओं का हल ढूँढने के लिए थीं।

केन्द्रीय समूह एवं मद्रास समितियों के प्रमुख निष्कर्ष कई विषयों को एकदूसरे से मिलती हैं। यद्यपि उनमें कई बातें भिन्न भी हैं। नई व्यवस्थाओं मे जो प्रमुख परिवर्तन करने थे उनका निर्देश मद्रास की सरकार ने स्टेटमेन्ट ऑव ओब्जेक्ट्स एवं रीजन्स ऑव मद्रास पंचायतम् विधेयक-१९५८ में इस प्रकार किया था।

..... जिला स्तर पर जिला बोर्डों को समाप्त करनेवाली बात महत्त्वपूर्ण परिवर्तनों के प्रस्ताव में प्रमुख विषय था। उसके स्थान पर राष्ट्रीय विस्तरण सेवा योजना के द्वारा सीमित किये गये विकास ब्लॉक के वर्ग में परिरचित पंचायत संघ परिषदों को कार्यान्वित करने की बात है। इन परिवर्तनों से दो उद्देश्य सिद्ध होने की धारणा है।

एक, जिले की तुलना में यह विकास खण्ड का संचालन की दृष्टि से अधिक

सरल रहेगा। अधिक विशाल जिला बोर्ड के सदस्यों की अपेक्षा नई पंचायत संघ परिषद के सदस्यों को अपने अधिकार क्षेत्र में अवस्थित सम्पूर्ण स्थानीय क्षेत्र की आवश्यकताओ एवं प्राप्य सामग्री के संदर्भ में अधिक प्रत्यक्ष जानकारी होगी। यह परिवर्तन इस प्रकार स्थानीय संचालन के सुधार में और लोगों द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधियों को अधिक प्रभावी ढंग से कार्य करने में सहायक सिद्ध होगा।

दूसरा, भारत के सभी राज्यों में समान रूप से विकास खण्ड की आवश्यकताओं के सन्दर्भ मे राष्ट्रीय विस्तरण सेवा की रचना को संगठित किया गया है और उसके सदस्यों को प्रशिक्षित किया गया है। ग्रामजनता के प्रतिनिधिओं को इस संगठित संस्थानों की सेवा का लाभ मिलना आवश्यक है। विकास खण्ड को अधिक्षेत्रीय इकाई मानकर स्थानीय प्रशासन की पुनर्रचना करने से यह लाभ सरलता से प्राप्त होगा।

संघ परिषदों और पंचायतों को जो दायित्व सौंपने का प्रस्ताव है वह जिला बोर्ड एवं पंचायतों को सौंपे गये दायित्वों के समान ही है, जो निम्नलिखित गये परिवर्तनो के अधीन रहेगा :

एक - इस समय जिला बोर्ड, अस्पताल, जिले की प्रमुख सड़कें, हाईस्कूल और यात्रीनिवासों के भवनों की देखभाल करते है। प्रस्तावित किया गया है कि इन संस्थाओं को और कार्यो को जिला बोर्ड के दायित्वो से अलग कर दिया जाए और उन्हें पंचायत संघ-परिषदो के अधिकार क्षेत्र मे दे दिया जाए।

दूसरा-उत्पादक सामग्रियों के विकास के लिए निर्धारित किये गये विकास खण्डों के विभिन्न कदम इस समय अधिकृत अभिकरणों के माध्यम से होता है, जो समुदाय विकास योजना की, राष्ट्रीय विस्तरण सेवा योजना के अनुवर्तक हैं, परन्तु जिला बोर्ड एवं पंचायती संघों से संबंधित नहीं है। यह विधेयक उनकी अनुमति और निश्चित की गई धाराओ एवं शर्तो के अधीन रहकर समग्र परियोजना को कार्यान्वित करने का दायित्व पंचायत संघ परिषद को सोपने की सत्ता देता है।

इस समय, जिला बोर्ड एवं पंचायतों को दिये गये दायित्वों की कानूनी विशेषताएँ अधिक मात्रा में है। अब यह प्रस्तावित किया गया है कि इन दायित्वों में ऐसा परिवर्तन किया जाए जिससे पुनरावर्तन दूर हो कर पंचायत संघ परिषद तथा पंचायत के दायित्वों के अपने अपने क्षेत्र चौकसी के साथ अंकित किये जाएँ।

दायित्वों के पुन: बँटवारे का महत्त्वपूर्ण नतीजा रहेगा कि पंचायत संघ परिषद को आवश्यक प्राथमिक शिक्षा के समग्र क्षेत्र का अविभाजित दायित्व सौंपा जाएगा। वह परिषद (इस समय जिला बोर्ड, पंचायतें और सरकारी विभागों द्वारा संचालित है)

केवल सार्वजनिक प्राथमिक शिक्षा का सुनियोजित विकास निःशुल्क एवं अनिवार्य करने का सारा दायित्व प्रत्येक विकास इकाई एवं संबंधित पंचायत संघ परिषद का रहेगा। यह दायित्व केवल सरकारी स्कूलों के ही नहीं तो अनुदान प्राप्त निजी विद्यालयों के सन्दर्भ में भी रहेगा।

सुदीर्घ समय से शिकायत रही है कि जिला बोर्ड एवं पंचायतों को दिये जा रहे आर्थिक ससाधन अपर्याप्त हैं। स्थानीय कर और आर्थिक प्रबंध की सारी परियोजनाओं में तथा प्राथमिक शिक्षा और अन्य उद्देशों के लिये सरकारी अनुदानों में पुनर्विचार करते हुए संशोधन किये गये हैं। पंचायत संघ परिषद एवं पंचायतों के लिए आवश्यक अधिक आर्थिक संसाधनों का अनुमान संशोधित बँटवारे के संदर्भ में तैयार किया गया है। इन अनुमानित आवश्यकताओं के संदर्भ में पर्याप्त संसाधन प्राप्त होने की दृष्टि से स्थानीय करों की नई पद्धति का अंकन किया गया है।

नई रचना के अनुसार प्रशासन एक दिन में कार्यान्वित नहीं किया जा सकता। अतः इस विधेयक में यह प्रावधान किया गया है कि जिन गाँवो में पंचायतें नहीं है उनमें पंचायतों का आरंभ करने के लिए और राज्य के सभी विकास-खण्डों में पंचायत संघ परिषद की स्थापना के लिए, २ अक्तूबर १९६९ के लक्ष्यांक के साथ, निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार विकास खण्डों में समय समय पर नया कानून प्रस्तुत किया जाए। प्रावधान यह भी किया गया है कि जब तक पंचायत संघ प्रशासन का दायित्व ले नहीं लेता है तब तक इस समय जो लोग बोर्ड का दायित्व उठा रहे हैं वे विशेष अधिकारी के रूप में यह दायित्व निभायेंगे।

दोनों सदनों के प्रस्ताव से गठित विधि मण्डल समिति द्वारा स्थानीय संचालन से संबंधित श्वेतपत्र की जाँच के परिणाम स्वरूप सर्वसम्मति से निष्पन्न सभी परिवर्तनों को इस विधेयक में समाविष्ट किया गया है। स्थानीय कर और अर्थव्यवस्था से संबंधित प्रस्ताव कानून समिति द्वारा नियुक्त आर्थिक उपसमिति ने तैयार किये हैं और बाद में प्रधान समिति ने उसका पुनर्निरीक्षण करते हुए उसे पारित किया है।

विधेयक का प्रारूप इस प्रकार तैयार किया गया है कि उसमें मद्रास ग्राम पंचायत कानून १९५० एवं मद्रास जिला बोर्ड कानून १९२० के स्थान पर स्वनिर्भर कानून का प्रावधान हो जाए। इसके कारण दो कानूनों की कई धाराओं को बिना परिवर्तित किये विधेयक में पुनः प्रस्तुत किया गया है।

पूरे राज्य में १२,५०० ग्राम पंचायतों की रचना का कार्य १९६० में पूर्ण किया गया। समुदाय विकास और राष्ट्रीय विस्तरण सेवा खण्डों को पंचायत संघ परिषदों में

परिवर्तित कर देने का कार्यक्रम भी अक्तूबर १९६९ में क्रमशः निपटाया गया। पूरे राज्य के ग्रामीण क्षेत्र को ३७५ पंचायत संघों में विभाजित कर दिया गया है और उन सबको बजट बॉटने के संदर्भ मे एक समान माना गया है - 'छाया', स्तर १ और 'स्तर २' के खण्डों के आधार पर किसी प्रकार का भेद नहीं किया गया है। प्रत्येक संघ औसतन ३४ ग्राम पंचायतों का बना हुआ है और एक-दो नगर पंचायतों को उसमें समाविष्ट किया गया है। पंचायतों के अध्यक्ष पंचायत संघ परिषद की रचना करते हैं और उसमें तीन तक महिला सदस्य और तीन तक अनुसूचित जाति के सदस्यों और जहाँ आवश्यकता प्रतीत हो वहाँ अनुसूचित जनजाति के प्रतिनिधियों को समाविष्ट करने का प्रावधान है। प्रचलित समुदाय विकास एवं राष्ट्रीय विस्तरण सेवा के लगभग २० कर्मचारियों के अलावा खण्ड विकास अधिकारी और सरकार से सीधा वेतन प्राप्त करनेवाले ग्रामसेवकों में से संघ के अपने कुछ कर्मचारी और क्षेत्रीय कर्मचारी भी हैं। इसके साथ ही संघ के विद्यालयों मे लगभग २०० से ३०० प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों को नियुक्त किया गया है। निजी अनुदान प्राप्त उच्च प्राथमिक और प्राथमिक विद्यालयों को शिक्षा अनुदान दिया जाता है। तिरुनेलवेली जैसे कुछ क्षेत्रों में, पंचायत संघों के द्वारा प्रत्यक्ष रूप से कार्यरत विद्यालयों की तुलना में सहायता प्राप्त करनेवाले विद्यालय और अध्यापकों की संख्या बहुत अधिक हो जाती है। अन्य कुछ क्षेत्रों मे निजी विद्यालयों की संख्या बहुत सीमीत है।

सन् १९५८ में पारित किये गए अन्य कानून के अनुसार, बारह जिलों में २१ जिला विकास समितियों का गठन हुआ था। ये समितियाँ परामर्शक का दायित्व निभाती थीं और उनके पास निजी तौर पर अपना आर्थिक प्रावधान नहीं था, इसलिए प्रत्यक्ष रूप से समितियों के पास न कोई कर्मचारी था न ही कार्यालय। फिर भी जिला स्तर पर बडी संख्या में कर्मचारी समूह पंचायत विकास और कतिपय विकास जिलों में निजी सहाय के अध्यक्ष पद पर पंचायती विकास के लिए वह समूह जिलाधीश के अधीन था। वह निजी सहायक (पंचायत विकास) सामान्य रूप से खण्ड विकास अधिकारी या उसके समान पद के विकास क्षेत्र के अनुभव प्राप्त अधिकारी के रूप में उन्होंने दायित्व निभाया होता है। इसी प्रकार उपजिला स्तर पर, पर्याप्त संख्या में (विभागीय पंचायत अधिकारी समेत) कर्मचारी रहते हैं जो राजस्व विभागीय अधिकारी या (जहाँ ऐसा पद विद्यमान है वहाँ आई. ए. एस. डिप्टी जिलाधीश) अपने अधिकार क्षेत्र में पंचायत संघों के निरीक्षक का दायित्व निभाते हैं। पंचायत संघों की संख्या विभिन्न उपविभागों में कम या ज्यादा रहती है, जिसकी औसत नौ है। बार बार कही जा रही 'मित्र, दार्शनिक

और मार्गदर्शक' की उक्ति मद्रास पंचायत पद्धति जो राजस्व विभागीय अधिकारी की भूमिका को समुचित रुप से लागू होती है। वे सामान्य जाँच का कार्य करने के साथ साथ तहसील के प्रमुख कार्यालय पर संघ के वरिष्ठ कर्मचारियों की प्रतिमाह होनेवाली बैठकों में अध्यक्ष का दायित्व निभाते हैं और अपने कार्यालय में होनेवाली बैठकों में भी ने अध्यक्ष होते हैं। जिला अधिकारियों की तरह जिला विकास समिति की द्विमासिक बैठक में उनकी उपस्थित अपेक्षित होती है। उस क्षेत्र के सभी अध्यक्ष, नगरपालिका के अध्यक्ष, विधानसभा, विधान परिषद, संसद और राज्यसभा के संबंधित सदस्य जिला विकास समिति में समानरूप से सदस्य बने रहते हैं। उसमें जिलाधीश अध्यक्ष होते है।

पंचायत संघ समितियों को परेशान करनेवाली प्रमुख समस्या सामग्री का अभाव है यह कहना समुचित नहीं है। ऐसा भी नहीं है कि उनको दिये गये कार्य एवं प्रतिबद्धताओं के लिए पर्याप्त या विपुल सामग्री है। ऐसे संघों की संख्या अधिक थी, अर्थात् १९६३-६४ में १४६ और १९६४-६५ में १२६ जिनके वर्षान्त हिसाब में घाटा था। अधिकांश ये घाटे करते ढांचे के वर्गीकरण एवं उसे कार्यान्वित करने के तरीके के कारण थे और आसानी से उसमें सुधार किया जा सकता था। उधर २३ संघों के बजट में शेष जमाराशि है, जो रु. १ लाख से अधिक है और ५६ संघों ने १९६४-६५ में रु. ५०,००० से १,००,००० की जमाराशि शेष दर्शाइ है। कई संघों की वैयक्तिक जमाराशि १९६५ मे रु. ५,००,००० से ऊपर थी। संघ का सामान्य वार्षिक बजट रु. ६ से ८ लाख का होता है। इसमें लगभग आधा (या अधिक) प्राथमिक शिक्षा के लिए दिया जाता है, २० प्रतिशत भाग ग्रामीण कार्य और पंचायत संघ की सड़कों की देखभाल के लिए रहता है। लगभग ३ से ५ प्रतिशत राशि संचालन (जिसमें विस्तरण कर्मचारीगण के वेतन का समावेश नहीं होता है, वह इससे दुगुनी राशि का रहता है और उसका भुगतान सरकार की और से सीधा किया जाता है।), लगभग ५ से १० प्रतिशत स्वास्थ्य, कल्याण, सामाजिक शिक्षा के लिए, लगभग ८ प्रतिशत विद्यालय भोजन कार्यक्रम के लिए और ८ से १० प्रतिशत कृषि, पशुपालन, मत्स्यउद्योग और ग्रामीण उद्योग, अर्थात् राष्ट्रीय विस्तरण सेवा के अंतर्गत केन्द्रीय पहचाने जानेवाले समुदाय विकास के लिये होता है।इसे उत्पादन फंड बजट के तहत माना जाता है। संपूर्ण बजट में सरकारी अनुदान का भाग लगभग ७५ प्रतिशत होता है। जब कि २५ प्रतिशत आय पंचायत संघों ने स्वयं, या सरकार द्वारा उनके नाम से घोषित कर से प्राप्त राशि या अन्य सामान्य रास्ते से प्राप्त की हुई होती है। ३७५ संघों के लिए

१९६१-६२ से १९६५-६६ तक का सपूर्ण परियोजना का कुल बजट रु. १०० करोड़, ग्राम पंचायतों का रु. ३७ करोड और ४०० नगर पंचायतों का रु. ५ करोड है। ग्राम पंचायतों मे बजट अधिक आत्मनिर्भर है और उनकी स्वयं की या उनके द्वारा स्वयं जमा की गई कर की स्पष्ट आय उनकी कुल आय के ५० प्रतिशत से कुछ अधिक है।

ऐसा होते हुए भी रु. ६ से ८ लाख का बजट, पंचायत संघों के अपने आवश्यक संसाधन विषयक उनकी निश्चित्त परियोजनाएँ और कार्यक्रमों के लिए व्यय करने की अवधारणावाले धन के संदर्भ में अधिक स्वातत्र्य या अवसर प्रदान नहीं करता है। इनमें अधिकांश भाग अर्थात् ६० से ७० प्रतिशत वेतन पर व्यय होता है। शेष धन भी विभिन्न कार्य (सड़कों की देखभाल, गाँवों के रास्ते, जल संचय, विद्यालय की मध्याह्न भोजन परियोजना जैसे कार्यक्रम के लिए वितरित किया जाता है। इसके लिए कार्यक्रमों का उपयोगिता मूल्य देखते हुए विभिन्न स्तरीय प्रशासनिक एवं तकनिकी उच अधिकारियों के द्वारा सूक्ष्म निरीक्षण किया जाता है। इसके कारण विभिन्न सफलताओं का पंचायत संघ परिषद और उसके कर्मचारियों को उपलब्ध संसाधनो के उपयोग के साथ कोई सम्बन्ध नहीं रहता। उपयोग का तरीका निश्चित और तकनिकी स्पष्ट मार्गदर्शन होने के कारण, केवल इतनी ही सावधानी रखनी होती हैं कि उसकी ठीक देखभाल हो और धन का फिजूल व्यय न हो। फिर भी, ऐसी देखभाल रखने के परिणामस्वरुप उसमें आम तौर पर व्यय होनेवाले समूह में कभी भी १७ से २० प्रतिशत परिणाम से अधिक अन्तर नहीं पड़ता है। इसके उपरांत रु. २ लाख का व्यय करते हुए रु. २.२० लाख या रु. २.४० लाख का कार्य निपटाना संभव होने पर भी वृद्धि और विकास के ढाँचे में किसी प्रकार का अन्तर नही पडता है। ऐसी बात मूलतः आवश्यकत होते हुए भी विकास के संदर्भ में शायद ही महत्त्व रखती है।

इसलिए, पंचायत संघ के दायित्वों में सबसे बडा योगदान तो कर्मचारियों की तकनिकी कार्यक्षमता का अच्छा उपयोग, पंचायत संघ परिपद के सदस्यों की आयोजन तथा निर्णयशक्ति की गुणवत्ता एवं कर्मचारियों के तकनिकी कौशल्य को आकर्षित करने की संभावना आदि पर निर्भर करता है। आज जिस रूप में बचतों का प्रबंध हुआ है इसके अनुसार शायद ही अधिकर की संभावना रहती है। कर्मचारी और निर्वाचित सदस्य आज उस संदर्भ मे मकडी के जाले में फँसे हुए है। वह जाला अर्थात् अपने उचाधिकारी- जिन में से कुछ अधिकारियों की आवभगत करने के सिवाय शायद ही उनके पास जाना पड़ता है - इतना ही नहीं वे सब गलत कार्यों के कीचड से सने हुए होते है इसलिए उचाधिकारियों से बहुत भयभीत रहते हैं। ऐसी सोच बनाने के लिए न

तो समय है न ही अवसर कि कौन क्या करता है। इस स्थिति में स्पष्ट उद्देश्यों को संपन्न करने के लिए मात्र ढूंढने का तो प्रश्न ही नहीं उठता है। पंचायत संघों द्वारा विधायक या निषेधात्मक दोनों पहलुओं में आज वास्तव में उचित मात्रा में संसाधनों को कार्यरत करने के कारण तथा राज्य एवं केन्द्र सरकार के अधिकारियों द्वारा किये गये प्रावधान और सूचनाओं के कारण परिणाम प्रभावित होता है।

ऐसा नहीं है कि निर्वाचित समितियाँ बिल्कुल निष्क्रिय रहती है। गाँव का रास्ता या विद्यालय का भवन कहाँ बनाना या कुँआ कहाँ खोदना इसका निर्णय वे अवश्य ले सकते हैं। पंचायती संघ परिषदें विद्यालय के शिक्षकों की और लिपिक आदि की नियुक्ति के विषय में उनकी अभिशंसा पर निर्णय भी ले सकती हैं। इसके अलावा वे प्रसूतिकेन्द्र (१०,००० की जनसंख्या के लिए एक) एवं चिकित्सालय के लिए स्थान के विषय में निर्णय ले सकती हैं। वे निश्चित रूप से यह दायित्व निभाती हैं। इनमें कई बातों में (कम से कम तकनिकी दृष्टि से) विशेषरूप से खण्ड विकास एवं विस्तरण अधिकारी वर्ग अपनी मनमानी करवा सकता है। निदर्शन खण्ड (जिस के लिए उसके पास वार्षिक रु. ४/- की राशि रहती है।) कहाँ बन सकेगा, निदर्शन कार्य (जिसके लिए उसके पास वार्षिक रु. १२०/- की राशि रहती है) कहाँ आरम्भ करना इस का निर्णय ग्रामसेवक कर सकता है। ग्रामसेवक के रूप में किसकी अभिशंसा या चयन करना और वितरित किये गये संशोधित बीज पर प्रति माह रु. २/- की राहत किसे देना, रु. ३/- पाने के लिए खाद का गड्ढा खोदने के लिए किसे प्रोत्साहित करना आदि कई बातों का निर्णय ग्रामसेवक को करना पड़ता है। इसी प्रकार दूसरे दो ग्रामसेवक, प्रधान सेविका, विस्तरण अधिकारी (उद्योग), विस्तरण अधिकारी (पशुपालन), विस्तरण अधिकारी (कृषि) आदि बातों में भी उच्चाधिकारी अपने कनिष्ठ अधिकारियों पर नजर रखते हैं। बैठकों के लिए समय की पाबंदी और रीटर्न, वृतांत, दिनचर्या एवं जानकारी के लिए फुटकर निवेदन निरंतर आया करते हैं और उस पर ध्यान देना होता है। यह चित्र शायद संघ के काम में कुछ संशोधन और कुछ परिवर्तन का निर्देश करता है, परन्तु संघ के लोगों का अधिकांश कार्य सूचनाओं का पालन करना, पैदल चलकर किये जानेवाले दायित्व निभाना या कार्यालय या कक्षाकक्षों के दैनिक कार्यों को करते रहना है। साथ ही कोई कार्य रुका न रहे, या उस पर रोक न लगे, किसी तकनिकी, प्रबंधकीय, अनुशासनिक या निरीक्षक स्तर के उच्चाधिकारियों की ओर से किसी प्रकार की क्षति न निकाली जाए इसके प्रति सतर्क रहना है।

यह आवश्यक नहीं कि ऐसी स्थिति अवांछनीय ही हो। सही अर्थ में अगर कुछ

प्राथमिक अवधारणाएँ ओर निर्णयों के संदर्भ में सब सर्वसम्मत हो जाते हैं तो, यही केवल ऐसा रास्ता है जिसके द्वारा किसी के प्रतिनिधि अपने क्षेत्र में कार्यरत होंगे। परन्तु तो फिर आज के निर्वाचित बोझिल ढाँचे की आवश्यकता ही नहीं रहेगी - जो स्वयं तो अधिक व्ययशील नहीं है फिर भी - अनिवार्यतया अधिक बोझिल है। क्षेत्र में कार्यरत व्यक्ति, आवश्यकता पड़ने पर संबंधित लोगों के साथ विचारविमर्श कर सके। यह किसी भी कार्य को करने के लिए किसी भी स्थान पर पूर्वशर्त होती है। इसके लिए कानूनी मान्यता प्राप्त परिषदें और समितियो का गठन आवश्यक नहीं है। परामर्श या विचारविमर्श के स्तर पर गठित समूह यह दायित्व अच्छी तरह निभा सकते हैं और समूह तथा कार्यरत लोगों के दायित्वो के लिए अभिप्राय की स्वतंत्रता रख सकते हैं।

हर इकाई की समस्याओं और आवश्यकताओं की ओर व्यक्तिगत रूप से ध्यान देने वाले माध्यमो की सूचना और निर्देश देने की क्षमता ही केन्द्रीय सूचना के तहत कार्य करने की महती आवश्यकता है।

इस बात की अपेक्षा नहीं की जा सकती है। शायद अनिर्दिष्ट सारा प्रयोजन तो तकनिकी लोगों को जनप्रतिनिधियों के साथ जोड़ने का ही था। किसी कारण से ऐसा प्रतीत हो कि इन समूहों पर बुनियादी निर्णय लेने का दायित्व सौंपना संभव नहीं है, तब ऐसे निर्णय दूसरे स्थान पर लेने चाहिए। ऐसे निर्णय राज्य स्तर पर या अन्य प्रादेशिक स्तर पर लिये जा सकते हैं, परन्तु वह प्रत्येक इकाइ को वैयक्तिक स्तर पर लेने चाहिए। प्रत्येक इकाई को ध्यान में रखना चाहिए कि किस तरह और किस सीमा तक वह नियत पद्धति से, योजनाकीय पद्धति से भिन्न प्रदर्शित किया जा सके और उसके परिणामों का दायित्व परियोजना एवं ढाँचे से अनुलक्षित प्रबंध करने के स्तर की बनी रहे।

अगर यह स्थिति सामाजिक, राजकीय या अन्य कारणों को लेकर वांछनीय नहीं न हो, तब समस्या खड़ी होती है कि क्या इस समय किये गए प्रबंधों में किसी प्रकार की हानि है ? प्रश्न को इस तरह प्रस्तुत किया जाए।

इस समय के विभिन्न विषयों में संसाधनो के बँटवारे का ढंग-जो संभवत: प्रवर्तमान ढाँचे में अन्य व्यवस्था का अनुसरण न कर सके - कर्मचारीगण के प्रबंध के साथ बहुत सीमित संबंध रखता है। व्यावहारिक रूप से सारे विस्तरण कर्मचारी (खण्ड विकास अधिकारी, अब जिनका दायित्व प्राथमिक शिक्षा के निरीक्षण का है, ऐसे सामाजिक शिक्षा अधिकारी और तीन महिला कार्यकर्ता) इस समय वार्षिक रु. ४०,००० से रु. ५०,००० (जो खण्ड बजट के १० प्रतिशत से कम) निर्धारित किये गये

उपयोगों के साथ संलग्न है। चाहे कुछ भी कहें उन लोगों की लागत संघ की अन्य सभी बातो पर पर्दा डाल देती है। नतीजा यह निकला कि एक ओर सीमित संसाधनों का प्रबंध करने मे कर्मचारियों की शक्ति का दुर्व्यय होता है, जब कि दूसरी ओर बड़े संसाधनों के उपयोग की ओर ध्यान और इसके लिए मार्गदर्शन बहुत कम मिलता है। प्राथमिक विद्यालय और पंचायतें बुरी तरह प्रभावित रहती हैं। एक अकेला विस्तरण अधिकारी प्रत्येक संघ में ८,०००-१०,००० छात्र संख्या युक्त साठ से सत्तर विद्यालयों में विस्तरण कार्य बहुत सीमित मात्रा में कर सकता हैं। यह बात ग्राम पंचायतों के संदर्भ में भी सही है। प्रवर्तमान विस्तरण अधिकारी (पंचायत) केवल हिसाबों का लेखा परीक्षक है। जहाँ पर भी संघ में साठ से अधिक पंचायतें है वहाँ अलग से व्यक्ति का प्रबध किया गया है, परन्तु दायित्व वही है और क्षेत्र दो व्यक्तियों में बाँटा गया है। प्रवर्तमान विस्तरण अधिकारी (पंचायत) उसे दिये गये दायित्व की प्रकृति के कारण सौंपा जाता है। उसमें न तो उसके प्रशिक्षण और न ही उसके सामर्थ्य पर ध्यान दिया जाता है। ऐसे में वह आवश्यकता के अनुसार ग्रामपंचायतों की वृद्धि और शक्ति के संदर्भ में कुछ भी करने की स्थिति में नहीं है। इससे तो, अपने दायित्वों में वह निर्बल सिद्ध होगा, अनावश्यक रूप से सतर्क एवं भयभीत रहेगा। आगे चलकर ऐसा भी हो सकता है कि हिसाबों की, कार्यवाही बही की और अन्य विभिन्न कागजात या दस्तावेज जिन्हें उसे सुरक्षित रखना है उन्हें निर्णित कर देने की या गलत सिद्ध करने की आदत का शिकार बना देगा। वास्तव मे कुछ परिस्थितियों में उसे पंचायती अध्यक्ष पर चुस्त निगरानी रखनेवाले व्यक्ति का कार्य करना पड़ता है।

पंचायत संघ परिषद या उसके अधिकारी कुछ अच्छा कार्य करने के लिए उत्सुक होते हैं। उनकी इस प्रकार की भावना पर कर्मचारियों की यह विपरीत कार्यनीति कुठाराघात करती है। अपने अपने व्यवसाय में उन्होंने जो प्रशिक्षण पाया होता है उसे दूर रखकर-जो विशेष हरी पैठवाली नहीं होती-यूनियनों में से एक विस्तरण व्यक्ति को अन्य के साथ परिवर्तित किया जा सकता है, भले ही वह अस्थायी उद्देश्यों के लिए हो। फिर भी, कोई यूनियन इस संदर्भ में कोई निर्णय नहीं ले सकता है। कर्मचारीगण को किसी निश्चित दायित्व ढर्रे ढर्रे मे बाँध दिया जाता है। बाद में किसी कारण से किसी निश्चित क्षेत्र में अधिक कुछ करने का अवसर न रहता हो तो उसे अपना समय आलसी बनकर बिताना पड़ता है। परिणाम यह होता है कि प्रत्यक्ष रूप से उसी ढाँचे में कार्यरत अन्य सभी पर उसका प्रभाव पड़ता है। आजकल ऐसी स्थिति अधिक देखी जाती है।

अगर विस्तरण व्यक्ति को अपनी कुशलता को छोड अन्य कुछ भी करने का अवसर प्राप्त न होता हो तो अधिक अच्छी व्यवस्था होने से स्वयं के लिए निर्धारित सूची में दर्शाये गये कार्य करने की स्वतंत्रता रहेगी। स्वयं द्वारा प्राप्त की गई सफलता पर ध्यान केन्द्रित करते हुए स्वयं के विश्वास पर छोड न दिया जाता हो तो उसे ऐसी पंचायतों के अधिकारक्षेत्र में नियुक्त करना चाहिए जहाँ उसकी आवश्यकता हो और उसके कौशल्य से जो कुछ लाभ लिया जा सकता हो इसका निर्णय उन पर छोड़ देना चाहिए, जो उसे दायित्व सौपने के लिए स्वतंत्र हो। ऐसे अवसर पर पंचायती सघ या पंचायत को किसी विशेष विस्तार अधिकारी की तकनिकी सहायता की आवश्यकता हो तब वह संबंधित उच्चाधिकारी को संपर्क कर सके। प्रवर्तमान ढाँचे में संबंधित प्रत्येक जानकार एवं कुशल व्यक्ति को निष्क्रिय बना देने का दुर्गुण निहित है।

पंचायत संघ में और कृषि संग्रहालय में लगभग दो सौ बहियाँ रखी जाती हैं। इसके साथ ही प्रत्येक संघ, प्रति सप्ताह, पखवाडे में, महीने में या तीन महीने में अपने उच्चाधिकारियों को और उनके उच्चाधिकारियों को सौ से अधिक वृत्तांत भेजते हैं। साथ ही, ग्रामसेवक कुछ संख्या में अपनी बहियाँ रखता है और अपनी विभिन्न गतिविधियों के और कार्यकलापों के वृत्तांत भेजता रहता है। फिर भी सीमित रूप से पंचायत संघो के बजट या खर्च आय के विस्तृत ब्यौरे को छोड अन्य किसी वृत्तांत से संघ के किसी निश्चित क्षेत्र में लगभग १०० वर्ग मील के संघ के अपने क्षेत्र में चल रही कार्यवाही की छवि प्रकट नहीं होती है। छोटी इकाइयाँ, पचायतें, आश्रम एवं वैयक्तिक स्तर पर लाभ प्राप्त करनेवालों में हो रही गतिविधियों के विषय में जानकारी का अभाव दर्शानेवाला चित्र निराशा उत्पन्न करनेवाला है। जिसके बारे में सभी लोग बहुत चर्चा करते रहते हैं ऐसे कृपिविकास के क्षेत्र में भी, तंजावुर के घनिष्ठ कृषि-कार्यक्रमों के निश्चित क्षेत्रों को छोड शायद, अन्य किसी सघ या पंचायतें एक बही या आलेख में कृषि विषयक विकास के क्षेत्र में क्या स्थिति है यह नहीं बता पाएगा। कुल मिलाकर कोई भी पंचायत या आश्रम के समान छोटे क्षेत्र की बात करने से कुछ हाथ नहीं लगेगा। उसकी कारवाई को दर्शाते हुए भिन्न-भिन्न वस्तु की बिक्री या बाँटने का विस्तृत वृत्तांत और विभिन्न पंचायतों को दी गई बातों की अलग से बहियाँ सुरक्षित रखी गई हैं। परन्तु कोई व्यक्ति किसी तरह का वृत्तांत, कोई फाईल, चार्ट, आकृति और बहियाँ आदि सभी चीजों को एक साथ नहीं दिखा पाएगा। विभिन्न प्रकार की सहायता जिसे दी गई थी ऐसा कोई भी कृषि-परिवार ऐसे निवेदन नहीं दे पाएँगा। योजना और विकास की इतनी सारी बातें होती रही हैं। फिर भी ऐसी प्राथमिक बातों का निदर्शन के स्तर पर विचार तक नहीं

किया गया है, जो सामुदायिक विकास और राष्ट्रीय विस्तार सेवा के कार्यों की कमजोर, निराशा पैदा करनेवाली छवि है। ऐसा नहीं है कि विस्तरण अधिकारी और सचिव का कर्मचारीगण इन बातों को समझता नहीं है। उनमें से कई लोग इसे समझते ही हैं, परन्तु जो उनके लिए निश्चत नहीं किया गया है ऐसा कुछ भी नहीं करने का उनका व्यवहार बन गया है। परिस्थिति इस सीमा तक बिगडी हुई है कि स्वयं को जो कार्य करने की सूचना नहीं दी गई है उसे करने का उनमे साहस ही नहीं है। उच्च तकनिकी अधिकारी कई महत्त्वपूण कार्यकलापों में लगे हुए है। उनके पास ऐसा सोचने का या सूचित करने का समय ही नहीं है कि ऐसे विचार या प्रस्तुति हुई होती तो उनके कनिष्ठ कार्यकर्ता जो कार्य कर रहे हैं, जो सफलता उन्होंने प्राप्त की है और जो हानि उन्हें दूर करनी है उसके बारे में वे सोच सकें।

ग्रामसेवकों के वृतांत भी इसी प्रकार हैं। उनकी और ध्यान देने का और ऐसा परिश्रम करने से होनेवाले लाभ की उन्हें जानकारी देने का किसी के पास समय ही नहीं होता। परिणामस्वरूप स्वयं जिसे संभालकर रखते हैं वे बहुत कम उपयोगी होते हैं और कई बार वह आधार देने के लिए उपयोगी सिद्ध नहीं होता। उनमें से अधिकांश अन्यों की नकल करते हैं और प्रत्येक नकल में हानि की मात्रा बढती जाती है।

विस्तरण कर्मचारीगण को दैनन्दिनी लिखनी पड़ती है और उसकी नकलें उच्चाधिकारी को देखने के लिए देनी पड़ती है। फिर भी सारे कर्मकांड का वास्तव में क्या अर्थ है इसके बारे मे किसीने कभी सोचा नहीं है। कहा जाता है कि ऐसी लिखित दैनन्दिनी अविश्वसनीय होती है। उसके लिखनेवालों की गतिविधियो का सही विवरण नहीं दे पाती। परन्तु ऐसा कहा जाता है कि संघ के लोग, नगरपालिका के सदस्य और कमिशनर अच्छी तरह जानते हैं कि संघ में प्रत्येक अधिकारी और ग्रामसेवक वास्तव में क्या कर रहा है। अगर स्थिति ऐसी ही हो और टिप्पणियों की पोथी विश्वसनीय न हो तो उन्हें क्यों रखना चाहिए ? अगर उनके द्वारा कोई उद्देश्य सिद्ध नहीं होता है तो उस प्रक्रिया को बंद कर देना चाहिए। फिर भी, ये टिप्पणियाँ-दैनन्दिनी-भले ही काल्पनिक हो तो भी - अन्य बातों के लिए उपयोग में ली जाए तो कुछ समय के लिए तो, विस्तरण के अधिकारियों के प्रत्येक पंचायत, ग्राम या आश्रम के साथ बने संपर्क का स्वरूप और हो रही कारवाई की सही छवि वह दिखा सकेगी। यह कोई कठिन कार्य नहीं है। उसका उद्देश्य किसी व्यक्ति की पोल खोलने तक सीमित नहीं होना चाहिए। विवरणपत्रों की सामग्री के उपयोग का उद्देश्य विस्तारकार्य की उपयोगिता को समझने के लिए रहता है और इससे संबंधित कार्य करनेवाले उस पर अधिक ध्यान

केन्द्रित करते हैं कि कौनसा क्षेत्र अधिक अच्छा परिणाम दे सकने की क्षमता रखता है तो आनेवाले वर्ष के लिए अनभुव के आधार पर पूर्व तैयारी की जा सकती है। नि:संदेह इसके आधार पर ऐसा मान लिया जाता है कि गाँव और पंचायत के विस्तरण कर्मचारियों के होने से कोई उद्देश्य सिद्ध होता है। शायद ऐसी बातों के लिए किसी प्रकार की चिंता करने की आवश्यकता भी किसी को प्रतीत नहीं होती।

इस समय विस्तरण अधिकारी (उद्योग) और संघ इन्जिनियर से संपर्क अधिकांश पंचायत में होता है जहाँ वे निश्चित दायित्व उठाते हैं। किसी भी वर्ष में अधिक से अधिक दस गाँवो में उद्योग के संदर्भ मे विस्तरण अधिकारी बन सकते हैं और कुल मिलाकर जितनी पंचायतें हो उसकी आधी संख्या की पंचायतों के लिए वे इन्जिनीयर का दायित्व उठा सकते हैं। विस्तरण अधिकारी (कृषि) और विस्तरण अधिकारी (पशुपालन) बड़ी संख्या में गाँव और पंचायतों मे कार्य कर सकते हैं, परन्तु सभी जगह वे शायद ही पहुँच सकेंगे। समान्यरूप से वे वर्ष में दो या तीन बार पंचायत में जा पाते हैं। विस्तरण अधिकारी (पंचायत) के पास त्रैमासिक आयव्यय निरीक्षण और वर्ष के अंत में अन्तिम आयव्यय निरीक्षण करवाना आवश्यक होता है। वे सामान्य रूप से वर्ष मे दो या तीन बार ही पंचायत में जा पाते हैं। अपेक्षित यह रहता है कि विस्तरण अधिकारी (शिक्षा) पंचायत संघों के विद्यालयों में बार बार जायें। यह प्रतीत होता है कि अधिकांश विद्यालयों मे वे वर्ष में दो तीन बार ही जा पाते हैं, परन्तु सभी विद्यालयों में नहीं जा पाते। स्वाभाविक है कि प्रधान सेविका और ग्रामसेवक इससे सीमित दायित्व उठा पाएँगे। कुछ गाँव और पंचायतों के साथ उनका संपर्क अच्छा रहता है, परन्तु अन्यों के साथ बहुत सीमित। ये दोनों सामाजिक अधिकारी या तो उन्हें हुई राजनीतिक हानि को भरपाई करने के दृष्टि से या उनके निकट परिजनों के कारण सेवा मे लिए गए होते हैं। उनका संपर्क शायद अधिक होता है। परन्तु उनका कार्य वास्तव में साहित्य की बिक्री करनेवाले या समारोहों के संचालनकर्त्ता या निर्दिष्ट दिन या सप्ताह के समारोहों का आयोजन करनेवाले लोगों जैसा ही रहता है। उसके अतिरिक्त शायद ही कोई दायित्व उनके पर रहता है। गाँवों और पंचायतों के साथ आयुक्त का संपर्क अधिक रहता है। वर्ष में वे अनेक गाँवों में छ: से अधिक बार जाते हैं, परन्तु कुछ में तो एक बार भी नहीं जाते। विस्तरण कर्मचारियो में शायद ही कोई ऐसा व्यक्ति होगा जो वर्ष में कम से कम एक बार प्रत्येक संघ के सभी गाँव और आश्रमों में गया हो। उनका यह जाना वास्तव में देखा जाए तो ऊपरी-दिखावे के रूप में ही होता है, कभी कभी तो कुछ मिनटों की भेंट ही होती है। वैसे ग्रामसेवकों के लिए अपेक्षित रहता है

कि वह संबंधित गाँव का निवासी बनकर रहे, और होता भी वैसा ही है। वही एक ऐसा व्यक्ति है जो क्षेत्र के सभी गाँवों में जाता है। वह परिवार के प्रमुख व्यक्तियों में से लगभग १० से २० प्रतिशत तक मेलजोल रखता है।

समुदाय विकास और राष्ट्रीय विस्तरण सेवा के विचार का उद्भव और उसकी जानकारी तय करने का कार्य १९४० के पश्चात् के और १९५० से पूर्व के वर्षों में पूर्ण कर दिया गया था। प्रशिक्षित कर्मचारी और उन पर लगाये गये आर्थिक संसाधनों की वृद्धि के साथ आवृत्त क्षेत्र अधिक फैला है, फिर भी मूलत: १९५३ से आरंभ कर परियोजनाओं के विषय में बहुत कम परिवर्तन हुआ है। दूसरी ओर समुदाय विकास और राष्ट्रीय विस्तरण सेवा के लिए कर्मचारी तथा धन का प्रावधान सुनियोजित ढंग से कम हुआ है। देश के सभी भागों में ऐसा ही हुआ है, क्योंकि कर्मचारीगण और आर्थिक ढाँचा तय करने के संदर्भ में समुदाय आधारभूत निर्णय भारत सरकार के सामुदाय विकास मंत्री (पहले सामुदायिक प्रकल्प प्रशासन) द्वारा लिये जाते थे। समुदाय विकास और राष्ट्रीय सेवा विस्तरण खण्ड की आधारभूत इकाई को संसाधन पहुँचाना जारी रखा गया है परन्तु उस बँटवारे को देखते हुए, ऐसा अनुमान लगाया जा सकता है कि यह भारत के शिथिल हो गये कार्यक्रमों में से एक है। राज्य या सम्पूर्ण देश के लिए हुए बँटवारे के संदर्भ में सचाई को छुपाया जाता है। वास्तव में उस पर प्रकाश डालना चाहिए। इकाई के स्तर पर इस प्रश्न को समझने की आवश्यकता है।

शिथिलता दो प्रकार की है। अत्यन्त आश्चर्यजनक लग सकता है फिर भी छवि उभरती है कि कार्यक्रमो की अपनी सफलता के कारण ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा एवं विजली के प्रबंध के कारण अन्य बड़े परिवर्तन, जैसे कि जानकारी के आदानप्रदान की अधिक सुचारु पद्धति, नगरजनित विचारों का और साधनसामग्री का विस्तार विभिन्न माध्यमों द्वारा कार्य संपन्न करने का ढंग आदि मद्रास जैसे राज्य में बहुत विस्तृत रूप से प्रभावित कर रही है – जिसके कारण शिथिलता आई है। इसका यह परिणाम रहा है कि जानकारी की क्षमता और कभी कभी संसाधनों की उपलब्धि – जिनका उपयोग किया जाता था और अभी भी चालू है उसका-कमसे कम अपने सामर्थ्य के साथ मेल रखता ही है। इसके उपरांत, ऐसे गाँवनिवासी, पूर्वनिर्धारित ढाँचे की सुदृढ़ पकड़ रहित होने से, चारों ओर से विचार एवं प्रभाव अपनाने के लिए स्वतंत्र हैं। इससे विपरीत, विस्तार कामदारों की जानकारी की क्षमता अत्यन्त सीमित हो जाती है, अपने पर्यावरण में क्रमिक रूप से समाप्त हो जाती है, उस पर जंग लग जाती हैं। इसके कारण यह प्रभावहीन (संवेदनहीन) और निष्प्रभ हो जाता है। उसकी स्थिति आजकल ऐसी हो

गई है। कि वह साहसिक और अग्रगामी न हो तो उसे अपने भाग्य पर छोड़ दिया जाता है और अगर वह ऐसे गुणों से युक्त हो तो वह अपने कार्य मे उग्र स्वभाववाला होगा और उसका प्रमुख प्रयास अमुक प्रकार की लीक में येनकेन प्रकारेण बाहर निकल जाने का रहेगा। कई विस्तरण अधिकारी उसमे सफलता पाते हैं।

दूसरा, राहत एवं अपेक्षाकृत अनुदान के संदर्भ में आर्थिक बंटवारे के समूह की राशियाँ न्यूनाधिक मात्रा में उसी स्थान पर स्थगित रह गई हैं जो दस वर्ष पूर्व प्राप्त होती थीं। उनके उपविभाग सूचनाओं एवं नियमों से बहुत अधिक विस्तृत हो गये हैं। १९५० के आरंभ में किसी वस्तु पर दी जा रही रु २ या रु. ३ की सहायता उस समय के संदर्भ मे कुछ सार्थक होगी। आज उसकी बहुत सीमित सार्थकता प्रतीत होगी। उसकी वास्तविक कीमत लगभग आधी हो गई है और जरूरतमंद व्यक्ति के लिये उसका मूल्य शून्य हो गया है। अधिकांश गाँववासी, जिन्हें प्रवर्तमान परिवर्तन एवं विकास का स्पर्श नहीं हुआ है उनका राशि के साथ संबंध नहीं होता। उनके साथ और बीच में रहकर काम करना अधिक कठिन है। जिस समय ऐसे कार्यक्रम शुरू हुए तब वह कठिन था, जब कि आज वह असंभव हो गया है। कर्मचारियों मे ऐसे नये साहस के लिए आवश्यक आत्मबल और आशा का तत्त्व समुदाय विकास एवं राष्ट्रीय विस्तार सेवा के ढॉचे में किसी स्तर पर नहीं पाया जाता है।

ऐसी स्थिति के अनिवार्य परिणाम होते हैं। उन्हे जो सूचनाएँ दी गई हैं और उन्हें कार्यान्वित नहीं कर पाने का जो भय व्याप्त है, इसे लेकर विस्तरण कर्मचारी, विशेष रुप से ग्रामसेवक या तो अपने परिचित लोगों के पीछे भागते रहते हैं और उनसे दो-तीन संशोधित बीज की भीख माँगते रहते हैं। इधरउधर खाद के गड्ढे खोदा करते हैं, कुछ कीटाणुनाशक या अन्य छोटी चीजे जो उनके कार्यक्रम के अंतर्गत रहती हैं उन्हे क्रय करते हैं। ऐसी अल्प राशि लेने के लिए निश्चित ढर्रे मे आवेदनपत्र पर हस्ताक्षर कर देने के लिए बाध्य होना पडता है। कभी कभी ऐसा करने से काम निपटता है और कुछ उद्देश्य प्राप्त भी हो जाता है। ऐसा न हो पाने पर सफलता का अभाव अनुचित कार्य करने के और हिसाब साफ करने के लिए वे प्रवृत्त रहते हैं। यह पद्धति क्रमशः कम काम करने की ओर प्रेरित करती है। आज यह स्थिति बन गई है कि इस पद्धति की अक्षमता और प्रभावहीनता के सम्बन्ध में कुछ कह पाना संभव नहीं है। इतना ही नहीं उसमें न तो आमूल परिवर्तन करने की बात कहना या उसे पूर्णतः छोड़ देने के लिए कहना सम्भव है। यह विषय विस्तरण अधिकारियों के अपने तकनिकी और प्रशासनिक उच्चाधिकारियो के साथ आयोजित होने वाली अनेक वैठकों में नहीं दिखाई देता। जब

कभी यह प्रश्न उठाया जाता है तब यह कहते हुए उन्हें चुप कर दिया जाता है कि दूसरे लोग जो अपना दायित्व निभाते थे, अपने सही विवरण प्रस्तुत करते थे, उन्हीं का अनुसरण करना चाहिए। ऐसे निरर्थक विषयों को उजागर करने के लिए संभवतः कोई ही प्रस्तुत होता है, फिर भी उच्चाधिकारी और उनके नीचे कार्यरत कर्मचारियों क़े संबंध में लगे रहने की एक सीमा बनी रहती है।

ऐसा केवल सूचना के अनुसार संसाधनों का उपयोग करते रहने तक सीमित नहीं है। जो विस्तरण कर्मचारी एवं पंचायती संघ निर्णय लेने की स्थिति में हैं उनका इस सम्बन्ध में ध्यान आकर्षित करने पर, अनिश्चित परियोजना या कार्यक्रम करना अधिक अर्थपूर्ण हो इसके लिए कुछ अधिक करने या परिवर्तन का परामर्श देने की बात को विस्तरण अधिकारी और पंचायतों पर पहले से रोक लगा देते हैं और उस अवरोध पैदा करते हैं। वास्तव में, ऐसे सभी निर्णय भूमिकर विभागीय अधिकारी या जिलाधीशों को भी नहीं करने होते हैं, परन्तु संबंधित राज्य सचिवालय या विभागीय अधिकारी के कार्यालयों का दायित्व रहता है। परिणाम स्वरूप, कुछ लोग कतिपय व्यक्तियों को कुछेक ग्रामोद्योगों में प्रशिक्षित करते हैं, लेकिन कुछ कर नहीं पाते और प्रशिक्षित लोग स्वयं के द्वारा प्राप्त प्रशिक्षण का उपयोग करने के लिए क्या किया जा सकता है उसे भी नहीं बता पाते। अनेक बार इसमें अल्प मात्रा में ऋण की सहायता, औजार क्रय करने या सिलाई-मशीन या कोई और साधन क्रय करने के लिए बात करनी होती है। संभवतः अनेक संदर्भो में ज्ञात संदर्भ की ओर ध्यान देते हुए स्वीकृत किया जाए, परन्तु स्थिति ऐसी बनी हुई है कि कोई किसी प्रकार का निर्देश नहीं देता है या जो ऐसा करने का सोचता है उसके पास ऐसा करने का कोई उपाय नहीं होता, क्योंकि वह सरकारी विभाग में सामान्य स्तर पर कार्यरत होता है।

कृषि, पशुपालन और मत्स्योद्योग के सम्बन्ध में यहाँ पर आर्थिक और मानव संसाधन, जो संबंधित विभागों को राज्य स्तर पर या निम्नस्तरीय कार्यालयों के पास आसानी से उपलब्ध है उनकी तुलना पंचायती संस्थाओ के साथ कर प्रस्तुत है।

पिछले कुछ वर्षों में कृषि विषयक किये गये सरकारी व्यय और उनके संदर्भ में कुछ आय (सामान्य रूप से) सारिणी ५२ में दर्शाई गई है।

१९६४-६५ में ३४१ अधिकारियों के स्थान और विभाग में ८,१२१ स्थान रिक्त थे उनमें से सामान्य स्तर के २,७६५ और विशेष स्तर के ५,३२६ स्थान स्वीकृत किये गये थे। ऊपर दर्शाये गये व्यय या व्यक्तियों में पंचायत संघों के पास उपलब्ध बड़ी राशि या कर्मचारियों को समाविष्ट नहीं किया गया है। पंचायत संघों को

विनिधान सीधा ग्रामीण विकास और स्थानीय प्रशासनिक विभाग से प्रदान किया जाता है।

सारिणी – ५२

वर्ष	सामान्य व्यय	आय (लगभग) रु.
१९५९-६० (वास्तविक)	३,२६,४५,५२७	२९,००,०००
१९६०-६१ (संशोधित अनुमान)	३,७२,६५,२००	३८,००,०००
१९६१-६२ (वास्तविक)	४,२३,८७,०९६	४६,००,०००
१९६२-६३ (वास्तविक)	५,३९,२१,३२४	४४,००,०००
१९६३-६४ (वास्तविक)	६,६८,११,०६२	५०,००,०००
१९६४-६५ (संशोधित अनुमान)	७,७५,३९,३००	१,३८,००,०००
१९६५-६६ (बजट अनुमान)	८,७२,४०,७००	१,४६,००,०००

इस बात का उल्लेख करना चाहिये कि इसी प्रकार के आंकडे पूर्ववर्ती वर्षो के संशोधित अनुमानों में और वजेट अनुमानों मे दिये गये थे। परन्तु खर्च बढ जाने पर भी वास्तविक आय अनुमानित आय से कम ही रही थी।

इस समय पंचायत संघों मे जो कर्मचारी उपलब्ध हैं उन्हें सरकारी समझा जाए ऐसा कोई कार्यालय नहीं है। सारे विस्तरण कर्मचारी विशेष स्तर के माने जाते है। कृषिभंडार में कार्यरत लिपिक का वर्ग सामान्य वर्ग माना जाता है। ३७४ पंचायत संघों में उपलब्ध कर्मचारियों की संख्या सारिणी-५३ में दर्शाई गई है।

सारिणी – ५३

१. विशेष वर्ग	
विस्तरण अधिकारी (कृषि)	३७४
खाद विकास	३७४
क्षेत्रीय कर्मचारी (निरीक्षक)	
बढई (प्रति संघ २)	१,१२२
ग्रामसेवक (प्रति संघ १०)	३,७४०
योग	५,६१०
२. सामान्य वर्ग (लगभग)	१,०००

पंचायत संघों को कृषिविषयक प्राप्त हो रही औसतन राशि रु. २४,५००/- है। उसमें कर्मचारियों के वेतन की राशि का समावेश नहीं होता है। यदि उसका समुचित उपयोग किया जाए, जो विभिन्न नियमों के अधीन शायद ही संभव हो सकता है, तो ऐसी राशि वार्षिक लगभग नब्बे लाख होती है। कर्मचारीगण के वेतन की राशि एक करोड़ रुपये होगी। उन दोनों को मिलाकर देखा जाए तो राज्य के कृषि विभाग के १९६३-६४ के कुल व्यय का लगभग ३० प्रतिशत हिस्सा होता है।

इसी प्रकार, पशुपालन विभाग के आय-व्यय के आंकडे इस प्रकार थे :

सारिणी – ५४

वर्ष	रु.	आय (लगभग) रु.
१९५९-६०	९९,६९,१९७	२,६४,०००
१९६०-६१ (संशोधित अनुमान)	१,२३,६०,६००	२,९७,०००
१९६१-६२	१,५०,८०,४१४	२,०७,०००
१९६२-६३	१,७१,००,४८०	१,६८,०००
१९६३-६४	१,९१,०४,९२४	२,००,०००
१९६४-६५ (संशोधित अनुमान)	२,८९,०९,६००	१,५७,०००
१९६५-६६ (बजट अनुमान)	२,९१,७९,२००	२,१८,०००

१९६४-६५ में पशुपालन विभाग मे १३१ अधीकारी और २,३२७ विशेष कक्षा के तथा ७२६ सामान्य वर्ग के कर्मचारी मिलाकर ३,०५३ कर्मचारीगण स्वीकृत किया गया था। कृषि विभाग की तरह इस संदर्भ में मानव संसाधन से पंचायत संघ में स्थानांतरण किये गये कर्मचारी विशेष नहीं थे। पंचायत संघों में ऐसे लोगों को नियुक्त करने की प्रक्रिया पुन: ग्रामविकास और स्थानीय प्रशासन विभाग में बढी थी।

तुलनात्मक रूप से पंचायत संघों मे पशुपालन के कर्मचारी केवल ३७४ ही थे, अर्थात् प्रत्येक संघ के एक विस्तार अधिकारी। पशुपालन के लिए पंचवर्षीय बजट रु. १४,००० था, जो सांड के मुर्गे, भेड़ और मुर्गो की इकाई के लिए था। रु. १७,५०० पशुचिकित्सालय के निर्माण के लिए दिये गये थे। इस अंतिम खर्च में पशुपालन गतिविधि के रूप में संघ द्वारा दिये जा रहे सीधे खर्च में शायद ही कटौती की जा सकती है। इसके उपरांत ऐसे चिकित्सालयों का निर्माण शायद ही हुआ था। इसलिए

उपलब्ध राशि वार्षिक रु. २,८०० की थी, जो सभी ३७४ पचायत संघो के लिए रु. १०,४७,२०० होती है। ग्रामविकास और स्थानीय संचालन के कर्मचारियों के वेतन पर ध्यान दिया जाए तो उसकी राशि पशुपालन विभाग द्वारा १९६३-६४ में पशुपालन के लिए होनेवाले व्यय का एक छोटा सा अंश है।

पंचवर्षीय संघ बजट में मत्स्योद्योग के लिए रु. ३६,००० का प्रावधान था, परन्तु प्रतीत होता है कि वह कार्यक्रम शायद ही आरम्भ किया गया हो और अधिकांश संघो में वह राशि वैसे ही पडी रही थी। संघों को निश्चित रूप से कर्मचारी नहीं दिये जाते हैं। राज्य में मत्स्यसंग्रह के लिए १९५९-६० मे कुल मिलाकर सामान्य खर्च रु ३३,६९,१९३ था और १९६३-६४ मे लगभग रु. ६४,००,००० था।

यह जाँच करने का उद्देश्य पंचायत संस्थाओं के द्वारा इस क्षेत्र में अपेक्षित सफलता के अभाव को सही सिद्ध करने के लिए या राज्य विभागों की आलोचना करने का नहीं है, परन्तु केवल प्राथमिक समस्या के प्रयोजन विषयक विचारविमर्श के लिए विषय के प्रति अधिक ध्यान दिया जाए वही है।

ऐसे कई विषयों के प्रति ध्यान केन्द्रित किया जा सकता है कि सरकार की कार्य के संदर्भ में निश्चित सूचनाएँ कितनी अधिक अवास्तविक और अकल्पित होती हैं। १९५० में सर्वप्रथम प्राथमिक विद्यालयों के भवन के लिए निश्चित किया गया अनुमान और ढाँचे के संदर्भ मे जानकारी संबंधित लोगों को आठ वर्ष के बाद पहुँचाई गई थी। वही ढाँचा और अनुमान आज भी यथावत् है। अन्य बड़े कार्यो के अनुमान पिछले दस पन्द्रह वर्षो में सारे देश में दुगुना हुए हैं। ऐसा माना जाता है कि गाँवों में रूपये का मूल्य यथावत् रहा है।

इसमे सब से अधिक निराशाजनक अनुमान विद्यालय के भोजन कार्यक्रम के प्रावधान के संदर्भ मे पाया जाता है। इस समय प्रवर्तित स्थिति में दिन में एक बार भोजन के लिए सरकार द्वारा पूर्व निर्धारित छह नये पैसों का प्रावधान १९६५ से यथावत् है जो किसी भी रूप में संभव नहीं है। सभी चीजों के मूल्यों में वृद्धि हो गई है। इतना ही नही, राज्य का बजट भी इस कालखण्ड में तीन गुना हो गया है। शिक्षा का बजट इन सात आठ वर्षो में दुगुना हो गया है। निश्चित रूप से माना जा सकता है कि ऐसी पूर्व निर्धारित राशि से दिया जा रहा भोजन गुणवत्ता और मात्रा के संदर्भ में निम्नस्तरीय हो गया होगा।

मद्रास राज्य में विद्यालय भोजन का कार्यक्रम वास्तव में बहुत पुराना है। मद्रास महानगरपालिका द्वारा उन दिनों में विद्यालय के बच्चों को एक समय के भोजन के लिए

१ $^{1}/_{2}$ आने प्रतिबालक व्यय हेतु दिया जाता था। १९३० से यह कार्यक्रम शुरू था। यह योजना अपने आरंभिक समय में भले ही उद्देश्यपूर्ण हो, परन्तु आज वर्षों पुरानी यह योजना निष्प्रभावी प्रतीत होती है। इसके साथ ही पिछले कुछ वर्षों में जिन सूचनाओं का प्रावधान किया गया है इसे जिन विद्यालयो में इस कार्यक्रम को प्रभावी किया जाता है उनके प्रधानाचार्य के वृत्तांत मे काल्पनिकता का पर्याप्त अवसर है। ऐसे विद्यालयों की सख्या बहुत बड़ी, लगभग १०,००० होने से उसका अनैतिक प्रभाव अधिक मात्रा में होना चाहिए।

विद्यालय भोजन कार्यक्रम के आधारभूत विषय पर त्वरित ध्यान देने की आवश्यकता है। ऐसे भोजन की अब क्या आवश्यकता है ? नाम पंजियन के लिए आवश्यकता मद्रास राज्य में अब सामान्यत: नहीं है। अब ऐसा लालच उसी रूप में नहीं रहा है, क्योंकि समूह में उसका आधारभाव विलुप्त हो गया है। यदि कुछ क्षेत्रों में उसका प्रभाव पड़ता है तो वह लज्जा की बात है। इसके लिए दु:ख होना चाहिए। इसके संदर्भ में गर्व करने या गौरवान्वित होने जैसा कुछ भी नहीं है। दोपहर के अवकाश के समय अधिकांश बचे घर पर भोजन के लिए जा न पाते हो उनके लिए यदि ऐसा कार्यक्रम चालू रखने का सोचा हो तो उसे अधिक सुदृढ ढंग से कार्यन्वित करने की आवश्यकता है। भारत देश भले ही अत्यन्त गरीब होगा, फिर भी अपने बच्चों की देखभाल करने के लिए उसमें सामर्थ्य है ही। विश्व के अधिक संपन्न देशों में बच्चों की जितनी देखभाल की जाती है उतनी शायद नहीं होती होगी। परंतु, ऐसी स्थिति के प्रति शायद सीमित समय के लिए सतर्क रहना चाहिए, सदा के लिए ऐसा सोचकर प्रबंध करते रहना समुचित नहीं है। इससे किसी प्रकार का जनहित नहीं होता बल्कि यह अत्यन्त हानिकारक है। भारत के विद्यालयों में थोडा दूध का पावडर, वनस्पति तेल, कोर्न फ्लोर, ऐसी चीजें बाँटने के लिए बच्चों और अध्यापकों को किसी के सामने हाथ फैलाकर चंदा माँगने की प्रक्रिया उनकी इन्द्रियों को निष्प्राण बना देती है, साथ ही नालेशी के भाव उत्पन्न करती है। देश को अन्य प्रकार की सहायता राष्ट्रीय स्तर पर माँगनी या स्वीकार करनी पड़ती है। इसलिए भारत में किसी स्थान पर बाहर से चंदा माँगना या उसको स्वीकार करना न्यायोचित प्रतीत नही होता। ऐसी अस्वीकृति भारत के आंतरराष्ट्रीय मित्र या हितचिंतकों की अवमानना करने के समान है ऐसा मानना भी उचित नहीं है।

विद्यालयों में छात्रों के नाम पंजियन के क्षेत्र के साथ ही, विभिन्न कारणों से, दी जा रही शिक्षा की गुणवत्ता पर भी विपरीत प्रभाव पड़ा है। विद्यालयों को सुरक्षित रखने

में और अध्यापकों पर इसका बोझ उठाने में वृद्धि हुई है। सीमित आर्थिक संसाधनो के साथ छात्रों के प्रवेश में वृद्धि होने से ऐसा होना अनिवार्य था। प्रति अध्यापक छात्रों की संख्या में वृद्धि हुई है। वास्तव में आदेश एवं निर्देशों के द्वारा ऐसा कानून बनाया गया है। प्राथमिक विद्यालयों के स्तर पर रिक्त स्थान के प्रवेश करने के लिए राष्ट्रीय संचयनिधि न रहने से और किसी भी पद्धति में अवकाश लेने के कारण १० से २० प्रतिशत अध्यापकों की अनुपस्थिति से कुछ छोटे विद्यालयों में सामान्य रूप से देखा जाता है कि दो या तीन से अधिक अध्यापक नहीं होते। अत: विद्यालयों में सप्ताह या महीनों तक अध्यापनकार्य असंभव बन जाएगा। कोई भी विद्यालय, पुराना प्रशिक्षण केन्द्र, वास्तव में था कार्यालय नहीं होता है जिसमें आज का काम कल पर छोड़ दिया जाए। प्रत्येक विषय पर तुरंत ध्यान देना पड़ता है। निर्धारित समय में कार्य नहीं निपटाने पर बोझ बढता जाएगा और फिर वह असंभव ही बन जाएगा। अध्यापकों का आरक्षित संग्रह करना, साथ ही संसाधन तथा अन्य चीजों का अधिक प्रबंध करना आवश्यक है।

ऐसा भी हो सकता है कि अधिकाकि संसाधन खोजने में सही अर्थ में आपत्तियाँ हो या उन्हे पाने में अधिक समय व्यतीत हो जाए। ऐसे कार्यो में स्वैच्छिक सहायता अधिक उपकारक सिद्ध होती है। ऐसी स्वैच्छिक सहायता, नकद धन, उपकरण या शारीरिक शक्ति के स्वरूप मे परिश्रम या अपने कौशल्य के स्वैच्छिक उपयोग के रूप में या समान उद्देश्य के लिए प्रशिक्षण देने के रूप में हो सकती है। इस समय की स्थिति को देखते हुए प्रतीत होता है कि प्रत्येक पंचायत के पास कम से कम एक दर्जन युवा पुरुष एवं महिलाएँ हैं, जिन्होंने प्राथमिक विद्यालय की शिक्षा समाप्त करने तक अध्ययन किया है। (सातवी कक्षा तक) उनमें से कई लोग बहुत कम कार्य करते हैं या फिर उनके पास धन की कमी नहीं हैं। उनमें से कई लोगों को अगर विद्यालय में सेवाएँ देने के लिए कहा जाए तो वे शायद खुश होंगे। इससे विद्यालय को सहायता होगी और विद्यालय का परिवेश अच्छा बनाने में निश्चित रूप से सहायता होगी। ऐसे स्वैच्छिक सेवा देने के लिए तैयार होनेवालों को प्रशिक्षित करने की कोई आवश्यकता नही रहेगी और उनकी शिक्षा का स्तर अधिकांश प्राथमिक अध्यापकों के स्तर जैसा ही होगा। शिक्षा विभाग इसके लिए जब तक अनुमति नहीं देगा तब तक लोग या पंचायत संघ परिषदें चाहते हुए भी कुछ नहीं कर पाएँगी। अन्य ग्राम विषयक परिस्थितियाँ - अर्थात् विद्यालयों का संचालन, विद्यालय भोजन जैसी गतिविधियों में कार्य की अधिकता से थके हुए अध्यापक या ग्राम पंचायत के अध्यक्षों की तुलना में मातृसंगम द्वारा प्रस्तुत

लोग अधिक उपकारक सिद्ध होगे और क्रियाकलापों का आयोजन हो पाएगा। क्योंकि उनके पास दैनंदिन भोजन-कार्य या बजट के विषयो के प्रति ध्यान देने के लिए शायद ही समय रहता है। इसके उपरांत ऐसा करने से ये संगम महिलाओं से प्रभावशाली ढंग से सम्पर्क करने का मार्ग खोज सकेंगे।

पंचायत संघ और जिलास्तरीय समितियाँ बिल्कुल प्रभावहीन संस्थाएँ हैं। जहाँ उनकी रचना हुई है वहाँ वे आवश्यकता के अनुसार वृत्तांत में तो बारबार बैठकें आयोजित करती हैं। जहाँ सरकारी नियम के अनुसार प्रावधान नहीं किया गया हो वहाँ समितियों की बैठक शायद ही होती है। यह इस बात की द्योतक है कि उनके पास कुछ भी करने को नहीं होता है। ऐसा प्रतीत होता है कि व्यक्तियों को लाभान्वित करने के लिए संस्थाओं के प्रति ध्यान नहीं देने के पचास वर्ष से बने हुए स्वभाव की जड़ गहरी होती गई है।

मद्रास में ऐसा प्रावधान आरंभ से था कि स्थानीय संस्था के अध्यक्ष से ही कोई सदस्य उत्तर माँगे। यद्यपि समय गुजरते ऐसी परंपरा भी कुछ समाप्त हुई है फिर भी परंपरा अभी भी है।

कुछ ऐसे क्षेत्र भी हैं जहाँ की ग्राम पंचायतों में जोश है और जिसमें उपस्थिति अच्छी रहती है। कई क्षेत्रों में बड़ी संख्या में गाँववाले बैठक में उपस्थित रहने के लिए आ जाते हैं। वास्तव में, इस (बीसवी) शती के आरंभ से सभी स्थानीय संस्थाओं की प्रत्येक स्तर की बैठकें मद्रास राज्य में सामन्यतः लोगो के लिए खुली रहती हैं। परन्तु कुछ क्षेत्रों में निर्वाचित या सेवारत कर्मचारी प्रोत्साहित नहीं करते, जब कि कई क्षेत्रों मे पंचायत संघ के कर्मचारियों सहित किसी को ऐसे नियमों के प्रावधान की जानकारी ही नहीं होती। पंचायत संघ की बैठकों में लोग उपस्थित रह सकते हैं। इस प्रावधान को या तो लोग जानते नहीं हैं या वह विस्मृत हो गया है या फिर विभिन्न प्रकार के विचारविमर्श की स्थिति को टालने के लिए स्थानीय लोगो के आगे प्रकट नहीं किया गया है। जिला विकास समिति की बैठकों में शायद उसी जिले के नगर में निवास कर रहे कुछ पत्रकार उपस्थित रहते हैं।

ज्यादातर पंचायतों की बैठकों में सदस्यों की उपस्थिति अत्यन्त सीमित रहती है और कुछ पंचायतों में तो वास्तव में बैठकों का आयोजन ही नहीं होता है। कुछ क्षेत्रों में ऐसी पंचायतों की मात्रा लगभग ५० प्रतिशत से ऊँची है। कुछ करने के लिए संसाधनों का अभाव और गुटबंदी इसका प्रमुख कारण माना जाता है। वास्तव में पंचायत की बैठकें बुलाने के लिए सही स्थल का अभाव इसका एक प्रमुख कारण है।

कई स्थानों पर अध्यक्ष के घर में ही पंचायत का कार्यालय चलता है। इसे लेकर सदस्य निराश होते हैं और बैठक से दूर रहते हैं। ऐसा नहीं है कि पचायत की बैठक के स्थल का बिल्कुल अभाव होता है। सामान्य रूप से उनके लिए विद्यालय का भवन उपलब्ध होता है। परंतु वास्तविक कठिनाई सरकारी आदेशों के कारण उत्पन्न होती है। ऐसे एक आदेश के अनुसार पंचायत की बैठक का आयोजन रविवार या सार्वजनिक अवकाश के दिन नहीं करना है। ऐसा भी निश्चित किया गया है कि बैठके कार्यालय में ही आयोजित होनी चाहिए। अवकाश के दिन विद्यालय का भवन सरलता से प्राप्त हो सकता है। जब तक ऐसा प्रबंध नहीं किया जाता कि पंचायत का कार्यालय वहाँ रखना चाहिए या सर्वसम्मत स्थान पर बैठक का आयोजन हो और तिथि भी सबको अनुकूल हो, जब तक अनावश्यक रूप से समय के संदर्भ में प्रतिकूल सरकारी नियम बने रहेंगे तब तक ऐसी कठिनाईयों का समाधान नहीं होगा।

बड़ी संख्या में सीमित जनसंख्यावाले गाँवो की पचायतों में लोगों को पंचायती कार्यों में अभिरुचि उत्पन्न करने में अत्यन्त कठिनाई होती है। संख्या के कारण उत्पन्न होनेवाली कठिनाई वास्तव में अधिक उलझनवाली नहीं है। किसी प्रकार की उपपंचायतें या पंचायतो की बारी बारी से होनेवाली बैठकें विभिन्न गॉवों में करने की प्रक्रिया बता दी जाए तो सहायक सिद्ध हो सकती है। कुछ अवसरो पर बड़ी पंचायतों को दो पंचायतों में विभाजित करना लाभदायक बन सकता है। परन्तु कभी कभी धन के अभाव जैसे कारण से यह प्रबंध नहीं हो सकता है।

यहाँ पर कुछ और निर्देश करने आवश्यक हैं। इनमें से दो को कार्यान्वित करने में बहुत चिंता नहीं होनी चाहिए। एक - पंचायत संघ आयुक्त की सेवा के अतिरिक्त पंचायत संघ परिषद को एक सचिव रखने की अनुमति देने से इस समय जो ढाँचा बना हुआ है उसकी उपयोगिता बढ सकती है और कार्य के आरंभ में उत्साह भी बढेगा। उस स्थान पर नियुक्त व्यक्ति चाहे निर्वाचित सदस्य हो या नियुक्त किया गया हो, सचिव को चाहिए कि संस्था के निर्णय लेने के दायित्वो मे अध्यक्ष और अन्य सदस्यों के साथ परामर्श करते हुए कार्यवाही तैयार करने में, संबंधित लोगों को संस्था के निर्णयों की जानकारी देने में, वैयक्तिक क्षेत्रों की और समग्र संघ की आवश्यकताओं तथा सफलताओं के संदर्भ में जानकारी देते रहने के साथ साथ संस्था जो कुछ कार्य करना चाहती है उसमें ध्यान देते रहना चाहिए। भले ही वह प्रत्यक्ष रूप से सरकार द्वारा नियुक्त पंचायत संघ आयुक्त को सौंपा जाने पर उसके लिए क्षोम पैदा करनेवाला हो। आरंभ करने की अपनी सारी कुशलता, क्षमता और शक्ति होते हुए भी उस संदर्भ

में वह सरकारी ढाँचे में एक बहुत कनिष्ठ स्तर का सरकारी कर्मचारी ही है। *सरकार के* संदर्भ में वह संघ के प्रतिनिधि की भूमिका निभा सकेगा यह अपेक्षा उससे नहीं की जा सकती। अध्यक्ष के लिए भी ऐसा कार्य सुनियोजित ढंग से और कार्यालय की गतिविधियों की जानकारी के स्रोतों के जरिए अधिकांश स्थिति में सरकार की ओर से निश्चित प्रतिक्रिया प्राप्त होगी इस रूप में उसका दायित्व नही ले सकता। मंत्रीस्तरीय या उच्चाधिकारियों के साथ संचालन के तौर पर वे क्षेत्र के नेता हों तो उनके साथ भेंट करना भले ही सुखदायी हो फिर भी वह अधिक कुछ प्राप्त नहीं कर पाएगा। सचिव के पद पर रहकर अपने *कार्य की समीक्षा विषयक* और *सीमित प्रवर्तमान कार्यव्यवस्था में* किसी प्रकार की उलझन पैदा करना आवश्यक नहीं है क्योंकि वह पंचायत संघ आयुक्त के नीचे कार्य करना चालू रख सकता है। वास्तव में, ऐसा प्रबंध आयुक्त को बड़ा आधार दे सकता है और इस समय प्रवर्तित कई चिंताओं और हीनभाव को कम कर सकता है।

दूसरा (निर्देश), जिले के अधिकारियों के *कार्य* से संबंधित अधिकारक्षेत्र के संदर्भ मे है, जो पंचायत पद्धति से बाहर होते हुए भी सूचनाओं का प्रावधान, मार्गदर्शन या *उसके द्वारा संपन्न कार्य के निरीक्षण के साथ उनके सम्बन्ध में रहता है। इस व्यवस्था* में सबसे बड़ी संख्या विद्यालयों के डिप्टी इन्स्पेक्टरों की है, जो प्राथमिक और माध्यमिक विद्यालयों के तकनिकी एवं शिक्षा संबंधित निरीक्षक हैं। उनकी संख्या इस समय लगभग पंचायतों की संख्या (३७४) के बराबर है। फिर भी अनेक अवसरों पर उनका अधिकारक्षेत्र दो या तीन युनियनों के मार्गों में बँटा हुआ है। ऐसे कुछ उदाहरण हैं जिनमें संघ संचालित विद्यालयों की संख्या अधिक है और विद्यालयों का एक डिप्टी निरीक्षक अपना दायित्व सुचारु रूप से नही निभा सकता। ऐसे अवसरों पर दो या अधिक व्यक्तियों की आवश्यकता रहेगी। परंतु विद्यालयों के डिप्टी निरीक्षकों के अधिकारक्षेत्र पर पुनर्विचार करते हुए उनके संघों के अधिकारक्षेत्र सीमित करने की आवश्यकता है। बड़ी संख्या में पंचायतों वाले पंचायत संघों में दो विस्तरण अधिकारी (पंचायत) के संदर्भ में किया जाता है उस प्रकार से संघ के आधे या आवश्यकता के अनुसार एक तिहाई भाग के साथ सम्मिलित करने की आवश्यकता है। कई वर्ष पूर्व सरकार ने यह सोचा था, परन्तु आज तक उसमें कुछ नहीं किया गया है। शायद, निर्णय करना इस बात का संकेत होगा कि विद्यालयों के डिप्टी निरीक्षकों की संख्या में वृद्धि की जाएगी।

अधिकारक्षेत्र का विषय, कृषि, सहकारी संस्थाओं की तरह कुछ जिलाधिकारियों

एवं पंचायत संघों के ग्रामीणकार्य परियोजना के दायित्वों के साथ जुड़े हुए सहायक इन्जिनियरों के अधिकारक्षेत्र के संदर्भ में कुछ उचित प्रतीत होता है। मद्रास के जिलो में कृषिविषयक जिलाधिकारी (शायद नीलगिरी और कन्याकुमारी के अपवादों को छोड़कर) के पास भूमिकर या विस्तार विभाग उसके अधिकारक्षेत्र मे नहीं होता। ऐसे तकनिकी विषयों मे से कुछ अधिकारियों के पास जितने भूमिकर विभाग होते हैं उतनी संख्या में ऐसे जिलाधिकारी होते हैं। परंतु ऐसे अधिकारियो की संख्या और जिलों की संख्या में हमेशा एकरूपता नहीं भी होती है। ऐसे सभी अवसरो पर से प्रत्येक विषय में यदि प्रत्येक जिलाधिकारी या सहायक इन्जिनियर का अधिकार क्षेत्र भूमिकर विभाग के साथ सम्मिलित कर दिया जाए तो अधिक उचित, और संचालन की दृष्टि से अधिक उपयोगी सिद्ध होगा। जहाँ एक से अधिक अधिकारी नियुक्त करने की संभावना हो वहाँ विभिन्न अधिकारियो के अधिकारक्षेत्र में से पंचायत संघों के विस्तार को विभक्त किये बिना उसका उचित खण्डों मे विभाजन किया जा सकता है।

अधिकारी से संबंधित समस्या भूमिकर देनेवाले गॉव और पंचायतों के संदर्भ में भी उलझनें पैदा करती है।

ग्राम पंचायतों की (लगभग ७,८००) असंख्य सीमाएँ राजस्व (भूमिकर देनेवाले रहे) गाँवों के साथ सम्मिलित है, परन्तु लगभग १,२५० पंचायत भूमिकर देनेवाले एक गाँव से कम भाग को समावृत्त करती हैं। जब कि ३,००० से अधिक पंचायते एक राजस्व गाँव से अधिक विस्तृत हैं। परिणाम स्वरूप कई राजस्वर ही पंचायतों के बीच बंट गये है। दीर्घकाल से यह विषय मद्रास सरकार में विचाराधीन है, और १९६२ में उसका बुद्धिगम्य हल निकलेगा ऐसा प्रतीत हुआ। फिर न जाने क्यों यह विषय विस्मृत हो गया है या सरकार की फाइलों में दबा दिया गया है। कठिनाई यही है कि वह स्थानीय स्तर पर राजस्व प्रबंधन के समग्र ढाँचे की पुनर्रचना के साथ जुड़ा हुआ है और क्रमिक रूप से भूमिकर और स्वायत्त प्रशासन एवं विकास के नाम से पहचाने जानेवाले विभिन्न विषयों के बीच संबंध प्रस्थापित करना अभी शेष है। मद्रास सरकार के स्तर पर इसके सम्बन्ध में अनेकबार विचारविमर्श हुआ है। केवल उस संदर्भ में कुछ निर्णय और उपयोगी घोषणा की सार्वजनिक अभिव्यक्ति की आवश्यकता है।

जिन्हें ग्रामीण राजस्व कर्मचारी के रूप मे पहचाना जाता है उनकी विभिन्न वर्गों की संख्या के संदर्भ में कुछ जानकारी यहाँ दी गई है (सारिणी-५५)। वह जानकारी १९६१-६२ के मद्रास राज्य के बजट के पत्रों से ली गई है।

इस गाँव पर आधारित भूमिकर कर्मचारियों की संख्या प्रति यूनियन विभन्न स्तर

पर औसतन १५८ लोगों की है। इस पर ध्यान देना चाहिए कि यह आंकडा पंचायत संघों के विस्तरण कार्यकर्ताओं से सात से आठ गुना है और सार्वजनिक कर्मचारी के रूप में कार्यरत प्राथमिक अध्यापकों की संख्या का लगभग ५० से ६० प्रतिशत है। पचायतों के निर्वाचित सदस्यों की कुल संख्या (१,१७,६२१) की तुलना में गाँवों में काम करनेवाले सेवकों की संख्या लगभग आधी है।

सारिणी – ५५

कर्मचारी का पदनाम	रैयतवार क्षेत्र	अधिकार क्षेत्र	योग
हेडमेन	९,३५५	३,०१६	१२,३७१
मोंगीर	४	-	४
कर्णम्	९,०५२	३,२४१	१२,२९३
वेट्टी	१५,०९५	३७०	१५,४६५
तलयारि	११,९४८	४,७५६	१६,७०४
निर्गटी	६९३	-	६९३
लश्कर	८	-	८
तंडलगार	५०	-	५०
कोलाटम	१,७६४	-	१,७६४
योग	४७,९६९	११,३८३	५९,३५२

परन्तु उनके वेतन उन्नीसवीं शती के आरंभ के वर्षों में निश्चित् किये हुए ही हैं और यथावत रखे गए हैं अतः अन्य सार्वजनिक कर्मचारी के वेतन को तुलना में वे कुछ नहीं हैं। इस विषय में ग्राम सेवक की राजस्व बोर्ड के राज्यों के कर्मचारियों के साथ तुलना हो सकती है, क्योंकि उनके वेतन बहुत ऊँचे स्तर पर भी लगभग १८० वर्ष पूर्व से अपरिवर्तित रहे हैं।

पंचायत संघों के सामुदायिक विकास और राष्ट्रीय सेवा के कर्मचारियों के कार्य तथा अधिकार क्षेत्र की समस्या उतनी ही कठिन है क्योंकि उसके संदर्भ में कई दृष्टिकोण रहते हैं। विस्तरण के संदर्भ में, प्रवर्तमान परिस्थितियों के कारण, अधिकांश कर्मचारी अपनी उपयोगिता पार कर चुके हैं। वे उपयोगी अवश्य हैं, परंतु पदोन्नति या तकनिकी क्षेत्र में शायद ही उनको उपयोगी बनाने और उनकी तकनिकी जानकारी को

प्रोत्साहित करने, उनकी बौद्धिक एवं तकनिकी जानकारी में वृद्धि करने को लेकर उनके अधिकारक्षेत्र का पुनर्गठन तथा उनके दायित्वों की पुनर्रचना करना चाहिए। अधिकारक्षेत्र की समस्या तकनिकी कर्मचारियो के संदर्भ में होगी। प्रवर्तमान विकास अधिकारियों की तरह, उनसे ऐसी अपेक्षा की जा सकती है कि कुछ कार्य वे अपनी सामर्थ्य के अनुसारकरें परन्तु इस हेतु से उनका अधिकार क्षेत्र अत्यन्त सीमित होना चाहिए, जहाँ एक या दो ग्रामसेवक मंडल हों और जहां वह वैयक्तिक रूप से कार्य कर सके तथा कम से कम तकनिकी काम पर निगरानी रख सके। प्रत्येक वैयक्तिक विषय के लिए एक या दो ग्रामसेवक मंडलों में ऐसे व्यक्ति होने चाहिए। ऐसा प्रबंध करना सचमुच ही अत्यन्त उपयोगी और अत्यधिक लाभदायक होगा। प्रवर्तमान स्थिति में ऐसा हो सकता है कि विस्तरण अधिकारियों को, एक क्षेत्र में विशेष प्रशिक्षित करने के उपरांत अन्य विस्तरण अधिकारी सम्भाल सके ऐसे अन्य विषय देने चाहिए। इसके पश्चात् कई विस्तरण अधिकारियों को संघ के विभिन्न क्षेत्रो में भिन्न भिन्न रूप से रखा जा सकता है। आवश्यक विशेष जानकारी से युक्त व्यक्ति के लिए क्षेत्र की आवश्यकता के आधार पर या अन्य किसी स्थानीय नियमों के आधार पर स्थान पर नियुक्ति हो सकती है। सीमित जानकारी वाले विस्तरण अधिकारी की समस्या पैदा होने पर पत्र द्वारा या विशेष भेंट द्वारा विशेषज्ञ अधिकारी का संपर्क कर सके ऐसा प्रबंध किया जा सकता है। दूसरी ओर पारस्परिक संपर्क के कारण अन्य अधिक लाभ पाने के लिए विस्तरण अधिकारी अपना कार्यालय या घर हाईस्कूल या अन्य शिक्षा संस्था के निकट रखता है तो अधिक लाभदायक होगा। अन्य स्थान पर बताया गया है इसके अनुसार अधिकांश संघक्षेत्र चार से छह हाईस्कूल होने का गौरव ले सकते हैं।

प्रवर्तमान 'केश बुक वाउचर आडिट नियम' व्यय पर निगरानी रखने के लिए अपने ढंग से उपयोगी हैं, फिर भी उनका और कोई उपयोग बहुत कम रहता है। वास्तव में, संसाधनों का अधिकतर दुरुपयोग और निरुद्देश्य कार्यान्विती इस समय व्यय के पुराने प्रभावहीन मापदंडो के कारण है। व्यय को उपयोगी बनाने के लिए मापदंड बदलने पडेंगे। औद्योगिक, उत्पादक और व्यापारिक साहसों से कुछ मापदंड उपयोग में लिया जा सकता है। दूसरे मापदंड नये सिरे से बनाए जा सकते हैं जो व्यापक अर्थ में उत्पादकता का उद्देश्य सिद्ध कर सकते हैं जिनके लिए ये सब किया जाता है और जिनके प्रति उत्तरदायित्व है उनकी समझ के अनुसार सार्वजनिक हित का प्रयोजन पूर्ण कर सकते हैं।

सर्वथा हास्यास्पाद और कुछ मात्रा में दयनीय स्थिति सरकार के अपने

अधिकारक्षेत्रों मे है। उदाहरण के लिये पचायत पद्धति पर निगरानी रखनेवाला विभाग प्रति वर्ष लगभग ३ से ४ हजार सरकारी आदेश जारी करता है। इसके अलावा अन्य अनगिनत, लगभग १०,००० से २०,००० स्मरपत्रों के द्वारा संस्थाओं को और अन्यों को क्या करना चाहिए और क्या नहीं करना चाहिए इसकी सूचना दी जाती है। इनमें अधिकांश अर्थात् ८० से ९० प्रतिशत सरकारी आदेश सामान्य बातों से संबंधित होते हैं। उदाहरण स्वरूप कुछ संदर्भो में वस्तु व्यय के लिए रु. १० या रु. २० तक का व्यय करने की अनुमति के संदर्भ में अपवाद स्वरूप अर्थात् जहाँ दैनन्दिनी सूचनाओं की सीमा से बाहर कार्य किया हो या उसका अनुपालन किया जा सकता हो, ऐसी छोटी छोटी विभिन्न बातों की अनुमति देने के संदर्भ में होता है। जिलाधीशों को भी ऐसी अनुमति दी जाती है। ऐसा नहीं है कि सरकारी विभाग क्रूर, घटिया या तानाशाह है। वह अधिकांशत: पितृभाववाला होता है। परंतु वास्तविक विषय यह है कि क्या भारत को अपने विभाग और सचिवालयों की आवश्यकता इस बात के लिए है ? क्या बुद्धिमान लोगों को क्षेत्र से बाहर निकालकर निदेशकों के वर्ग पर इसके लिए नियुक्त करते हैं ? इसमें कितना अधिक अपव्यय होता है। न केवल आर्थिक व्यय के संदर्भ में (इसमें भी रु. १०/- या रु. २०/- व्यय करने की कार्यवाही भी कई बार विभिन्न स्तर पर होने के समय के संदर्भ में कई अर्थो मे अधिक होती है।), परंतु उसमें विषयांतर होकर ध्यान अन्य दिशा में बँट जाता है, इसे रोकने का कार्य प्रमुख है। यह केवल इस विभाग की ही कोई एक घटना नहीं है। यह तो पुराने सरकारी विभाग के ढाँचे का अनुसरण करता है। और तकनिकी विभाग भी इस ढर्रे से अलग सोचकर काम नहीं करते हैं। इस समय सरकारी तकनिकी अधिकारी से संबंध नियमों को तोड़ा नहीं जाता है। नियमावलि-पुस्तक या फाइल से प्राप्त सूचना के अनुसार बातों को स्वीकृत किया जाता है। हाँ, उनके नीचे कार्यरत कर्मचारियों की निजी फाईलें और संबंधित विभिन्न व्यय के वाउचर, दैनिक भत्ते और बिल तथा हिसाबों को ये संभालकर रखते हैं।

इन कार्यालयों की हिसाबी पद्धति के संदर्भ में अन्य सभी बातों से भिन्न रूप से कुछ प्रबंध करने की आवश्यकता है। आज की पद्धति एक शताब्दी या इससे पूर्व की है। उसके अंतर्गत ८-१० फुट चौडे नकद रजिस्टर (वहियाँ) रखने का प्रबंध है। इतना ही नहीं प्रत्येक पंचायत संघ और पंचायतों में भी शायद बड़ी संख्या में विभिन्न उद्देश्य एवं विवरणो के लिए ऐसी वहियाँ होती हैं। जब इस पद्धति का आरंभ हुआ तब वह बहुत सरल थी, परन्तु आज उसका प्रारूप वैसा नहीं रहा है। एक-दो घंटे का

थोडा परिचय करते हुए, कुछ निश्चित समय पर विभिन्न विभागों का नाम देकर आय-व्यय की स्थिति की जानकारी प्राप्त करने में वह सहायक सिद्ध नहीं होती। (इस संदर्भ में लेखा विशेषज्ञ उचित निर्णय दे सकते हैं) कुछ वर्ष पूर्व ही दुही पंजीकृत पद्धति अपनाने की आवश्यकता थी। बहुत संभव है कि उसमें ऐसे सकट हों जिन्हे पार करना असंभव हो। परंतु इन संस्थाओं के हिसाब औद्योगिक या व्यापारिक संस्थानो की तुलना में, अधिक दुसह नहीं हो सकते। कम से कम मद्रास में, जो लोग संघों का लेखा रखते हैं वे बहुत समर्थ हैं और उनकी लेखा दक्षता को देखते हुए उन्हे सचालनक्षम और उचित पद्धति में परिवर्तित हो पाने के लिए कठिनाई नहीं हो सकती है।

भारतीय सरकारी ढाँचे में, आर्थिक पक्ष के आधार पर भयंकर पद, अभिनिवेश है। वह स्वातंत्र्योत्तर समय की नई देन नहीं है, अपितु पूर्व के ब्रिटिश शासन से उत्तराधिकार के रूप मे प्राप्त है। आज सरकार के अनेकानेक कामों के कारण से और विशेषत: स्थानीय शासन पद्धति के कारण अधिकतम संख्या में लोग एक दूसरे के संपर्क मे आते हैं, इसके कारण यह पद अभिनिवेश बहुत बढ गया है। यह अभिनिवेश अनेक वार हास्यास्पद रूप से अभिव्यक्त होती है। उदाहरण के लिये एक ही संस्था के सरकारी और गैरसरकारी सदस्यों के बीच यात्रा भत्ता और आनुषंगिक व्यय के भुगतान करने की बात में अंतर रखे जाते हैं। पूरे भारत में स्थिति ऐसी ही है। शायद, तमिलनाडु जैसे राज्यों में, कम से कम आर्थिक बातों मे समानता और समान समझ रखनेवाला समाज होने के कारण वह अधिक खिन्नता उत्पन्न करनेवाला और असंगत प्रतीत होता है। केवल कानून बनानेवाले ही बता सकते हैं कि एक ही संस्था के निर्वाचित अशासकीय असरकारी सदस्यो को विभिन्न स्तर के मानने के पीछे क्या कारण हो सकता है। शायद, सत्ता और अधिकार का हस्तक बनाए रखने के लिए उनके द्वारा की गई व्यवस्था की ओर वे पीछे मुडकर देखना नही चाहते। इससे धन की बचत किसी स्तर पर नही होती, परंतु सही अर्थ में यह सामंतशाही समाज का निर्माण करती है, जिसके अंतर्गत एक व्यक्ति दूसरे से ऊँचा या नीचा है। इस तरह की व्यावहारिक स्थिति में कोई भी दो व्यक्ति समान नहीं रहते। यह सुनने में आया है कि गाँव वालों में अधिक दुर्भागी लोगों के प्रति भेद बनाए रखे जाते हैं, परंतु उनके द्वारा अपनाये जानेवाले भेद सरकार द्वारा प्रमाणित और प्रभावी किये गए कानूनी रूप से अधिकृत व्यवहार में प्रवर्तित भेद की तुलना मे कुछ भी नहीं है। इससे आश्चर्य होता है कि ऐसे उदाहरणों के साथ काम करना होता है तब कमसे कम मद्रास राज्य में गाँव के लोग वैसा ही करते जो वे देखते हैं।

विशेषकर पंचायत संघों की सेवामें रखे गये कार्यकर्ताओको नियत्रण में रखने का विषय, राज्य स्तर पर कठिन बना रहता है और इसके कारण बहुत अधिक समय व्यय होता है। इसके कारण निर्णयों में परिवर्तन करने के लिए भी वाध्य होना पड़ता है। यह विषय किसी भी अर्थ मे सरकारी के विरुद्ध असरकारी व्यक्ति के संबंध को लेकर नहीं है क्योंकि निर्वाचित संस्थाओ का क्षेत्र के किसी भी व्यक्ति पर नियंत्रण नहीं होता। शासकीय प्रबंधन ढांचे से ही समस्या निर्माण होती है। एक और खण्ड विकास अधिकारी भूराजस्व विभाग अधिकारी और जिलाधीश और दूसरी ओर जिला और प्रान्त स्तर के तकनिकी अधिकारी-इन दोनों के नियंत्रण के अधिकार को लेकर पुनर्रचना और समाधान की निरन्तर आवश्यकता रहती है।

दूसरी समस्या प्रवर्तमान स्थिति का हार्द समझकर उसके अनुसार कार्य करने की पद्धति के अभाव के संदर्भ में है। आज भी १९२०, या १९४७ या १९५० का समय ध्यान का केन्द्र बना हुआ है। वही का आग्रह वही परामर्श जानकारी जमा करने का वही क्रम जारी है। वस्तुएँ, कर प्रयास आधी शती पूर्व या उससे भी पहले या शायद स्वतंत्रता के वर्ष में भी जो सार्थक थे वे अब निरर्थक हो गए हैं। सजगता अब भी आसानी से नहीं आती ही। उदाहरण के लिये अभी भी ग्रामपंचायत द्वारा वाहन, व्यवसाय एवं निवास कर जमा करने पर अधिक ध्यान दिया जाता है। यद्यपि निवास कर से अत्याधिक परिश्रम से कुछ बड़ी राशि प्राप्त हो जाती है परन्तु वाहन कर और व्यवसाय कर से प्राप्त होनेवाली आय अधिकांश ग्राम पंचायतों की आय के दो प्रतिशत भी नहीं है। इन दोनों का विवरण सुरक्षित रखने के लिये और लेखनसामग्री पर होनेवाला व्यय प्राप्त राशि से अधिक होता होगा। यह विषय ग्रामीणों पर मानसिक और सामाजिक बोझ के समान है। फिर भी मन:स्थिति ऐसी बनी हुई है कि पंचायतों की कारवाई की सफलता का निकष इन करों की माँग, तकाजा और जमाराशि के विवरण के आधार पर, किसी ग्रामपंचायत द्वारा या उनके समूह द्वारा मुहल्लों में की गई प्रकाशव्यवस्था के आधार पर किया जाता है।

पंचायत संघ परिषदों ने अपने कुछ अधिकार क्षेत्रों में अपेक्षाकृत अच्छा कार्य किया है। बहुत संभव है कि इस संदर्भ में उनके अपने कर्मचारी और जिलाधीश जैसे उच्चाधिकारियों की ओर से प्राप्य परामर्श या सूचना अधिक लाभदायक सिद्ध हुई हो। उनका सम्बन्ध अपने क्षेत्र की ग्राम पंचायतों के साथ गाँव के रास्ते, पेयजल की सुविधा, विद्यालय आरम्भ करना, विद्यालय के भवन निर्माण करना, उनकी ३-४ वर्ष की कार्यवाही पर ध्यान रखना, आदि सभी बातों में समानता होती है। इसके साथ-

साथ, जिनमें क्षमता है ऐसे लोगों ने स्थानीय कर और अन्य आय से अपने क्षेत्र की पंचायतों को निश्चित हिस्से से अधिक दिया है।

इसके अतिरिक्त, सभी विषयों की ओर ध्यान दिया जाए, तो मद्रास में ग्रामपचायते अत्यधिक सफल सिद्ध हुई हैं। स्वयं आरंभ किये गये करो द्वारा अभिवृद्धित संसाधन उत्पन्न करने के उनके प्रयास उल्लेखनीय हैं। सामान्य रूप से ऐसे विषयों की न तो जानकारी रखी जाती है न ही उसकी प्रशंसा की जाती है। इस संदर्भ मे दोष वरिष्ठ समन्वय कर्ता या निदर्शनकर्ता या परियोजना प्रबंधक का है। पूर्व के समय में, लगभग १९५८ तक, ग्राम पंचायतें और जिला बोर्डो की कार्यवाही और वार्षिक प्रबंधकीय बातों का ठीक प्रकार गहन वृत्त प्राप्त होता था। वर्ष के अंत के बाद एक वर्ष की अवधि में ही विवरण प्राप्त हो जाता था। १९५८ के पश्चात राज्य स्तर पर ऐसा कोई विवरण उपलब्ध नहीं है, केवल १९६०-६१ वर्ष की परामर्शदाता जिला विकास समिति के एक दो वृत्तांत ही उपलब्ध हैं। परन्तु इसका आंशिक कारण यह है कि इसे कानूनी रूप से मद्रास विधान मण्डल के सामने प्रस्तुत करना अनिवार्य है। उसका आंशिक कारण है कि १९५८ के कानून के तहत जिलाधीश पंचायतों का निरीक्षक है, परंतु जिला स्तर पर जानकारी का ऐसा कोई वृत्तांत न तो तैयार किया जाता है न ही लोगों के आगे खुला रखा जाता है। परिणाम स्वरूप पंचायतो के सम्बन्ध में जानकारी सुनकर ही एकत्रित करनी पड़ती है। उदाहरण के लिये निर्देशन या सूचना के स्तर पर भी इसकी जानकारी नहीं मिलती कि ६०० से अधिक पंचायतो ने अपने क्षेत्र मे विस्तरण कर लागू किया है या नहीं। यह वास्तव में वैकल्पिक कर है जो पंचायते ले सकती हैं परंतु पिछले चार वर्षो में वह वास्तविक रूप में असंख्य नियमों और सूचनाओं में उलझा हुआ है। इनमें से ५५० पंचायतें अकेले कोयम्बतूर जिले में हैं जिन्होंने कर जारी किया है। इसकी जानकारी प्राप्त नहीं होती कि इस कर के द्वारा कितनी राशि प्राप्त की गई, परंतु दो या तीन पंचायतों में, नमूने के अध्ययन के अनुसार, राशि लगभग रु. ५,०००/- से अधिक पाई गई है।

पंचायतों की संख्यात्मक सफलताएँ उनके अपने प्रयासो से प्राप्त नही हुई हैं। राज्य सरकारों द्वारा उन पर कुछ कर लगाये गये हैं और प्राप्त राशि उन्हें लौटा दी जाती है और (निवासकर जैसे अनुदान जैसे) कुछ अन्य अनुदान पंचायत संघों द्वारा पंचायतों को दिये जाते हैं। सफलताएँ सड़कों का निर्माण, पेयजल में सुधार और विद्यालयों के भवन बनाने की क्षमता में प्राप्त हुई हैं जिस पंचायत संघ में वह पंचायत है, इसके कर की आय केवल अनुसूचित जातियों के लिये ही नहीं है तो सार्वजनिक

कार्यों के लिए ही रखी गई राशि को छोड़कर, पंचायते या उस क्षेत्र के लोगों का आर्थिक योगदान कुल व्यय का २० से ५० प्रतिशत तक होता है। यह प्रावधान संभवत: समृद्ध पंचायत संघों में स्थित दरिद्र पंचायतों को लाभदायी नहीं है। पंचायत संघ पंचायतों की योगदान राशि में परिवर्तन कर सकते हैं, उनके संघ की जमाराशि से निश्चित भाग पूरा कर सकते हैं, इसको अनेक बार स्वीकार किया जाता है, परंतु इतना पर्याप्त नहीं होता है। प्रवर्तमान ढाँचे में अधिकांश सदस्यों को पंचायत संघ द्वारा दी जानेवाली यह छूट सामान्यत रूप से स्वीकार नहीं होगी।

निश्चित कार्ययोजनाओं के अलावा भी ग्रामपंचायतों ने कई कार्य किये हैं। सफाईकार्य, मुहल्लों मे प्रकाश का प्रबंध, आदि पारंपरिक बातों में वह प्रभावी है। यद्यपि यह सभी पर यह नहीं हे, पर कई स्थानों मे है। पंचायतों द्वारा वृक्षारोपण प्रचलित है। पंचायत के कृषि कर्मचारियों के प्रयासों से यह संभव होता है। जिनके पास साझे की भूमि है ऐसी कुछ पंचायतों ने पचास से अधिक एकड भूमि को पंचायत द्वारा वृक्षारोपण कार्यक्रम के अंतर्गत ले लिया है। विभिन्न प्रकार के फल और अन्य पौधे लगाये जाते हैं। जहाँ रिक्त भूमि की कमी है, जैसे तंजावुर के बड़े भाग में, वहाँ बुआई के लिए सैंकडों एकड के क्षेत्र हैं। कभी कभी ऐसी बुआई रास्तों और मुहल्लों की सीमाओं पर होती है।

कुछ पंचायतें स्वास्थ्य लोककल्याण, सामाजिक शिक्षा आदि के कार्यक्रम एवं केन्द्र के समान कार्यकलाप करती हैं और कुछ पंचायतें तो विद्यालय के भोजन के लिए प्रति छात्र २ पैसे का हिस्सा भी देती हैं। इस बात में वे स्वतंत्रत होती हैं। संघों के समान पंचायतों को भी कानूनी और प्रशासनिक सूचनाओं के जाल में उलझा दिया गया है। एक दृष्टांत - जिला समितियों को अपने कोष से मातृसंगम को प्रति माह रु. ५/- के योगदान के लिए प्रस्ताव की सरकार से अनुमति माँगनी पड़ती है। ऐसे विचित्र कानून और प्रावधानों की भीड पंचायत संस्थाओं में अत्यधिक है।

तामिलनाडु के ग्रामीण क्षेत्र में ऐसे प्रबंध की अत्यधिक संभावनाएँ हैं जो जीवंत रूप से कार्यरत है। वास्तव में प्रत्येक पंचायत क्षेत्र में आज बिजली का प्रबंध है। इसे शायद कुछ वर्षो में प्रत्येक गाँव में और निवासीक्षेत्र मे विस्तरित किया जाएगा। प्रत्येक पंचायत संघ क्षेत्र में इस समय पाँच से छह हाईस्कूल हैं। उसके अधिकांश छात्र किसान परिवार के होते हैं जिनमें एक तिहाई छात्राएँ हैं। प्रत्येक संघ क्षेत्र में औसतन ४५० से ५०० लोगों को सार्वजनिक राजस्व से वेतन दिया जाता है। उसमें लगभग ३०० से ४०० विद्यालय के शिक्षक हैं जिनमें १०० महिलाएँ हैं। ग्रामीण अधिकारियों

की संख्या लगभग १५० है। उन्हें बहुत सीमित अधिकार दिया जाता है। यद्यपि एक शताब्दी प्राचीन परंपरा के कारण कार्य अत्यन्त कठिन और नियंत्रित होते हुए भी वृत्तांत देने और लेखा रखने के संदर्भ मे उन्हें पर्याप्त जानकारी और अनुभव है। पचास के लगभग व्यक्ति समुदाय विकास और राष्ट्रीय विस्तरण सेवा के काम में, पचास विस्तरण, तकनिकी और अभियन्ता के कार्य में और उतने ही पचास कारकुनी के कार्य में माहिर हैं।

प्रत्येक क्षेत्र में पर्याप्त मात्रा मे कुशल व्यक्ति उपलब्ध होने से, प्रवर्तमान कार्यकलापों को अधिक सुचारु ढंग से चलाना निःशंक सम्भव है। समस्याओं के प्रति जागरूक बनतें हुए विषम स्थितियाँ निर्माण करने के स्थान पर उनकी मॉग की ओर अधिक ध्यान देकर लोगों को प्रोत्साहित करते हुए उन्हें सक्रिय बनाने के लिए छोटे छोटे नवीन सुधार करने की आवश्यकता है। शिक्षित लोग जहॉ प्रवृत्त हैं वहीं स्थायी निवास करें ऐसे कदम उठाने चाहिए। इसके लिए सुविधापूर्ण निवासो की आवश्यकता है। आज हर पंचायत संघ में दूर दराज के कुछ गाँवों में दो महिला अध्यापिकाओं के लिए निवास बनाए गये हैं। यह आवश्यक होते हुए भी दो निवासों से ठोस परिणाम प्राप्त नहीं होगा। यह अपेक्षा हमेशा नहीं की जा सकती कि जिस परियोजना के अंतर्गत लोगों को नौकरी पर रखा गया हो, उनके द्वारा निवास तैयार किये जाएँ। यथार्थ स्थिति यह है कि स्थानीय लोगों को ऐसा करने के लिए प्रोत्साहित किया जाए तो उनके द्वारा लगाए गए धन का उचित फल प्राप्त होगा यह भाव उत्पन्न किया जाए। यदि उन्हें विश्वास दिलाया जाए कि किराया नियमित रूप से प्राप्त होता रहेगा तो गॉव के कुछ लोग ऐसे निवास बनाने के लिए आगे आयेंगे। किराये के लिए भत्ता (किराये के निवास उचित रूप से प्राप्त हो उतना) एवं कुछ ऋण का भी प्रबंध किया जाए जिससे सुविधा प्राप्ति के लिए-जैसे कि रेडियो सेट - व्यय कर सकें तो कई अध्यापक भीडभाडवाले नगरो से गाँवों की ओर, जहाँ वे काम करते हैं वहां आने के इच्छुक होंगे। इसके लिए होनेवाला व्यय इस समय ऐसे लोगों के वेतन पर किये जा रहे व्यय का छोटा सा अंश ही होगा परन्तु इसके अच्छे परिणाम प्राप्त होंगे।

अन्य विभिन्न छोटे संशोधन भी सोचने पड़ेंगें या जब वैसी पद्धति और व्यक्ति उसमें कार्यरत होंगे तब मिलते रहेंगे। प्रवर्तमान निष्क्रियता की स्थिति में यह करना असंभव है। बाद में तो वह कल्पनाविलास ही प्रतीत होगा। अन्य ध्यान देने योग्य समस्या व्यक्तियों को एक स्थान से दूसरे स्थान या एक कार्य से दूसरे कार्य के लिए स्थानांतरण करने के संदर्भ में है। संस्थानवादी प्रशासन में व्यक्तियों के स्थानांतरण

की प्रवृत्ति इसलिए आवश्यक थे कि या तो व्यक्ति इतना तिरस्करणीय हो गया हो कि प्रतिनिधि के रूप में व्यर्थ हो जाए या वह समाज में इतना अधिक घुलमिल जाए कि उस पर किसी प्रकार का विश्वास न किया जा सके। आज संस्थानवादी उद्देश्य नहीं रहा है तब स्थानांतरण की आवश्यकता नहीं रही है, वह निरर्थक हो गई है। यदि कोई व्यक्ति अधिक दायित्व उठाने के लिए सक्षम है तो अधिकांश संदर्भों में उसे अन्य स्थान पर स्थानान्तरित करने का प्रश्न ही नहीं रहता। हाँ, ऐसा तभी आवश्यक होगा कि उसे अपने राज्य में उसी ढॉचे में सबसे ऊँचे पद पर पदोन्नति देनी हो। यह स्पष्ट नहीं होता कि असक्षम व्यक्ति गाँव या क्षेत्र में, अधिकार के स्थानों, सचिवालयों या नगर के केन्द्रों में क्यों है ? इन स्थानों पर ऐसे लोग होने चाहिए जिन्होंने अपनी क्षमता सिद्ध की हो। वास्तव में यदि कोई कुछ करने की इच्छा रखता है या कर सकने का दावा करता है तो वह सभी के लिए घातक है।

जनतंत्र के केन्द्र में ऐसे कुछ प्रश्न, जो स्व शासित संस्थाओ के कार्यों के लिए अर्थपूर्ण नहीं है उसमें पंचायत पद्धति के पक्षधर या आलोचक आरंभ से ही प्रभावी हैं। यह विषय हमेशा चर्चा में रहता है और उसने प्रवर्तमान पद्धति के संदर्भ में अन्य सभी विषयों को अप्रभावी कर दिया है। भ्रष्टाचार, चुनाव की समस्या और पंचायत पद्धति में अधिकारियों का स्थान ये तीन कारण अत्यन्त विषम स्थिति और आक्रोश उत्पन्न करते रहते हैं।

भ्रष्टाचार की जो पहली समस्या है वह पंचायत पद्धति का अंग नहीं है। उसका आरंभ इस पद्धति की रचना के साथ नहीं हुआ था। पंचायत पद्धति में उसका चलन भारतीय समाज में अन्य स्थानों के समान है। कुछ मात्रा में जैसा कहा जाता है या नाटकीय ढंग से प्रस्तुत किया जाता है यह चलन में होगा, परंतु इस समस्या का समाधान कम से कम इस समय तो उस पद्धति मे नहीं है। प्रवर्तमान पद्धति किसी अन्य स्थान पर बड़े समाज में कार्यान्वित हो उसके ही उपायों का स्वीकार कर सकती है। इसके पश्चात के अध्याय में प्रवर्तमान पंचायत संघ एवं ग्रामपंचायतों में व्याप्त भ्रष्टाचार और अनुचित रीतियों की संभावनाओं के सम्यन्ध में अनुमानित वार्ते दर्शाई गई हैं।

दूसरी समस्या चुनाव और वयस्क मताधिकार के संदर्भ में है। एक छोर पर जनतत्र के प्राण समान चुनाव है, तो दूसरे छोर पर वे भारतीय समाज को विनाश के गर्त में ले जा रहे हैं। जातिवादी संवेदनाएँ और विघटनवाद की वृद्धि के संदर्भ में बहुत कुछ कहा गया है। एक दृष्टि से, चुनाव के साथ इसका संबंध होगा, परन्तु केवल

चुनावों को इस प्रकार अवरोधों का श्रेय देना समस्या का अधिक सरलीकरण होगा। वास्तव में विषय केवल यही है कि जान बूझकर लोगों को यदि एक प्रतिनिधि का चयन करना हो तो, कोई भी व्यक्ति इसका चयन कैसे कर सकेगा ? संसदीय पद्धति में किसी भी स्थान पर इसका चयन कैसे किया जाता है ? स्वतंत्र रूप से इस संदर्भ में निर्णय कर सकनेवाला व्यक्ति शायद ही मिले। अपने देश में भी व्यक्ति अपने साथी, गुट या स्वयं जहाँ निवास करता है वहाँ के समूहो के अनुसार निर्णय करता है। सामान्य रूप से व्यक्ति अपने मित्रों का अनुसरण करता है। विशेष रूप से जो विशेष समस्या के साथ जुडे हुए हैं उसके अनुसार मतदान करते हैं। भारतीय गाँवों में स्थिति ऐसी बनी हुई है कि उन्हें अपनी रुचि के समूहो के साथ संलग्न होने के अत्यन्त सीमित अवसर प्राप्त होते हैं। नेतृत्व करनेवाले किसी भी समूह का भाग बनने के लिए व्यक्ति समूह के अनुसार, परन्तु आँख मूंदकर निर्णय करते हैं। जाति आधारित मतों की यही सब से बड़ी आधारशिला है। अगर ऐसी बातों के प्रति जातिवाद का प्रभाव सीमित करने का उद्देश्य हो तो, ग्रामीण समाज में ऐसे रुचि और आकर्षण के केन्द्रों की रचना करनी चाहिए। इस समय सर्वसम्मति आदि के जरिये सामान्यत रूप से जिन उपायो की वकालत की जाती है वे रास्ते शायद अपने ढंग से अच्छे होंगे परंतु वास्तव में सही हल नहीं है। जब लोगों की सर्वसम्मत होने की इच्छा होगी तब वे दूसरो के कहने की प्रतीक्षा नहीं करते।

तीसरी बात, इन संस्थाओं की सांविधानिक रचना की पद्धति की चर्चा भी आज न तो भूमिका निर्वाह करने को है, न ही दायित्व निभाने की, न किसी प्रकार का कार्य करने की होती है। मद्रास जिला विकास परिषद का विवरण देखने से अनुमान होता है कि जिलाधीश अध्यक्ष ने अपने हिस्से का दायित्व प्रशंसनीय ढंग से निभाया है। संभव है कि जिन बैठकों में वह अध्यक्ष के रूप में उपस्थित हो वहाँ उसकी पद्धति कुछ भयोत्पादन की होती है, परंतु यह स्थिति तो निर्वाचित सदस्य जब अध्यक्ष पद पर होता है तब भी बनी रहती है। इस संदर्भ में समाधान यही हो सकता है कि अपना दायित्व निभाते समय सदस्य के रूप मे उन्हें अपने अधिकार को प्रभावी ढंग से प्रस्तुत करना चाहिए। उसमें सीमा बनाए रखने या अधिक मात्रा में बचाव करते रहने से वास्तव में कुछ भी करने की स्थिति में वह नहीं रहेगा।

यही बात जिला या संघ के स्तर पर विधान मंडल सदस्य या संसद के सदस्यों की तथाकथित बाधा के प्रभाव के बारे में हो सकती है। संस्थाएँ और उनके सदस्यों में सहायक बनने की स्थिति उत्पन्न करनी चाहिए। उन्हें अपरिपक्व मानने पर संस्थाओं

को सतोष होगा, परन्तु ऐसा करने से उन्हें स्वयं या भारतीय समाज को किसी प्रकार का लाभ नहीं होगा।

देश में प्रवर्तित सामान्य मापदंड के अनुसार आज मद्रास की पंचायत पद्धति, भले ही वह ग्राम, संघ या जिला स्तर की हो, फिर भी उसने विशेष कुछ बुरा नहीं किया है। इसका श्रेय निर्वाचित सदस्य और अधिकारियों को है। कुछ सामान्य मतभेद, विवाद आदि होते रहने पर भी, समग्र रूप से कार्यवाही अत्यन्त सरल और सुसंवादीत होती है। भारत के अन्य स्थानों की तुलना में वह उत्तम है और निर्वाचित सदस्यों द्वारा अधिकारियों पर प्रभाव जमाने की बात या मनमानी करवाने की बात स्थानीय स्तर पर निश्चित रूप से सीमित रहती है।

परन्तु, अधिकांश सफलताएँ वास्तव में जटिल रचनावाले ढाँचे के लिए निरर्थक हैं। जहां बहुत अधिक प्रावधान हैं वहां सेवाएँ स्वयं ही अधिक गतिविधियां कर सकी होती। जिला विकास परिषद या पंचायत संघ परिषद कोई ऐसी यांत्रिक व्यवस्था नही है जिसके द्वारा मद्रास में अधिकारियों और अशासकीय सरकारी सदस्यों के बीच संपर्क बनाए रखना सहज हो। जो निर्वाचित होने की क्षमतावाले होते हैं उनमें और स्थानीय सरकारी स्तर के ढाँचे मे कार्यरत अधिकांश सदस्यों के बीच सम्पर्क स्थापित करनेवाले अधिकांश साधन वैविध्यपूर्ण और पुराने हैं। स्थानीय अधिकारी और लोगों के बीच की सांस्कृतिक खाई इतनी गहरी नहीं है कि संस्था में समस्याओं का समाधान करने के लिए बैठकें आयोजित करने की आवश्यकता हो। संभवत: भारत के अन्य राज्यों में उसकी आवश्यकता पड़ती होगी, जहाँ शासकीय और अशासकीय सदस्यों के बीच कुछ मनमुटाव हो।

परन्तु, *यह सब होते हुए भी सांस्कृतिक खाई अभी भी बनी हुई है। हो सकता* है कि वह भिन्न स्तर पर है। ऐसी सांस्कृतिक खाई एक ओर विस्तृत नीति तय करने में और निर्देशन कार्य करवानेवाले कार्यकर और दूसरी तरफ पारंपरिक आदेशदाता अधिकारियों और लोगों के बीच है। निकट आने वे इस समय एक दूसरे से अधिक दूरी बनाए हुए हैं। यह वही खाई है जो पंचायती ढाँचे में विभिन्न प्रकार की समस्याओं का कारण बनी हुई है।

जब १९५८ में कानून की रचना हुई तब मद्रास पंचायत विधेयक को प्रस्तुत करनेवाले मंत्री ने निवेदन दिया था कि इस नये ढाँचे की चार-पाँच वर्ष की कार्यवाही के पश्चात् सरकार विधानमण्डल की एक समिति का गठन करेगी जो इस पद्धति का पुनरावलोकन करेगी। अभी तक इस समिति का गठन नहीं हुआ है। शायद इस समिति

की रचना करने का समय आ गया है जो प्रवर्तमान पचायत पद्धति के सभी पक्षों का विस्तृत अध्ययन करे।

संदर्भ :

- अब उसका निर्देश किया जाए (पूर्व के वर्षों के) बजट अनुमानों में और संशोधित अनुमानों में जिस आय के रुप मे दर्शाया गया था। फिर भी व्यय के अनुमान अनिवार्य रुप से अधिक थे और कुछ आय अनुमान की तुलान में आधी है।
- सूचनाओं में परिदर्शित है कि एक समय के भोजन की कुल कीमत में स्थानीय भाग कम से कम चार पैसा होना चाहिए (इन चार पैसों मे से पचायतें दो पैसों का सहभाग दे सकती है, शेष लोगों से सीधा चंदा जमा कर देना चाहिए।) इन्ही पैसों का हिसाब पूरा हो जाने के बाद एक समय के भोजन व्यय में से काटकर सरकार की ओर से यदि ६ पैसों का योगदान प्राप्त हो सके। इस समय, चार पंचायतों में सार्वजनिक चदा इकट्ठा करने की स्थित है। *कन्याकुमारी* जिले में प्रावधान भिन्न रुप से है उसे छोड़कर पचायतें सार्वजनिक चदा प्राप्त न होने के कारण (यदि प्राप्त हो तो भी अनिवार्य आर्थिक अन्तर उस स्थिति में भरनी शेष रह जाती है।) या उनके कोष (फंड) में अन्य किसी कारण से किसी प्रकार का चंदा देने की क्षमता नहीं रखती है। परिणामत. यदि विद्यालय के भोजन का केन्द्र चालू रखना हो तो किसी न किसी रुप में असह्य विवरण बनाने पड़ते हैं। किसी केन्द्र को मना करना सभव नही है या इसके लिए विद्यालयों को अधिकार नही है। कई पंचायती यूनियनों में से जिन्होंने अपने भाग से सहायता करने की उत्सुकता दर्शाई है उन्हें ऐसा कहार रोक दिया गया है कि ऐसा नहीं हो सकता।

१४. भ्रष्टाचार एवं पंचायत पद्धति (मात्रा खोजने का प्रयास)

पंचायत पद्धति के साथ जुड़े लोगो मे व्याप्त और वृद्धिंगत कुरीतियों के बारे में बहुत कुछ प्रतिक्रियाएँ होती रहती हैं। ऐसे विधानो के समर्थन या विरोध मे विश्वास के साथ कुछ भी कह पाना कठिन है, क्यों कि जो कुछ कहा जाता है या जो आक्षेप होते हैं उसकी सत्यता परखने करने का कोई मार्ग नहीं है। पंचायत के पैसों के गबन के दावो के संदर्भ में, १९६३ में, संसद में एक प्रश्न उठाया गया था। उस समय बताया गया था कि प्रत्येक जिले में औसतन ऐसी दस घटनाएँ घटी थीं। प्रश्न खारिज हो जाने के कारण उसका उत्तर नहीं दिया गया था। संक्षेप में इन आक्षेपों का सारांश इस प्रकार हो सकता है।

चुनावी कुरीतियाँ

कहा जाता है और सामान्य रूप से उसका स्वीकार भी किया जाता है कि मतदाता को पंचायत के चुनावों में मत देने के लिए ग्रामपंचायतों में दो रुपये और नगर पंचायतों में पाँच से दस रुपये मिलते हैं। निस्संदेह पंचायत पद्धति के अति उग्र विरोधी भी अधिकारपूर्वक नहीं कहते हैं कि यह आक्षेप प्रत्येक गाँव, प्रत्येक नगर और प्रत्येक मतदाता पर लागू होता है, परन्तु गर्भित रूप से यह समझा जाता है कि यह बात सर्वसामान्य है और स्पर्धा की स्थिति मे लगभग ५० प्रतिशत घटनाएँ ऐसी होती हैं। जिस स्थान पर स्पर्धा नहीं होती वहाँ भी निर्विरोध निर्वाचित व्यक्ति द्वारा, उम्मीदवारी वापस लेने के लिए जिनके साथ समझौता किया है उसे उनके समर्थको को पैसा दिया गया होता है। धन का प्रत्यक्ष व्यवहार उम्मीदवार और मतदाता के बीच सीधा नहीं होता, परन्तु संबंधित मतदाता के समूह के प्रमुख के साथ होने की बात चर्चा में रहती है।

अघटित दबाव और धन के लालच का दूसरा अवसर पंचायत के अध्यक्ष और

उपाध्यक्ष के चुनाव के समय आरम्भ होने का दावा किया जाता है। इन पदों के प्रत्याशी विभिन्न प्रकार से पंचायतों के निर्वाचित (पाँच से पंद्रह) प्रतिनिधियो पर दबाव डालते हैं। यह एक रास्ता बहुत स्पष्ट प्रतीत होगा कि संबंधित समूह को पारिवारिक दबाव, रिश्ते या निष्ठा के आधार पर निवेदन करने के रूप मे डाला जाता है। यह भी कहा जाता है कि एक तरीका यह अपनाया जाता है, और उसमें वृद्धि हो रही है कि अपने संभवित परन्तु असमंजस युक्त समर्थकों को, अध्यक्षपद के लिए प्रत्याशी बनने के दिन से मतदान के दिन के समय तक सामूहिक पर्यटन के लिए (या उस समूह की इच्छा हो तो तीर्थयात्रा पर ले जाने का लालच दिया जाता है। उसका प्रतिव्यक्ति व्यय रु. १०० से रु. २०० तक का माना जा सकता है। इस प्रकार में भी ऐसी दृढ मान्यतावाले लोग बताते हैं, स्वीकार भी करते हैं कि ऐसी स्थिति प्रत्येक पंचायत में नहीं पाई जाती। संबंधित परिस्थिति में ऐसी घटनाओं की मात्रा २० से ५० प्रतिशत होने का अनुमान है।

एक और समय पंचायत संघ के अध्यक्ष और उपाध्यक्ष के चुनाव के समय रहता है। जैसा आक्षेप पंचायत के अध्यक्ष के चुनाव के संदर्भ में होता है वैसा ही यहाँ भी होता है। इस मामले में संलग्न लोगों के बीच पंचायत संघ परिषद के अध्यक्षपद पर निर्वाचित होने के लिए सफल उम्मीदवार रु. ४० हजार तक का व्यय कर सकता है। सामान्य राशि रु. १० हजार से रु. २० हजार मानी जाती है। सभी ३७५ परिषदों में यह नहीं होना स्वीकार करते हैं। यह होते हुए भी, पंचायतों की तुलना में परिषदों मे उसका व्याप अधिक होने की धारणा है।

निर्वाचित प्रतिनिधियों की कुरीतियाँ

भ्रष्टाचार का प्रमुख आक्षेप पंचायतों के अध्यक्षपद पर और पंचायत संघ परिषदों के अध्यक्षपद पर निर्वाचित व्यक्तियों के विरुद्ध है।

पंचायत अध्यक्ष

अध्यक्ष द्वारा सम्बन्धित पंचायत के क्षेत्र में चल रहे कार्य के व्यवस्थापन के संदर्भ में भ्रष्टाचार की अधिक सम्भावना मानी जाती है। ग्रामीण सड़कें, जलसंचय प्रकल्प, विद्यालय के भवन आदि कार्यों में प्रति पंचायत औसतन वार्षिक व्यय लगभग रु. २,५०० होता है। यह आक्षेप किया जाता है कि ऐसे कार्यक्रमों में पंचायत के अध्यक्ष १० से २० प्रतिशत राशि खा जाते हैं। अन्य छोटे छोटे भागों में ऐसे अनुचित

कार्य होते है। उदाहरण के लिये पंचायत द्वारा कराई जा रही बुआई में (बाडी, बाग आदि) पंचायत अध्यक्ष निजी आर्थिक लाभ पाते हैं। यह होते हुए भी, सब इसको स्वीकार करते हैं कि इस रूप में प्राप्त वार्षिक राशि रु. ५०० से अधिक नहीं होती।

पंचायत संघ परिषद के अध्यक्ष

इन अध्यक्षों के विरुद्ध होनेवाले आक्षेप विभिन्न प्रकार के परंतु परोक्ष होते हैं। अध्यक्ष के पास किसी प्रकार की कार्यकारी सत्ता नहीं होने से, परिषद की राशि भी उनके पास नहीं होती। प्रमुख आक्षेप परिषद की नियुक्ति करते समय आर्थिक लाभ प्राप्त करने के संदर्भ में है। इसमें सबसे बड़ी संख्या अध्यापको की है। इस मे नई नियुक्तियों की संख्या अधिक नहीं होती। वर्ष में २० से ३० शिक्षकों की नियुक्ति होती होगी। एक शिक्षक का औसत वार्षिक वेतन रु. १,२०० है।

दूसरा आक्षेप परिषद के कार्यक्षेत्र में शिक्षकों के स्थानांतरण के संदर्भ में होता है। सामान्य रूप से यह कार्य पंचायत के कमिशनर करते हैं और उन्हें अध्यक्ष को इसकी जानकारी पहुँचानी होती है। वर्ष में एक बार होनेवाले वार्षिक स्थानांतरण अध्यक्ष, आयुक्त और विद्यालय के उप निरीक्षक की बनी हुई समिति करती है। प्रत्येक संघ में स्थानांतरण की मात्रा भिन्न भिन्न होती है, परन्तु सामान्य रूप से उसका प्रभाव पाँच से पन्द्रह प्रतिशत अध्यापकों पर पड़ता है। यहाँ विचारणीय विषय यह है कि अध्यक्ष का प्रभाव अधिक होने से ऐसी स्थितियों में अध्यक्ष के पास आर्थिक लाभ पाने के अवसर विशेष रहते हैं।

अध्यक्ष और अन्य निर्वाचित प्रतिनिधियों के विरुद्ध महिला कर्मचारियों के साथ अनुचित व्यवहार करते रहने का भी आरोप लगता रहता है। अध्यापकों में बड़ी संख्या (सभी ग्रामीण क्षेत्रों में लगभग एक तिहाई) महिलाओं की रहने से उनके साथ दुर्व्यवहार होने की बात कही जाती है।

अध्यक्ष के विरुद्ध एक और आक्षेप जीपकार के दुरूपयोग के संदर्भ में, साथ ही अपने क्षेत्र और खेतों में पंचायत संघ के विस्तरण कर्मचारियों द्वारा अतिरिक्त ध्यान देने के सम्बन्ध में होता है।

यात्रा भत्ते के सम्बन्ध मे ऐसा ही आक्षेप रहता है। इस समय अध्यक्ष के लिए वार्षिक रु. १,२०० का यात्रा भत्ता नियत किया गया है, निश्चित राशि पंचायत संघ परिषद को तय करनी होती है। एक संघ में, अध्यक्ष के नियत यात्रा भत्ता समेत, निर्वाचित सदस्यों के लिए यात्रा भत्ता और दैनिक भत्ते का वार्षिक व्यय रु. १,८०० से

रु. ३,००० के बीच होता है। इसलिए संघ द्वारा ऐसे धन का अधिक से अधिक दुरूपयोग रु. ६०० से रु. १,८०० तक का ही होने की संभावना है।

कर्मचारियों द्वारा भ्रष्टाचार

ग्राम पंचायतों मे वैसे बहुत ही सीमित कर्मचारी होते हैं और उसकी सारी कार्यकारी सत्ता स्वयं पंचायत अध्यक्ष के पास होती है। इसलिए इन कर्मचारियो पर ऐसे आक्षेपों का प्रश्न नहीं उठता।

इन कर्मचारियों में सब से बड़ा समूह अध्यापकों का है। कन्याकुमारी, पश्चिम रामनाथपुरम् और तिरुनेलवेली जिलों को छोड़कर प्रत्येक संघ की सेवाओं में औसतन साठ से अस्सी विद्यालयो में ८०० अध्यापक होते हैं। प्रधान अध्यापक को तो दो बातो का ही आर्थिक व्यवहार करना होता है। अन्य विद्यालय की साधनसामग्रीं (शैक्षणिक साधन) क्रय करने के संदर्भ में है जिसके लिए केवल रु. १०० की अल्प राशि दी जाती है। इस राशिका दुरुपयोग होने का आक्षेप भी सीमित मात्रा में होता है।

इसके अतिरिक्त आयुक्त से लेकर ग्राम सेवक तक के कर्मचारियों की संख्या २५ से ३० होती है और अपने अपने क्षेत्र में पंचायत संघ के कार्यक्रम करते रहने का दायित्व उन पर रहता है। उनमें से अधिकांश अधिकार में अत्यन्त सीमित आर्थिक व्यवहार होता है। उनमें से ही कुछ लोग अपने अधिकार क्षेत्र में कार्यरत कर्मचारियों के द्वारा, जिन पर निरीक्षण संबंधी या तकनिकी अधिकार है उन कर्मचारियों के द्वारा, ऐसे व्यवहार पर निगरानी रखते। बहुत ही अस्पष्ट परंतु चालाकी के साथ आक्षेप किया जाता है कि ये लोग कुछ युक्ति प्रयुक्तियों से बड़ा आर्थिक लाभ पाते रहते हैं। ऐसे समूह में बडी संख्या के ग्राम सेवक अपने अधिकार के धन में से चालाकी के साथ कुछ भाग अपहृत कर लेते हैं। पंचायत के विस्तार अधिकारी और कृषि विस्तरण अधिकारी अपने अधिकृत कार्यो में, जिनके साथ उनका संबंध बना रहता है उनसे छोटी-मोटी राशि प्राप्त करते हैं यह अवधारणा बनी हुई है। पहले प्रकार के (पंचायत के विस्तरण अधिकारी) अधिकारी आय लेखा निरीक्षण (आडिट) के समय पंचायत के अध्यक्षों से धन लेते हैं और दूसरे प्रकार के (विस्तरण) अधिकारी विभिन्न स्थितियों में धन प्राप्त करते हैं। इंजनियर कर्मचारियों के विरुद्ध भी ऐसे ही आक्षेप होते हैं। अन्य विस्तरण अधिकारी - उद्योग और शिक्षा विभाग को प्रधान सेविका और अन्य क्षेत्रीय कर्मचारी भी छोट बडे आर्थिक लाभ पाते हैं ऐसा माना जाता है। यह भी माना जाता है कि आयुक्त बड़ी लेनदेन में बड़ा आर्थिक लाभ पा लेते हैं। इसके अलावा जीप के

दुरुपयोग का आक्षेप तो वैसा ही बना रहता है।

मात्रा खोजने का एक प्रयास

जैसा कि इससे पूर्व बताया गया है किसी निश्चित स्थान पर भ्रष्टाचार की वास्तविकता निर्धारित करने का कार्य कठिन है। भ्रष्टाचारयुक्त परिवेश में इससे विपरीत कुछ भी प्रमाणित करना कठिन ही नही असंभव है। बहुत संभव है कि जो कुछ भी कहा जाता है यह वास्तविकता पर आधारित हो और आक्षेप के अनुसार उसका दायरा भी बड़ा हो। इतना मानते हुए उसकी अत्यधिक मात्रा कितनी हो सकती है ? यहाँ इस संदर्भ में एक अनुमान प्रस्तुत है।

अध्यापक

जैसा कि ऊपर कहा गया है एक विद्यालय के पास भोजन प्रकल्प के लिए सरकारी अनुदान के रु. १०० (वार्षिक) और प्रासंगिक तथा अन्य उद्देश्यों के लिए वार्षिक लगभग रु. १०० की राशि होती है। विद्यालय भोजन परियोजना के संस्थाकीय कुल व्यय मे से सरकारी अनुदान आंशिक (६० प्रतिशत या इससे कम) है। उस संदर्भ में हो रहे व्यय की ४० प्रतिशत राशि गाँव से ही जमा करनी पड़ती है (आधी पंचायत से और आधी गाँव के लोगों से) और सरकारी अनुदान ऐसे लोगों के योगदान पर अवलंबित रहता है। इस बात का संकेत आवश्यक है कि नियत राशि जमा न कर सकने की क्षमतावाले विद्यालाय एवं पंचायतें बहुत ही सीमित हैं। कुछ स्थानों पर पंचायत अपना हिस्सा अवश्य देती है और अध्यापक शेष आवश्यक राशि जमा कर सकते हैं, अधिकांश स्थानों पर ऐसा नहीं होता है। पंचायत को पंचायत संघ पूरी राशि देने के लिए इच्छा दर्शाता है तो भी उसे ऐसा नहीं करने दिया जाता। साठ प्रतिशत अनुदान चालीस प्रतिशत राशि लोगों की योगदान राशि पर निर्भर करती है, इसलिए प्रपंच होता है। यह तभी संभव हो सकता है जब विद्यालय भोजन कार्यक्रम के साथ उसके प्रारम्भकर्ता के रूप में या उसे नियंत्रित करने के या संचालन के संदर्भ में एक या अन्य रूप से संलग्न सभी स्तर के लोगों की स्पष्ट या मूक सहमति होती हो।

ऐसी स्थिति में हिसाब में दबाव से और जान बूझकर प्रपंच होता हो तब आर्थिक गबन वास्तव में बहुत छोटी बात है। ऐसा गबन होना भी संदेहयुक्त है। प्राय: कई स्थानों पर भोजनार्थियों की संख्या अधिक दर्शाई जाती है। भोजन की मात्रा अपेक्षित दस पैसे के मूल्य के आसपास रहती हुई इतनी मात्रा में खाद्यान्न की मात्रा

बढाने के लिए यह होता है। बहुत सभव है कि इस व्यवस्था में शायद कुछ उदाहरणों में कुछ पैसे अधिक से अधिक महीने के व्यय में से रु. १० का गबन होता हो।

ग्रामसेवक

ग्रामसेवकों के समर्थन और विरोध में बहुत कुछ कहा जाता है। ऐसे कथन और प्रतिवाद से उसकी छवि इतनी अधिक खराब बना दी गई है और ऐसी अवधारणा बनी है कि उनकी परिस्थिति में सब कुछ सम्भव है। ऐसा ही एक आक्षेप कुटिलतापूर्वक धन ऐंठने का है, परंतु वास्तविकता यह है कि ग्रामसेवक के पास प्रति वर्ष राहतनिधि (सबसिडी) के औसतन रु. ७०० और निदर्शन योजना के अंतर्गत प्रतिवर्ष लगभग १६० रु. अपने क्षेत्र में निदर्शन खेत चलाने के लिए होता है। इस रु. ८५०/- की सीमित राशि से बड़ा लालची भी कितना धन ऐंठ सकता है यह समझा जा सकता है।

विस्तरण अधिकारी (पंचायत)

विस्तरण अधिकारी (पंचायत) का पदनाम शायद यह निर्देश करता है कि वह पंचायत प्रवृत्ति के प्रोत्साहन, दृढता और विकास के साथ जुडा हुआ है, परन्तु इस पद पर नियुक्त व्यक्ति वास्तव में केवल एक लेखा निरीक्षक (आडिटर) है। संभवतः उसे प्रत्येक पंचायत का त्रैमासिक और वर्षांत में लेखा निरीक्षण करना पड़ता है, परन्तु प्रत्येक पंचायत संघ मे औसतन पैंतीस पंचायते रहती हैं इसलिए वह उनका त्रैमासिक लेखा निरीक्षण शायद ही कर पाता है। इसके उपरांत अन्य उच्चाधिकारी भी उसका अधिक समय खा जाते हैं और वास्तव में तो वह केवल नियंत्रण अधिकारी सा बना रहता है जिसे पंचायत के खाते से बड़ी राशि निकालनेवाले पंचायत के अध्यक्षों की गुप्त जानकारी ज्ञात करनी है। पंचायत के अध्यक्षों के संदर्भ में उसके महत्त्वपूर्ण पद की दृष्टि से उसे पंचायत का अध्यक्ष छोटी सी राशि घूस के रूप में देने की बात करता है और वह इसको स्वीकार करता तो इसमें कोई आश्चर्य नहीं। यह कहना कठिन है कि कितनी बार ऐसा होता होगा। सामान्य रूप से प्रत्येक लेखा निरीक्षण के समय पचीस रूपये का उल्लेख होता है।

अन्य विस्तरण अधिकारी

एक संघ के ग्रामोद्योग कार्यक्रम पर होनेवाला आवर्तक व्यय वार्षिक रु. १०,००० से कम होता है। उसका लगभग एक तिहाई भाग तकनिकी कर्मचारियों पर, दूसरा एक

तिहाई भाग निर्धारित वेतन पर व्यय होता है और शेष ३,००० से ४,००० रूपये आकस्मिक व्यय, किराया, छोटे उपकरण, अन्य सामग्री आदि पर होता है। इसी प्रकार सामान्य रूप से कार्यक्रम पर व्यय हो रहे वार्षिक रु. २४,५०० से लगभग रु. ७,५०० की राशि ग्रामसेवको के माध्यम से राहतनिधि के रूप में, रु. ९३०० की राशि पंचायत के उद्यानों के लिए और लगभग रु. १०,००० की राशि किसानों के द्वारा व्यय की जानेवाली कीटाणुनाशक दवाएँ एवं संघ के कार्यालय के लिए बाहर से क्रय की जाने वाली वस्तुएँ, कामदारों पर होनेवाला व्यय खर्च आदि के लिये सीधी पंचायत को दी जाती है। बहुत कम संघो में सम्पूर्ण राशि व्यय की जाती है। शर्तों या कुछ परियोजनाओं के संदर्भ मे स्थानीय आवश्यकता के अभाव के कारण कुछ राशि निःसंदेह बिना व्यय किये बची रहती है। पशुपालन के लिए सामान्य क्रम में वार्षिक रु. २,८०० की राशि दी जाती है जो अधिकांशतः बैलों के क्रय आदि में परोक्ष सहायता के रूप में होती है।

प्रधान सेविका और उसके दो सहायकों के पास तो इससे भी कम राशि होती है, क्योंकि इस कार्यक्रम के लिए सरकारी अनुदान इस समय वार्षिक लगभग रु. १,००० है। केवल एक विस्तरण अधिकारी (शिक्षा) का कार्यक्षेत्र विस्तृत है और उसके प्रमुख विषय प्राथमिक शिक्षा के लिए इससे भी अधिक व्यय करना है। फिर भी उस पर नियंत्रण केवल नाम मात्र है। अधिक से अधिक वह किसी गरीब शिक्षक को भयभीत कर सकता है, परन्तु उसका कार्याधिक्य, समुदाय विकास और राष्ट्रीय विस्तरण सेवा के अधिक्रम मे उसकी दयनीय स्थिति ऐसा कुछ करने में सहायक नहीं है।

इंजनियरी कर्मचारी वर्ग और आयुक्त

अधिकारियो में अब शेष रहता है संघ का इन्जिनियर, उसके सहायक और स्वयं पंचायत संघ के आयुक्त। संघ का इन्जिनियर कनिष्ठ होते हुए भी इन्जिनियर बिरादरी का सदस्य होता है। जो बिरादरी को लागू है वह उसको भी लागू होता है। पंचायत संघ का आयुक्त सरकारी यंत्र का अधिक सुदृढ उसमें अधिकांश तहसीलदार होते हैं और राजपात्रित पदोन्नति की अपेक्षा के साथ पंचायत में कम से कम एक वर्ष के लिए सेवारत रहे हुए होते हैं - सदस्य होता है इसलिए अनुमान लगाया जा सकता है कि वह आयुक्त अन्य किसी सरकारी अधिकारी के समान व्यवहार करता होगा। पंचायत संघ की सेवा में होने से चाहे किसी स्तर पर हो, उसमें किसी प्रकार का अन्तर नहीं आता।

एक अन्य व्यक्ति विशेष उप तहसिलदार संघ का कर्मचारी नहीं होते हुए भी

संघ के लिए ऋण विभाग में सेवारत होता है। आयुक्त द्वारा खण्ड विकास अधिकारी की हैसियत से दिए जा रहे विभिन्न प्रकार के ऋण के लिए किसानों द्वारा भेजे गये आवेदनपत्र की छानबीन की प्रक्रिया मे वह सहायता करता है। यहाँ पर भी पारंपरिक प्रक्रियाओं से ही गुजरना होता है। वास्तव में ऋण कार्यक्रम के साथ संघ के ढाँचे का संबंध सीमित होता है, दिया जानेवाला ऋण, संघ के बजट और बहियों में अंकित नहीं होता है।

इस विवरण से यह माना जा सकता है कि निम्नस्तरीय अनुमान के अनुसार, संघ का प्रत्येक कर्मचारी आर्थिक लाभ पाने में रुचि रखता है और धनलोलुप है। जो बाते प्रस्तुत की जाती हैं इसकी संख्या की दृष्टि से यह बहुत बडी समस्या नहीं है। प्रत्येक व्यक्ति अपनी स्थिति के अनुसार अनधिकृत राशि लेता होगा तो भी कुल राशि प्रति वर्ष रु. १०,००० से १५,००० से अधिक नहीं बढेगी और वह छह से आठ लाख की अनुमानित राशि से निकलेगी। बजट का लगभग एकतिहाई भाग वेतन पर व्यय होता है। नि.संदेह नैतिकता की दृष्टि से बात भिन्न हो सकती है। समाज पर पड रहे अनैतिक प्रभाव को सरलता से नापा नहीं जा सकता है। परन्तु इस संदर्भ में हमें शिकायत नहीं करनी चाहिए। किसी भी प्रकार के भ्रष्टाचार का मूल पंचायत संघ परिषदों या पंचायत कार्यालयो में नहीं हैं। कम से कम यह कहा जा सकता है कि कुछ जडें, इन संस्थाओ के बाहर के व्यक्तियों द्वारा हो रहे प्रभावी प्रबंध से उत्पन्न हुई है। विद्यालय के भोजन कार्यक्रम का वित्तीय प्रबंध इसका केवल एक, परन्तु आँखे खोल देनेवाला उदाहरण है।

निर्वाचित प्रतिनिधि

अब लोकप्रतिनिधियों की ओर पुन· ध्यान देना चाहिए। निर्वाचित होने के लिए अत्यधिक व्यय होने की अवधारणा के साथ ही यह निष्कर्ष निकालना सरल है कि इसके कारण निर्वाचित प्रत्येक सदस्य अपने पद के आधार पर जितना भी संभव हो धन लूटने के प्रयास करता रहेगा। यदि ऐसा न होता हो तो यह व्यय वह कैसे सह पाएगा या इन संस्थाओं मे प्रवेश पाने के लिए क्यों इच्छुक होगा ? इसके साथ ही संस्थाओं को गौरव प्रदान करने के लिए बार बार बननेवाली मानसिकता (कि कुछ भी कर पाने के लिए उनके हाथ बँधे हुए हैं, उनके पास सीमित अधिकार और सत्ता है) ऐसे निष्कर्ष को सुदृढ बनाता है कि अन्य सत्ताओं के अभाव में ये लोग गलत ढंग से धन जमा करते हों तो यह निष्कर्ष, एक दृष्टि से, कुछ आकर्षक है और लोगों की

प्रवर्तमान मान्यताओं के साथ सुसंगत है।

कुछ निश्चित आक्षेपों पर प्रथम ध्यान दिया जाए। आलोचक कहते हैं कि पंचायत का अध्यक्ष इस पद को पाने के लिए धन खर्च करता होगा। यह राशि लगभग दो हजार हो सकती है। ये आलोचक आगे बताते हैं कि पंचायत संघ परिषद के विजयी अध्यक्ष का समर्थन करनेवाले से पंचायत अध्यक्ष को, ऐसे समर्थन के लिए उतनी ही राशि प्राप्त होती होगी, जिससे उसके द्वारा किया गया व्यय उसे प्राप्त हो जाता है परंतु *पंचायत संघ परिषद के चुनाव मे अध्यक्षपद के पराजित अध्यक्ष का समर्थन करनेवाले* पंचायत के अध्यक्ष को स्वाभाविक रूप से हानि सहनी पड़ती है। दूसरी ओर यह माना जाता है कि विजयी अध्यक्ष का समर्थन करनेवाले पंचायत अध्यक्ष अपने पद द्वारा प्राप्त अवसर से, या तो शेष सभी गलत ढंग से धन बनाते हैं, इसलिये वे भी उसी मार्ग से धन लूटते हैं, परंतु पंचायत के अध्यक्ष के हाथ में लेनदेन अधिक मात्रा में नहीं होता और आय भी निर्धारित होती है। जन कार्यक्रमो के कारण कुछ अवसर मिलते हैं। ऐसा होते हुए भी यह कल्पना करना सरल है कि वार्षिक औसत रु २,५०० के कामों से, *चाहते हुए भी कितना पैसा लूट सकता है ? कुछ ठेको से अधिकृत रूप से जितना* पाया जाता है उससे अधिक राशि किसी भी रूप में प्राप्त नहीं हो सकती। और इतना पाने के लिए वह लगभग उतना ही कुशल और कठिन काम करता ही होगा।

अब शेष बचे पंचायत संघ के अध्यक्ष। पंचायत संघ के अधिकांश सदस्य संपन्न व्यक्ति हैं। उनमें से अनेक लोगों के पास निजी मोटरकार या अन्य वाहन की सुविधा है। उनमें से कुछ अनेक अधिकार क्षेत्र के विद्यालय के अध्यापकों से या उन्हें प्राप्त सत्ता के आधार पर लाभ पाने के लिए समर्थ संपन्न हैं, और अन्य व्यक्तियों से आर्थिक लाभ पाते रहने की संभावना है। ऐसा होते हुए भी, विजय पाने के उपरान्त चुनाव में व्यय किये गये रु. ४०,००० या इससे आधा व्यय भी करनेवाला अध्यक्ष, निर्वाचित होने के पश्चात् केवल पाँच वर्ष की समयावधि में, रिश्वत लेकर या ऐसा दबाव डालकर उतना व्यय पूरा कर सकेगा, यह मानना कठिन है। यह भी ध्यान रखना चाहिए कि सामान्य रूप से ऐसा व्यक्ति पुन: निर्वाचित होने की इच्छा रखता है। अपने अधिकार क्षेत्र में बार बार संपर्क में आनेवाले सभी या उनमें से अधिकांश लोगों से वर्ष में पचास रूपये की रिश्वत देने के लिए बाध्य करनेवाला अध्यक्ष पुन: निर्वाचित होने की आशा शायद ही रख पाऐगा। और ऐसा करेगा तो स्वीकार्य मानदंड या भय की अनुभूति कितनी मात्रा में होगी इसे शायद ही कोई जान सकता है।

बहुत संभव है कि चुनाव प्रक्रिया के दौरान अधिक व्यय करके निर्वाचित होने

वाले अधिकांश लोग उनके द्वारा खर्च किये गये धन को वापस पाने की इच्छा रखते होंगे (सहज रूप से ध्यान दें कि १९६५ के पचायत चुनावों मे पंचायतों के ४०.५ प्रतिशत सदस्य, ६४.२ प्रतिशत पंचायत के अध्यक्ष और २२ प्रतिशत पंचायत संघ परिषद के अध्यक्ष निर्विरोध निर्वाचित हुए थे।) अन्य स्थानो पर होता है वैसा ही यहाँ पर भी होता होगा, परंतु इन स्पष्ट वास्तविकताओं का अर्थ यह नहीं निकलता है कि अपने अधिकार क्षेत्र की संस्थाओं में वे ऐसा ही कहते हैं। इसी विचार प्रक्रिया को राज्य या राष्ट्रीयस्तर तक ले जाएँगे तो उसकी निरर्थकता स्पष्ट रूप से प्रतीत होगी। इतना व्यय कर सकनेवाले व्यक्ति, साधन और संपत्ति की दृष्टि से मूल्यांकन न करें तो भी, प्रभावशाली होते है। निर्वाचित होने के कारण प्राप्त स्तर पर उनकी प्रतिष्ठा बढाने में सहायक सिद्ध होगा और इसके परिणाम स्वरूप उनका प्रभावक्षेत्र विस्तृत होगा। ऐसी मन.स्थिति वाले प्रभावशाली लोग आज धन प्राप्त कर सकते हैं और करते भी हैं और अधिकांश अपने समर्थक, साथियो और शुभचिंतको से प्राप्त करते हैं। वे ऐसी संस्थाओ के साथ जुड़े होते हैं इसलिए विशेष अंतर नही पडता। इस बात से भी कोई अंतर नहीं पड़ता कि ये संस्थाएँ पंचायत के रूप मे पहचानी जाती है।

कारण और संभवित उपाय

इसमे सदेह नहीं है कि अन्यत्र प्रवर्तमान है वैसा ही सत्ता के दुरुपयोग और वित्तीय लाभ का कलंक सार्वजनिक जीवन के समान इस समय की पंचायत पद्धति में भी है। फिर भी, न केवल मात्रात्मक, परन्तु संस्थाओं में होनेवाले कार्यकलापों की मात्रा की तुलना मे, अन्यत्र उच्च स्तर पर व्याप्त मात्रा यहाँ पर अत्यन्त न्यून है। सचमुच ही वह साधारण है। यह स्थिति पंचायत पद्धति में कार्यरत लोगों के किसी गुणविशेष के कारण नहीं, भले ही वे अवश्य अधिक सदाचारी होंगे या उनके दुर्गुण सीमित होंगे। तो भी जिस परिस्थिति और परिवेश में वे काम करते हैं उसमें असीमित दुर्गुणों को प्रेरित करने की संभावना नहीं है। अधिकांश दुरुपयोग, वास्तव में, पद्धति में अधिका मात्रा में स्थित और स्थानीय स्तर पर त्वरित भूलसुधार या सतर्कता की परंपरा को शिथिल करनेवाले बाहरी बंधनों से उद्भूत होते हैं। आगे बढकर साहस या कौशल प्रकट करने की संभावना ही समाप्त कर देनेवाली ऐसी बंधनयुक्त पद्धति ही नगर के सार्वजनिक मापदंड अपनाने की ओर ले जानेवाले देनेवाले मार्ग हैं। इन संस्थानो का शासन करनेवाले बाहरी नियंत्रणोंने विरोधी लक्षणोंने, अपने सामाजिक मापदंड और सामाजिक नियंत्रणों को वास्तव मे निरर्थक कर दिया है।

प्रश्न किया जा सकता है कि पद्धति इतनी चुस्त हो और व्यक्ति लोगों के हित में कुछ करना चाहता हो परन्तु उसका आरंभ करने का या संपत्ति का संचय करने का थोडा अवसर भी न मिलता हो तो ग्रामीण क्षेत्रों के अधिकतर लोग उसमें क्यों जाना चाहते हैं ? ऐसा करने के लिए कोई उन्हें निमंत्रण तो देता नहीं है। अपने काम के प्रति चाहे कितने भी वे उदासीन या गैरजिम्मेदार हो और कभी-कभी उससे घृणा करते हों तो भी वे (इन संस्थाओं के) कर्मचारी तो हैं ही नहीं, वे विद्यालय के अध्यापक या समुदाय विकास और राष्ट्रीय विस्तरण सेवाओं के नौकरी करनेवालो के समान कम आय में निर्वाह करनेवाले निरुपाय कर्मचारी भी नहीं है। आसानी से वे संस्था को छोड़ सकते हैं। परन्तु क्या वे ऐसा करेगे ?

चाहे कितनी भी सीमाओ से बंधे हों तो भी इस संस्था का अस्तित्व नि:शंक है ही और प्रवर्तमान समय में भी वे अवश्य ही गौरवशाली संस्थाएँ हैं। हमें समझ लेना चाहिए कि जो लोग सार्वजनिक जीवन के गौरवपूर्ण पद के पारिवारिक या वैयक्तिक रूप से इच्छुक होते हैं वे ऐसे पदों से दूर नहीं रह पाएँगे। अगर वे इसकी उपेक्षा करेंगे तो जिन के साथ उनका मेल नहीं है ऐसे लोग उस पद को छीन लेंगे। बिना चुनौती के ऐसा तो हो ही नहीं सकता। प्रतिष्ठा का पद छोड देना सामाजिक रूप से आत्महत्या होगी। इस पद को छोड पर उससे भी अधिक प्रतिष्ठा प्राप्त करने की सम्भावना होगी तभी कोई उसे छोड पाएगा। देश में ऐसी घटनाएँ हुई हैं, परन्तु वह समय भिन्न था। आज का स्थिति ऐसे बहिष्कार के लिए प्रेरित करनेवाली प्रतीत नहीं होती है।

इन संस्थाओं में प्रवेश पाने के लिए एक प्रत्याशी को सभी प्रचलित मार्गो को अपनाना पडेगा। एक बार संघर्ष निश्चित हो जाने पर जिस मार्ग का प्रयोग अन्य करते हैं उसी मार्ग को उसे भी अपनाना पड़ेगा या फिर अनिच्छा से चुनाव से हट जाना होगा। इसलिए विभिन्न गुटों के प्रभाव की जानकारी प्राप्त कर लेना, संभवित समर्थकों को भारतदर्शन प्रवास के नाम से प्रचलित पर्यटनों हेतु ले जाना और अध्यक्षपद के लिए रु. ४० हजार का व्यय करना घटित होता है। यह प्रक्रिया विशाल और शक्तिशाली ढाँचे का भाग है। पंचायत और भोलेभाले ग्रामीण जैसे शब्दों के साथ जुड़े अनेक रोमांचक तत्त्वों के कारण, यहाँ तो कुछ नया अनोखा अवश्य होगा, नया सूर्योदय होगा इस आशा की रश्मिरेखा भी निर्माण करनी पड़ती है, परन्तु यह कैसे हो सकेगा ? यदि ऐसी ही स्थिति हो तो इस समय हैं वैसे कानून और कार्यपद्धति न होते। सर्व प्रथम ग्रामीण नेता और ग्रामीण प्रजा ने इसमें परिवर्तन करते हुए नये सिरे से उसे बनाया होता। आज जो लोग उन्हें आदेश देते हैं उनको ही क्या करना, कैसे करना, क्य

करना और कहाँ छोड़ देना जैसी सूचनाएँ उन्होंने दी होतीं। परन्तु उन्होंने वैसा नहीं किया है। उपलब्ध नियम और लक्षणों के अनुसार स्थिति निर्माण की बात उन्होंने स्वीकार कर ली है। ये नियम और लक्षण ग्रामीण-भूमि पर अनावश्यक लगते हों तो इसमें उनका दोष नहीं है। खेल खेल लेने की स्वीकृति शायद उनका दोष होगा, परन्तु हम उनसे वही ही तो करवाना चाहते थे।

उपर्युक्त परिचर्चा का अर्थ यह नहीं है कि पचायत संस्थाओं मे, अधिकारियों में, निर्वाचित प्रतिनिधियों में, भ्रष्टाचार, पद या प्रतिष्ठा के दुरूपयोग की समस्या नहीं है। इस समय प्रवर्तमान स्थिति को क्षम्य कहने की बात भी नहीं है। और ऐसा भी अर्थ नहीं निकाला जाता है कि आधारभूत रूप से पुनर्रचना किये बिना उनमें से किसी बात का उपचार नहीं हो सकेगा। यहाँ पर किया गया प्रयास तो केवल जो कुछ कहा जाता है उसमे उसकी वास्तविक मे मात्रा कितनी है इसे खोजने का और ऐसी घटनाओं को प्रोत्साहक या सहायक बननेवाली रही कुछ बातों के प्रति ध्यान आकर्षित करने तक सीमित है।

ऐसी घटनाओं का प्रमुख कारण और इसका उपचार दायित्व के प्रश्न के साथ जुडा हुआ है। इसमें शायद ही संदेह रहता है कि दायित्व के संदर्भ में कुछ परपराएँ हों और जिनके प्रति जो व्यक्ति कानूनी और कार्यशैली के रूप में जिम्मेदार हो ऐसे लोग अपने अधिकार का उपयोग करते हैं तो आज प्रचलित भ्रष्टाचार दूर होगा। आज स्थिति ऐसी बनी हुई है कि पंचायत पद्धति में प्रत्येक निर्वाचित या नियुक्त व्यक्ति का दायित्व वास्तव में स्थानीय स्थिति से बाहर है और जो है वह भी सुचारु ढंग से निर्दिष्ट नहीं है।

परिवर्तन के लिए दो मार्ग हैं। एक मार्ग प्रवर्तमान परंपराओं को सुचारु रूप से सुगठित करते हुए जिनके द्वारा सत्ता का उपयोग किया जानेवाला है उनमे दृढता एवं अच्छे बुरे की समझ पैदा करने का है। नि:संदेह ! इस मार्ग को केन्द्रस्थ ढाँचे में अपनाना होगा। फिर भी कुछ भी नहीं हो सकता या न हो तो भी प्रवर्तमान स्थिति से मुक्ति पाने में यह मार्ग बुरा नहीं है। भ्रष्टाचार आदि बुराइयाँ जितनी मात्रा में चालू रहेंगी वे या तो ऐसे सत्ताधीशों की विफलता के कारण या संबंधित लोगों की प्रकृति के कारण होंगी।

मुक्ति का दूसरा मार्ग स्थानीय स्तर पर ही दायित्व की भावना को उत्पन्न करने का है। पंचायत पद्धति की अवधारणा में स्थानीय दायित्व का सिद्धान्त तो आज भी है, परंतु वास्तविकता वैसी नहीं है। दायित्व का अर्थ (क्रियान्वित किया जाए तो)

यह है कि सभी अधिकारी पूर्ण रूप से संस्था के निर्वाचित नेता या उसकी समुचित समिति के अधीन रहेगे। उन्हे अपनी असहमति प्रकट करने के लिए स्वतंत्रता रहेगी, परन्तु उन्हें दी जा रही सूचनाओं के प्रति वे बाध्य होंगे। संबंधित संस्था के नेता उच्चतर संस्था के अधीन होंगे और वह संस्था उससे भी बड़ी संस्था के अधीन रहेगी। यदि ऐसा हुआ तो निर्वाचित लोग और अधिकारी अपेक्षित स्थानीय सीमा में रहकर कार्य करेंगे। ऐसी व्यवस्था में असंतुष्ट पुरुष या महिला को भी अपनी शिकायत प्रस्तुत करने का सहज ही अवसर प्राप्त होगा और सामाजिक तौर पर शिकायत का कारण यदि मान्य होगा तो उस विषय में निश्चित सुधार किया जाएगा।

इस व्यवस्था में यह आशंका भी है कि आज जो व्यवहार भ्रष्ट माने जाते हैं वे कुछ विशेष क्षेत्रो में भ्रष्टाचार न माने जाऐ यह स्थिति भी उत्पन्न हो सकती है कि विशेष परिभाषाएँ निरर्थक और प्रतिकूल प्रतीत होने से कुछ क्षेत्र, आज तक भ्रष्ट माने जाने वाले तरीकों पर कानूनी ठप्पा लगा कर उन्हे भ्रष्ट की परिभाषा से मुक्त कर दे। उदाहरण के लिये वे अध्यक्ष के पास सड़क तैयार करने की स्वतंत्रता हो या उसे सड़क तैयार करवाने के कार्य को प्रारम्भ करने के लिए कहा गया हो, तो पंचायत अपने अध्यक्ष को, स्वयं को व्यवसाय में होनेवाले घाटे की प्रतिपूर्ति के रूप में या उसके अतिरिक्त परिश्रम को ध्यान में रखकर उसे मानद् वेतन देने का निर्णय ले सकती है। ऐसे व्यक्ति को अन्य रूप में भी पुरस्कृत किया जा सकता है। उदाहरण के लिये किसी भवन के साथ उसके नाम को जोड़ा जाए। इसका परिणाम अंततोगत्वा यही होगा कि आज जो गैरकानूनी माना जाता है वह कुछ क्षेत्रों में कानूनी मान लिया जाएगा।

अनुचित व्यवहार के उदाहरणों में, स्थानीय अधिकार प्राप्त व्यक्ति अप्रसन्न व्यक्ति को उसे सताने वाले व्यक्ति के विरुद्ध शिकायत करने का यथासंभव अवसर देगा। अप्रसन्न व्यक्ति और उसे सताने वाला (अधिकारी वर्ग या निर्वाचित में से)-दोनो एक ही गुट के हों तो भी सही माना जायेगा।

पक्षपात या अपनी पसंद को प्राथमिकता देने की समस्या शायद अधिक जटिल है। संभव है कि जिसे हम पक्षपात कहते हैं वह - उदाहरण के लिये अपने निजी रिश्तेदार, जातिपाँति या अपने समूह के लोगों को सहायता करना - कई ग्रामीण क्षेत्रों में पक्षपात न भी माना जाता हो। बहुत संभव है कि वास्तव में आरम्भ से ही अधिकार प्राप्त व्यक्ति का यह दायित्व का भाग मार्ग और उचित व्यवहार माना जाता हो। फिर भी स्थानीय क्षेत्र के मूल्यों के प्रामाणिक मापदंडों के अनुसार न्याय होगा ही। ऐसे मूल्यों में परिवर्तन लाते हुए उन्हें एक समान स्वरूप में ढालने के लिये धैर्य, सजगता

और कार्य की स्थिति के अनुसार निरतर संवाद बनाए रखने की आवश्यकता है। अगर समाज के अधिकांश भाग को परिवर्तन आवश्यक प्रतीत होगा तो परिवर्तन की स्थिति अवश्य आयेगी।

संदर्भ

१. जी. ओ. (गवर्नमेन्ट आर्डर) १३२१, आर. डी. एण्ड एल ए रिवन्यु डिपार्टमेन्ट और विधानसभा)। ८ जुलाई, १९६३
२. पंचायत प्रमुखों के सीधे चुनाव के समर्थन मे एक प्रमुख तर्क, उठा ले जाने की प्रवृत्ति को निर्मूल करने के संदर्भ में है।

१५. समस्या

भारत की ग्राम पंचायत पद्धति के प्राचीन प्रकार के सम्बन्ध में बहुत कुछ ज्ञात है और बहुत कुछ कहा गया है। परन्तु ऐसी ग्रामीण संस्थाओ का उद्गम प्राचीन समय से हो तो भी उत्तर एवं दक्षिण समेत अधिकांश क्षेत्रों में अभी तक उसका अस्तित्व था, इस विषय में जानकारी अत्यन्त सीमित ही है। तेरहवीं और उन्नीसवीं शताब्दी तक भारतीय समाज को हिला देनेवाले राजनीतिक एवं आर्थिक परिवर्तनों के बावजूद सन् १८०० तक हर तरह से, क्षेत्र की सरकारों से साथ संबंधित आंतरिक प्रबंधकीय सभी विषयों का संचालन इन संस्थाओं के पास था। उनका व्यवहार पारंपरिक रीतिरिवाजों पर आधारित था इसलिये इसे लेकर विभिन्न क्षेत्रों में अन्तर रहता था। उनकी सर्वोपरिता आन्तरिक रूप से धर्म से बाह्य थी और बाह्य रूप से बृहद् क्षेत्र को प्रभावशाली राजनीतिक सत्ता से जुड़ी थी। वह राजनीतिक सत्ता जितनी मात्रा में रीतिरिवाजों को स्वीकार करती थी और धर्म का पालन करती थी उतनी मात्रा में ये संस्थाएँ और उस क्षेत्र की प्रजा स्वतंत्रता का अनुभव करती थी तथा आर्थिक रूप से समृद्ध और अपेक्षाकृत अधिक मेलयुक्त जीवन जीती थी। कभी कभी राजनीतिक सत्ता (बाह्य दबाव के कारण या उसके विदेशी मूल के कारण) अधिक आग्रहपूर्ण छीन लेनेवाली और अत्याचारपूर्ण बन जाती थी और अपने शासन के विषय में आशंकित हो जाती थी। उससे हताश और जड बन जाती थी। इस पकार के शासन मे प्रजा मुक्तता का अनुभव नहीं करती थी। ऐसे समय में भी ये संस्थाएँ बनी रहीं, अपने अपने क्षेत्र का संचालन करती रहीं और भूमि की समग्र व्यवस्था तथा जहाँ यह पद्धति प्रभावी थी वहाँ भूमि के पुनः विभाजन समेत सार्वजनिक रूप से ध्यान देने योग्य सारे कार्य करती रही थीं।

सन् १८०० में रीति रिवाज और धर्म जिस रूप में समझे जाते थे और व्यवहार में लाये जा रहे थे वे १९वीं शती के उत्तरार्ध और २० वीं शती के प्रारंभिक समय से भिन्न थे। उदाहरण के रूप में देखा जाए तो भूमि से संबंधित किसानों के भूमि एवं फसल के बाद के समय की तुलना में बहुत अधिक थे। इसी प्रकार आज जिन्हें निम्न

और दलित जातियाँ मानी जाती हैं उनका आर्थिक दमन और शोषण नगण्य था। कुछ जातियों का निरंतर आर्थिक या वर्गगत शोषण बाद में शुरु हुआ प्रतीत होता है।

सन् १७५० से १८३० के वर्षों की भारतीय समाज की स्थिति से सम्बन्धित सामग्री उस समय के संग्रहित अभिलेखों में उपलब्ध है। उसे नये सिरे से गंभीरता और पूर्वग्रह रहित होकर पुनः जाँचना चाहिए। इतिहासविद् और लेखक अधिकांश सन् १८६० के बाद के हैं और वे बहुत सारी बातें स्वीकृत करके ही चले हैं। ईसमें बदल होने की आवश्यकता है।

अनेक विद्वानों का कथन है कि शताब्दियों पुराने मत, मान्यताएँ और विचारों को गलत सिद्ध करनेवाली या उसमें गंभीर परिवर्तन करनेवाली १८वीं शती के अन्त और १९वीं शती के आरंभिक समय की सामग्री ब्रिटिश संग्रहालय (अभिलेखागार से) और अन्य अभिलेखों से प्राप्त हो तो भी उन अभिलेखों में दर्शाये गये तथ्यों को स्वीकार कैसे किया जा सकता है। ये विद्वान इस बात का संकेत करते हैं कि समाजविज्ञान की आधुनिक प्रशाखाओ में किसी प्रकार का प्रशिक्षण प्राप्त नहीं किया है ऐसे केवल प्रशासकों द्वारा लिखी गई बातों और निरीक्षण का इस संदर्भ में स्वीकार नही किया जा सकता। परंतु लगता है कि ये विद्वान भूल गये हैं कि आज के भारतीय इतिहास के लेखन का मूल कहाँ है। विद्वान और प्रबुद्ध वर्ग में प्रवर्तमान इतिहास, मान्यताएँ और अवधारणाएँ भी उनमें से निश्चित रूप से चयन किय गये अभिलेखों पर आधारित हैं। अठारहवीं शती और उन्नीसवीं शती के पूर्वाध के भारतीय समाज की प्रकृति और अवस्था के संदर्भ मे इस समय की अवधारणाओं के लिए अन्य अभिलेख ब्राह्मणों द्वारा सुरक्षित धार्मिक ग्रंथ और साहित्य से प्राप्त होते हैं, वास्तव में ब्राह्मणों से संबंधित हैं या उसके भाष्य हैं। सभी सिद्धांत और विचारधाराओं की तरह उसमें भी उसके रचयिता और सीमित अनुसर्ता क्या समुचित मानते थे इसका ही निरूपण है। विशाल क्षेत्र में वह एक यथार्थ बनकर सामने आता है तो भी उसे मान लेना आत्मवंचना है कि सदियों और सहस्त्राब्दियों तक बिना परिवर्तन ही यह यथार्थ बना रहा है। (कालके प्रवाह में से प्रत्येक विचार और विचारधारा में परिवर्तन आता ही है इस पर ध्यान देते हुए ऐसा हो सकता है यह मान लेना संदेहास्पद है) अठारहवीं शती की वास्तविकताएँ अपने स्वयं के विचार और आवश्यकताओं पर आधारित थीं। जिस प्रकार महाराष्ट्र में दशकों तक पेश्वाओं ने शासन किया था इसी प्रकार से जहाँ ब्राह्मणों ने शासन किया था ऐसे स्थानों पर सामाजिक वास्तव (समाज के वास्तविक रुख और व्यवहार) ब्राह्मणों के द्वारा नहीं अपितु प्रचलित परंपराओं से ही प्रवाहित होता था।

सन् १८०० में दक्षिणी भारत और उत्तरी भारत के गाँवों में भूमि के संचालन के संदर्भ में समुदायम् से लेकर निश्चित प्रकार के स्वामित्व जैसे भेद एवं अन्य संस्थागत और प्रक्रियागत प्रथाएँ थीं, परन्तु कम से कम ये बातें समान थीं : अपनी भूमि की जानकारी गाँव स्वय रखता था, गाँव मे कर्णम् (उत्तरी भारत में पटवारी) और ग्रामसेवको के रूप में पहचाने जानेवाले अन्य कुछ व्यावसायिक लोग ये सेवाएँ देते थे। उनकी संख्या विभिन्न स्थानों पर भिन्न भिन्न थी। कुछ गाँवों में एकाध विशिष्ट व्यावसायिक वर्ग के एक से अधिक लोग थे और कुछ गाँवों में निकट के अन्य गाँव के एक दो सेवकों की साझेदारी करते थे। इन सभी लोगों की दखभाल और वेतन देने का दायित्व विभिन्न पद्धति से गाँव निभाते थे। आय की चीजों से उन्हें वैयक्तिक वेतन देने की या भूमिकर का प्रथम भाग मानी जाने वाली राशि से और सभी कृषि उपज से भाग देने की थी।

सन् १७५० के आसपास अधिक अशांत राजनीतिक स्थिति के कारण से अत्याचारपूर्ण शासन का आरंभ हुआ था। इसके पश्चात् सन् १७५० से १८४० के वर्ष बिखराव और पतन के थे। उस दौरान अधिकांश क्षेत्रों की पंचायत पद्धति सभी रूप में सर्वथा समाप्त हो गई। उसके दो प्रमुख कारणों में से एक, तत्कालीन सरकार ने अर्थात् संबंधित क्षेत्र के, भारत के ब्रिटिश सत्ताधीशों ने और अधीन देसी रिसायतों के राजाओं ने राजस्व के अतिरिक्त उपरांत ग्राम कर्णम्, गाँव की भूमि के सभी रेकार्ड और पुलिस को अपने सीधे नियंत्रण में ले लिया। दूसरा, भारत के अधिकांश भाग में और मद्रास तहसील के अन्तर्गत स्थित सभी क्षेत्रो में राजस्व की गणना और निर्धारण कुल कृषि उपज का लगभग ५० प्रतिशत कर दिया।

इस तरह की गणना और निर्धारण करने के कुछ वर्षों के पश्चात् ही राजस्व को, अधिकृत औसतन मूल्य के आधार पर वित्तीय कर में रूपांतरित किया गया। यह रूपांतरण समग्र भारत में हुआ, कुछ क्षेत्रों में थोडा जल्दी, कुछ में थोड़ा विलम्ब से।

राजनीतिक सत्ता द्वारा राजस्व के रूप में कुल कृषि उत्पादन के ५० प्रतिशत ले लेने का कदम ब्रिटिश शासकों द्वारा किया हुआ नवीन परिवर्तन था यह कहना उचित नहीं है। १८वीं शती के उत्तरार्ध के ब्रिटिश अन्वेषकों के अनुसार यह प्रथा और उसके सैद्धांतिक समर्थन का उद्भव अलाउद्दीन खिलजी (सन् १३००) के समय में हुआ था। अलाउद्दीन खिलजी या उसके पश्चात् किसी बादशाह ने (शासक ने) भूमि की चाहे किसी भी प्रकार की गणना की हो, परंतु मद्रास तहसील के तमिल क्षेत्रों एवं अन्य जिलों में से अधिकांश भागों में ऐसी अनुचित वसूली के बारे में, १८वीं शती के

मध्यकाल तक तो, किसी ने सुना तक नहीं था। तमिलनाडु के दक्षिणी रामनद और तिरुनेलवेली जैसे जिलों के लोगों ने सन् १८०० तक इस प्रकार का कोई अनुभव नहीं किया था। ५

भारत को अंग्रेजों की ओर से प्राप्त बड़े योगदानो मे से एक, इस अनुचित वसूली को कानूनी स्वरूप देते हुए प्रत्येक गांव, कस्बा और खेत के सन्दर्भ में उसका जिसे ब्रिटिश शासन की भाषा में पक्षपात या भयविहीन कठोरता के साथ कार्यान्वित करना है। यह कार्य उन्होंने गहन विचार विमर्श के पश्चात् किया और इसका नतीजा 'देसी लोग जिसके अभ्यास्त हैं, उनसे और भारत की भूमि के प्रत्येक अंश और खेत के 'सर्वोच्च भूमिपति' के रूप मे सर्वसत्ताधीश शासकीय सत्ता द्वारा गृहीत किये हुए न्यायपूर्ण अधिकृत भाग के समर्थन में हुआ। उसके विषय मे नि.संदेह विवाद उत्पन्न हुए और उसे जारी करने के समय भी बने रहे थे। सन् १८६० के आसपासकर गणना में संशोधन आरम्भ हुआ और इसके पश्चात यह प्रस्थापित किया गया कि राजस्व औसतन उत्पादन का लगभग आधा भाग और सूखे क्षेत्र के लिए कुल उत्पादन का लगभग ३३ प्रतिशत भाग एवं सजल क्षेत्रों में ४० प्रतिशत से अधिक नहीं होना चाहिए।

लगभग पचास प्रतिशत राजस्व की गणना के अनिवार्य परिणाम हुए। प्रजा को विदेशी सत्ता के अधीन बनाने की आवश्यकता ने अकल्पनीय रूप से प्रत्येक क्षेत्र में समाज को दुर्बल बना दिया। उसके परिणामस्वरूप मदी आई। पचास प्रतिशत राजस्व कभी कभी कुल उत्पादन के ७० से ८० प्रतिशत तक पहुँच गया था[७] इसे लेकर अत्यधिक मात्रा में भूमि वैसे ही पडी रहने लगी। श्रमिकों की स्थिति कुछ अच्छी थी, क्योकि वे कुछ स्वतंत्र थे और उनके लिए एक स्थान से दूसरे स्थान पर स्थानांतरण करने के लिए अवकाश था। कृषि का सत्यानाश हो गया। आर्थिक मंदी की स्थिति का भयावह रूप उभर आया। और फिर अकालों ने जले पर नमक छिड़कने का कार्य किया और मूल्यों में अभूलपूर्व वृद्धि हुई। मद्रास तहसील में लगभग एक शती तक या इससे भी अधिक समय तक यह स्थिति वनी रही।

ऐसे विघातक दबाव के चलते प्राचीन ग्रामीण पद्धति का उन्मूलन हो गया। फिर भी, समुदायम् (अर्थात् समूह) गाँवों के अवशेष वर्तमान शती के प्रारंभ तक इधर उधर छाये रहे परन्तु ये केवल नाम के ही समुदायम् थे। वे तंजावुर जिले के शेष गाँवों से भी समुदायम् १९४० तक अदृश्य हो गये थे। समुदायम् की संकल्पना ओर सीमित उद्देश्यों के लिए उनकी कार्यपद्धति के संकेत, 'महिमायी' समूह एवं मंडल - संघों के स्वरुप

में, रामनद तथा मदुराई के आसपास के क्षेत्रों में आज भी खोजे जा सकते हैं। ऐसी समूह-संस्थाओं के अवशेषों के ताजा अध्ययन का वृत्तांत परिशिष्ट क्रमांक-५ में दिया गया है।

भारत में वर्तमान सरकारी ढाँचा १८० वर्ष पूर्व मद्रास, बंगाल और मुंबई प्रेसीडेन्सी मे सर्जित हुआ था। वर्ष के बाद वर्ष गुजरने रहने के साथ अनुभव बढता गया और सरकार के लिखित एवं समय समय पर प्रकाशित विभिन्न नियम संग्रह (मेन्युअल) एवं स्थायी आदेशों में वर्गीकृत निर्देशों तथा आदेशों के द्वारा सूक्ष्मातिसूक्ष्म बातें स्पष्ट होती गईं। वैधानिक कानून (पहले नियमन - रेग्युलेशन कहे जाते थे) में भी वृद्धि हुई, परन्तु १९वीं शती के अंत तक उसकी मात्रा और बोझ नियंत्रित स्तर पर था। आधारभूत सिद्धांत, अधिकांशत: रचा जानेवाला ढाँचा और भारतीय प्रशासन की शैली - *लगभग १८४० या १८५० तक स्थिर हो गई थी।* मद्रास बोर्ड ऑव रेवन्यू के स्थायी आदेश जैसे प्राथमिक अभिलेखीय प्रावधान वास्तव में उसी समय के हैं। इसके पश्चात् का कार्य तो संस्करण को बुद्धिगम्य बनाने का और एक शतक या इससे भी अधिक समय से पूर्व निर्धारित विजयों में वृद्धि या कटौती करने तक सीमित था। जिलाधीश के पद से संबंधित या गाँव के मुनसफ या करणम् (पटवारी) के लिए आधारभूत नियमन (रेग्युलेशन) मद्रास में सन् १८०० से १८२० के समय में बने थे। इसके पश्चात् सामान्य परिवर्तन और सन् १९०० के पश्चात् सीमित परिवर्तन के साथ आज भी जारी है। इसके पश्चात प्रमुख परिवर्तन, पिछले पचास वर्षो की अवधि में अंग्रेजों के स्थान पर भारतीयों को कर्मचाररियों रूप में रखने के संदर्भ में हुआ। स्वभाव से सतर्क और कभी कभी निरर्थक सूक्ष्म बातों के प्रति भी अधिक ध्यान देने के अभ्यासी भारतीय, सरकारी ढाँचे में अधिकारी पद ग्रहण करने का तरीका अपनाने लगे। तब तक तो अपने समाज से वे अत्यधिक विमुख हो गये थे। उनका योगदान शासन पद्धति में, अधिकांशत:, उनकी कमियों को ढाँककर ढाँचे को अधिक नियमबद्ध - नियंत्रित करने तक ही सीमित था।

इस ढाँचे का एक विशेष हेतु था। इसका एक उद्देश्य विदेशियों को हमारे देश पर शांति और सुगमता से शासन करने के लिये सक्षम बनाने के अतिरिक्त शासित व्यक्तियों के बीच न्यायोचित प्रामाणिक व्यवहार का मुखौटा तैयार करने का भी था। भारतीय समाजजीवन के आपसी संबंध, व्यवहार और सामाजिक ढाँचे को समझने के लिए असमर्थ होने से, या इसके इच्छुक नहीं होने से[८], एक बार भारत में अपने पैर जमाने के पश्चात् अंग्रेजों ने केवल दमन, विस्तारवाद और कानूनी जाल फैलाने का ही

कार्य किया था। ऐसे अति दमित, छिनविच्छिन्न समाज को उन्होंने एक शती से अधिक समय तक अपने परकीय विचित्र कानूनों के द्वारा दासता के अभिशाप से ग्रस्त शापित रखा।

परंतु ऐसा बिखरा समाज भी कहीं बाहर से (विदेश से) आया हुआ नहीं था और न ही वह कफन में लिपटा हुआ था। वह अभी जीवित था जीवित स्त्री पुरुष कम से कम मनुष्य के समान व्यवहार करने का प्रयास करते थे। फिर भी असंख्य लोगों के लिए ऐसा करना भी कठिन था। अपने आप को मनुष्य होने की अनुभूति कराने में, अभिव्यक्त होने में, (प्रशासकीय) ढॉचा किसी प्रकार का सहारा नहीं देता था। ऐसा करने से सामर्थ्यहीनता और निराशा ने, इस स्थिति मे दबे हुए लोगों को सहज निर्माण हो रही पद्धतियों की ओर धकेला जिसके सम्बन्ध में आज का युग भली प्रकार परिचित है। ऊपर दर्शाया गया है कि सरकार की प्रत्यक्ष गणना या अधिकतम करभार की नीति के कारण अत्यधिक संख्या में लोग बेघर ओर भूमिविहिन हो गये। ऐसे मकान और भूमि दोनों हमारे देश मे विपुल नहीं होते थे, परन्तु, जो लोग ऐसी उथलपुथल मे शेष रहे उन लोगों के अधिकार में वे हो गये थे। इसमें किसी प्रकार का आक्षेप नहीं है, न अंग्रेजों के विरुद्ध न ही भारतीयों के पक्ष में। दो सौ वर्ष के ऐतिहासिक उत्तराधिकार की पृष्ठ भूमि में, भारत के सामने उत्पन्न हुई कठिन परिस्थितियों को समझने का केवल एक प्रयास है।

वर्तमान शताब्दी के आरंभ के साथ परिस्थिति में परिवर्तन शुरु हुआ। अंग्रेजो की पकड शिथिल हुई। भारत का स्थान प्रतिष्ठापूर्ण था, परंतु अपेक्षाकृत उसका महत्त्व कम हुआ, देश की प्रकृति में भी आक्रोश का धुँआ उठने लगा। उसे शांत करने के लिए विभिन्न मार्ग अपनाये गये। पश्चिम की नई विचारधारा को आयात करने के प्रयास हुए और राजनीतिक एवं अन्य मार्गो की स्वीकृति होने लगी। प्रवर्तमान वैधानिक स्थानीय संस्थाएँ, सहकारी संस्थाएँ, पंजीकृत स्वैच्छिक मडल वास्तव में पूर्वकाल की उपज है। आधारभूत रुप से स्वयं के मुहावरे और कार्यशैली निर्माण करने के लिए स्वतंत्र होते हुए भी इन सभी संस्थाओं का सरकारी ढॉचे के साथ अटूट नाता था। विधानमण्डलों से भिन्न स्वरूप में, सरकारी ढॉचे में कोई परिवर्तन नहीं था। सन् १९३० और सन् १९४० में जो परिवर्तन हुआ वह केवल स्थानीय सस्थाएँ ही नहीं अपितु सभी क्षेत्रों में, नियंत्रण लादनेवाला था।

परन्तु जिसके परिणामस्वरूप सन् १९४७ में स्वतंत्रता प्राप्त हुई उस राजनीतिक आंदोलन ने इस प्रकार के नियंत्रणों की अधिक चिंता नहीं की। उनकी दृष्टि से तो

अंग्रेजों द्वारा लादी गई समूची पद्धति शैतान के कारनामों के समान अनिष्टकारी थी। उनकी दृष्टि में, स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत में अंग्रेजों द्वारा थोपी गई पद्धति को पूर्ण रूप से समाप्त करने का दृढ़ विश्वास अभिप्रेत था। भारत स्वाधीनता प्राप्त करेगा तब यही होगा ऐसा उनका विश्वास था। सन् १९४७ के पश्चात् भी अनेक लोग यही मानते रहे थे।

पंचायत ढाँचे की समस्या वास्तव में सरकारी ढाँचे की समस्या के साथ जुडी हुई है। ठीक इसी प्रकार विकास की समस्याएँ भी है। एक समय में एक ही समस्या का समाधान करने का प्रयास किया गया होता तो उनके सुलझने की संभावनाएँ अधिक होतीं। प्रवर्तमान सन्दर्भों मे जिन्हें एक दूसरे के साथ मिलाना संभव नहीं है उन बातों को जोड़ते रहने का प्रयास करने से अत्यधिक उलझमें पैदा की हैं। ऐसी सभी इकाइयाँ आज एक दूसरे के गले का पथ्थर बनी हुई हैं और सारी की सारी गतिविधियां या तो उप्प हो गईं हैं या तो अत्यन्त धीमी और मानवीय प्रतिभा और क्षमता का अपव्यय करनेवाली हो गई हैं।

यदि उन्हें स्वतंत्र छोड दे दिया होता तो, जनमत या जनमत द्वारा निर्वाचित उसके अधिष्ठाताओं के प्रभाव से सरकारी तंत्र विकास कर पाया होता। अपेक्षित मात्रा में दबाव होता तो उसने अधिकतम कार्यशक्ति लगाई होती, उस परिश्रम से कुछ जागृति निर्माण हुई होती और परिवर्तन हुआ होता। उसमें वह विफल होता तो चाहे जहां जाता। परन्तु समस्या एक या दूसरे ढंग से कुछ सुलझी होती।

सतर्क रहकर ढाँचे में परिवर्तन लाने का दूसरा मार्ग था निश्चयपूर्वक ढांचे को बदलना। मान लें कि सन् १९४७ में देश दूसरी अनेक बातों में उलझा हुआ था। फिर भी १९५० में वह संभव था। ऐसा नहीं है कि ढांचे के अन्दर स्थित लोग बाधक बने हुए थे। परंतु राष्ट्र की संकल्पशक्ति ही विफल रही।

परन्तु अब देश विकास के पथ पर आगे बढा। ग्रामीण विकास के क्षेत्र में समुदाय विकास और राष्ट्रीय विस्तरण योजना से आरंभ हुआ। परन्तु कुछ ही समय में यह भटक गई। राजकीय तंत्र दिग्भ्रमित हो गया। समितियों की रचना हुई और विभिन्न प्रकार के अध्ययन आरम्भ हुए। समुदाय विकास एवं राष्ट्रीय विस्तरण सेवा के साथ लोगों को कानूनी रूप में जोड़ने की अभिशंसा हुई। अपने आप में ऐसा निर्णय अधिक गलत नहीं होता, परंतु वहीं पर उसका अंत हो गया। यह कहना अनुचित होगा कि राष्ट्र को ऐसी अभिशंसा करनेवाले अपने मार्ग में अवरोध बननेवाली बाधाओं से अवगत नहीं थे। प्रतिष्ठित और अनुभवी होने के कारण वे लोग इस से अनभिज्ञ नहीं हो सकते।

परन्तु उन्होंने जो होता था वह होने दिया। इसकी तुलना में १९०९ मे विकेन्द्रीकरण से आयोग और उस समय की भारत सरकारने, जो अभिशंसा की उसके अनुसार संवैधानिक सशिक्तकरण के संदर्भ में अधिक सावधानी एवं दूरदर्शिता का परिचय दिया था।

ऐसा भी नहीं है कि दूरदर्शिता का बिल्कुल अभाव था। सही अर्थ मे ऐसा नहीं था। मद्रास में ही अत्यंत जिम्मेदार माने जाने वाले दो वर्गो ने, अपने अपने ढंग से, प्रस्तावित प्रबंध के सम्बन्ध में संदेह प्रकट किये थे। ऐसा एक समूह मद्रास सरकार के अधिकारियों का था। उन्होंने प्रायोजित प्रकल्पों की समिति की अभिशंसाओ के सम्बन्ध में अभिप्राय देते हुए यह विचार प्रस्तुत किया था कि आरंभ में उत्पादक विकास के दोनों विभाग (अर्थात् समुदाय विकास एवं राष्ट्रीय विस्तरण सेवा) सरकार के अधिकार मे रहने चाहिए और पंचायत संघों को केवल परामर्शक रूप मे जोडना हितकारी होगा, जब कि सामाजिक सेवा विकास (शिक्षा, स्वास्थ्य, समाजकल्याण, दूरसंचार आदि) पूर्ण रूप से पंचायत संघों के अधीन करना चाहिए। अन्य श्री सी एन. अन्नादुराई जैसे सरकार के विधायक आलोचकों के समूह ने भी भिन्न दृष्टिकोण से इन संस्थाओ की समझ और स्वतंत्रता बनी रहे, इस उद्देश्य से ऐसे ही विचार प्रकट किये थे।

आज भारतीय राजनीतिक ढॉचे की प्रमुख विफलता दायित्वबोध के संदर्भ में है। यदि यह बात समझ मे आ जाए तो शेष सब कुछ अपने आप ठीक हो जाएगा। दायित्वों का अर्थ केवल आदेश या निर्देशों के पालन तथा निर्धारित मार्ग पर चलते रहने तक सीमित नहीं है। दायित्व का अर्थ स्पष्ट उद्देश्य या सौंपे गये कार्य को पूरा करने मे निहित रहता है।

वर्तमान विफलताएँ, विशेषकर पंचायत ढॉचे की विफलताएँ व्यवस्थाकीय है, जो उसमे कार्यरत लोगों के कारण नहीं है। प्रबंध अच्छा होता तो कार्यक्षमता के अभाववाले और प्रमादी लोग भी अपेक्षाकृत में अच्छा कार्य कर सकते थे। उनमें से अधिकांश लोग तो उन्हे जितना कहा जाता है या जितना करने की उन्हे स्वतंत्रता दी जाती है उतना ही कार्य करते हैं। और समग्र रूप से यह बहुत कम है। आज जो कुछ भी हो रहा है वह केवल आंकडों के रूप मे है, और वह भी अति अपव्ययी है। नि:संदेह पूरा ढॉचा जैसे थे स्थिति बनाए रखता है और कानून और व्यवस्था बनाए रखता है।

जैसे थे स्थिति बनाए रखना और देश की सुरक्षा करना ही अगर सरकारी तंत्र का दायित्व होता तो उसने, तदर्थ कुछ परिवर्तन और सुधार द्वारा, शायद अनिश्चित समय तक वही किया होता, परन्तु राष्ट्र की आकांक्षा तो इससे कहीं अधिक थी। और

उसे ऐसी आकांक्षाऐं रखने के लिये प्रेरित भी किया गया था। परन्तु वही प्रत्येक *आकांक्षा पूरी करने के लिए उचित उपकरणों की आवश्यकता रहती है।* भारत ने इसका प्रबंध नहीं किया। इस गंभीर गलती के साथसाथ शासकों ने धैर्य भी खो दिया और पुराने उपकरण और कुछ परिस्थितियों में तैयार किये गये नये संवर्ग को परिस्थिति के साथ अनुकूल होन का, दायित्व के लिए समुचित तरीके अपनाकर कार्यशैली को सुधारने का उचित समय नहीं दिया। उल्टे उन्होंने तो पुराने संसाधन, नये संवर्ग जनप्रतिदिन इन सब को बुरी तरह से उलझाकर १५० वर्ष पुरानी संरचना के दुष्टचक्र में डाल दिया। जब भी इसमें उलझे लोग अधिक उत्तेजित होकर झुंझला जाते हैं वे हाथपाई पर उत्तर आते हैं या एकदूसरे को गालियाँ देते हैं। जब वे सब कुछ सहमत होकर मान लेते हैं तब *(इस प्रकार की दोषपूर्ण स्थिति शायद उत्तरी क्षेत्रों मे अधिक है)* सब कुछ अवरुद्ध हो जाता है, जब वे अधिक व्यावहारिक और संकल्पबद्ध होते हैं वहाँ बिना टकराव के मिलजुलकर काम निपटाते हैं। ऐसी स्थिति में कुछ काम तो होता है: *कम से कम गतिमानता तो बनी रहती है। मद्रास राज्य में आज कुछ यही स्थिति है।* स्थानीय स्तर पर अधिकांश लोगों की एक ही प्रकार की मानसिकता अधिकांश लोगों की और सरकारीतंत्र के प्रतिनिध तथा प्रजा के बीच गहरी सांस्कृतिक खाई के अभाव से यह *स्थिति बनी है। परन्तु वास्तव में यह कार्यक्षम प्रबंध का द्योतक नहीं है।*

इससे पूर्व जिसका निर्देश किया गया है, केन्द्र से सभी प्रकार का नियमन और नियंत्रण किया जाए तो इसमें कुछ बुराई नहीं है। उसमें केवल उचित माध्यमों की *उपलब्धता, समुचित ढंग से उनका उपयोग और प्रत्येक स्थिति* पर वैयक्तिक ध्यान रखने की क्षमता अपेक्षित हैं परन्तु व्यापकता केन्द्र द्वारा नियमन और निर्देशन काम की व्यापकता कठिन या असंभव बना देती है तो केन्द्र को विभाजित किया जा सकता है *या आवश्यकता के अनुरूप अपेक्षित उपकेन्द्र बनाये जा सकते हैं और जिनकी क्षमता* और संकल्प शक्ति में विश्वास किया जाए ऐसे लोगों को उसमे नियुक्त किया जा सकता है। भारत की अधिकांश प्रजा और विशेषकर मद्रास की प्रजा तो नि.संदेह ऐसी *व्यवस्था मे बाधक नहीं है। स्वत: इच्छा से या अक्षमता के कारण ही दिल्ली,* मद्रास या अन्य राज्यो के शासक ऐसी व्यवस्था के सम्बन्ध में नहीं सोचते हैं।

भारतीय संविधान के प्रारंभिक कुछ पृष्ठ के प्रति ही उनकी प्रतिबद्धता होगी। इसे छोडकर एक अनुकरणीय मोडेल और समझदारी तथा अनुभव से उद्भूत सुझावों की प्रस्तुति लाभकारी होते हुए भी, उनकी कोई बाध्यता नहीं होगी। ये संस्थाएँ, उनके आधारभूत सिद्धांत के अनुसार, अपने क्षेत्रो में वास्तव में स्वायत्त संस्थाएँ हैं। उनकी जवाबदेही उनके क्षेत्र के लोगों के प्रति है। अपने अप्रतिबंधित क्षेत्र मे वे जो कुछ भी करते हैं उसका हिसाब उन्होंने लोगो को देना है। यदि वे प्रजा के प्रति उत्तरदायी नहीं रहते तभी केन्द्रीय सत्ता का हस्तक्षेप करने का अधिकार है।

किसी भी स्तर पर स्वशासन का इससे अलग कोई रास्ता नहीं है। अन्य सभी मार्ग संस्था को एक बाहरी ढांचे की एजन्सी, एक माध्यम के स्तर तक नीचे ले आनेवाले हैं। गैरजिम्मेदार बना देनेवाले हैं। स्वशासन लोगो के प्रति उत्तरदायी बनानेवाला है। अगर ऐसा नहीं है तो वह निरर्थक है।

पंचायत संस्थाओं की प्रवर्तमान आंतरिक समस्याएँ केवल इस क्षेत्र की अनिर्णय की स्थिति के कारण हैं। आज सर्वत्र दिखाई देनेवाली कुरुतियाँ, अहंकार या पंचायत संस्थाओं की निष्क्रियता उनकी भूमिका और स्वरूप विषयक गलतफहमी का परिणाम है। इसके अलावा, उनकी अधिकांश समस्याएँ ऊपर से आरोपित विचार और कार्यशैली के कारण हैं। इसके कारण उनका कार्य ठप्प हो जाता है या वे स्वयं उपहास के पात्र बन जाते अगर हम अपेक्षा करते हैं कि वे कार्यरत बनें, तो केवल अपने समाज की प्रचलित परंपराओं के द्वारा ही वह संभव हो सकता है। इसी से वे जिनका प्रतिनिधित्व करते हैं उस प्रजा के प्रति उत्तरदायी बनेंगे। आज उनके क्षेत्र के लोग इन संस्थाओ को उत्तरदायी नहीं बना पा रहे हैं तो इसका कारण केवल यह नहीं हैं कि वे (संस्थाएँ) कानून या कानूनी नियमो के प्रति या कार्यकारी निर्देशो के प्रति उत्तरदायी नहीं है। इसका कारण यह है कि वे अपनी कार्यशैली की समझ नहीं रखते हैं। लोगों के लिए तो ये संस्थाएँ और उनके शक्तिशाली लोग जो कुछ भी करते हैं वह पूर्णत. गलत न भी हो तो भी एक पहेली के समान है। प्रवर्तमान स्थिति मे तो ऐसा भी सोचा नहीं जा सकता कि लोग उन्हें प्रताड़ित करें। यह तभी संभव हो सकता है जब लोगों को यह ज्ञान प्राप्त हो कि प्राप्त परिस्थिति में स्वयं ही निर्णायक भूमिका में है।

परन्तु ऐसा स्वशासन चलेना। जनमत ने नेताओ परिक्षकों और शिक्षकों को रास नहीं आयेगा। उन्हें यह समुचित प्रतीत नहीं होगा। भारतीय समाज का स्वामित्व परिवर्तित हो जायेगा। अब तक तो सत्ता और प्रभाव रखनेवाले लोगोंने, किसी सामुदायिक या सामाजिक गतिविधियों में लोगों को मुक्त रूप से शामिल होने से रोककर स्वयं ही

परिस्थिति का नियंत्रण किया है। यही नहीं तो उन्होंने लोगों को प्रशिक्षित करने का भी प्रयास किया है। दोनों तरह से परिणाम घातक ही हैं। लोगों को स्वतंत्र बनाने के स्थान पर, इस प्रकार के प्रशिक्षण से उन्हें अधीन अंकुशित या धूर्त बनाया है। मद्रास या अन्यत्र कार्यरत प्रशिक्षणकी प्रक्रिया ने, पंचायत कार्यक्रम के अन्य किसी भी कार्यक्रम की अधिक हानि की है। प्रशिक्षको की ओर से कर्तव्य, निरंतर सावधानी बरते का आग्रह और चेतावनियों के निरंतर प्रहारों से उलझन में पड़ने के कारण पूर्व मे जो कुछ अल्प रुचि और सूझबूझ थी उसे भी दबा देने का काम किया है। इसके परिणामस्वरूप, आज मद्रास पंचायत परिषद के अधिकार क्षेत्र वाली पंचायत संघ परिषद के अध्यक्ष भी विश्वास के साथ नहीं कह पाते कि उनकी परिषद में १९५८ के कानून के आमुख मे दर्शाए गये आधारभूत उद्देश्यों की दृष्टि से कितना कार्य हुआ है और कितना नहीं हुआ है उसकी चर्चा और समीक्षा करके उसके कारण खोजकर बता पाएँगे या नहीं। उन्हें प्रतीत होता है और उनसे कहा भी जाता है कि यह बात उनके अधिकारक्षेत्र की नहीं है, और शायद गैरकानूनी भी है। परिस्थिति की मांग है कि सक्षम और देश से संबंधित विषयों में निर्णय लेने के लिए जिनका थोडा बहुत प्रभाव है वे लोग निश्चिंत होकर इस विषय की ओर ध्यान दें।

अंततोगत्वा, डेढ सौ वर्ष पूर्व भारत के अंग्रेज शासकों ने, जिस समाज को छिन्न भिन्न करने का महत्तम प्रयास किया था, जिसका प्रभाव समाज आज भी अनुभव कर रहा है, ऐसे समाज की नींव पर एक संरचना खड़ी हुई। उन्होने एक पर एक ईंट रखते हुए ढाँचा तैयार किया उसमें सभी प्रकार के समाजवादी जाल बिछाये। कालानुक्रम से पीडाएँ और व्यथाएँ भारतीय प्रजा के जीवन का एक भाग बन गईं और कभी कभी कुछ स्थानों पर धैर्य का बाँध तोड़कर फूटती रही। उपचार करनेवाले लोगों ने उनके घाव भरने के प्रयास किये, परन्तु इसके द्वारा अत्यन्त सीमित लोगों ने सन्तोष का अनुभव किया। इसके पश्चात् सहसा महात्मा गांधी नामक एक व्यक्ति ने आशा और विश्वास उत्पन्न किया कि अब अग्निपरीक्षा का अंत अति निकट है। कई लोग उनके वचन से आश्वस्त हुए।

नई आशा के इस प्रकटीकरण का सरकार के एक या दूसरे सिद्धांत से कोई सम्बन्ध नहीं था। 'पंचायत' जैसे शब्द द्वारा प्रतिदिन व्यक्त होने वाली भावुकताओं की ओर भी उसका अधिक ध्यान नहीं था। लोग जिसे चाहते हैं, जिसका सम्मान करते हैं और जिसमें विश्वास करते हैं ऐसे व्यक्ति द्वारा आशाएँ प्रतिबिंबित या अभिव्यक्त होती हैं तब, वह एक ऐसे समाज की अभिव्यक्ति बन जाती है जिसमें लोग विदेशी

शक्तियों द्वारा उत्पन्न की गई सभी उद्विग्नताओं और बंधनों से मुक्ति का अनुभव करते हैं। लोगों को इस बात की कतई चिंता नहीं थी कि उन पर शासन एक राजधानी से किया जाएगा या पांच लाख से। उन्होंने इसी बात पर ध्यान दिया और विश्वासपूर्वक समझ लिया कि उनके समाज के मापदंडों के अनुसार जो सही और अच्छा होगा वही उन पर शासन करेगा, शासक और प्रशासक लोगों के लिए प्रयास करेंगे, जनमत का प्रतिघोष उन्हें सौंपे गए दायित्व से सुनाई देगा और वे उसे सुचारु ढंग से निभाएँगे।

स्थानीय संचालन के लिए देश ने पंचायत पद्धति को अपनाया तब पंचायतों को अपने ढंग से कार्य करने की स्वतंत्रता देना चाहिए और परिपक्वता प्राप्त करने और उसका अनुभव करने मे सहायक बनना चाहिए। बहुत संभव है कि ऐसी स्वतंत्रता मिलने पर वे कभी मनमानी करने पर उतर आये। सामान्य रूप से ऐसा नहीं होता है। जिनके प्रति वे उत्तरदायी हैं ऐसे ही लोगों द्वारा मनमानेपन का आक्षेप, स्थानीय लोगों के लिये परिणाम देने के लिये प्रतिबद्ध स्थानीय पद्धति को अनुकूल नहीं होता। के परिणाम स्वरूप ठहराव आ जायेगा यह संभव है। उसका उपाय सामाजिक-राजकीय प्रशिक्षण-कार्यक्रम से हो सकता है। प्रशिक्षक और प्रजा के बीच संवाद प्रस्थापित किया जा सकता है। दायित्व, समुचित कार्यशैली और सुनिश्चित माध्यमों जैसी संकल्पनाओं पर बल देने के स्थान पर दृढता, कर्मण्यता, और दायित्वबोध की संकल्पना की ओर ध्यान देना चाहिए। कर्तव्य शब्द वास्तव में आग्रह, कर्मण्यता और दायित्वों का निर्देश करनेवाला है, परन्तु प्रवर्तमान भाषा प्रयोग में वह आज्ञाकारिता का पर्याय बनने लगा है। इस विकृति ने वास्तव में सभी सामाजिक नियंत्रणों को दुर्बल बना दिया है। उनका पुनर्गठन करना पड़ेगा। परन्तु अनावश्यक रूप से व्यापक सुरक्षितता या बंधन डालने का मार्ग सामाजिक नियंत्रणों के लिए उपकारी सिद्ध नहीं होगा। मध्यम वर्ग और नगर के समाज की सुरक्षित जीवनशैली के स्वभाव के साथ स्थानीय स्वराज्य के सिद्धांत और अवधारणा का मेल नहीं बैठता। उसका संबंध किसानो के खुरदरेपन से है, इसलिए कृत्रिम उष्मागृह में हो रहे अप्राकृतिक पालनपोषण से नहीं अपितु प्राकृतिक रूप से उसकी वृद्धि होने देने से ही स्थानिक स्वराज्य का विकास हो सकता है। रह नहीं, परन्तु उसका पालनपोषण सहज रूप से हो यह संभव हो सकता है।

वर्तमान समय में स्थानीय स्वराज्य को राष्ट्रीय और राज्य की परियोजनाओं के साथ जोड़ने का जो प्रयास हो रहा है वह उचित नहीं है। विकास की परियोजना में किसी प्रकार का महत्त्वपूर्ण परिवर्तन आवश्यक न हो तो उसके अधिकार योग्यताप्राप्त इकाइ को दे देना चाहिए। (स्थानीय) स्वराज्य की इकाइयो पर उस परियोजना का

बोझ डालते रहना दोनों को समाप्त करने के समान है। यह उद्देश्य हो ही नहीं सकता। मद्रास में स्वराज्य की इकाइयो के अतिरिक्त सामाजिक विकास के रूप में जानी जाने वाली इकाइयाँ उत्पादक विकास भी कर सकती हैं, परन्तु इसके लिए उनकी अपनी आकांक्षा और अपना निर्णय होना चाहिए। कानूनी ढाँचे के संदर्भ में उनका अधिकार-क्षेत्र होना चाहिए और उसमें भारत के संविधान के सिद्धांतो को प्राथमिकता देनी चाहिए। प्रकार केन्द्र और राज्य के लिए जो बंधनकर्ता है वह उन पर भी लागू होगा। अन्य उपाय के रूप में निश्चित कानून के द्वारा उन्हें कानूनी मान्यता प्रदान की जाए, उनका कार्यक्षेत्र निश्चित कर दिया जाए और उनकी आय का प्रमुख स्रोत निर्धारित कर दिया जाए। मद्रास का वर्तमान पंचायत कानून १९५८ वित्तीय प्रबंध को अधिक सुस्पष्ट करता है। नये कानून के संदर्भ में प्रतिरोधक, पिछले पैंतीस से चालीस वर्षों में प्रविष्ट, अवरोधन प्रावधानों को निकालकर आज के कानून का सरलीकृत स्वरूप शरूआत करने के लिए उपयुक्त हो सकता है। प्राय: १९२० का कानून और उस समय उसके अंतर्गत रचित नियम जो इस समय सुसंगत नहीं हैं ऐसी विसंगतियों और वाक्यों को हटाने से उसी प्रकार उपयोगी सिद्ध हो सकते है। प्रवर्तमान व्यवस्था इस समय कार्यक्षम नहीं है। वह स्थिर नहीं रह पाती। इसलिए अधिक स्वतंत्रता और नेतृत्व की अनुमति देनी चाहिए या फिर क्षीण हो जाने के लिये प्रतीक्षा करनी पडेगी। उसे स्थिर बनाए रखने का कार्य सरकार और इन संस्थाओं के बीच का एक जटिल शतरंजी खेल है। इसमें किसी की विजय नहीं होती। यह आनंददायी हो तो भी स्वीकार करना पड़ेगा कि आज जिसे पंचायत राज्य संरचना कहा जाता है उसका केवल एक यही रवैया है।

इसके अलावा पंचायत संस्थाओं को चाहे कितने ही सीमित क्षेत्र मे स्वराज्य की अनुमति देने का निर्णय लेना हो तव भी नीति और उसे जारी करने के सूचितार्थ समझते हुए उसके आनपांगिक कार्य को उससे अधिक बड़े प्रशासकीय ढाँचे पर होनेवाले प्रभाव का विचार लक्ष्य करते हुए यह निर्णय लिया जा सकता है। सरकारी तंत्र के स्तर पर विकेन्द्रीकरण का कार्य और उसके द्वारा उत्पन्न की गई व्यापक चर्चाएँ और उत्साह के समय भी ऐसी संयुक्त समझ का सर्वथा अभाव था। निस्संदेह उच सरकारी संरचना में मोन्टेग्यु के समान गिनेचुने लोग ही ऐसे कदम से उत्पन्न होनेवाले संभावित - प्राथमिक और त्वरित निर्णय करने की आवश्यकतावाले - विरोधाभास समझ सके थे। ऐसा होते हुए भी ऐसे विरोधाभास उत्पन्न होने पर तुरंत लागू किया जा सके ऐसा कोई स्पष्ट प्रावधान नहीं किया गया था परिणाम स्वरूप १९२० के मद्रास के कानून के अंतर्गत, पंचायत संस्थाओं के कार्यकलाप के केवल दस वर्षों में ही असाध्य जटिलताएँ

और संदेह खुलकर प्रकट हुए। हतप्रभ कर देनेवाली जटिल संदिग्धताओं का निर्णय, अधिकांशतया पहले से ही सोचे हुए कई कदम और प्रक्रिया के प्रभाव से पंचायत संस्थाओं के प्रति विरोध पैदा करने में और उत्पन्न परिस्थिति को चिरकालीन मान लेने में हुआ है। उनकी वैयक्तिक और सामूहिक शक्ति और आत्मबल के कारण संदिग्ध निर्णय उनके पक्ष में होते तो शायद अधिक सुखद होते परंतु उनकी जटिलता तो वैसी की बनी रहती।

किसी भी देश में अधिकांश प्रशासकीय स्वरूप किसी केन्द्रीय विचार और सिद्धांत से उत्पन्न होना चाहिए। विभिन्न प्रकार के अवसरयुक्त क्षेत्रों की सभा को सरकारी ढाँचे में बाँधना चाहिए जिसके कारण संगठनात्मक और प्रशासकीय प्रबंध एवं सरकारी यंत्र के काम के प्रकार के मध्य उनमें संघर्ष न हो। जिन देशों में विभिन्न सरकारी स्वरूप निरन्तर पूर्ण विकास प्रक्रिया द्वारा विकसित हुए हैं और प्रकृति प्रदत्त स्थानीय विशेषताओं और जीवनसूत्रों पर आधारित हैं उन अधिकांश देशो मे अधिक कष्टकारक नहीं बनते हैं। वहाँ भी, केन्द्र सरकार और स्थानीय सत्ताधिकरणों के बीच कार्य एवं शक्तियों के संबंध में कुछ अन्तर हो सकता है, परन्तु तात्त्विक रूप से ऐसे प्रसंग पारंपरिक होते हैं इसलिए इन देशों में सरकार और स्थानीय संस्थाओं से भिन्न विकेन्द्रीकरण की चर्चा बहुत सीमित होती है। भारत में यह स्थिति नहीं है।

भारत में वर्तमान सरकारी ढाँचे के साथ संलग्न अलंकरणों के होते हुए भी, ये ढाँचे सामान्य रूप से परकीय विचार एवं साम्राज्यवादी या संस्थानवादी आवश्यकता निपटाने के लिए रचे गये हैं। इस समय जो अस्तित्व बना हुआ है उसके विरुद्ध यह अंतिम निर्णय नहीं है, परन्तु एक बात का निर्देश आवश्यक मानकर इसे ध्यान में लाना चाहता हूँ।

किसी भी संस्था को स्वतंत्रता की अनुमति दी जाए तो, जो लोग प्रजा के प्रतिनिधि के रूप में या कर्मचारियों के रूप में संचालन करनेवाले हैं उन्हें प्रभावी रूप से केन्द्रीय ढाँचे की कार्यशैली में अनुप्रेरित नहीं किये गये हैं तो, वे पहले ही दिन से कई काम अलग ढंग से करने लगेंगे। स्वराज्य की संस्थाएँ और केन्द्रीय सत्ताधिकरण के बीच प्राथमिकताओं और प्रमुख उद्देश्य विषयक सामान्य समझौता प्रवर्तित होने पर भी बीतते समय के साथ उनके दायित्वों में अवरोध उत्पन्न होने की संभावना है। इसलिए इन संस्थाओं का संचालन करनेवाले लोगों को केन्द्रीय ढाँचे की कार्यशैली में अनुप्रेरित किये जाते हैं तो, सत्ता और स्वराज्य उन संस्थाओं तक सीमित रहता है और जिनका ये प्रतिनिधित्व करते हैं उन लोगों के साथ इसका कोई सरोकार नहीं

रहता है। इसलिए, लोग स्वयं जब तक इन संस्थाओ की और उनका संचालन करनेवाले लोगों की परिभाषा और व्यवहार नहीं समझ लेते हैं (और फलत: अपनी विशेषताओं को नहीं भूल जाते) हैं और उस ढंग से समग्र देश के संचालन के संदर्भ में उनके साथ निश्चित रूप से भावात्मक और बौद्धिक समायोजन की अनुभूति करें इस प्रकार की करें इसकी रचना नहीं होती है तब तक, उनका यथार्थ दायित्व लोगों के प्रति नहीं अपितु अन्यत्र होगा।

लगोने ढांचे के अनुरूप अपने आपको बदलना या ढांचे ने लोगों के अनुरुप परिवर्तित होना - यही दुविधा आज के भारत के सम्मुख है। इसके लिये कोई छोटे रास्ते नहीं हैं। न ही बैठक कक्षों की चर्चा का यह विषय है। यह सब हो चुका है। आज की समस्या सुलझाने के लिये जो भी निर्णय करना है उसका स्पष्ट विचार और निश्चित परिभाषा करने की आवश्यकता है।

संदर्भ :

१ Memorandum of improvements in the Administration of India during *last thirty years* (*पिछले तीस वर्षों में भारतीय प्रशासन में सुधार की सूची*) इस्ट इन्डिया कंपनी की कॉर्ट ऑव प्रोप्राइटर्स के आग्रह से जनवरी १८५८ में रचा गया था। साथ ही बंगाल, मद्रास और मुंबइ प्रेसीडेन्सी की सरकारों की कार्यवाही और उनकी टिप्पणियाँ - विशेषकर देश के विभिन्न मार्गों मे भेद से संबंधित ग्रामीण पद्धति के प्रश्न और गणना, अंकाई की दरों के विषय पर गवर्नर जनरल का उत्तर (१८ जनवरी, १८५८) भी देखें।

२. मद्रास राज्य में १९वीं शती के अंत तक यह पद्धति जारी थी। तंजावुर जिले के गाँवों में भूमि को बाँटने की जानकारी के बारे में देखिए परिशिष्ट ४

३. भारतीय इतिहास के लेखन का आरंभ किस प्रकार हुआ इसके संदर्भ में जेम्स मिल, मोन्स्टुअर्ट एलफिन्स्टन और हिस्टोरियन्स ऑव इन्डिया, पाकिस्तान एण्ड सिलोन पुस्तक में प्रो. सी एच. फिलिप्स लिखित 'भारत का इतिहास' (प्रकाशक ऑक्सफर्ड प्रेस : १९६१) पर ध्यान देने के साथ ही उस समय के दक्षिण भारतीय समाज के विवरण के लिए ओ क्राफर्ड लिखित स्केचिज ऑव द हिंदुज पर ध्यान देने के लिए पाठकों को सूचना है।

४ एक मराठा किसान के द्वारा एल्फिन्सटन को बताया गया था कि देश (सत्ता) खोने के पश्चात् ब्राह्मणों का सामर्थ्य दुगुना हो गया है (कारवाई टिप्पणी : २६ मार्च, १८२५) यह कथन निर्णायक न हो तो भी आज प्रवर्तमान अवधारणाओं को देखते हुए सत्य के निकट है। लगभग उसी समय (१८३६) सतारा और खानदेश के लोगों की मान्यता थी कि नेताओं और ब्राह्मणों के साथ विचारविमर्श करने के बाद नये (सामाजिक) नियमों को प्रस्थापित किया जा सकता है, इतना ही नहीं सतारा के लोगों ने तो यहाँ तक कह दिया कि शास्त्रों से विपरीत कई बातों को रीतिरिवाज ने मान्यता प्रदान की है। यह सच है कि पुणे इस दृष्टिकोण से सहमत नहीं था।

परंतु ब्राह्मणों की विद्वत्ता और रीतिरिवाज के सन्दर्भ में पुणे शुद्धता की प्रतिमूर्ति था।

प्रवर्तमान अवधारणाओं के संदर्भ में अन्य एक विषय का उल्लेख किया जा सकता है। उन्नीसवीं शती के पूर्वार्ध में सती के रिवाज ने भी भारतीयों तथा ब्रिटिशरों के दिमाग में उथलपुथल मचा दी थी। इसके पश्चात् कइ कपोलकल्पित कथाओं की रचना हुई और १९वीं शती के पूर्वार्ध में आम धारणा बनी कि यह रिवाज व्यापक था। परंतु १७७२ से १८१३ के लगभग ४० वर्ष के कालखण्ड में, मद्रास प्रेसीडेन्सी के अभिलेखों से सती की केवल तीन घटनाएँ प्राप्त हुई हैं। निःसंदेह मुंबई प्रेसीडेन्सी में १८२४-१८२७ के चार वर्षों में १५८ घटनाएँ हुई थीं। परन्तु उनमें से ११४ दक्षिण कोंकण में थीं, १७ धारवाड में, ११ अहमदाबाद में औ़र १० खानदेश में हुई थीं। मुंबई प्रेसीडेन्सी के अन्य जिलों के वृत्तांत से ज्ञात होता है कि उसमें एक-दो से अधिक घटनाएँ नहीं हुई थीं। बहुत संभव है कि दर्ज की गई घटनाओं में पूर्ण वास्तविकता न भी हो, परंतु उसका संबंध तत्कालीन परिस्थिति के साथ भी होना चाहिए। नि.संदेह बंगाल मे, इस प्रथा का व्यापक रूप देखा जा सकता था परन्तु उसकी तीव्रता कोलकाता क्षेत्र तक सीमित थी। वहाँ प्रतिवर्ष २०० से ५०० घटनाएँ होती थीं। १८१५ से १८२५ के समय प्रतिवर्ष ५० से १४० घटनाओं के साथ काशी और ढाका इसके बाद के क्रम पर थे।

विद्वानों और सत्ताधीशों में एक अन्य मान्यता प्रवर्तमान थी। वह भारतीयता की अति प्राचीन दब्बू प्रकृति और प्रशासकों के प्रति सह बचे जैसी अधीनता के भाव के सदर्भ में है। ब्रिटिशरों की चापलूसी और अपने अधिकार में कार्यरत लोगों के प्रति कठोर व्यवहार रखनेवाले मद्रास के देसी बाबूओं के बारे में होनेवाली चर्चा के अनुसार, ब्रिटिशरों के द्वारा शासित पुरानी प्रेसीडेन्सी (बंगाल और मद्रास) के निवासियों की तुलना में, 'मराठा ब्राह्मण स्वयं से निम्न दर्जे के व्यक्ति के प्रति अधिक सभ्य, समान स्तर के लोगों के प्रति विनयशील और स्वयं से वरिष्ठ अधिकारियों के प्रति कम घिघियानेवाले' थे। मद्रास और मुंबई दोनों प्रेसीडेन्सी का अनुभव प्राप्त एक वरिष्ठ अधिकारीने बताया कि, 'हमारी संस्थाओं के प्रकृतिजन्य स्वरूप ने, राज्य के पुराने प्रदेशों मे, सरकारी कार्यालयों में नियुक्त लोगों में से कुछ लोगों को छोड़कर, सभी स्तर और उनकी विशेषताओं को निरर्थक बनाकर सब को लगभग एक ही स्तर पर लाकर खड़ा कर दिया है। तहसलीदार (ब्रिटिश राज्य के राजस्व अधिकारी) की स्थिति अब लोगों की दृष्टि से अधिक सुरक्षित है, इसलिए वे अब लोगों के साथ तालमेल बिठाने के लिए कष्ट नहीं उठाते हैं। 'मुंबई के तत्कालीन (१८२०-२२) गवर्नर एलिफन्स्टन ने बंगाल के वरिष्ठ अधिकारी के 'जिले में शायद ही कोई ऐसा बंगाली है जो किसी अच्छे अंग्रेज व्यक्ति के सामने बैठने का साहस करेगा' इस कथन की आलोचना करते हुए बताया कि, 'यहाँ पर हरकारे (कासद या डाकिया) से ऊँचा स्थान पानेवाला हर व्यक्ति हमारे सामने बैठ सकता है, पेश्वाओं के सामने भी बैठ सकता था, कुछ समय के लिए हुई मुलाकात में किसान भी बैठता हैं।' (इस परिच्छेद में जो उदाहरण और वास्तविकताओं का वर्णन किया गया है, ऊपरवाले परिच्छेद के एल्फिन्स्टन की कारवाई की टिप्पणी के उद्धरण सहित सभी कुछ केनेथी बोलचेटे की पुस्तक 'सोसियल पॉलीसी एण्ड चेन्ज इन वेस्टर्न इन्डिया' से लिया गया है।)

भय और दासत्व की मन.स्थिति कैसे उत्पन्न हुई होगी इसका एक उदाहरण सी. ई. केनवेके, १८५८ में प्रकाशित, 'स्केचीज.ऑव इन्डिया' नामक पुस्तक में वर्णित एक घटना से प्राप्त होता है। 'सत्ता से चकाचौंध कर दो और भावुकता जताकर धावा बोल दो' ऐसी सिफारिश के संदर्भ में लेखक ने १७६४ की एक घटना का जिक्र किया है। लेखक के कहने के अनुसार पटना के युद्ध के तुरंत पश्चात् मेजर हेक्टर मनरो ब्रिटिश सैन्य के लिए आदेश लेकर आया और उसने समग्र सेना का आधिपत्य ले लिया। वेतनवृद्धि की माँग में छुपा आक्रोश देखकर सिपाहियों का विप्लव दबा देने के लिए मनरो ने २४ आंदोलनकारी नेताओं को तोप से उड़ा देने का निर्णय किया। उन सबको उस समय बंदी बना लिया गया था जब वे ब्रिटिश अफसरों को मार डालने की धमकी और शत्रुओं के साथ हाथ मिलाने के लिए जा रहे थे। *उनके ही काले अधिकारियों के द्वारा फिल्ड कोर्ट मार्शल (सेना न्यायालय) में उन पर* मुकद्दमा चलाया गया। उन पर विद्रोह करने और कर्तव्य से विमुख होने का अपराध सिद्ध किया गया। चार लोगों को दंड दिया गया और पाँचवे को जब तोप के आगे बाँधा जा रहा था तब आक्रोशित सिपाहियों ने दंगा करते हुए मृत्युदंड की कारवाई रोकने के लिए शोर मचाया। तोप में गोलाबारुद भरकर उनके मुख देसी रेजिमेन्ट की ओर घुमाने का आदेश दिया और सिपाहियों को शस्त्र डाल देने के लिए चेतावनी दी। उन्होंने आदेश को स्वीकार किया और मृत्युदंड देने की कारवाई जारी रही। ऐसे आत्यंतिक कदम का भारी प्रभाव पड़ा। उस दिन से किसी प्रकार का विद्रोह नहीं हुआ।

जिसे प्रसारित करने में स्वयं का हाथ है ऐसी आज तक केवल मानी हुई वास्तविकताओं और मान्यताओं के विषय में विद्वानों द्वारा शोध होना आवश्यक है।

५. (ब्रिटिश) हाउस ऑव कॉमन्स 'इस्ट इन्डिया कंपनी' के संदर्भ में वृत्तांत, १८१२, विशेषकर जेम्स ग्रान्ट की रिपोर्ट : 'पोलिटिकिल सर्वे ऑव द नोर्धन सरकार्स' इसके उपरांत 'मुस्लिम कानून' के अनुसार भारत में 'भूमिकर' - फतवा आलमगिरी और बी. ई. बेइली का अनुवाद, लंदन, १८५३, 'द प्रेजन्ट लेन्ड टेक्स इन इन्डिया', लेखक - एल. कर्नल ज्होन ब्रिग्ज, १८३० पर ध्यान दिया जाए।

६. मद्रास रेवन्यू बोर्ड, १८२० - १८६५ का स्थायी आदेश क्र. १२७ (३) दि. १८ सितम्बर १८५८.

७. मद्रास रेवेन्यू बोर्ड के १८५२ से १८५५ के विभिन्न वृत्तांत, इसके अतिरिक्त (अ) उत्तरी आर्कोट में अंकन कम करने के अभिलेख - १८५५ (ब) सेलम-जे. डबल्यु बी. डीबेज. लिखित इन इन्डियन कलेक्टरेट १८५३, (क) मद्रास तहसील की परिस्थिति एवं आवश्यकताएँ - जे. बी. नोर्टन, मद्रास (चेन्नाई) द्वारा १८५४ में संयुक्त सचिव, बोर्ड ऑव् कन्ट्रोल, लंदन को लिखे गये पत्र के स्वरूप में तथा उस समय के कई अभिलेख।

८. *(अ) पिछले तीस वर्षों में भारत के प्रशासन में हुए सुधार के संदर्भ में मेमोरेन्डम* (पहले जिसका उल्लेख किया है) और (ब) इस्ट इन्डिया कंपनी की कोर्ट ऑव डिरेक्टर्स द्वारा गवर्नर जनरल को १८१५-१८३५ के समय लिखे गये पत्र; विशेष रूप से २ जनवरी, १९२३ का पत्र उल्लेखनीय है।

९. यह दृष्टिकोण और प्रभाव कुछ अध्यक्षों तक सीमित नहीं है। वर्तमान पंचायत पद्धति के संस्थापक नेताओं का भी जिसमें समावेश है ऐसे कई लोगों में यह धारणा व्यापक है। अन्य राज्यों की स्थिति में भी अधिक अन्तर नहीं है।

१०. दोनों में से किसी को और उनके सेव्य समाज को किसी प्रकार की हानि न हो इस प्रकार से अधिकार क्षेत्र की रचना करना संभव है।

१६. परिशिष्ट १

ठोस उपलब्धियाँ
(आर डी एल, ए विभाग, मद्रास राज्य)

	दूसरी परियोजना का अंतिम वर्ष	समयावधि में उपलब्धि तीसरी परियोजना के आरंभिक तीन वर्ष		
	१९६०-६१	१९६१-६२	१९६२-६३	१९६३-६४
(१)	(२)	(३)	(४)	(५)
१. ब्लोक संख्या	२२२	२५४	२८६	३७५
२ ब्लाक का क्षेत्रफल (वर्ग कि.मी)	६८,९५६	७७,४४१	८६,४९८	१,०८,९४७
(क) कृषि				
३ संशोधित बीज का वितरण				
(अ) धान (मे. टन)	११,५४७	९,१५६	९,५३०	५,८३८
(ब) ज्वार-मक्का (मे. टन)	४७८	४२०	२८८	१८८
(क) अन्य अनाज (मे. टन)	१,१०९	१,२१६	७०२	८८८
(ड) कपास (मे. टन)	१,२१०	९६१	१,३९६	१,१५१
४. खाद का वितरण				
(अ) एमोनियम सल्फेट (मे.ट.)	३४,४२४	२९,३३४	४२,५८०	५०,९८४
(ब) सुपर फोस्फेट (मे. ट.)	१३,७००	११,८४४	२७,९६७	३०,०९७
(क) अन्य रासायणिक खाद (मे. टन)	४२,५८५	२५,४७५	३८,८५४	४९,२२७

५. हरी खाद के बीजों का वितरण (मे. टन)	४,५६५	३,०१८	२,७५०	२,१६५
६. संवर्धित उपकरण (संख्या)	४१,२४०	४८,२१२	५७,५०६	६७,३८४
७. रासायनिक कीटाणु - नाशक (मे टन)	४,१८३	४,२३२	४,५७८	४,१४१
८. खाद के गड्ढों की खुदाई (संख्या)	१,०८,४२४,	१,३३,६६३	१,४७,११६	१,३४,३३७
९. नवसाध्य क्षेत्र (हेक्टर)	१४,७३८	१३,५६६	८,२५४	७,३७०
(ख) पशुसंवर्धन				
१०. संवर्धित पशु की आपूर्ति				
(अ) बैलसमूह (संख्या)	९६४	८८४	७६०	९५८
(ब) भेडबकरियाँ (संख्या)	३,४५६	३,८७४	७,२०६	८,०४०
११. संवर्धित पक्षी (संख्या)	३१,९५५	३७,८७७	४१,३४८	४६,१२६
१२. उन देनेवाली भेड,	८,२७,७४५	२,६८,१६७	८,६९,७०५	११,७६,८३२
१३. पशुवंध्यीकरण (संख्या)	१,५७,८४४	१,५६,११२	१,३७,५४०	१,९०,३३२
(ग) स्वास्थ्य एवं ग्राम सफाई				
१४. गाँव में शौचालयों का निर्माण (संख्या)	६४७१	३,७८१	३,९४४	२,८७१
१५. पक्की नालियाँ नाई (मीटर)	१,२४,६३३	७१,७५४	३८,०७०	५०,५२१
१६. शोषगड्ढों की रचना (संख्या)	१८,३२५	१३,६०८	१२,३७६	१०,३११
१७. पेयजल कुँओं की निर्माण (संख्या)	२,२६६	२,७६८	३,३८२	२,५३०
१८. पेयजल कुँओं की मरम्मत (संख्या)	२,५७१	२,००१	२,४३३	१,९३३
(घ) सामाजिक शिक्षा				
१९. प्रौढ की साक्षरता (संख्या)	३१,५५९	३२,८९३	३१,८५६	२२,३३१
२०. वाचनालय एवं ग्रंथालय आरंभ (संख्या)	१,१०९	१,६५३	२,३५६	२,०९७
२१. युथ क्लब और किसान संघों का आरंभ (संख्या)	१,९५१	९४०	१,२३४	१,३८४
(च) महिलाओं का कार्यक्रम				
२२. महिला समितियों का आरंभ	८२७	१,३८७	२,०३०	२,३४३
२३. बालवाडी/नर्सरियों का आरंभ (संख्या)	५६७	७९९	५२७	२३२

(छ) यातायात				
२४. कचे रास्तों का निर्माण (कि.मी.)	१,९२७	१,८९५	२,७६१	२,१७४
२५ वर्तमान कची सडकों का सुधार (कि.मी.)	१,१०३	२,६८६	३,३९४	२,०८७
२६. नालों का निर्माण (कि मी)	१,२३०	१,३२२	१,९१३	१,६२६
(ज) ग्रामीण लघुउद्योग				
२७ मधुमक्खी छत्तों का संवर्धन (शुरु) संख्या	७,६७१	७,९३६	७,५१०	१२,३००
२८. संवर्धित औजार				
एवं उपकरणों का मूल्य				
(अ) लोहारी (रु.)	१,२७,७४२	७७,२६६	७१,१८६	५१,२६९
(ब) बढ़ई (रु.)	८६,८६६	६६,६१३	३४,०८४	५१,९८७
(झ) सहकारिता				
२९. सहकारी सोसायटियों का आरंभ				
(अ) ऋण (संख्या)	७०२	१८७	१६४	१०८
(ब) औद्योगिक (संख्या)	१३२	४२	५४	६९
(क) कृषि (संख्या)	४१	१६	३८	२८
(ड) अन्य (संख्या)	६१८	३२५	३८८	२२६
३०. लोगों का योगदान				
३०. लोगों का कुल योगदान				
(रुपये - लाख में)	७३.१०	६७.६०	६६.०८	४९.९७

मै.ट. – मैट्रिक टन, कि.मी. – किलोमीटर

परिशिष्ट-२

तिरुप्पुवनम पंचायत संघ कर्मचारियों की स्थिति (नवम्बर-१९६४)

क्रम (अ) पद तिपिक महकम	संख्या	वेतनमान
पंचायत संघ निधि से वेतन प्राप्त कर्मचारीगण		
१. हेड क्लर्क	१	१२५-५-१७५
२. लोअर डिविज़न क्लर्क	५	९०-३-१२०-२-१४०
३. अध्यक्ष का निजी क्लर्क	१	९०-३-१२०-२-१४०
४. केशियर	१	९० - ३ - १२० - २ - १४० और प्रतिमाह रु. ५/- विशेष वेतन (रु. ५०० की नकल राशि उसे सिक्युरिटी के रूप मे जमा करवाना पड़ेगा।)
५. टाइपिस्ट	१	९०-३-१२०-२-१४०
६. नौकर	२	५५-१-७०
७. चपरासी	६	५०-१-६० (उसमे से एक अध्यक्ष के लिए)
८. चौकीदार	१	रु. ६१ (बाजार भाव)
(ब) चिकित्सा महकम		
१. चिकित्सा अधिकारी चिकित्सा अधिकारी का अन्य एक पद, राज्य को निधि से वेतन प्राप्त	१	१०० - ५ - १५० (There is another post of predical officer, it is paid from state funds)
२. फार्मसिस्ट	२	९०-४-११०-३-१४०
३. प्रसूति सहायक	२	८०-३-११०-२-१२०
४. पुरुष नर्स आर्डरली	२	५०-१-६०
५. महिला नर्स आर्डरली	१	५०-१-६०
६. झोट्टी	१	रु ६१ (बजार भाव)
(क) सार्वजनिक स्वास्थ्य		
१. स्वास्थ्य सहायक	१	९०-३-१२०-२-१४०
२. प्रसूति सहायक	७	८०-३-११०-२-१२०

३. डाइ	७	५०-१-६०
(ङ) प्राथमिक शिक्षा (पंचायत संघ के विद्यालय कुल–६७)		
१. माध्यमिक स्तर के अध्यापक	८७	९०-४-११०-३-१४०
२. उच्चतर स्तर के अध्यापक	१५०	६५-१-७०-२-९०
३. पूर्व व्यावसायिक अध्यापक	४	६५-१-७०-२-९०
४. चपरासी	३	५०-१-६०
५. महिला सेविका	१	३६ - ४० (पुराना वेतनमान)
(ख) राज्य सरकार के कोष से वेतन पानेवाले कर्मचारी		
१. खण्ड विकास अधिकारी	१	२५०-१५-४००
२. प्रबंधक	१	१५०-५-२००
३. लेखाकार	१	१२५-५-१७५ + १५ (मासिक विशेष वेतन के रूप में)
४. श्रेयान क्लर्क	२	१२५-५-१७५
५. जीप चालक	१	७०-१-८०
६. विस्तरण अधिकारी (कृषि)		२००-१०-२५०-१५-४००
७. विस्तरण अधिकारी (सहकारिता)	१	२००-५-२४०-१०-२७०
८. विस्तरण अधिकारी (पंचायत)	१	१४०-५-२४०-१०-२७०
९. विस्तरण अधिकारी (शिक्षा)	१	१२५-५-२००-१०-२५०
१०. विस्तरण अधिकारी (पशुपालन)	१	१००-५-१२५-३-१५०
११. विस्तरण अधिकारी (उद्योग)	१	१५०-५-१८५-१०-२२५-१५-३७५
१२. संघ इन्जिनीयर	१	१५०-५-१८५-१०-२२५-१५-३७५
१३. संघ मुकादम	१	१२५-५-१७५
१४. खाद विकास निरीक्षक	१	१२५-५-२००
१५. स्वास्थ्य निरीक्षक	१	१००-५-२००

१६. प्रधान सेविका	१	१२५-५-२२०
१७. ग्राम सेविका	२	९०-४-११०-३-१४०
१८. ग्राम सेवक (प्रथम वर्ग)	३	१२५-५-१७५
१९. ग्राम सेवक (द्वितीय वर्ग)	७	९०-३-१२०-२-१४०
२०. समाज कल्याण कर्मचारी	२	९०-३-१२०-२-१४०
(छ) ऋण विभाग		
२१. उप तहसिलदार	१	२००-५-२४०-१०-२७०
२२. कनिष्ठ विभाग क्लर्क	२	९०-४-११०-३-१४०
(ज) कृषि विभाग		
२३. अगार क्लर्क	१	९० - ४ - ११० - ३ - १४० (उस सिक्योरिटी के लिए रु. ५०० जमा करवाने पड़ते है)
२४. क्षेत्रीय कर्मचारी	१	९० - ४ - ११० - ३ - १४०
२५. निदर्शन मिस्त्री	२	५० - १ - ६०
२६. चौकीदार	१	रु. ६१ (बाजार भाव)
(झ) पशुपालन विभाग		
२७. संदेशवाहक	१	रु. ६१ (बाजार भाव)

परिशिष्ट ३

मद्रास पंचायत विधेयक : १८५८
उद्देश्य और कारण विषयक कथन

१. इस विधेयक का उद्देश्य राज्य के ग्रामीण क्षेत्रों में प्रशासनिक पुनर्रचना के लिए कानूनी आधार प्रदान करने का है। समुदाय-विकास कार्यक्रम के अंतर्गत राष्ट्रीय विस्तरण सेवाओ को कार्यान्वित करने की दिशा में हुई प्रगति ने, प्रवर्तमान स्थिति में पुनर्रचना की आवश्यकता उत्पन्न की है। परियोजना के विचारविमर्श के लिये प्रस्तुत विषय प्रस्तावना में दिये गये हैं। सूचित समाविष्ट प्रमुख परिवर्तनों की संक्षिप्त जानकारी इस निवेदन में है।

२. सूचित परिवर्तनों में सबसे महत्त्वपूर्ण था जिलास्तरीय डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के स्थान पर, समुदाय विकास कार्यक्रम की राष्ट्रीय विस्तरण सेवा में सीमांकित विकास खण्ड स्तर पर पंचायत संघ परिषदों की रचना करना। इस परिवर्तन के द्वारा दो उद्देश्य प्राप्त करने का आशय है।

एक, जिले की तुलना मे विकास खण्ड का संचालन करना अधिक सरल रहेगा। विशाल क्षेत्र से आनेवाले जिला बोर्ड के सदस्यों की अपेक्षा मे नई पंचायत संघ परिषदों के सदस्यों के पास उन्हें सौंपे गये क्षेत्र की आवश्यकताओं और उसके संसाधनों की जानकारी विशेष होगी। इस प्रकार यह परिवर्तन स्थानीय प्रशासकीय तंत्र की कार्यक्षमता में सुधार लाने में और ग्रामीण प्रजा के निर्वाचित प्रतिनिधियो को अधिक प्रभावी रूप से सक्रिय बनाने के लिए संवाहक बनेगा।

दूसरा, राष्ट्रीय विस्तरण सेवा विभाग की रचना और उसके सदस्यों के प्रशिक्षण। भारत के सभी राज्यों में अधिकांश रूप से सीमांकित विकास घटकों की एक समान सेवाओं के अनुरूप किया गया है। ऐसे संगठित विभाग की सेवाएँ ग्रामीण प्रजा के निर्वाचित प्रतिनिधियों को उपलब्ध कराने की आवश्यकता है। क्षेत्रीय इकाई के रूप में विकास इकाई की नींव पर स्थानीय प्रशासनिक तंत्र की पुनरर्चना सरल और परिणामदायी बनेगी।

३. प्रवर्तमान जिला बोर्ड पंचायतों से पूर्णतः असंबद्ध चुनाव प्रक्रिया के माध्यम से बने हैं। जिला बोर्ड का स्थान लेनेवाली पंचायत संघ परिषदें आधारभूत रूप से पंचायतों के साथ जोड़ने का प्रस्ताव है। इस उद्देश्य से, प्रारूप मे यह प्रावधान किया गया है कि पंचायत संघ परिषद में, संबंधित पंचायत के सदस्यों द्वारा निर्वाचित एक सदस्य द्वारा, प्रत्येक पंचायत का स्वतंत्र और वैयक्तिक प्रतिनिधत्व रहेगा। इस परिवर्तन का उद्देश्य पंचायत संघ परिषदों और (संबंधित) पंचायतों के बीच प्रगाढ़ आपसी समझ और उद्देश्य की एकता और परिणाम के रूप में उनके प्रतिनिधित्व के अधिकार क्षेत्र की गतिविधियों में अधिक अच्छा समन्वय उत्पन्न करने का है।

४. पंचायत संघ परिषदों और पंचायतों को वैयक्तिक स्तर पर सौंपने के सूचित कार्य सामान्यतः इस समय जिला बोर्ड के अधिकारक्षेत्र से हटाकर पंचायत संघ परिषदों के नियंत्रण में समाविष्ट करने का प्रस्ताव है।

दो, विकास खण्डों के उत्पादक संसाधनों के विकास के लिए आलेखित विभिन्न मापदंड, इस समय, समुदाय विकास कार्यक्रम की राष्ट्रीय विस्तरण सेवा परियोजना के अनुसार सरकारी एजन्सियों के द्वारा होते हैं, परतु वे ज़िडाला बोर्ड और पंचायतों के साथ संबंधित नहीं हैं। यह प्रारूप उसकी अनुमति और स्वीकृति शर्तो के आधार पर समग्र परियोजना को पंचायत संघ परिषदों को हस्तांतरित करने का सरकार का अधिकार देता है।

५. इस समय जिला बोर्ड और पंचायतों को सौंपे गये कार्यो के कानूनी स्पष्टीकरण का अत्यधिक मात्रा में पुनरावर्तन होता है। इस पुनरावर्तन को दूर करने के लिए उनके कार्यों के बँटवारे में सुधार (संशोधन) करने का और पंचायत संघ परिषद तथा पंचायतों के दायित्व से संबंधित क्षेत्र सुस्पष्ट रूप से अंकित करने का प्रस्ताव है।

६. दायित्व के पुनः विभाजन का एक महत्त्वपूर्ण परिणाम, समग्र शिक्षाक्षेत्र का अविभाज्य दायित्व पंचायत संघ परिषदों को सौंपने का होगा। वे, सभी सार्वजनिक (सरकारी) प्राथमिक विभाग के निर्वाह का दायित्व संभालेंगे (इस समय जिला बोर्ड, पंचायतें या सरकारी विभाग संभालते हैं), यही नहीं तो सहायता पाने योग्य निजी प्राथमिक विद्यालयों को सहायता देने के प्रावधान का दायित्व भी उन्हे सौंपा जाएगा। निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा के प्रावधान पर प्राथमिक शिक्षा के आयोजित विकास का संपूर्ण दायित्व संबंधित पंचायत संघ परिषद के अधिकार क्षेत्र की विकास इकाइयों को हस्तांतरित किया जाएगा।

७. इस समय जिला बोर्ड एवं पंचायतों को किया गया वित्तीय संसाधनों का

विभाजन अपर्याप्त होने की शिकायत बहुत पुरानी है। स्थानीय कर, आर्थिक प्रबंध एवं प्राथमिक विद्यालयो को दिये जानेवाले अनुदान की समूची पद्धति की पुन: समीक्षा और संशोधन किया गया है। पंचायत संघ परिषद और पंचायतों की आवश्यकता के अनुसार, संशोधित विभाजन के संदर्भ में, संसाधनों में वृद्धि करने के लिए विभाग का ढाँचा रचा गया है। अनुमानित आवश्यकताओं के अनुसार, पर्याप्त संसाधन उपलब्ध करवाने के लिए करों की नई पद्धति और सरकारी अनुदान की संशोधित पद्धति समेत आर्थिक व्यवस्थापन किया गया है।

८ नये ढाँचे की ओर अविलंब (एक दिन में) मुडना संभव नहीं है। इसलिए प्रारूप में प्रावधान किया गया है कि क्रमिक कार्यक्रम के अनुसार, २ अक्तूबर १९६१ तक इस समय जहाँ पंचायतों का अस्तित्त्व ही नहीं है, उन सभी गाँवों में पंचायत और राज्य की प्रत्येक विकास इकाई में पंचायत संघ परिषदों की रचना करने के लक्ष्याक के साथ, विभिन्न विकास इकाइयों में इस कानून को लागू करना है।

९. प्रारूप में समाविष्ट सभी परिवर्तन विधानसभा के दोनों सदस्यों के प्रस्ताव के अनुसार रचित विधान सभा समिति द्वारा स्थानीय व्यवस्था तंत्र के विषय में श्वेतपत्र की जाँच के समय प्राप्त सर्वसामान्य समझौते के आधार पर किया गया है। स्थानीय कर और वित्तीय व्यवस्था के संदर्भ में प्रस्ताव विधानमंडल द्वारा नियुक्त स्थानीय वित्तीय उपसमिति द्वारा निर्मित हैं और प्रधान समिति द्वारा उसकी समीक्षा करने के पश्चात् उसे मान्यता दी गई है।

१०. मद्रास ग्राम पंचायत कानून १९५० और मद्रास डिस्ट्रिक्ट बोर्डज. एक्ट १९२० का स्थान लेने की दृष्टि से कानून का प्रारूप बनाया गया है। इसलिए इन दोनों कानूनों की कई धाराओं को बिना किसी परिवर्तन के इस प्रारूप में पुन: समाविष्ट किया गया है।

कानून की धाराओं से संबंधित अब के पश्चात् स्पष्टीकरण के रूप में की गई टिप्पणियाँ उपर्युक्त संशोधन लागू किये जानेवाली धाराओं तक सीमित है।

प्रारूप की धाराओं के सम्बन्ध में टिप्पणी

धारा १, इस धारा में संक्षिप्त संज्ञा, व्याप्ति और सूचित कदम के आरंभ का समय समाविष्ट है। यह प्रारूप ग्राम पंचायतों के साथ साथ नगर पंचायतों के संदर्भ में भी होने से, प्रवर्तमान कानून की संक्षिप्त संज्ञा मद्रास ग्राम पंचायत कानून १९५० परिवर्तित कर प्रारूप में मद्रास पंचायत कानून रखी गई है।

यह धारा विभिन्न क्षेत्रों में, विभिन्न तिथियों पर कानून लागू करने का अधिकार

सरकार को देती है। समूचे राज्य में इस धारा को २ अक्तूबर, १९६१ से पूर्व जारी करना है। फिर भी, सावधानी के तौर पर यह प्रावधान किया गया है कि उपर की तिथि को एक बार एक वर्ष के लिए बढाया जा सकता है।

मद्रास जिला बोर्ड (एमेन्डमेन्ट) कानून, १९५७ (मद्रास एक्ट १३, १९५७) के अनुसार जिला बोर्ड के विशेष अधिकारी ३१ अक्तूबर १९५८ तक सेवा मे रह सकेंगे। इसलिए कानून की धारा १९६ में प्रावधान किया गया है कि पंचायत संघ परिषदों के निर्माण तक पंचायत विकास खण्डों के लिए ये विशेष अधिकारी सेवारत रहेंगे क्योंकि संबंधित पंचायत विकास खण्डों में मद्रास डिस्ट्रिक्ट कानून जारी नहीं रहेगा। इसलिए यह प्रारूप के कानून का स्वरूप प्राप्त कर लेने के तुरंत पश्चात् उपर्युक्त प्रावधान को जारी करना पड़ेगा, और यह विचार धारा १ (३) द्वारा कार्यसाधक बनाया गया है।

धारा ३, स्थानीय क्षेत्रों को पंचायत ग्राम और पंचायत नगरों के रूप में घोषित करने का प्रावधान करती है। प्रथम स्तर की पंचायतो का प्रवर्तमान नामाभिधान परिवर्तित होकर पंचायत संचालन के नये ढाँचे में, क्रमिक रूप से नगर पंचायतें और ग्राम पंचायतें रखा गया है।

धारा ५, कुछ परिस्थितियों में नगर पंचायत क्षेत्र को नगरपालिका के रूप में प्रस्थापित करने, संबंधित क्षेत्र की पंचायतों की संपत्ति और दायित्व नगरपालिका को सौंपने और अन्य आनुषंगिक बातों का प्रावधान करती है।

धारा ७, समुदाय विकास के लिए राष्ट्रीय विस्तरण सेवा परियोजना के उद्देश्यों के लिए विकास खण्ड में दिये जा रहे किसी भी स्थानीय क्षेत्र को पंचायत विकास-खण्ड के रूप में घोषित करने की और ऐसे प्रत्येक विकास खण्ड से मुक्त करना या उसमें समाविष्ट करने के अधिकार और घोषित की गई सूचनाओ को निरस्त करने का अधिकार भी दे दिया गया है। नई धारा में घोषणाओं को प्रकट करने के लिए और आनुषंगिक बातों में अनुसरण करने की कार्य पद्धति और उन घोषणाओ में समाविष्ट करने की आनुषंगिक बातों का भी इस धारा में प्रावधान किया गया है।

धारा ११, पंचायत संघों के लिए पंचायत संघ परिषदों की रचना का प्रावधान करती है।

धारा १२, पंचायत संघ परिषदों की सदस्य संख्या का निर्देश करती है और वहाँ, पंचायतें और नगर उपनिवेश द्वारा, उनके सदस्यो के चुनाव के संदर्भ में तथा राज्य विधानसभा के सदस्यों के प्रतिनिधित्व, अनुसूचित जातियाँ और महिलाओं के

प्रतिनिधत्व का भी प्रावधान करती है।

धारा १२, जहाँ पंचायत संघ परिषदों की रचना की गई हो उन क्षेत्रो से मद्रास डिस्ट्रिक्ट बोर्ड एक्ट १९२०, मद्रास ग्राम पंचायत कानून १८५० एवं पंचायत भूमिकर (अधिक सरचार्ज) कानून १९५५ को निरस्त करने का प्रावधान करती है और इस तरह निरस्त किये जाने के कारण भविष्य में उत्पन्न होनेवाले प्रभावों का निर्देश करती, उदाहरण के लिये विशेष अधिकार की सेवा पर रोक, डिस्ट्रिक्ट बोर्ड की संपत्ति और दायित्वों में परिवर्तन इस समय डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के अधिकारक्षेत्र मे स्थित प्राथमिक विद्यालय, औषधकेन्द्र, बाजार और सड़कें पंचायत संघ परिषद में परिवर्तित करने के लिए, चिकित्सालय, विश्रामगृह और यात्री निवास सरकार को हस्तांतरित करना और डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के व्यावसायिक एवं औद्योगिक माध्यमिक विद्यालय सरकार द्वारा निर्दिष्ट किये जाने हेतु उन सत्ताधिकारी को हस्तातरित करना।

धारा १९, पंचायत संघ परिषदों के सदस्यों की कार्यालय एवं सामान्य तथा कभी कभी रिक्त होनेवाले स्थान पर नियुक्ति करने का निर्देश करती है। इस धारा के अनुसार सदस्यों का कार्यकाल, तमिल नूतन वर्ष के दिन मध्याह्न से शुरू होकर पाँच वर्ष का रहेगा।

धारा २५ और २६ प्रवर्तमान प्रावधान के अनुसार सेवारत, अधिकृत नियोक्ता का दायित्व संभालनेवाले या किसी सदस्य का अधिकृत उचाधिकारी व्यक्ति को पंचायत के सदस्यपद पर प्रत्याशी बनने पर रोक लगाई गई है। इसी प्रकार कोई व्यक्ति अन्य किसी सदस्य के अधिकार में सेवारत है या उसका अधिकृत सहायक बनता है तो (पंचायत का) सदस्यपद उसे छोडेना पड़ता है। प्रारूप में इस अनौचित्य को दूर किया गया है।

धारा ३७ और ३८, ये दो धाराएँ पंचायत संघ परिषद के अध्यक्ष, उपाध्यक्ष के चुनाव का, उनकी रिक्त पद पर नियक्ति का, उन्हें अधिकार एवं दायित्व हस्तांतरित करने आदि का प्रावधान करती हैं और उनके दायित्व एवं अधिकारों का निर्देश करती है।

धारा ४४ अने ४५, पंचायत संघों के कमिशनरों की नियुक्ति का प्रावधान करती है, उनके दायित्व एवं अधिकार का निर्देश करती है, सामान्य रूप से विकास इकाई अधिकारी की नियुक्ति आयुक्त पद पर करने का प्रावधान किया गया है।

धारा ४७ में पंचायत संघ परिषदों की बैठक के संचालन के संदर्भ में आवश्यक प्रावधान है।

धारा ५३ पंचायत संघ परिषदों की बैठक के संदर्भ में आवश्यक प्रावधान है।

धारा ५५ पंचायत संघ परिषदों को अपने और पंचायत संघ के अधिकार की सभी पंचायतों के संचालन का संकलित वृत्तांत जिलाधीश को सौपने के लिए बाध्य करती है।

धारा ५७ से ६२ में पंचायतों और पंचायत संघ परिषदों की स्थापना, दो या इससे अधिक पंचायतें या पंचायत संघ परिषदों के द्वारा संयुक्त अधिकारी की नियुक्ति एवं अधिकारियों और सेवार्थियों के स्थानांतरण आदि का प्रावधान है।

धारा ६३ और ६४ पंचायत के अधिकारक्षेत्र में निर्मित क्षेत्रो की सडकों और सार्वजनिक स्थानों पर प्रकाश का प्रबंध पंचायत के लिए अनिवार्य बनाती है, जब कि रिक्त क्षेत्रों में सड़कों और सार्वजनिक स्थानों पर प्रकाश की सुविधा का दायित्व पंचायत के विवेक पर आधारित है। पंचायत के ऐच्छिक दायित्वों में बागबगीचे तैयार करना और उसका निर्वहण करने, अक्षरज्ञान देनेवाले केन्द्र और सामाजिक शिक्षा देने वाले क्षेत्रों की रचना करना और उसका निर्वहण करने जैसी बातों को भी समाविष्ट किया गया है।

धारा ६५, पंचायत संघ परिषदों के अनिवार्य दायित्वों का विस्तृत निर्देश करती है। पंचायत संघ मार्गों के रूप में सड़कों का निर्माण, उनकी मरम्मत और देखभाल करना, स्वास्थ्य केन्द्र, प्रसव एवं बालकल्याण केन्द्र, आदि की स्थापना एवं निर्वहन करना, प्राथमिक विद्यालयों का निर्माण एवं निर्वहण, मेले और त्यौहारों पर नियंत्रण, कृषि सुधार, कुटिर उद्योगों की स्थापना और प्रोत्साहन को इसके अंतर्गत समाविष्ट किया गया है।

धारा ६६, समुदाय विकास कार्यक्रम की राष्ट्रीय सेवा परियोजनाओं का, विशेषत: कृषिविकास से संबंधित और वैयक्तिक या सहकारी स्तर पर गठित ग्रामोद्योग के विकास से संबंधित सभी कदम समेत का संचालन पंचायत संघ परिषद को सौंपने का अधिकार सरकार को देती है।

धारा ६७, पंचायत संघ में निवास करनेवाले लोगों की सुरक्षा, स्वास्थ्य, सुखसुविधाओं को प्रदान करने के लिए लोकोपयोगी कदम उठाने के संदर्भ में पंचायत संघ की आवश्यकताओं को पूरी करने के लिए आवश्यक प्रावधान करने का अधिकार पंचायत संघ परिषद को देती है।

धारा ६८, दो या इससे अधिक पंचायतों को संयुक्त जलगृह तैयार करने एवं उसके निर्वहण के लिए, स्मशानगृह एवं कब्रस्तान बनाने और निर्वहण करने का अधिकार

देती है। पंचायत संघ परिषद को किसी संस्था का संचालन करने का या किसी काम को कार्यान्वित करने का या उसका निर्वहण करने का अधिकार देती है।

धारा ६९ किसी भी पंचायत या पंचायत संघ परिषद को सार्वजनिक मार्ग एवं सार्वजनिक स्थानों पर प्रकाश का प्रबंध करने के लिए आदेश देने का अधिकार प्रदान करती है।

धारा ७०, के अंतर्गत दो या इससे अधिक संघ परिषदें संयुक्त स्वास्थ्यकेन्द्र, बालकल्याणकेन्द्र या अन्य संस्थाओं की स्थापना कर सकती है।

धारा ७१ स्थायी संपत्तियों को पंचायत को हस्तांतरित करने का अधिकार पंचायत संघ परिषद को प्रदान करती है।

धारा ७४, किसी संस्था के संचालन या किसी कार्य को कार्यान्वित करने, निर्वहन या किसी अधिकार के उपयोग की या पंचायत संघ के आंतरिक या बाह्य प्रकार की तथा कानून में उसका प्रावधान हो या न हो तो भी दायित्व पंचायत संघ परिषद को परिवर्तित करने की सामान्य सत्ता सरकार एवं उसके अधिकार के सत्ताधिकरण एवं अधिकारियों को प्रदान करती है।

धारा ७७, घोषित करती है कि पंचायत संघ के अंतर्गत सभी सार्वजनिक मार्ग, जो पंचायत संघ के मार्गो के रूप में वर्गीकृत किये गये हैं वे, पंचायत संघ परिषद में निहित रहेंगे।

धारा ७८ से ९८, डिस्ट्रिक्ट बोर्डों के परिणामस्वरूप इन बोर्डों के कुछ दायित्व, अब के पश्चात पंचायतें और पंचायत संघ परिषदो को हस्तांतरित किये जाऐंगे। ये धाराएँ उनमें से कुछेक दायित्वों का निर्देश करती हैं, जैसे, भयकारी ढाँचे, भयकारी वृक्ष, तालाब, कुएँ आदि बातों के प्रति सावधानी रखनी होगी, किसी गंभीर बीमारी के फैलने पर सार्वजनिक मनोरंजन के स्थान बंद कर देने का, भवन और भूमि के आसपास बाड करना, बाड और वृक्षों की काटछाँए करते रहना, गंभीर रूप से बीमार बचे को विद्यालय में आने से रोकने के लिए आदेश देने का अधिकार, टीका करण सख्ती से लागू करना, भूमि और भवनों से गंदगी और हानिकारक वनस्पति को दूर करने जैसे दायित्वों का समावेश होता है।

धारा ९९ से १०५ पंचायतों और पंचायत संघ परिषदों के सार्वजनिक और निजी बाजार के संदर्भ में दायित्वों के बारे में है। पंचायत संघ परिषद, निरीक्षक की अनुमति से कोई सार्वजनिक बाजार शुरु कर सकती है, बन्द भी कर सकती है। पंचायत या पंचायत संघ परिषद बाजार के उपयोग के लिए और बाजार की दुकानें,

स्टोल्स आदि के उपयोग के लिए शुल्क प्राप्त कर सकती है। अनुमतिपत्ररहित निजी बाजार खोलने के लिए और सार्वजनिक मार्गों पर पशु तथा चीजवस्तुओं के विक्रय पर रोक लगी हुई है। सार्वजनिक और निजी बाजारों का वर्गीकरण सरकार कर सकती है, उसमें परिवर्तन कर सकती है, बाजारों से प्राप्त होनेवाली आय या उन्हें देय अंश का विभाजन कर सकती है और संबंधित स्थान पर बाजार है या नहीं इस विवाद पर निर्णय दे सकती है। सार्वजनिक बाजार के किसी व्यक्ति को स्थान के अधिकार संपादित करने का अधिकार प्रदान करने का प्रावधान भी किया गया है। इस प्रकार का संपादन भूमि संपादन कानून, १८९४ के अंतर्गत करना होगा। मद्रास ग्राम पंचायत कानून, १९५० की धारा ८१ के अंतर्गत किसी व्यक्ति द्वारा निजी बाजार खोलने या निजी बाजार प्रारम्भ रखने पर रोक लगाने के प्रावधान को मद्रास उच्च न्यायालयने अनधिकृत घोषित किया था इसलिए प्रारूप में उसे पुनः समाविष्ट नहीं किया गया है।

धारा ११५ से १४३ में कर एवं आर्थिक प्रबंध से संबंधित अध्याय को समाविष्ट किया गया है। इस अध्याय के प्रावधान के अनुसार स्थानीय उपकर या स्थानीय कर की विशेष लागत पंचायत विकास खण्डों में लगाई जाएगी और पंचायत क्षेत्रों में निवासकर, व्यवसायकर, वाहन कर और भूमि परिवर्तन शुल्क लगाया जाएगा। निर्धारित किये गये नियमों के अधीन और निरीक्षक की अनुमति से निश्चित उद्देश्य के लिए कृषिभूमि पर भी पंचायत कर वसूल कर सकेगी। पंचायत विकास इकाई पर लिया जानेवाला स्थानीय उपकर (१) मद्रास डिस्ट्रिक्ट बोर्डज एक्ट, १९२० की धारा ७४-बी के अंतर्गत गणना के पात्र भूमि उपकर का, (२) मद्रास प्राथमिक शिक्षा कानून, १९२० की धारा (२) में उल्लिखित कर के किसी भी नाम पर गणना के योग्य कर और (३) मद्रास भूमिकर (अतिरिक्त सरचार्ज) कानून, १९५५ के अंतर्गत लिया जा सकता है ऐसा भूमिकर सरचार्ज के रूप में लिया जाएगा।

पंचायत संघ परिषदें और पंचायतों के संसाधनों मे अभिवृद्धि करने के लिए सरकार द्वारा कुछ अनुदान देने के निश्चित प्रावाधान किये गये हैं। पंचायत संघ परिषदों को स्थानीय शिक्षा अनुदान, स्थानीय उपकर सरचार्ज को पूरक अनुदान (Matching grant) और स्थानीय मार्ग अनुदान दिया जाएगा और पंचायतों को ग्रामीण निवासकर को पूरक अनुदान दिया जाएगा। इसके उपरांत, प्राप्त किये गये भूमिकर से प्रत्येक पंचायत संघ परिषद को संबंधित विकास इकाई की जनसंख्या के अनुपात में सरकार प्रतिवर्ष निश्चित राशि देगी। इस प्रकार पंचायत संघ परिषदों के खाते में जमा राशि 'भूमिकर' नामान्तर (assignment) के रूप में पहचानी जाएगी। अनुदान की स्वीकृति

के लिए सरकार अपनी इच्छानुसार पंचायत विकास इकाइयों को वर्गीकृत करेगी।

प्रत्येक संघ परिषद के पास दो प्रकार का संचित धन रहेगा, एक, पंचायत संघ (सामान्य) जमाराशि और दूसरा पचायत संघ (शिक्षा) संचित धन। प्रत्येक नगर पंचायत के पास नगर पंचायत संचितनिधि और ग्राम पंचायत के पास ग्राम पंचायत निधि रहेगी।

पंचायत संघ (सामान्य) निधि में जमा की जानेवाली और पंचायत संघ (शिक्षा) निधि में जमा की जानेवाली आय के संदर्भ में उसका उपयोग किस प्रकार किया जाएगा तथा आयव्यय निरीक्षक की नियुक्ति, बजट तैयार करने के बाद उसे पारित करवाने के संदर्भ में प्रारूप में निश्चित प्रावधानों को समाविष्ट किया गया है। कर के भुगतान से छूट देना, उगाही न जा सकते योग्य राशि का निर्णय, कर और शुल्क की वसूली के लिए भूमिकर कर्मचारियों का उपयोग, पंचायत या अन्य किसी स्थानीय प्रशासनिक इकाई द्वारा किया गया व्यय स्थानीय लोगों को यदि लाभकारक हो तो ऐसे व्यय में सरकार या पंचायत परिषद द्वारा योगदान देना और ऋण एवं नकद की राशि की प्राप्ति के संदर्भ में भी प्रावधान किया गया है।

धारा १४४ से १५८ सरकार, निरीक्षक, समाहर्ता और अन्य नियामक अधिकारियों के संदर्भ में है और प्रारूप में सूचित पंचायत संघ परिषदों से सबंधित प्रावधानों को समाविष्ट किये जाने के कारण आवश्यक संशोधनों के साथ, प्रमुखत: मद्रास ग्राम पंचायत कानून, १९५० के प्रावधानों के अनुरूप है। कुछ संशोधन अध्यक्ष एवं उपाध्यक्षों को पदच्युत करने के संबंध में किया गया है। प्रवर्तमान प्रावधानों के अनुसार पंचायत के अध्यक्ष, उपाध्यक्ष या सदस्य को, पंचायत द्वारा उस प्रकार का प्रस्ताव पारित करती है तब निरीक्षक पंचायत को (पंचायत के) पदच्युत करने का प्रावधान छोड़ दिया गया है और पंचायत के अध्यक्ष या उपाध्यक्ष के विरुद्ध, तहसीलदार की अध्यक्षता में आयोजित संबंधित बैठक में, अविश्वास प्रस्ताव पारित करने का प्रावधान किया गया है। इसी प्रकार के प्रावधान पंचायत संघ परिषदों के अध्यक्ष एवं उपाध्यक्षों को पदच्युत करने के लिए किये गये हैं। परन्तु ऐसी बैठकें तहसीलदार के स्थान पर रेवन्यू विभागीय अधिकारी की अध्यक्षता में आयोजित होगी और अध्यक्ष या उपाध्यक्ष को पदच्युत करने का अधिकार निरीक्षक के स्थान पर सरकार के पास रहेगा, इस संशोधन के अधीन उसे प्रभावी किया जाएगा। पंचायत के विसर्जन और अधिक्रमण के लिए प्रवर्तमान प्रावधानों के अनुसार ही पंचायत संघ परिषदों के विसर्जन और अधिक्रमण का प्रावधान किया गया है।

धारा १६१ शिकायत दर्ज करने की अनुमति देने के संदर्भ में है। इसमें अध्यक्ष, उपाध्यक्ष और आयुक्त को जानकारी देने के विषय को जोडते हुए मद्रास ग्राम पंचायत कानून, १९५० की धारा १०६ के अनुसार ही है। यद्यपि उसमें एक विशेष प्रावधान भी किया गया है कि ऐसी अनुमति देते समय सरकार यह आदेश भी कर सकती है कि अध्यक्ष, प्रशासनिक अधिकारी अध्यक्ष, उपाध्यक्ष या आयुक्त मे से जिस पर भी इसका प्रभाव पड़ता हो वह जब तक ऐसे मुकद्दमे का निर्णय नहीं आता तब तक अपने पद का उपयोग नहीं कर सकेगा।

धारा १७८, प्रारूप मे समाविष्ट विभिन्न वातों के प्रति नियमों की रचना करने के लिए सरकार से संबंधित है। अन्य सत्ताओं के अलावा पंचायत गाँव या पंचायत नगर में से किसी स्थानिक क्षेत्र को हटाने या जोड़ने के संदर्भ मे या किसी क्षेत्र का नगरपालिका में समावेश करने के संदर्भ में है। पंचायत संघ परिषद द्वारा महिला और अनुसूचित जाति के सदस्य को कितने समय में समाहृत करना होगा और महिला या अनुसूचित जाति का सदस्य जब तक समाहृत न हो तब तक रिक्त स्थान को किस तरह भरना चाहिए। पंचायतों और पचायत संघ परिषदों को अनुदान और आर्थिक योगदान देने के लिए सरकार द्वारा जिन सिद्धांतों का अनुसरण किया जाएगा उस संदर्भ में नियम बनाने वाली निश्चित सत्ता को हस्तांतरित करने का प्रावधान इस धारा के अंतर्गत किया गया है।

धारा १८१ एवं परिशिष्ट ३ (तीन), पंचायतो और पंचायत संघ परिषदों के साथ संबंधित सजा और दंड (सामान्य सजाएँ और निरंतर कानून तोडते रहने के लिए दंड) देने का प्रावधान करता है।

धारा १८९, कन्याकुमारी जिला और तिरुनेलवेली जिले के शेनकोट्टा तहसील के क्षेत्रों में पंचायत संघ परिषदों की रचना होने के तुरंत पश्चात् इस कानून को उन क्षेत्रों तक ले जाने की और त्रवणकोर-कोचीन कानून, १९५० को समाप्त करने का प्रावधान करती है। आवश्यक सुरक्षात्मक प्रावधान भी किया गया है।

धारा १९० एवं परिशिष्ट ४ (चार), नये कदम को लागू करने के आरंभिक समय के बीच के प्रावधानों की सूची चतुर्थ परिशिए मे ही है। धारा १९० ३५ धारा (२), परिशिष्ट ४ में निर्दिष्ट नियमों को संशोधित करने, उसमें कुछ जोड़ने एवं काटने का अधिकार सरकार को प्रदान करती है।

धारा १९१, मद्रास ग्राम पंचायत कानून १९५० की धारा १९२ के अनुसार प्रत्येक पंचायत को, मद्रास ग्राम न्यायालय कानून १८८८ के अनुसार पंचायत न्यायालय

मान लिया गया है और कानून के अन्तर्गत वह अपनी सत्ता का उपयोग कर सकती है। सरकार किसी दीवानी या फौजदारी कार्यक्षेत्र के अधिकार भी मद्रास ग्राम पंचायत कानून १८८८ के अंतर्गत दे सकती है, परन्तु पंचायतों पर ग्रामीण न्यायालयों की सत्ता का बोझ नहीं होना चाहिए। इस विचार के कारण उपर्युक्त धारा १३२ को प्रवर्तमान कानून में पुन: समाविष्ट नहीं किया गया है, परंतु अनिर्णित वाद और कार्यवाही यदि रहती है तो मद्रास ग्रामीण न्यायालय कानून के अंतर्गत रचित सक्षम न्यायालय में उसे परिवर्तित करने का प्रावधान किया गया है।

१९२ से १९५ की धाराओं के अंतर्गत मद्रास डिस्ट्रिक्ट म्युनिसिपल एक्ट १९२०, मद्रास प्राथमिक शिक्षाकानून १९२०, मद्रास मोटर विहिकल्स टेक्सेशन एक्ट १९३१ तथा मद्रास मनोरंजन कर कानून १९३९ में महत्त्वपूर्ण सशोधन करती है।

धारा १९६, मद्रास डिस्ट्रिक्ट बोर्डज. (एमेन्डमेन्ट) एक्ट १९५७ में अनुकूल संशोधन करते हुए प्रत्येक पंचायत इकाई मे, डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के विशेष अधिकारियों को पंचायत संघ परिषदों की स्थापना होने तक पद पर बनाए रखने का प्रावधान करती है।

लोर्धमल साइमन

स्थानिक प्रशासन पंचायत मंत्री

प्रारूप धाराएँ १४, १५, २६(१), ३०, ३४, ३६, ३७(२), ३९(२), ४१(५) (बी), ४४(३), ४७, ५०, ५१, ५२(२), ५४, ५७(३), ५८, ५९, ६१, ६३, ६४, ६५, ६७, ६८, ७०, ७२(४), ८४(२), ८५, ८६, ९३, ९९, १०६, १०९, ११३, ११७, ११९(३), १२० से १२३, १२४(३), १२५, १२६, १३८, १३९, १६२ और १७८ प्रारूप के कुछ प्रावधान को जारी करने की पद्धति और तंत्र की रचना के लिए प्रारूप के प्रावधान के अन्तर्गत अनुकूल नियमों की रचना करने का अधिकार सरकार को प्रदान करती है। धारा ३, ६, १६ एवं ५७(३) प्रारूप के कुछ प्रावधानों को लागू करने के लिए निरीक्षकों को अधिकार प्रदान करती है। धारा ५१ एवं १८० पंचायतों और पंचायत संघ परिषदों को, अपने गठन के उद्देश्यों को कार्यान्वित करने के लिए, मानदंड एवं कानून रचने का अधिकार देती है। धारा १५७, सूचित कानून के अंतर्गत उनकी सत्ताएँ उनके अधिकार में कार्यरत अधिकारियों को हस्तांतरित करने का अधिकार सरकार को प्रदान करती है। धारा १८८, कानून के प्रावधान को लागू करते समय आरंभ में उत्पन्न होनेवाली बाधाओं को दूर करने के लिये सरकार को समुचित निर्णय लेने का अधिकार प्रदान करती है। इस रूप में हस्तांतरित अधिकार सामान्य है, असामान्य नहीं है।

वित्तीय निवेदन

धारा ११८, संदर्भित वर्ष में राज्य में वसूल किये गये कुल भूमिकर (जल उपकर समेत) में से पंचायत विकास खण्ड की जनसंख्या का प्रतिव्यक्ति एक रूपया प्रत्येक पंचायत संघ परिषद को देने का प्रावधान करती है। धारा १२८ और १२९ के अंतर्गत प्रत्येक पंचायत संघ परिषद को प्रतिवर्ष क्रमिक रूप से स्थानीय शिक्षा अनुदान और स्थानीय उपकर सरचार्ज के सामने आपूर्ति अनुदान देने का प्रावधान किया गया है। धारा १३१ एवं १३२ के अंतर्गत क्रमिक रूप से स्थानीय मार्ग अनुदान और ग्रामीण निवास के सामने आपूर्ति अनुदान का प्रावधान किया जाता है। धारा १४१ पंचायत संघ परिषद एवं पंचायत वित्त निधि के आयव्यय के निरीक्षण के लिए निरीक्षकों की नियुक्ति का प्रावधान करती है और धारा १४४ पंचायत संघ परिषदें तथा पंचायतों के निरीक्षण के लिए निरीक्षक अधिकारियों की नियुक्ति का प्रावधान करती है। इसलिए, यह कानून राज्य की जमानिधि से व्यय करने का प्रबंध करता है। इतने बृहद स्तर पर संचालन के साथ संबंधित व्यय का समाधानपूर्वक अनुमान लगाना इस समय संभव नहीं है। इसलिए उस कालखंड में प्रतिवर्ष व्यय में होनेवाली वृद्धि कार्यक्रम की निर्धारित समयावधि एवं स्थानीय स्रोतों पर भी निर्भर रहेगा। स्थानीय संचालन के संदर्भ में विधान मंडल समिति की वित्तीय बातों से संबंधित उपसमितियों द्वारा प्रारूप में समाविष्ट आर्थिक प्रावधानों के संभवित प्रभावों के लक्ष्यांक और उपसमिति की दृष्टि से निश्चित किये गये कार्यक्रमों की समयावधि के संदर्भ में समीक्षा की गई है। समिति द्वारा अभिव्यक्त किये गये अभिप्राय विधानमंडल की जानकारी के लिए नीचे दिये गये है।

'इससे पूर्व वृत्तांत में हमने स्पष्ट किया है कि राज्य के सभी पंचायत ग्राम को देने की स्थानीय आय और सरकारी अनुदान की निश्चित की गई राशि प्रति व्यक्ति १७५ पैसे हैं और प्रतिव्यक्ति औसतन ६०० पैसों की वृद्धि का निर्देश किया गया है। हमने बीच की समयावधि के संदर्भ में प्रतिव्यक्ति ३२५ पैसे के अन्तर की आपूर्ति की ओर ध्यान आकर्षित का प्रश्न किया कि, 'यह धन कहाँ से आएगा ?' इस समय इस प्रश्न का उत्तर प्राप्त करना सरल है।

सबसे पहली बात कि हमारे प्रस्ताव के अनुसार इन ३२५ पैसों में से प्रतिव्यक्ति १०० पैसे भूमिकर के प्रतिशत के आधार पर निश्चित किये गये हैं। इसमें नये संसाधनों का प्रबंध नहीं है, परन्तु राज्य सरकार के पास इस समय जो संसाधन हैं उन्हें पंचायत संघों को हस्तांतरित करने की बात है। इसलिए राज्य सरकार निजी

प्राथमिक विद्यालयों के अनुदान से संबंधित अपने वर्तमान दायित्व से उस मात्रा में अधिकांश रूप से मुक्त होगी। इस समय जिन गाँवों मे पंचायत का अस्तित्व नहीं है वहाँ, अन्य स्थानों पर उसकी रचना होती है उस प्रकार से पंचायत का गठन होने से, संसाधनों के प्रबंध का विषय इस समय ध्यान में न लें तो, इसके पश्चात् प्रति व्यक्ति २२५ पैसे *ग्राम पंचायत विकास व्यय के विषय में राज्य की सारी ग्रामीण जनसंख्या के* आधार पर विचार कर सकते है। सारे राज्य के लिए यह व्यय लगभग रु. ४.५ से ५ करोड होगा।

जहाँ तक पंचायतों का संबंध है, प्राथमिक शिक्षा को छोड, प्रति व्यक्ति व्यय के वर्तमान स्तर में किसी प्रकार की निर्धारित वृद्धि या कमी हमारी अवधारणा में नहीं रहती है। इस उद्देश्य से, कुछ छूट के साथ हम इस निष्कर्ष पर पहुँच सकते हैं कि राज्य की कुल ग्रामीण (अर्थात् नगरपालिका को छोड़कर) जनसंख्या के लिए लगभग कुछ विकास व्यय वार्षिक ५ (पाँच) करोड होगा। इसे कुल व्यय से विद्यालयों और गरीब बच्चों के भोजन व्यय सहित प्राथमिक शिक्षा के विकास के लिए प्रति वर्ष ३.५ करोड रूपयों से कुछ कम राशि की आवश्यकता पड़ेगी और गाँवों में स्थानीय सुविधाओं का स्तर ऊँचा उठाने के लिए १.५ करोड रूपयों से कुछ अधिक राशि की आवश्यकता रहेगी।

हम अभिशंसा करते हैं कि इस आर्थिक परियोजना के अनुसार रु. १.५ करोड के स्थानीय कर की वृद्धि के द्वारा प्राथमिक शिक्षा के विकास के लिए स्थानीय योगदान के रूप में निजी सुविधाओं के लिए आधे करोड से अधिक और वार्षिक एक करोड से कम राशि का प्रबंध हो, यह अपेक्षा है। प्रतिवर्ष क्रमिक रूप से निर्धारित संख्या की विकास इकाइयों में पंचायत प्रशासनिक तंत्र की क्रमिक रचना के कार्यक्रम के अनुसार अधिक ऊँचे स्तर के व्यय का प्रावधान करना पडेगा।

उपर्युक्त हिसाब से यह ध्यान में आता है कि हमारी आर्थिक परियोजनाओं का स्पष्ट प्रभाव पंचायत विकास का दो तिहाई (लगभग प्रतिवर्ष ३.५ करोड) का व्यय सरकार की वित्तनिधि के बाहर का होने की अभिशंसा करने की झलक देता है। हम स्पष्ट करना चाहते हैं कि राज्यस्तरीय अधिक (घोषित हो चुके, अर्थात् कृषि आय कर को छोड़कर) कर डालने की हमारी कल्पना नहीं हैं। यह सर्वविदित है कि मद्रास राज्य ने अपनी विकास परियोजना को कार्यान्वित करने के लिए यथासंभव उत्तम कार्य किया है। नये पंचायत व्यवस्थातंत्रने अपनी विस्तृत सत्ताओं के द्वारा की गई स्थानीय कर की वृद्धि बहुत बडी होगी। इसलिए, *द्वितीय पंचवर्षीय योजना के अंतर्गत आनुषंगिक शीर्षक*

में (प्राथमिक शिक्षा, सडकें आदि) प्रबंध किये गये ससाधन (परियोजना के अंतर्गत सहायता के लिए ढॉचे से प्राप्त हो रहे केन्द्र सरकार के अनुदानो के प्रति ध्यान देने के पश्चात्) हमारे द्वारा की गई अभिशंसाओ के अनुसार सरकारी व्यय को निपटने के लिए अपेक्षित रहेगा। इस प्रकार द्वितीय पंचवर्षीय योजना के शेष वर्षो की परिस्थिति अपेक्षित मात्रा में चिंतामुक्त रहेगी।

परन्तु हमने पचायत प्रशासनिक तत्र की वित्तीय आपूर्ति के लिए जो परियोजना निर्दिष्ट की है वह स्थायी स्वरूप की है। हमारी कल्पना के अनुसार व्यय में होनेवाली वृद्धि नियमित गति से होती रहेगी और तीसरी पंचवर्षीय योजना के मध्य वर्ष के पश्चात् ही उच्च स्तर पर स्थिर होगी। यह आवश्यक है कि हमारे द्वारा निर्दिष्ट वित्तीय परियोजना को कार्यान्वित करने के लिए केन्द्र सरकार की ओर से राज्य को प्राप्त हो रही अनुदान की राशि तीसरी पंचवर्षीय योजना की संपूर्ण समयावधि मे प्राप्त होती रहे, तभी हमने जो पंचायत के विकास का व्यय अंकित किया है वह निश्चित मात्रा में समावृत्त होता रहेगा। हमें प्रतीत होता है कि पंचायत विकास के लिए उत्पन्न करनेवाले नये संसाधनों का बोझ तीन स्तरो पर बॉटना न्यायसंगत होगा। एक तिहाई पंचायत व्यवस्थापन तंत्र के, एक तिहाई राज्य सरकार के और एक तिहाई केन्द्र सरकार के हिस्से में आए। तीसरी पंचवर्षीय योजना की समयावधि में केन्द्र सरकार द्वारा वहन करने योग्य बोझ की मात्रा, किसी भी रूप में द्वितीय पंचवर्षीय योजना की समयावधि से कम नहीं होनी चाहिए।

हमारी अभिशंसा है कि राज्य सरकार द्वारा इस प्रश्न को केन्द्र सरकार के सामने अविलंब उठाना चाहिए। संविधान की धारा ३६, ४०, ४५, ४६, ४७ और ४८ के स्पष्ट प्रावधान की दृष्टि से और प्रधानमंत्री तथा केन्द्र सरकार के अन्य उच्चाधिपतियों के द्वारा पंचायत संचालन के विकास की अनिवार्य आवश्यकता के संदर्भ में हुई घोषणाओं को देखते हुए हमारे द्वारा निर्दिष्ट परियोजना का (केन्द्र सरकार के अनुदानों के आवश्यक अंश समेत) स्वीकार किया जाएगा और तीसरी पंचवर्षीय योजना में उसे समाविष्ट किया जाएगा इसका हमें विश्वास है।

(महामहिम राज्यपालश्री के आदेश से)

ए. अलागिरीस्वामी

सचिव, राज्य सरकार कानून विभाग

फोर्ट सेन्ट ज्योर्ज गेजेट, खण्ड ४ अ, असामान्य, क्र. २७, मद्रास, मंगलवार, २ सितम्बर १९५८ (पृष्ठ ४०५-४१६ से उद्धृत)

भूमिपति का अधिकार हस्तांतरित होता है। जिस करेई का वह मुखिया बननेवाला है उसके साझेदारों की सामान्य सहमति से उसकी नियुक्ति होती है और नये सिरे से बँटवारा नहीं होता तब तक वह उस पद पर बना रहता है। इससे पूर्व यदि उसकी मृत्यु हो जाए या वह अपनी संपत्ति बेच दे तो उसका पद विरासत के अधिकार से या बिक्री के अधिकार से उसके खरीदार को प्राप्त नहीं होता है। किसी प्रकार की नई नियुक्ति भी नहीं होती हैं और मूल करेई करन का नाम ही बँटवारे की पूरी समयावधि में चालू रहता है। उसकी (करेई करन की) नियुक्ति होने के पश्चात् और प्रत्येक करेई को निश्चित साझेदार दिये जाने के पश्चात् समझौतापत्र बनता है, जिसके अंतर्गत करेईकरन और बँटवारे को मान्यता देने के और आवश्यक मरम्मत तथा सुधार करने के और अन्य कुछ पारंपरिक प्रबंधों को पूर्ण किया जाता है। इसके पश्चात् कडजन (पामताड प्रकार के वृक्ष के पत्ते) पर प्रत्येक करेई के खेतों के नाम और विस्तार लिख लिए जाते हैं। प्रत्येक पर्ची पर एक नाम लिखने के बाद आठों पर्चियाँ भूमि पर डाली जाती हैं और ऐसे बच्चे के हाथ से बारी बारी से एक पर्ची को उठाने के लिए कहा जाता है जो पढ लिख नहीं सकता। इसके आधार पर करेई एवं करेई करन निश्चित किया जाता है।

पर्ची उठाकर निर्णय करने की पद्धति सार्वजनिक स्थल-मंदिर, मठ या गाँव के चौपाल के आगे होती है। गाँव की राशि (नाम का प्रथमाक्षर) के अनुसार, वितरण का शुभ दिन निश्चित किया जाता है और प्रविधि कुछ धार्मिक रूप से होती है। पर्ची अगर मंदिर के सामने उठानी है तो मंदिर के देवता के सामने और अन्य स्थल पर उठानी है तो लोकप्रिय ग्रामदेवता पिल्लेयर का चित्र गेरुए रंग से अंकित करने के पश्चात् उसके सामने विधि होती है। गाँव के जितने मिरासदार होते हैं उतनी संख्या में नारियेल उसके सामने चढाए जाते हैं और अंत मे सुपारी चढाकर पूजाविधि पूर्ण होती है। इसके पश्चात् पर्ची उठाकर निर्णय आरम्भ होता है। पर्ची उठाने की प्रक्रिया (लाटरी) के पश्चात् कडजन की पर्चियाँ करेईकरन के पास जमा की जाती है। साझेदार स्वीकृतिपत्र करते हैं और नपाई का विस्तृत वृत्तांत गाँव के पुजारी या विद्यालय के शिक्षक या ज्योतिषी को सौंप दिया जाता है, क्योंकि उन्हें सभी पक्षों का समान मित्र माना जाता है। अधिक सतर्कता के कारण प्रत्येक मिरासदार (साझेदार) भी इन अभिलेखों की नकल अपने पास रख सकता है।

इस समारोह में जो वास्तव में करेईयीड है, वह उस प्रविधि के एक सप्ताह के बाद प्रत्येक करेईकरन अपने अधिकार में आनेवाली भूमि उसकी स्वीकृति देनेवाले मिरासदार के बीच बाँटता है। बँटवारा करने का कार्य ऊपर दर्शाई गई पर्ची उठाने की

पद्धति या सामान्य सहमति से होता है। किसी विशेष स्थल पर यह प्रविधि पूर्ण करना आवश्यक नही है और किसी प्रकार का समारोह भी नहीं होता है। प्रत्येक मिरासदार उसे प्राप्त भूमि की पर्ची अपने पास रखता है।

जो पाठक इस विषय को गहराई से समझना चाहते है उनके लिए एक करेईयीड स्वामित्व के उपभोग पद्धति की सुस्पष्ट जानकारी प्रस्तुत करने के लिए एक करेईयीड स्वीकृतिपत्र का अनुवाद प्रस्तुत करता हूँ। यह अभिलेख मिरासदारों के द्वारा पर्ची उठाने की उपर्युक्त पद्धति के अनुसार किये गये स्वीकृतिपत्रों में से एक है।

यह स्वीकृतिपत्र हम देवाय्यन और अन्य निम्न हस्ताक्षर करनेवाले नन्नीलम गाँव के मिरासदारों ने, रक्ताक्षी वर्ष के अनि महीने की २२वीं तिथि (४ जुलाई १८६४) के दिन सर्वसंमत रूप से किया है। उपर्युक्त गॉव के पंगु सभी नौ मिरासदारों ने गाँव की नानजेई (नमीयुक्त) भूमि का, करेईयीड के अनुसार आचंद्रार्क अविभक्त उपभोग तय किया है। कुछ वर्ष पूर्व सरकार के सामने वे 'अमानी' संचालन के लिए सहमत हुए थे। कुछ वर्ष अनुमानित पद्धति के लिए और कुछ वर्ष अनाज या नकद किराये के लिए सहमत हुए थे। 'प्रभव' संवत्सर से 'इश्वर' संवत्सर तक नौ करेई का एक करेईयीड (अस्तित्व में था), संवत्सर से सौंदरी संवत्सर तक ८ वर्ष छह करेई का एक करेईयीड था और 'विरोधी' संवत्सर से 'विलंबी' संवत्सर के नौ वर्ष नौ करेई का एक करेईयीड अस्तित्व मे था। परंतु सीमित समय की इस करेईयीड से वे समृद्ध नहीं हो सके। इस वास्तविकता पर ध्यान करते हुए दीर्घकालीन करेईयीड बनाने से वे समृद्ध होगे ऐसा मानकर छह करेई, 'विकारी' संवत्सर से 'रक्ताक्षी' संवत्सर की चैत्री अमावास्या तक २५ वर्ष का करेईयीड बनाया। परन्तु भारी घाटा हुआ। भूमि कई छोटे छोटे टुकडो मे बँट जाने से ग्रामजनों ने पारंपरिक मरम्मत और ढलान बनाने की ओर दुर्लक्ष किया, और मेडों एवं बांधो की मरम्मत नहीं की, बडी और छोटी नालियो की ठीक से सफाई नहीं की। भारी मात्रा में नन्जी में खाद और पत्तियां डालने पर भी अच्छी फसल नहीं हुइ। अधिकांश मिरासदारों को अत्यधिक हानि उठानी पडी। कष्टों में फंसकर वे व्यथित हुए। इसलिए ऐसी दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति का पुनरावर्तन न हो, सामान्य समृद्धि प्राप्त हो और बिना घाटे और कठिनाई से सरकार का राजस्व चुकाया जा सके; और अब ईस वर्ष नये सिरे से करेईयीड का समय आ गया है इसलिये वर्तमान में जो विभाग चल रहे है उन्हीं के अनुसारविकास प्राप्त करने की आवश्यकता के प्रति ध्यान देते हुए किसी प्रकार का संकट न रहे और सरलता से भूमिकर दिया जा सके। दीर्घकालीन करेईयीड बनाने के हमारे प्रयासों को ध्यान रखते हुए इस समय

अस्तित्ववाले विभागों के अनुसार करेईयीड बनाने का समय वर्तमान वर्ष में प्राप्त हुआ है। इस हेतु से आवश्यक सहायता स्वीकार करने के लिए तहसील में प्रामाणिक रूप से आवेदन पत्र दिया है, सभी मिरासदार स्वेच्छा से तहसीलदार के सामने मिलकर आए है और उन्हें बिनती की है। नीचे हस्ताक्षर करनेवाले बहुमत मिरासदारों को छोड़कर कनगासभेयी शेट्टी, अप्पु चेट्टी, बाना सामी चेट्टी और मिरासदार चिन्ना क्रिश्नैयन से किराये पर भूमि प्राप्त करनेवाले वनगप्पायनपंगुनी (हिस्से की) केवल १५/१६ पंगु जमीन के धारक हैं, गाँव के साथ नहीं हैं। अपनी इच्छानुसार बाधाएँ और लडाईझगडे करने के इरादे से उपर्युक्त चार व्यक्तियों ने असहमति की भावना से घोषित किया है कि रीतिनीति या स्वैच्छिक स्वीकृति (अर्थात् पर्ची उठाकर होने वाले निर्णय की पद्धति) से विपरीत, गाँव के एक भाग में उसकी (भूमि की) विभिन्न प्रकार की गुणवत्ता या भिन्न-भिन्न खेतों से उनके लिए नपाई किये गये भूमि के छोटे-छोटे टुकडों पर ध्यान न देते हुए उन चारो को अच्छी भूमि देना होगा। यदि उसमें व्यवधान होगा तो वे करेईयीड बनाने के लिए सहमत नहीं होंगे और इस समय उनके पास जो भूमि है वहीं बनाए रखेंगे। संगठित होने के इच्छुक सभी मिरासदारों को करेईयीड बनाने की अनुमति प्राप्त हुई है। नीचे हस्ताक्षर करनेवाले मिरासदार संगठित हुए हैं। इस वास्तविकता पर ध्यान देते हुए और समृद्धि के लिए ऊपर दर्शाई गई पारंपरिक मरम्मत उचित रूप से हो सके इस दृष्टि से निम्नस्तरीय, उच्च स्तरीय और अन्य भूमि की नपाई की है, उसे वर्गीकृत किया गया है। साथ ही निम्नस्तरीय दर्शाई गई और खरीदारी-अधिकार से प्राप्त की गई व्यावसायिक भूमि एवं अन्य सभी भूमि को विभाथित करने के उपरांत पत्रक में मंदिर, ब्राह्मण, कारीगर और अन्यों के नाम अलग से निर्धारित की गई, पूर्व के स्वीकृतिपत्र में अंकित एवं विभिन्न व्यक्तियों और संस्थाओं के पूर्वजों के समय से उनके उपभोग में रही भूमि को छोडकर शेष नन्जेइ भूमि को वर्गीकृत किया गया है और उसके अंश (पंगु) चार करेई को दिये गये हैं। इस बँटवारे का विवरण यहां दर्शाया गया है -

१. सुंदरप्पय्यन की करेई

नाम	अष्टांश में भाग
उपर्युक्त सुंदरप्पाय्यन	६१/२
वेंकटाचलय्यन	१/४
सुभरय्यन	१/२
गोपाल क्रिश्नैयन	१/२

सुप्पु कुट्टी -अय्यन	$^{1}/_{2}$
किश्नैय्यन	$2^{7}/_{8}$
अम्मन सुम्भय्यन	१
चिन्नाम्मल	१
रामास्वामी अय्यन	$^{3}/_{8}$
वेंकटाचल चेट्टी	$2^{1}/_{2}$
कुल	१६ अष्टांश

२. अनेय्यप्पयन का करेई

कुल (दस पंगु) १६ अष्टांश (और इस प्रकार दूसरे करेई में क्रमश. से आठ और पाँच भाग हैं)

सभी चार करेई के कुल चौसठ अष्टमांश भाग या पंगु साझे की भूमि से यह चार करेई विभाजित और वितरीत किये गये हैं। सुरि देवायन के छोटे भाई शिवरामय्यन के पास आधा अष्टांश भाग (पंगु) है। कुल मिलाकर ६५ (६४/२?) अष्टांश होता है। इस प्रकार पंगु विभागीकरण की पद्धति का अनुसार विभाग बनाए गये हैं और चार करेई के लिए पर्चियाँ डाली गई हैं तब जो करेईयोलेई उनके हिस्से में आयेगी उसकी नन्जेई (नमीयुक्त) भूमि का, उनकी संबंधित करेईयों में न्यायोचित बँटवारे के अनुसार इस वर्ष से शुरू कर के २५ वर्ष तक उपभोग कर सकेंगे।

इसके साथ ही ऊपर दर्शाए गये गॉव में देखभाल के अभाव में जर्जरित हुए मंदिरों के जीर्णोद्धार के लिए प्रावधान आवश्यक होने से, पूर्व दिशा की शेम्बादयन नन्जेई भूमि से १५ मास ३१ गुली, नन्जेई दीवादानम् भूमि से १२ मास ४० गुली, अंगलम्मन कोविलपट्टम से ९ मास ८० गुली - इस प्रकार ६ कुल १ वेली, १७ मास और ५१ गुली साझे की भूमि सात वर्ष के लिए किराये पर देते हुए प्रति वर्ष किरायेदार के भाग को काटकर बचे हुए अंश का निम्न लिखित रूप से विनियोग करना होगा।

दो वर्ष की आय रामास्वामी मंदिर को
दो वर्ष की आय कृष्णस्वामी मंदिर को
एक वर्ष की आय ईश्वरम् मंदिर को
एक वर्ष की आय अय्यनार मंदिर को
एक वर्ष की आय पिल्लैयार मंदिर को
इस प्रकार कुछ वर्ष तक इस आय का विनियोग ऊपर दर्शाए गये मंदिरों की

सेवा हेतु ही करना है। भूमिकर की गणना के अनुसार भूमिकर ६४१/२ अष्टांश (पंगु) पर देना है। उसके पश्चात् प्रजोत्पत्ति संवत्सर से, उपरोक्त मंदिरों की सेवा के लिए अलग की गई साझे की भूमि का उपभोग, प्रवर्तमान शेष करेईयीड में से जिसके हिस्से में आयेगी उन विभिन्न साझेदारों को न्यायोचित ढंग से करना होगा। इस भूमि से होनेवाली आय का मंदिरों के जीर्णोद्धार को छोड अन्य किसी उद्देश्य के लिए व्यय नहीं किया जाएगा कृष्णप्पा नायक के अष्टांश की १०८ गुली भूमि कनगासभेयी चेट्टी के अधिकार में है, कृष्णप्पा नायक के भाग से उसके मूल्य के अनुसार राशि काटी जाएगी और वह कनगास भेयी के विरुद्ध न्यायालयीन कारवाई करते हुए भूमि वापस पा सकेगा। शेष मिरासदारों का उससे कोई सम्बन्ध नहीं है।

पुंजेयी (सूखी) भूमि इससे पूर्व हमेशा के लिए (आचन्द्रार्कम्) विभाजित की गई है और उपर्युक्त ६४ १/२ अष्टांश भाग के मिरासदारों के द्वारा उसमें से कुछ भूमि पर सजल खेती की गई है। जिन्होंने ऐसा किया है वे अपना उपभोग चालू रख सकेंगे और उसका भुगतान नन्जेई भूमि की गणना के अनुसार करेंगे। शेष नदी तट के बाहर की और कवली नहर के भीतर-बाहर वाली पुंजी भूमि की नपाई की जाएगी और उसकी असमानता का समायोजन बाहर की भूमि तक सीमित रहेगा। इस भूमि का उपयोग इससे पूर्व दर्शाए गये करेईयोलई के अनुसार करना होगा।

किलवेली (नाम से पहचानी जानेवाली) कवली नहर के तट की जलयुक्त भूमि, पुडुचेरी-वेली सूखी भूमि और स्थायी वितरण वृत्तांत में समाविष्ट सूखी भूमि की नपाई की जायेगी और उनकी असमानताएँ समायोजित की जाएँगी। जिनके पास कम भूमि है वे, जिनके पास अपने न्यायिक हिस्से से अधिक है उनके द्वारा अधिक हिस्सा छोड दिये जाने वह, उसे प्राप्त करेंगे।

किलवेली नदीतट की भूमि, नदी के पट की भूमि, सूखी भूमि और अन्य भूमि की नपाई इससे पूर्व के स्वीकृति पत्र की प्रविष्टी के अनुसार करनी है और इस वर्ष के तेई महीने में उनका घनिष्ठ विमार्गो में पुनर्वितरण किया जाएगा। इस समय जहाँ आदि फसल तैयार है ऐसी ऊपर दर्शाई गई भूमि किराये पर देनी होगी और मिरासदारों के बीच उनके हिस्से के अनुसार किराये को बाँटना होगा। सूखी, नदी पट की एवं अनुपजाऊ भूमि पर उगते वृक्षों पर अभी तक कर की गणना नहीं हुई है अब होने की संभावना है। उस गणना के अनुसार कर देना होगा।

काश्तकार और अन्यों के लिए उचित रूप से पेरियाह मुहल्ला, चुक्लरों का मुहल्ला और पुत्तर (नदी) से दूर अवस्थित घरेलू भूमि की पूर्व के स्थायी प्रभागों के

अनुसार नपाई होगी और उसमें (उत्पन्न) विषमताएँ निपटाई जाएँगी। जिनके पास बहुत अधिक (भूमि) होगी उन्हें किलवेली और कवली नहर की दोनो ओर की सूखी भूमि से जिनके पास बहुत कम है उनके लिए त्याग करना होगा।

सजल खेतों के लिए स्वीकृत सीमांकित साझे के तट, कवली नहर के दोनों तट एवं सिंचाई तथा अशुद्ध जल को दूर करने के लिए नालियों की सफाई की जाएगी, उन्हें पुष्ट बनाया जाएगा और साझे के व्यय से उनका निर्वहण किया जाएगा।

और अब, उपर्युक्त पद्धति से भूमि का विभाजन हो गया है तब सरकारी कर हिस्सेदारों ने चुकाना होगा। सरकारी कर खरावे की सूखी जमीन और कृषियोग्य खरावे की जमीन पर लगाया जाता है। वह अब मिरासदारों ने व्यक्तिगत रूप से चुकाना होगा।

अब, पुनर्वितरित भूमि को सरकारी कार्यालय मे उसी वितरण के अनुसारे पंजीकृत करना होगा।

जिन भूमि को व्यापारी और कारीगरों को देने की अनुमति दी गई है उनके भाग किये जाएँगे और भागो पर उनका अधिकार होगा। उसका भुगतान सरकारी गणना के आधार पर ही करना होगा।

भूमि की सिंचाई और अशुद्ध जल को दूर करने का निर्वहन पारंपरिक रूप से होगा।

जल की कमी होने पर (नहर से जल लेने की प्रत्येक किसान की बारी और उसकी समय सीमा दर्ज करने समेत) एक स्वीकृतिपत्र तैयार किया जाएगा और उसके अनुसार सिंचाई होगी। किदरन कोंडन उपनहर की पूर्व दिशा पर दो समान भाग का बाँध बनाया जाएगा और उसका जल खेत की ओर मोडा जाएगा।

मलेई मंगलम नहर से एक उपनहर निकाली जाएगी और उसका जल उपर्युक्त खेत की ओर मोडा जाएगा।

कोई भी हिस्सेदार, उपर्युक्त भूमि से किसी प्रकार की भूमि को सीधा नहीं बेच पाएगा और यदि बेचता है तो वह अमान्य होगा। गाँव के अन्य व्यवहारो में, इससे पूर्व के स्वीकृतिपत्रों में प्रयोजित पद्धति का अनुसरण करना होगा। हम सबने इसको सर्वसंमत रूप से स्वीकार किया है।

लंबा और कष्टप्रद होने पर भी इस विलक्षण अभिलेख को पूर्ण रूप से प्रस्तुत करना मुझे समुचित प्रतीत हुआ है, क्योंकि यह पुनर्वितरण पद्धति को पूर्ण रूप से दर्शाता है। इस पद्धति का क्रमश: त्याग करने के कारणों को वह निर्दिष्ट करता है। किसान का भूमि पर सीमित एवं अनिश्चित अधिकार तथा ग्रामसमूह का बाहरी व्यक्तियों

द्वारा अतिक्रमण होने के कारण नदी तट, नहर और अन्य मरम्मत और सुधार के प्रति दुर्लक्ष ही ये कारण थे। नामों की सूची से ज्ञात होगा कि सूचित पुनर्वितरण का विरोध करनेवाले भूमिधारक चेट्टी अर्थात् व्यापारी थे और हम अनुमान कर सकते हैं कि जिन लोगों को उन्होंने ऋण दिया होगा उनसे गाँव का उतना हिस्सा संपादित किया होगा। ऐसे बाहरी लोग गाँव की परम्पराओं का आदर नहीं करते होंगे और उन पर अवलंबित ग्रामीण समाज के प्रति उनके मन में सहानुभूति नहीं होगी। इसलिए स्वीकृतिपत्र के अंत में भूमि के विक्रय पर रोक लगाने का प्रावधान करना पडता है इसमें कोई संदेह नहीं है।

संदर्भ

१. टी. वेंकटस्वामी राव, मद्रास द्वारा लिखित मद्रास क्षेत्र के तजावुर जिले के नियमसंग्रह (मैन्युअल) १८८३, से : परिशिष्ट 'ग' लेखक एच जे. स्टाक्स, सी. एच. नगपट्टम्
२. करेईस्वन या शेटीकरन भी कहा जाता है। दूसरा नामाभिधान स्पष्ट रूप से ही हिंदी 'सेठ' और संस्कृत 'क्षेत्र' से बना है।
३ यहाँ बहु प्रचलित इस शब्द की, शायद और स्थानों पर अधिक स्पष्टता आवश्यक है। उसका अर्थ 'मिरास' का स्वामी या 'स्वामित्व के सभी अधिकारो समेत भूमिधारक' होता है।
४. स्थायी अधिकार उपभोग के लिए पुनर्वितरण पद्धति का परित्याग करने पर नाम आचन्द्रार्कम यावद्चंद्र दीवाकरौ अर्थात् शाश्वत कहा जाता है। संधि के आधार पर आ -चंद्र-अर्क।
५. कडजन अर्थात् जिस पर्ची पर भूमि का विवरण दर्ज किया गया है।
६. १ वेली = ६.६ एकड
   १ मा = ०३३ एकड
   १ गुली = ०.००३३ एकड
७. पूर्व विभावित सूखी भूमि का आचंद्रार्कम करेईयोवेली।

परिशिष्ठ ५

मंदिर सभाएँ एवं ग्राम परिषदें

ब्राह्मणेतर जातिसंबंधों के ढॉचे में जाति से संबंधित समग्र अधिकारों की सामूहिक एकता एवं न्यायिक एवं नीतिपूर्ण व्यवहारो से संबंधित आधारभूत रूप से धार्मिक कार्यक्रम देखनेवाले मंदिर के मंडलों की सत्ता का आधार दैवी होता है।

इस संस्था का नियमन करनेवाले नियम पारंपरिक रूप से प्रस्थापित होते हैं। उसमें विवाद को स्थान नहीं होता, परन्तु उसे कार्यान्वित करने के लिए नियुक्त नेताओं के निर्णय और दंडनीय निर्णय की निरंतर आवश्यकता रहती हैं।

इस अध्याय में आगे दर्शाया गया है कि मंदिर-सभा राजनीतिक नियंत्रण का एक महत्वपूर्ण उपकरण है। प्रत्येक नई सभा अपना प्रभाव विशेष स्थायी बनाने के लिए, इस उपकरण पर अधिकार पाने का प्रयास करती है।

ब्राह्मणतेर लोगों के मंदिर की देखभाल करनेवाली मंदिर सभा न्यायिक और नैतिक व्यवहारों का ध्यान रखती है और इन जातियों के सामाजिक एवं धार्मिक जीवन की केन्द्र होते है।

इन्फन्ट्री मुहल्ले के दोनों छोर पर एक एक मंदिर है। उस मुहल्ले का एक छोर पल्ली इन्फन्ट्री मुहल्लेसे से मिलता है। प्रत्येक मंदिर के साथ एक सभा जुडी हुई है। एक सभा इन्फन्ट्री मुहल्ले के आधे भाग के परिणित पुरुषों का बना हुआ है और दूसरा पल्ली इन्फन्ट्री जाति के सभी परिणित पुरुषों सहित (इन्फन्ट्री) मुहल्ले के शेष आधे भाग के पुरुषों की है। दोनों सभाओं का नेतृत्व अलग अलग लोग संभालते हैं और उनकी बैठकें भी अलग अलग आयोजित होती हैं, परंतु पर्वों की शोभायात्रा के समय वे एक साथ मिलकर उत्सव मनाते हैं।

दोनों सभाएँ समान नियमों के अनुसार कार्य करती हैं और दायित्व भी समान रूप से निभाती हैं, इसलिए व्यावहारिक दृष्टि से दोनों को अविभक्त माना जा सकता है। दोनो सभाओं का नेतृत्व धनिक लोगों में से पाँच-छह वरिष्ठ लोगों का समूह

समालता है। ये लोग मुहल्लों में सबसे समृद्ध भवनों के स्वामी होते हैं। उनका स्थानीय पदनाम नाथनमईकरर अर्थात 'अधिकार प्राप्त' है। नेता को 'मेशीविथेकरर' अर्थात् 'सुदर मकान का स्वामी' भी कहा जाता है। हर पूर्णिमा और निश्चित पर्वो के समय मंदिर के प्रांगण में बैठकें होती हैं। बैठक में उपस्थिति अनिवार्य होती है, परंतु कोई सदस्य अपने प्रतिनिधि के रूप में पुत्र या भाई को भेजता है।

नाथनमईकर का ब्राह्मण समेत सभी जाति के लोग बहुत सम्माननीय व्यक्ति के रूप में आदर करते हैं। कह सकते हैं कि उसका प्रमुख दायित्व पारंपरिक रिवाजों की रक्षा करना या गाँव के लोगों की ईच्छानुसार अपनी जाति की विचारधारा के आधार पर अच्छी बुरी बातों का ध्यान रखना है। सामाजिक प्रजाजीवन की सभी महत्वपूर्ण गतिविधियों पर उसका अधिकार रहता है। मांगलिक अवसरों पर वह मुखिया के जैसा दायित्व निभाता है और नाते रिश्तेदारों की ओर से दिये जानेवाले उपहारों का ध्यान रखता है। सम्मान के प्रतीक स्वरूप या ऐसे अवसर पर सबसे पहले उन्हें भोजन परोसा जाता है। वे स्मशानयात्राएँ और अंतिम संस्कारों का आयोजन करते हैं और गाँव के कामगारों को वेतन बाँटते हैं, असहाय बचे और विधवाओं के संरक्षक का दायित्व निभाते हैं। नाते रिश्तेदार और पडोसियों के बीच के विवादो का निपटारा उनके सामने होता है। छोटे काश्तकार एवं नौकरों को अनुशासित रखने के लिए, कृषिकार्य में अधिकारपत्र बनाने और गाँव के काश्तकारों के साथ भूमि के लिए बातचीत करने में ब्राह्मण भी कभी कभी उनके प्रभाव का सहयोग लेते हैं। नाथनमईकर ब्राह्मणों द्वारा जोतने के लिए दी गई बहुत सी भूमि का स्वामित्व रखते हैं।

नाथनमईकर का चुनाव गुप्त मतदान पद्धति से होता है, परंतु उसके पद की कोई समयावधि निश्चित नहीं होती और चुनाव भी निश्तिच समय में नहीं होते। ये नेता लगभग समान रूप से समृद्ध होते हैं और कुछ शिक्षित भी होते हैं। परन्तु उनके अधिकारों पर दो महत्त्वपूर्ण सीमाएँ रहती हैं। एक, उन्हें मंडल के सामान्य सदस्यों का समर्थन होना आवश्यक हे। दूसरा, नाथनमईकरों के बीच आपसी मेल होना आवश्यक है और यह अति महत्त्वपूर्ण है। ऐसी घटनाएँ अतीत में दर्ज हुई हैं कि इन लोगों के आपसी मतैक्य के अभाव में गाँव के कई उत्सव मनाने में बाधा पहुँची है।

नाथनमइकरों को निम्न लिखित व्यवहार एवं कार्य करना पड़ता है -

१. धार्मिक अवसरों पर कार्यक्रम कराते हैं और उसका आचार्य (प्रधान पुरोहित) पद भी संभालते हैं।

२. ग्रामीण उत्सव और मंदिर की मरम्मत के लिए चंदा एकत्रित करते हैं।

३. जातिनिधि में से ऋण देने के लिए निलामी का आयोजन करते है।

४. गाँव के तालाब से मछली पकड़ने के अधिकार के लिए का आयोजन करते हैं।

५. बातचीत करते हैं, विवाद निपटाते हैं, निर्णय देते है, दंड करते है और छोटे साहूकार का दायित्व निभाते हैं।

प्रत्येक सदस्य या परिवार मंदिर के कोष में मासिक योगदान करता है और वह राशि उनकी एक दिन की आय की लगभग १/४ भाग होती है। गाँव के दो दुकानदार अधिक चंदा देते हैं। फसल लेते समय मनाए जानेवाले उत्सवों के समय अधिक चंदा दिया जाता है। निश्चित उद्देश्यो के लिए बोली होती है ओर वह राशि निधि में जमा होती है। अधिकार क्रय करनेवाला व्यक्ति सामूहिक रूप मे मछली पकडे इस शर्त पर मछली पकड़ने के अधिकार बेचे जाते हैं उसकी बोली होती है। ऐसे संयुक्त मछली पकड़ने के अभियान के अवसर पर नाथनमईकर को सबसे बड़ी मछली का उपहार दिया जाता है।

दंड की राशि समेत सारी आय मंदिर कोष को अर्पित की जाती है। सार्वजनिक सुविधाओं के लिए अलग राशि रखी जाती है। मंदिर के प्रांगण में आयोजित होनेवाली बैठकों में उत्तम प्रबंध होता है। नेता मंदिर के आगे समूह मे अलग बैठते हैं और शेष सदस्य आमने सामने दो पंक्तियां बनाकर बैठते हैं। यह सभा पवित्र मैदान में आयोजित होने से धूम्रपान या अशिष्ट भाषा के प्रयोग पर रोक लगी रहती है। किसी विशेष विषय पर विचारविमर्श होता हो तब बीच मे बैठक छोड़ने की अनुमति नहीं दी जाती और ऐसा अनिवार्य हो तब वापस लौटने का विश्वास दिलाने के लिए एवज में कोई चीज रखनी पड़ती है। साक्षियों की शपथविधि के लिए भी नियत कार्यपद्धति होती है।

ऐसी कुछ बैठकों में चर्चित विषयो को उदाहरण के रूप में नीचे दिया गया है।

'हल जोतने के लिए प्रारंभ करने का मुहूर्त निकाल देते हैं, ग्रामोत्सव का आयोजन करते हैं, गाँव के कुएँ तैयार करते हैं और गाँव के तालाबों की मरम्मत करवाते हैं। पंचायत सभागृह (चौपाल) के निर्माण का आयोजन कते हैं। अधिकांश विषयों के संदर्भ में तुरंत सर्वसम्मति हो गई थी, परन्तु पंचायत सभागृह (चौपाल) के निर्माण के लिए प्रत्येक सदस्य से जमा की जानेवाली राशि कई लोगों के लिए अधिक होने से सर्वसम्मति नहीं हुई।

अधिक विवादग्रस्त विषय उपस्थित हुए हों, चर्चा उग्र भी बनी हो ऐसी कुछ बैठकों में मेरी उपस्थिति रही थी। उदाहरण के लिये मुर्गापालन बंद करने का प्रस्ताव

परिशिष्ठ ६

अध्ययन में प्रवृत्त व्यक्तियों की सूची

१. शोधार्थी कर्मचारी

डॉ. कु. एस. सरस्वती	पूर्ण समय	शोध अधिकारी
शरी मोहं. रफीक खान	(१५ अगस्त १९६४-दिसम्बर १९६४ और १९६५ में कुछ समय के लिए आधार सामग्री का विश्लेषण सर्वेक्षण वृत्तांत लिखने के लिए)	शोधअधिकारी
डॉ. सी. एन भालेराव	(अप्रैल-जून २० १९६४)	उप निदेशक
डा जे. एस राव	(जून २५-अगस्त ८ १९६४)	शोध अधिकारी
श्रि किश्नमूर्ति	(२७ अगस्त-१० अक्तूबर १९६४)	शोध अधिकारी
श्री एस. गोपालन	(१ अप्रैल १९६४-१० जनवरी ११९६४)	शोध जाचकर्ता
श्री एल पलटनटम्पन	(१ अप्रैल १९६४-३१ दिसम्बर १९६४)	शोध जांचकर्ता
श्री एम. एस. चेरियन	(११ मई १९६४-३१ मार्च १९६५)	शोध जांचकर्ता
श्री आर. पी. रंगनाथन	(१ जुलाई १९६४-३१ मार्च १९६५)	शोध जांचकर्ता
श्री एन पपैयाह	(२० अक्तूबर १९६४-१६ फरवरी १९६५)	शोध जाचकर्ता
श्री ए संपत क्रिश्ना	(२० अक्तूबर १९६४-२३ दिसम्बर १९६४)	शोध जांचकर्ता
श्री जयरामचंद्रन	(२० अक्तूबर १९६४-२३ दिसम्बर १९६४)	शोध जांचकर्ता
श्री आर राजेशखर	(२० अक्तूबर १९६४-२३ दिसम्बर १९६४)	शोध जांचकर्ता
श्री रमेशचंद्र	(२१ अक्तूबर १९६४-१० जुलाई १९६५)	शोध जांचकर्ता

२. कार्यालय कर्मचारीगण

श्री आर. श्रीनिवासन	(१ अगस्त १९६४-७ अगस्त १९६५)	स्टेनोग्राफर हिसाब एवं सहायक कार्य
श्री बी. गोपीनाथन	पूर्ण समय	टाइपिस्ट-क्लर्क
श्री वासुदेव	पूर्ण समय	चपरासी (खण्डकालीन)

३. निदेशक

श्री धर्मपाल	पूर्ण समय

लेखक परिचय

श्री धर्मपालजी का जन्म सन् १९२२ में उत्तर प्रदेश के मुझफ्फरनगरमें हुआ था। उनकी शिक्षा डी. ए. वी. कालेज, लाहौर में हुई। १९३० में ८ वर्ष की आयु मे उन्होंने पहली बार गांधीजी को देखा । उसके एक ही वर्ष बाद सरदार भगतसिंह एवं उनके साथियों को फॉसी दी गई। १९३० में ही वे अपने पिताजी के साथ लाहौर मे कौंग्रेस के अखिल भारतीय सम्मेलन में गये थे। उस समय से लेकर आजन्म वे गांधीभक्त एवं गांधीमार्गी रहे।

१९४० में, १८ वर्ष की आयु मे उन्होंने खादी पहनना शुरू किया। चरखे पर सूत कातना भी शुरू किया। १९४२ में 'भारत छोडो' आन्दोलन में भाग लिया। १९४४ में उनका परिचय मीराबहन के साथ हुआ। उनके साथ मिलकर रुडकी एवं हरिद्वार के बीच सामुदायिक गाँव के निर्माण का प्रयास किया। उस सामुदायिक गाँव का नाम था 'बापूग्राम'। आज भी बापूग्राम अस्तित्व में है। १९४९ मे भारत का विभाजन हुआ। परिणाम स्वरूप भारत में जो शरणार्थी आये उनके पुनर्वसन के कार्य मे भी उन्होंने भाग लिया। १९४९ में वे इंग्लैण्ड, इझरायल और अन्य देशों की यात्रा पर गये। इझरायल जाकर वे वहाँ के सामुदायिक ग्राम के प्रयोग को जानना समझना चाहते थे। १९५० में वे भारत वापस आये। १९६४ तक दिल्ली मे रहे। इस समयावधि में वे Association of Voluntary Agencies for Rural Development (AVARD) के मन्त्री के रूप में कार्यरत रहे। अवार्ड की संस्थापक अध्यक्षा श्रीमती कमलादेवी चट्टोपाध्याय थीं, परंतु कुछ ही समय में श्री जयप्रकाश नारायण उसके अध्यक्ष बने और १९७५ तक बने रहे। १९६४-६५ मे श्री धर्मपालजी आल इण्डिया पंचायत परिषद के शोध विभाग के निदेशक रहे। १९६६ मे लन्दन गये। १९८२ तक लन्दन में रहे। इन अठारह वर्षो में भारत आते जाते रहे। १९८२ से १९८७ सेवाग्राम (वर्धा, महाराष्ट्र) में रहे। उस दौरान चैन्नई आते जाते रहे। १९८७ के बाद फिर लन्दन गये। १९९३ से जीवन के अन्त तक सेवाग्राम, वर्धा में रहे।

१९४९ में उनका विवाह अंग्रेज युवति फिलिस से हुआ। फिलिस लन्दन मे,

बापूग्राम में, दिल्ली में, सेवाग्राम मे उनके साथ रहीं। १९८६ में उनका स्वर्गवास हुआ। उनकी स्मृति में वाराणसी में मानव सेवा केन्द्र के तत्त्वावधान में बालिकाओं के सर्वांगीण विकास का केन्द्र चल रहा है। धर्मपालजी एवं फिलिस के एक पुत्र एवं दो पुत्रियां हैं। पुत्र डेविड लन्दन में व्यवसायी है, पुत्री रोझविता लन्दन में अध्यापक है और दूसरी पुत्री गीता धर्मपाल हाईडलबर्ग विश्वविद्यालय, जर्मनी में इतिहास विषय की अध्यापक है।

धर्मपालजी अध्ययनशील थे, चिन्तक थे, बुद्धि प्रामाण्यवादी थे। परिश्रमी शोधकर्ता थे। अभिलेख प्राप्त करने के लिये प्रतिदिन बारह चौदह घण्टे लिखकर लन्दन तथा भारत के अन्यान्य महानगरों के अभिलेखागारो में बैठकर नकल उतारने का कार्य उन्होंने किया। उस सामग्री का संकलन किया, निष्कर्ष निकाले। १८ वीं एवं १९ वीं शताब्दी के भारत के विषय में अनुसन्धान कर के लेख लिखे, भाषण किये, पुस्तकें लिखीं।

उनका यह अध्ययन, चिन्तन, अनुसन्धान विश्वविद्यालय से उपाधि प्राप्त करने के लिये या विद्वता के लिये प्रतिष्ठा, पद या धन प्राप्त करने के लिये नहीं था। भारत की जीवन दृष्टि, जीवन शैली, जीवन कौशल, जीवन रचना का परिचय प्राप्त करने के लिये, भारत को ठीक से समझने के लिये, समृद्ध, सुसंस्कृत भारत को अंग्रेजों ने कैसे तोड़ा उसकी प्रक्रिया जानने के लिये, भारत कैसे गुलाम बन गया इसका विश्लेषण करने के लिये और अब उस गुलामी से मुक्ति पाने का मार्ग ढूंढने के लिये यह अध्ययन था। जितना मूल्य अध्ययन का है उससे भी कहीं अधिक मूल्य उसके उद्देश्य का है।

श्री जयप्रकाश नारायण, श्री राम मनोहर लोहिया, श्री कमलादेवी चट्टोपाध्याय श्री मीराबहन उनके मित्र एवं मार्गदर्शक हैं। गांधीजी उनकी दृष्टि में अवतार पुरुष हैं। वे अन्तर्बाह्य गांधीभक्त हैं, फिर भी जाग्रत एवं विवेकपूर्ण विश्लेषक एवं आलोचक भी हैं। गांधीभक्त होने पर भी गांधीवादियों की आलोचना भी कर सकते हैं।

इस ग्रन्थश्रेणी में प्रकाशित पुस्तकें १९७१ से २००३ तक की समयावधि लिखी गई हैं। विद्वज्जगत में उनका यथेष्ट स्वागत हुआ है। उससे व्यापक प्रभाव भी निर्माण हुआ है।

मूल पुस्तकें अंग्रेजी में हैं। अभी वे हिन्दी में प्रकाशित हो रही हैं। भारत की अन्यान्य भाषाओं में जब उनका अनुवाद होगा तब बौद्धिक जगत में बड़ी भारी हलचल पैदा होगी।

२४ अक्टूबर २००६ को सेवाग्राम में ही ८४ वर्ष की आयु में उनका स्वर्गवास हुआ।